॥ श्रीजानकीवल्लभो विजयते ॥

श्रीमदग्राचार्य चरण चंचरीक स्वामी श्रीनारायणदासजी

श्रीनाभा स्वामीजी कृत

भक्त-माल

स्वामी श्रीप्रियादासजी कृत

भक्ति-रसबोधिनी टीका एवं

श्रीअयोध्या मणिपर्वतस्थ श्रीरामग्रन्थागारके संस्थापक मानसतत्वान्वेषी वेदान्तभूषण स्वामी श्रीरामकुमारदासजी कृत

भक्तमाल-भास्कर सहित

जिसको

श्रीअयोध्या जानकीघाट निवासी साकेतवासी श्रीसंप्रदायाचार्य जगदोद्धारक जगद्गुरु अनन्त श्री संवलित स्वामी

पं० श्रीरामवल्लभाशरणजी महाराज के

हार्दिक भावानुसार संशोधित करके

जानकीदास श्रीवैष्णवने

अर्थ प्रकाशिका टिप्पणी सहित संपादित किया

प्रकाशक :—

ठाकुरप्रसाद एन्ड सन्स बुकसेलर,

राजादरवाजा एवं कचौड़ीगली

वाराणसी।

मूल्य ३०) रुपया

वाराणसेय-संस्कृत-विश्वविद्यालय के अनुसन्धान-विभागाध्यक्ष

पं० बलदेव उपाध्यायजी महोदय की सम्मति



Director
RESEARCH INSTITUTE
VARANASI SANSKRIT UNIVERSITY

VARANASI-2
२३ |....६ |....1965

मैंने श्री जानकीदासजी श्रीवैष्णव द्वारा सम्पादित 'भक्तमाल' को यत्रतत्र देखा। ग्रन्थ बड़े परिश्रम तथा मनोयोग के साथ सम्पादित किया गया है। प्रियादास जी की प्रख्यात टीका के साथ यह ग्रन्थ पहिले भी प्रकाशित था, परन्तु यह संस्करण इतः पूर्व संस्करणों से अनेक अंश में विशिष्ट है। सम्पादक ने मूल तथा टीका के पाठ संशोधन के निमित्त अनेक प्राचीन हस्तलेखों का भी इसमें विवेक के साथ उपयोग किया है। साथ ही साथ जिन महात्माओं के विषय में प्रियादास जी मौन हैं अथवा स्वल्पाक्षर में ही विवरण दिया है, उनका विवरण यहाँ विशेष रूप से श्री जानकीदास जी ने दिया है। इस प्रकार यह नूतन संस्करण मूल के उपबृंहण के साथ ही साथ प्रियादास जी की टीका का भी उपबृंहण प्रस्तुत करता है। ऐसे सुन्दर तथा विद्वत्तापूर्ण, प्रामाणिक तथा सुविशुद्ध संस्करण के प्रस्तुत-कर्ता जानकीदास जी भक्तों तथा साहित्य रसिकों के धन्यवाद के समुचित पात्र हैं। मैं इस ग्रन्थ के बहुल प्रचार की कामना करता हूँ।

बलदेव उपाध्याय

❀ भूमिका ❀

(ले०—परम मनीषी डा० रामतवक्याजो शर्मा डि. लिट., प्राध्यापक हिन्दी विभाग पटना-विश्वविद्यालय, पटना ५ ।)

प्राणी-मात्र, विशेषतः वपु-धारियों का सिरमौर[1] मानव, स्वभावतः आनन्दाभिलाषी है, सुखान्वेषी है[2]। 'आनन्द' तत्त्व का ही उसमें अभाव जो है। वह आनन्द-स्वरूप[3] परात्पर ब्रह्म की उपासना में निरत रहे अथवा अत्याकर्षक आधिभौतिक सुख की साधना में संलग्न रहे; "मुच्यमानेषु सत्त्वेषु येते प्रामोद्यसागराः" (बोधिचर्यावतार) एवं "अमृतत्वस्य तु नाशा मनदाप्यस्ति वित्तेन वित्तसाध्येन कर्मणेति"[3] (बृ. २।४।२ को जीवन का मूल मन्त्र बनावे अथवा "यावज्जीवेत् सुखं जीवेत्, ऋणं कृत्वा घृतं पिवेत्" (चार्वाक) तथा "खाओ, पीओ, मौज करो" को पूर्णतः चरितार्थ करे; उसकी सुख-चिकीर्षा के सम्बन्ध में सन्देह के लिए अवकाश नहीं हो सकता। अस्तु, मानव-जीवन का एकमात्र उद्देश्य आत्यन्तिक सुख[4] किंवा अक्षय्य आनन्द की उपलब्धि है।[5] हाँ, उस एक

1—महाभारत शान्तिपर्व १८०।१२ :-नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्। श्रीमद्भागवत ७.६।१ :- 'दुर्लभं मानुषं जन्म'। पुनः १०।५१।४७ :-'लब्ध्वा जनो दुर्लभ मत्र मानुषम्। कौटिल्य :-'नास्त्यर्थः पुरुषरत्नस्य। धम्मपद :-'किच्छो मनुस्स पटिलाभो। हेमचन्द्र त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित :-'अस्मिन्नपारे संसार पारावारे शरीरिणाम्। महारत्नमिवाऽनर्घ्यं मानुष्यमति दुर्लभम्॥' पुनः ३।५५५ :-संसाराब्धाविहा""दुर्लभं मानुषं जन्म, महो रत्नमिवोत्तमम्। मानस ७।४३।७ :-'बड़ेभाग मानुष तन पावा। पुनः ७।१२१।९ :-'नरतन सम नहिं कवनिउ देही।

2—महाभारत शान्तिपर्व १३९।६२ :-'सर्वस्य सुखमीप्सितम्,। पुनः १९०।९-सुखार्थमभिधीयन्ते। महावीर :-सव्वे जीवा पियाउआ सहसाया दुक्ख पडिकूला।
ALBERT EINSTEIN 'Out of my Later years. (London, 1950) P. 15 We all try to escape pain and death, while we seek what is pleasant,

3—तै० उ० ३।६:- आनन्दो ब्रह्मेति व्यजानात्। आनन्दाद्ध्येव खल्विमानि भूतानि जायन्ते। आनन्देन जातानि जीवन्ती आनन्दं प्रयन्त्यभि संविशन्तीति" पुनः २।७।९,३।६। बृ०उ० ३।९।२८ :-'विज्ञानमानन्दं ब्रह्म'। ब्र० सू० १।१।१२ :-'आनन्दमयोऽभ्यासात्'। अग्नि पु० ३।१:-'आनन्दः सहजस्तस्य व्यज्यते सकदाचन। सूरसागर १०।१०९।६ या ७२७।२ :-'सकल सुखकी सींव। मानस १।१९७।५,६ :-जो आनन्द सिंधु सुखराशी। सीकरतै त्रैलोक सुपासी। सोसुखधाम राम असनामा।

4—गीता ६।२१ :-सुखमात्यन्तिकं""। 5—तिलक गीतारहस्य प्र० ४।५।

ही लक्ष्य तक पहुँचने के हेतु, देश-काल-पात्र-भेद से, भिन्न-भिन्न मार्ग आविष्कृत अथच अनुसृत होते रहे हैं। और, विश्व के वरेण्य विचारकों एवं दार्शनिकों ने, दृष्टिकोण-भिन्नता के कारण, कभी एक की तो कभी अपर की श्रेष्ठता का प्रतिपादन भी किया है[1]। किन्तु तात्त्विक दृष्टि एवं समन्वय-बुद्धि द्वारा उक्त दृश्यमान् विरोध का भी सहज निरसन संभाव्य है[2]।

आध्यात्मिक-चरमोत्कर्ष काल के भाव-प्रवण ऋषियों तथा मनीषियों ने श्रद्धा-विश्वास की अमित महत्ता का उद्घोष अवश्य किया था,[3] परन्तु बुद्धि-विवेक की

1—(क) यजुर्वेद ४०।२ :- 'कुर्वन्नेवेह कर्माणि····। महाभारत शान्तिपर्व २७६।२० :-यथा कर्म तथा लाभ ····। गीता १८।११ :-नहि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः,। विष्णु पुराण :-'अपहाय निजंकर्म कृष्ण कृष्णेतिवादिनः। ते हरेर्द्वेषिणः पापाः धर्मार्थं जन्म यद्धरेः। मानस २।६२।२ :-निजकृत कर्म भोग···।' गुरु अर्जुन :-उद्यम करें दियाँ जीअ तू, कमा वंदियाँ सुख भुंज।'

HERBERT SPENSER—'The great aim of education is not knowledge but action G. B. Shaw—The way to have a happy life is to be busy doing what you like all the time having no time left to consider whether you are happy or not.

(ख) ब्रह्मसूत्र ३।३।३०,४२,४२,।४।१।१३।१४। गीता ४।३६,३६।

(ग) गीता १८।६६ :-'सर्वधर्मान्परित्यज्य··· माशुचः' मानस ७।१२२ क :- 'वारिमथे घृत होयबरु सिकताते बरु तेल। बिनु हरिभजन न भवतरिय, यह सिद्धान्त अपेल॥' पुनः ७।११५।३;४ :-सुनुखगेश हरिभक्ति बिहाई। जे सुखचाहहिं आन उपाई॥ तेशठ महासिन्धु बिनु तरनी। पैरि पार चाहहि जडकरनी॥'

2— म० म० पं० गोपीनाथ कविराजः 'भारतीय संस्कृति और साधना' (प्रथम खण्ड), पृ० २११। लोकमान्य बा० गं० तिलकः गीतारहस्य, पृ० ४३३।

3— ऋग्वेद ६।११३।२ :-"आ पवस्व·········श्रद्धया तपसा सुत इन्द्रायेन्दो परि स्रव" ॥ यजुर्वेद १६।३० :-व्रतेन·········श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते॥" पुनः २०.२४., मुण्डकोपनिषद् १.२.११., कठोपनिषद् २.३ १२., छान्दोग्योपनिषद् १.१.१० श्रीमद्भगवद्गीता ४.३६,१७.३,१३,१७, २८ १८.७१, १७.३ :- श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः" ॥ त्रिपुरारहस्यम्, ज्ञानखण्डः- ६.२५:- "श्रद्धा हि जगतां धात्री श्रद्धा सर्वस्य जीवनम्। मानस १.२ श्लोक. :-'भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ। पुनः ७.६० क :—"बिनु विश्वास भगति नहिं···।

उपेक्षा कदापि नहीं की थी[1]। और, आधुनिक विज्ञान एवं भौतिकवाद के युग में तर्क तथा बौद्धिकता का तूर्य-नाद तो हुआ है, किन्तु निष्ठा की उपयोगिता अस्वीकृत नहीं हो सकी है[2]। अकर्मण्यता की प्रतिष्ठा न तब थी, न अब है। वस्तुतः ज्ञान, कर्म और भक्ति—ये तीन भिन्न योग या मार्ग नहीं, अपितु एक ही सरणि के तीन क्रमिक सोपान हैं, एक ही प्रक्रिया की तीन क्रमिक अवस्थाएँ हैं। ज्ञान हमारे लक्ष्य-निर्धारण में सहायक होता है तथा तिमिराच्छन्न पथ को आलोकित करता है कर्म हमें स्पन्दित अथच गति-शील बनाता है और भक्ति से ह तन्मय तथा रस-मग्न होते हैं। सुतरां, जीवन को पूर्ण, सन्तुलित तथा समरस बनाने के हेतु तीनों ही अपरिहार्य हैं। किन्तु जहाँ ज्ञान एवं कर्म आनन्द-प्राप्ति के साधन-मात्र हैं। वहाँ भक्ति की साधन-साध्य-रूपा उभयात्मक स्थिति है। ज्ञान-लोक तथा कर्म-क्षेत्र में हम जिस आनन्द की संप्राप्ति के अर्थ नियोजन और उद्योग करते हैं, उसी आनन्द की अविरल धारा में निमज्जित होने का सुअवसर हमें भक्ति की भूमिका में आते ही प्राप्त होने लगता है। यही भक्ति की अनिर्वचनीयता का रहस्य है।

भक्ति-महारानी की अपरम्पार महिमा के उद्घोष से समग्र भारतीय वाङ्मय गुञ्जायमान् है। किन्तु उसे पुरुषार्थ-साध्य नहीं माना गया है। वह तो गुरु-कृपा, सन्त-भक्त-कृपा अथवा भगवत्कृपा से ही संभव है। पुनः गुरु, सन्त-भक्त तथा भग-

1—ऋग्वेद १.३.११-१., १०.१२५.१-८.। यजुर्वेद ३२।१४-१५:—या मेधां देवगणाः···मेधाविनं कुरु स्वाहा॥ मेधां मे वरुणो ददातु···। पुनः ३।३५ :-तत् सवितुर्वरेण्यं·········धियो यो नः प्रचोदयात्" ॥ अथर्ववेद ६।१०८।१-४ :-"त्वं नो मेधे प्रथमा·········मेधाविनं कृणु" ॥ महाभारत शान्तिपर्व १८०।२:-'प्रज्ञा प्रतिष्ठा भूतानां प्रज्ञा लाभः परो मतः। प्रज्ञा निःश्रेयसी लोके प्रज्ञा स्वर्गो मतः सताम्॥" पुनः २४८।३५ :-"बुद्धिरात्मा मनुष्यस्य बुद्धिरेवात्मनाऽऽत्मनि।" कालिदासः मालविकाग्नि मित्र १.२। मानस १।२।२,२।६, २।७।१, २।१८।७-८,।

2. Albert Einstein : Out of My Later Years' [London, 1950], P. 26 "But science can only be created by those who are throughly imbued with... the faith...I cannot conceive of a genuine scientist without that profound faith." Sir Arthur Eddington : 'The Philosophy of Physical Science [Cambridge, 1939], P. 222 "In the age of reason, faith yet remains supreme, for reason is one of the articles of faith."

वान्—इन तीनों में भी सर्वाधिक महत्त्व किनका है, यह विवाद का विषय बन चुका है। भगवान् से महत्तर तो कहीं सन्त-भक्त को भी माना गया है और कहीं गुरु को भी; परन्तु गुरु तथा सन्त-भक्त में "को बड़ छोट कहत अपराधू" कह कर ही मौन हो जाना पड़ता है। हाँ, 'भक्तमाल' के प्रणेता श्रीनारायणदास जी ने अवश्य ही इस जटिल समस्या का एक सुलभ समाधान प्रस्तुत किया है। उनकी दृष्टि में भक्त, भगवान् और गुरु तत्त्वतः अभिन्न हैं। यही नहीं, उन्होंने तो इससे भी एक कदम आगे बढ़कर "भगत भगति भगवन्त गुरु, चतुर नाम वपु एक"(मूल १) की स्पष्ट उद्घोषणा की है। इस प्रकार भक्त न केवल गुरु और भगवान् से अपितु स्वयं भक्ति से भी अभिन्न सिद्ध होते हैं। अस्तु, भगवद्गुरुभक्तिरूप सन्त-भक्तों को भगवद्-भक्ति प्राप्त करने का प्रयास नहीं करना पड़ता। वे स्वयं तद्रूप ही हैं। और, उनका चरित हमें न केवल राम-भक्ति की सुर-सरिता में अपितु ज्ञान-कर्म-भक्ति की त्रिवेणी (मानस १।२।७,८,६, दोहा १।२) में भी गोता लगाने का सुयोग प्रदान करता है जिससे हमारे समस्त कल्मष दूर होते हैं और हमें परम शान्ति तथा अव्याहत आनन्द की उपलब्धि होती है।

भक्ति, भक्त और भक्त-चरित की महिमा वस्तुतः अवर्णनीय है और 'भक्तमाल' अत्युच्च कोटि के भगवद्भक्तों तथा सन्त-महात्माओं के विलक्षण चरितों की माला है जो सबों को सम भाव से सुरभित एवं सुशोभित करने में समर्थ है। भक्त-चरित अनर्घ पारस है जो स्पर्श-मात्र से जीवन-लौह को सद्यः स्वर्ण में परिणत कर देता है। ऐसे एक रत्न का, (उसके क्षणिक सम्पर्क का) भी जब इतना महत्त्व है, तब 'भक्तमाल' तो ऐसे रत्नों की माला है। फिर उसके माहात्म्य का क्या कहना। वह उस अलौकिक एवं अमोघ शक्ति से सम्पन्न है जो समग्र पाप पंक को प्रक्षालित कर जीवन में ऋजुता, सुन्दरता तथा सरसता का संचार करती है। भक्ति के सम्बन्ध में तो परम सत्यनिष्ठ (टीका २) टीकाकार श्री प्रियादास का जोरदार कथन अक्षरशः सत्य है—"बिना भक्तमाल भक्तिरूप अति दूर है।"(टीका ६) इस महार्घ ग्रन्थ-रत्नको शताब्दियों से विद्वद्वर्ग एवं जन-साधारण के हृदय में समानरूप से जो सम्मानास्पद स्थान प्राप्त होता रहा है, वह सचमुच इसकी अद्भुत शक्ति तथा प्रभविष्णुता का प्रत्यक्ष प्रमाण है। अस्तु, इसकी अनीदृश महत्ता सर्व स्वीकृतप्राय है और एतत्सम्बन्धी विशिष्ट टिप्पणी की अपेक्षा नहीं प्रतीत होती।

दिनानुदिन बढ़ती हुई मांग को ध्यान में रखकर यदि ऐसे महत्त्वमय एवं लोकप्रिय ग्रन्थ के अनेक संस्करण हो चुके हों तथा भविष्य में और भी अधिक संस्करण निकलते रहें, तो इसे कुछ अस्वाभाविक नहीं कहा जा सकता। किन्तु प्रस्तुत संस्करण की अपेक्षा केवल मांग-पूर्त्ति के निमित्त नहीं है। वस्तुतः इसकी अनिवार्य आवश्यकता थी जिसकी सम्यक् पूर्ति का श्लाघ्य प्रयास (प्रातः स्मरणीय

महर्षिकल्प पं. श्रीरामवल्लभाशरणजी महाराज के प्रियशिष्य) विद्वान् सम्पादक श्रीजानकीदासजी श्रीवैष्णव ने किया है। इस तथ्यका अनुभव तब होता है जब हम प्रस्तुत संस्करण की कतिपय ध्यातव्य विशिष्टताओं पर दृष्टिपात करते हैं।

'भक्तमाल' के अनेकानेक संस्करणोंने जहाँ भक्ति-प्रवण एवं श्रद्धाविल जनों को तोष प्रदान करने में विशिष्ट योग-दान किया है, वहीं अज्ञान-प्रमाद-आग्रह-जन्य पाठान्तर ने उनके समक्ष अनेक जटिल ग्रन्थियाँ एवं भयावह समस्याएँ भी उत्पन्न की हैं। 'श्रीरामचरितमानस' प्रभृति अन्य सुख्यात ग्रंथों की ही भाँति 'भक्तमाल' की भी कोई ऐसी प्रति उपलब्ध नहीं होती जो स्वयं रचयिता द्वारा लिखित अथवा संशोधित हो। ऐसी परिस्थिति में शुद्ध पाठ का निर्णय करना कितना कठिन है, इसे वे ही समझ सकते हैं जिन्होंने पाठानुसंधान के दुर्गम पथ पर चलने का यत्किंचित् भी आयास किया हो। यह सचमुच हर्ष और संतोष का विषय है कि कतिपय अनिवार्य बाधाओं तथा सीमाओं के रहते हुए भी प्रस्तुत संस्करण में पाठ-शोध का कार्य अपेक्षित अवधानता अथच आशातीत सफलता के साथ सम्पादित हो सका है। फलतः अनेक असमाधेय समस्याओं का सहज समाधान हुआ है।

प्रस्तुत संस्करण द्वारा न केवल परिशुद्ध पाठ का परिज्ञान होता है, प्रत्युत कतिपय सर्वथा भ्रांत धारणाओं का सम्यक् निराकरण भी होता है। उदाहरणार्थ 'भक्तमाल'के प्रणेताका वास्तविक नाम 'श्रीनारायणदास' था (मूल २१४)जिन्हें 'नाभाजी भी (टीका ६३३) कहा जाता था। किन्तु अनेक लब्धप्रतिष्ठ विद्वानोंने, न जानें क्यों, उन्हें 'नाभादास'[1] के नामसे अभिहित किया है ? पुनः 'भक्तमाल' के प्रख्यात टीकाकार श्रीप्रियादासजी वस्तुतः गौड़िया-सम्प्रदाय के श्रीमनोहररायजी के शिष्य थे (टीका ६३०, ६३१) जबकि स्वयं भक्तमालकार श्रीरामानन्द-सम्प्रदायके श्रीअग्रदेवाचार्यके शिष्य (मूल४,२१४) थे। किन्तु इतनी स्पष्ट बातके सम्बन्धमें भी विख्यात विद्वानोंने, यह भ्रम फैलाकर कि 'प्रियादासजी नाभादासजी के शिष्य थे'[2] इस वेद-वाक्यको चरितार्थ किया है—'उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुतत्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम्।' (ऋक् १०।७१।४) इसीप्रकार श्रीरामानन्दाचार्यादिके जीवन-वृत्तादि के विषयमें जो भ्रान्तियाँ फैली हुई हैं। प्रस्तुत संस्करण में वे सभी समुचित रीत्या निराकृत हुई हैं।

---

1. पं० रामचंद्र शुक्ल : 'हिंदी-साहित्य का इतिहास' (पाँचवाँ संस्करण), पृ. १२८, १४६, १४७, १७४, १८५, १६४, ४०५। मिश्रबंधु : 'हिंदी-नवरत्न' (सप्तम संस्करण), पृ. २८, ५६, ५७, ५६।

2. मिश्रबंधु : 'हिंदी-नवरत्न' (सप्तम संस्करण) पृ. ५७ "नाभादास गोस्वामीजी के समकालीन थे। सं० १७६६ वाले उनके शिष्य प्रियादास ने गोस्वामीजी के संबंध में ११ छंद कहे हैं।"

श्रीप्रियादासजी की 'भक्तिरसबोधिनी कवित्त टीका' मूल 'भक्तमाल' का अविच्छेद्य अंग बन चुकी है, फलतः मूल को सम्यक् रूपेण हृदयंगम करने के लिए यह टीका अपरिहार्य है। 'भक्तमाल' के कुछ संस्करणों में तो यह टीका है ही नहीं और किसी-किसी संस्करण में यह आंशिक रूप में प्रकाशित है। प्रस्तुत संस्करण में मूल के साथ-साथ यह टीका भी समग्र रूप में प्रकाशित हो रही है, यह पर्याप्त संतोष की बात है। यही नहीं, जिनके विषयमें श्रीप्रियादासजी ने मौन धारण किया है उनके विषयमें भी अनेक स्रोतोंसे प्रभूत प्रामाणिक सामग्रियोंका संकलन हुआ है। यह कार्य श्रीजानकीदासजीकेसे कर्मठ उत्साही तथा निष्ठावान् व्यक्तित्वको ही संभव था। पुनः मूल तथा उपर्युक्तटीकाको विशेष बोधगम्य-बनानेके हेतु जो पाद-टिप्पणियाँ दी गयी हैं, वे भी कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। और, साधुत्व, कवित्व तथा वैदुष्य की सजीव प्रतिमा मानसतत्त्वान्वेषी पं० श्रीरामकुमारदासजी (श्रीरामग्रन्थागार, मणि-पर्वत, श्रीअवध) की समर्थ लेखनी से प्रसूत 'भक्तमाल भास्कर' तो इस संस्करण का अप्रतिम वैशिष्ट्य है। इस संस्करण का सविस्तर परिचय सम्पादकीय प्राक्कथन तथा ग्रन्थ के अवलोकन से ही प्राप्त करना समीचीन होगा।

अस्तु, 'भक्तमाल' का प्रस्तुत संस्करण अनेक दृष्टियों से विशिष्ट महत्त्व एवं सम्यक् सम्मान का अधिकारी है। इस समर्हणीय अथच स्पृहणीय सफलता के लिए सुयोग्य एवं कर्त्तव्य-निष्ठ सम्पादक महोदय को जितनी भी प्रशंसा हो, थोड़ी है। आशा है, अपनी असाधारण महत्ता तथा उपादेयता के कारण यह ग्रन्थ-रत्न भक्त एवं सुधी पाठकों का कण्ठहार बन सकेगा।

पाटलीपुत्र (पटना)
आश्विन कृष्णा एकादशी
भौमवार, सं० २०२२ वि०

रामतवक्या शर्मा

नोट:—भक्तमाल के प्रस्तुत संस्करण के विषय में उन परमपूज्य महात्माओं की सम्मतियों का तो कोई प्रश्न ही नहीं रहता कि जिनके आशीर्वादात्मक प्रोत्साहन के आधार पर ही इसका प्रकाशन हुआ है (जिनके नाम संपादकीय प्राक्कथन में आ चुके हैं) उनके अतिरिक्त जिन विद्वानों, गुरुजनों की सम्मतियाँ प्राप्त हुई हैं उनमें से वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय के अनुसन्धान विभागाध्यक्ष महामहिम विद्वद्वर श्रीबलदेव उपाध्यायजी महोदयकी सम्मति ही दी जा सकी है। अन्य सम्मतियां स्थानाभाव से नहीं दी जा सकी हैं। अतः हम सभी सम्मति प्रदाताओं के एवं हमारे परम आदरणीय भूमिका लेखक विद्वद्वरिष्ठ डा० श्रीरामतवक्या शर्माजी के परम आभारी होते हुए सबको कोटिशः धन्यवाद देते है।

—संपादक।

प्राक्कथन

(बिना भक्तमाल भक्ति रूप अति दूर है)

श्रीमद्भगवद्भक्ति रस रसिक महानुभावों से यह अविदित नहीं है कि अनादिवैदिक श्रीसम्प्रदायाचार्य अनन्त श्रीस्वामी श्रीअग्रदेवाचार्य चरण चंचरीक प्रातः स्मरणीय स्वामी श्रीनारायणदासजी उपनाम श्रीनाभास्वामीजी रचित भक्तमाल ग्रंथका भक्तिमार्ग एवं भक्त जगत में क्या स्थान है? क्या सम्मान है?।

यों तो भक्त चरित से वेद पुराण श्रीमद्रामायण महाभारत आदि सभी आर्ष ग्रन्थ ओत प्रोत हैं, श्रीमद्भागवत में विस्तार से वर्णित है, परन्तु वहाँ सब यत्र तत्र प्रकीर्ण रूप में ही प्राप्त होते हैं। स्वतंत्र ग्रंथ के रूप में लाने का श्रीनाभास्वामीजी का प्रायः यह सर्व प्रथम प्रयास है।

भक्तमाल के टीकाकार स्वामी श्रीप्रियादासजी महाराजने आरंभ में ही (कवित्त सं० ८ में) भक्ति के समस्त अंगोंके लक्षणों का वर्णन करते हुए लिखा है कि इन सब से युक्त हो जाने पर भी भक्तमाल के अध्ययन श्रवण के बिना भक्तिका रूप बहुत दूर की चीज है।

भक्तमाल क्या है? भक्तमाल है भगवान के महाप्रेमी महान सन्तों के अलौकिक और व्यावहारिक चरित्रों का चित्रण। वेद पुराणादि जिस भक्ति के आचरण करने का उपदेश करते हैं उसके नाना प्रकार से किये हुए आचरणकी गाथायें। अतः जीव को जो ज्ञान इन प्रत्यक्ष किये हुए आचरण की कथाओं से प्राप्त होता है वह उपदेश के कथन श्रवण मात्र से नहीं हो सकता, तभी तो गोस्वामीपाद श्रीतुलसीदासजी ने यह सिद्धान्त किया है कि:—

"मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहि जतन जहाँ जो पाई॥

सो जानब सत्संग प्रभाऊ। लोकहु बेद न आन उपाऊ ॥
बिन सत्संग विवेक न होई। राम कृपा विन सुलभ न सोई ॥"

सत्संग शब्दका अर्थ है सत्पुरुषों (सन्तों) का संग=साथ=सहवास। सन्तोंके साथ समय विताने में भगवच्चरित्र एवं उपदेश वचन तो अनायास सुनने को मिलते ही हैं, उनके आचरित चरित्र भी देखने को मिलते हैं, जिनसे भक्ति के क्रियात्मक ज्ञानकी प्राप्ति होती है। बस यही लाभ भक्तमाल के अध्ययन श्रवण मनन से भी होता है। भक्तमाल में भक्तों के भक्तिमयी क्रिया कलाप का विषद् वर्णन हुआ है जिसको पढने सुनने समझने और विचार का विषय बनाने से भक्तिका अनावृत्त रूप जो हृदय में प्रविष्ट होता है वह किसी भी अन्य ग्रंथ के श्रवण पठनादि से संभव नहीं हो सकता। ऐसी परिस्थिति में श्रीप्रियादासजी की "विना भक्तमाल भक्तिरूप अति दूर है" वाली उक्ति परम युक्त है यही कहना पड़ता है।

(भक्तमाल का वर्णन क्रम और शैली)

भक्तमाल के आदि में श्रीमद्भागवतादि आर्ष ग्रंथों में आये हुए भगवान के नित्य विभूति के पार्षदों के, भगवान श्रीशंकर आदि देव भक्तों के और भक्त ऋषि महर्षि राजर्षियों के चरित्रों का चित्रण वन्दन आदि है और संख्या २८ के छप्पै एवं २९ के दोहे में वैष्णव चतुः सम्प्रदाय में संगठित चारों संप्रदायों के प्रधानाचार्यों का गुणगान होकर छप्पै संख्या ३० से ३३ तक कलियुग के आदि में अवतरित होने वाले आचार्यपाद श्रीशठकोप स्वामीजीके श्री सिन्धुजा संप्रदाय के आचार्यों का स्वतंत्र रूप से (क्रम रहित) वर्णन हुआ है तथा छप्पै ३४ के "श्रीमारग उपदेश कृत श्रवण सुनो तिनकी कथा" से छप्पै ४१ में स्वाचार्य श्रीअग्रदेवाचार्यजी तक श्रीसंप्रदाय (श्रीरामानन्द संप्रदाय) के आचार्यों का वर्णन हुआ है। इसके आगे भगवत्पाद श्रीशंकराचार्यजी से आरंभ होकर जिस भक्तमणि का जब भी परिचय प्राप्त हुआ उसको उसी स्थान पर इस भक्त रत्नमाला में पुरो दिया

गया है इसके अतिरिक्त भक्तमाल में आदि से अन्त तक न कोई काल का क्रम है न किसी भी संप्रदाय की गुरु परम्पराका और न गुरु शिष्य का ही कोई क्रम है। कहीं प्रसंगवश उल्लिखित हो जाने वाले कुछ स्थलों को छोड़कर भक्तमाल में उन महापुरुषों (भक्तों) के वर्ण कुल जन्मस्थान स्थिति काल तथा उनके द्वारा निर्मित ग्रंथों के नामों का भी कोई उल्लेख नहीं है। इस ऐतिहासिकों की आवश्यक सामग्रीके न रहते हुए भी भक्तमाल से जो यथार्थ इतिहास मिलता है वह प्रायः अन्यत्र नही प्राप्त होता। दक्षिण भारत के कुछ भक्तों की कथायें दक्षिणकी तमिल तेलगू आदि भाषाओं में हैं परन्तु वे स्व संप्रदायकी सीमा में सीमित बहुत ही अल्प हैं, जब कि भक्तमाल में स्व पर की कोई सीमा नही।

(वैष्णव चतुः संप्रदायके संगठन और अन्य संप्रदायों का समादर)

वैष्णव चतु संप्रदाय के आचार्यों को तो भक्तमाल कार, भगवान के चोबीस अवतारों की भांति एक ही भगत्तत्व मानते हैं, इसके अतिरिक्त अन्य संप्रदायों को भी वे उसी समादरकी दृष्टि से देखते हैं इतनाहीं नहीं भक्तमाल में तो भक्त मात्र सब एकही दृष्टि कोण से देखे जाकर उनके गुणगान हुए हैं। वैष्णव वैष्णव में तो भेद का कोई प्रश्नही नहीं उठता, भक्तमाल में तो भेद भाव वैष्णव अवैष्णव में भी नहीं, शैव वैष्णव में भी नहीं एवं किसी दार्शनिक मतभेद को लेकर भी नही है। भक्तमाल में भेद हैं केवल आस्तिक और नास्तिक में, भक्त और अभक्त में।

भक्तमाल में संप्रदाय परिपाटी पद्धति मार्ग मत पथ या पंथ आदि शब्द समानार्थक (पर्याय रूप) में व्यवहृत हुए हैं, किसी भेद भाव से या ऊंच नीच की भावनाको लेकर नहीं। मात्र एक बार एक साथ वैष्णव चतुः संप्रदायका वर्णन भी इसी लिये हुआ है कि, श्रीरामानन्द श्रीनिम्बार्क श्रीविष्णुस्वामी एवं श्रीमाध्वाचार्य के चारों संप्रदायों का संगठन भक्तमाल काल में हो चुका था। चारो संप्रदायों

की संयुक्त रूप में ५२ द्वारा गादियों एवं अनी अखाड़ों आदि का भी प्रायः निर्माण हो चुका था। इन चारो सम्प्रदायों में महान ऐक्य अनादि काल से चला आता है जो अद्यावधि अविच्छिन्न रूप में विद्यमान है।

चारों संप्रदायों में दीक्षा के पंच संस्कारों में माला संस्कार का परिगणन, सतत श्रीतुलसी कंठी का धारण (हीरा= तुलसी का १ मणि याँ धारण भी इसी कारण से प्रचलित है कि जब एक ही काल में एक ही महापुरुष के द्वारा सहस्रों को दीक्षा प्रदान की जाती है तो तुरंत इतनी अधिक कंठियों का प्राप्त होना असंभव हो जाता है और एक एक मनियाँ पिरोकर प्रदान कर दिया जाना ही संभव हो सकता है), भूत भावन भगवान श्रीशंकर का भक्तराज रूप में पूजन, भोजन व्यवहार, आचार विचार, रहन सहन एवं व्रतादि उपासन, आरती स्तुति एवं पंगत के जयघोष तकमें ही वह ऐक्य सीमित नहीं, इससे भी आगे देखा जाता है कि एक संप्रदाय में दीक्षा प्राप्त वैष्णव दूसरी संप्रदाय के महापुरुषों के साधक शिष्य बन जाते हैं, वे उन सिद्ध गुरुदेव को भी उसी प्रकार से भगवद्रूप मानते हैं जिस प्रकार से मंत्र प्रदाता श्रीगुरुदेव को और मंत्र तिलक नाम या उपास्य भगवद्रूप के परिवर्तन की न कभी उन साधक शिष्य को कोई आवश्यकता प्रतीत होती है न सिद्ध गुरुदेव को एवं यदि मंत्रप्रदाता गुरु देव जीवित हैं तो उनको भी यह सुनकर कोई क्षोभ नहीं होता प्रत्युत प्रसन्नता ही होती है और कभी दोनो आचार्यों का एक साथ समागम हो जाता है तब वे वैस्णव अपने को कृत कृत्य मानते हुए समान भाव से दोनों की सेवा में तत्पर हो जाते हैं।

श्रीरामानन्द संप्रदाम में एकादशी आदि व्रतों में ५५ घटिकात्मक वेध की मान्यता है और श्रीनिम्बार्क सम्प्रदाय में ४५ घटिकात्मक की। शास्त्र में ऐसे वचन प्राप्त होते हैं किसी भी कारण से

पूर्वविद्धा व्रत नहीं होना चाहिये, पर बद्ध होनेमें कोई हानि नहीं। अतः इस महान ऐक्य की ही यह चरम महिमा है कि श्रीरामानन्द संप्रदाय के उन छावनी आदि महान स्थानों में ४५ घटिकात्मक वेध मानकर ही व्रत होते है जहां सभी संप्रदायों के अधिकाधिक सन्त विराजते हैं। इन स्थानों की आरती की स्तुति पंगत की जय आदि में भी चारों संप्रदायों की मान्यता का समानरूप से समादर किया जाता है। यह महान ऐक्य अन्यत्र असंभव है।

श्रीरामानुजाचार्यजी श्रीनिम्बार्काचार्यजी श्रीमाध्वाचार्यजी और श्रीविष्णु स्वामीजी ये चारों आचार्य दक्षिण भारत में प्रकट हुए हैं इस कारण से कुछ लोग चतुःसंप्रदाय के संगठन में श्रीरामानन्द संप्रदाय के स्थान पर श्रीरामानुज संप्रदायको कहते और समझते हैं परंतु किसी संगठन में एक देश जाति या कुल में उत्पन्न होना उतना आवश्यक नहीं होता जितना आचार विचार और पारस्परिक व्यवहार में एकता होना आवश्यक होता है। यह एकता श्रीरामानन्द संप्रदाय के साथ ही देखी जाती है, श्रीरामानुज सम्प्रदाय के साथ इसका होना असंभव है।

श्रीनिवार्काचार्यजी श्रीमध्वाचार्यजी और श्रीविष्णुस्वामीजी के जन्म दक्षिण भारत में हुए हैं परंतु इनका निवास और प्रचार का केन्द्र उत्तर भारत ही विशेष रहा है। श्रीरामानुज संप्रदाय की तरह से इनके ग्रंथ भी दक्षिण की द्रविड तामिल तेलगू आदि भाषाओं में अधिक न होकर संस्कृत एवं व्रज भाषा में ही हैं। इन सबके यहां द्रविडागम या द्रविड वेद वेदान्त प्रथक न होकर संस्कृत भाषा के ग्रंथो ही की मान्यता है। अतः ये सम्प्रदाय उत्तर के आनन्द भाष्यकार श्रीरामानन्दाचार्यजी के सम्प्रदाय के महान विरक्त समाजमें ही संगठित हुए और सयुक्तरूपमें ५२ द्वारा गादियों एवं अनी आखाडे आदिकी स्थापना की। व्रतोत्सव सेवा पूजा आरती प्रसाद पंक्ति में भी परस्पर

समन्वय स्थापित कर चारों सम्प्रदाय श्रीभगद्भक्ति रूपी दुग्धामृतको समान रूप से प्रदान करनेवाले एक ही गऊ के चार स्थनों की उपमा को प्राप्त हुए हैं। इतना होते हुए भी श्रीभक्तमालकार समन्वयाचार्य श्रीनाभास्वामी का यह कोई आग्रह नहीं कि वैष्णवों के सम्प्रदाय चार ही हैं, इनके अतिरिक्त अन्य कोई सम्प्रदाय हैं ही नहीं। वे दक्षिण के श्रीरामानुजादि एवं उत्तर के श्रीराधावल्लभीयादि सभी सम्प्रदायों को समानरूप में ही मान सम्मान देते हैं।

यह हुई भक्तमाल के वर्णन क्रम और शैली की बात अब हम भक्तमाल की टीका टिप्पणियों और भक्तमाल का आधार लेकर लिखे गये ग्रंथों का कुछ जिकर करके भक्तमाल में प्राप्त पाठों की अशुद्धियों और संशोधन के विषय पर विचार करेंगे।

(भक्तमाल पर टीका टिप्पणी और आधारित ग्रंथ)

पूज्यपाद श्रीरूपकलाजी महाराजने अपनी टीकावाली भक्तमाल के पृष्ठ ३५ पर एक तालिका दी है जिसमें भक्तमाल पर टीका टिप्पणी और आधारित १६ ग्रंथ उल्लिखित किये गये हैं।

१ भक्तिरस बोधिनी कवित्त टीका (श्रीप्रियादासजी कृत)
२ भक्त उरवसी अनुवाद (श्रीलालचन्द्रदासजी कृत)
३ भक्तमाल टिप्पणी सहित (श्रीवैष्णवदासजी श्रीनिम्बार्कीय कृत)
४ फारसी अनुवाद (श्रीगुमानीलालजी कृत)
५ गुरुमुखी भक्तमाल (श्रीकीर्तिसिंहजी कृत)
६ भक्तिप्रदीप, २४ निष्ठावाली उर्दू (श्रीतुलसी रामजी कृत)
७ भक्तकल्पद्रुम, २४ निष्ठावाली हिन्दी (श्रीप्रतापसिंहजी कृत)
८ श्रीरामरसिकावली (रीवा नरेश श्रीरघुराजसिंहजी कृत)
९ श्रीरसिक भक्तमाल (स्वामी श्रीजीवारामजी श्रीयुगलप्रियाजीकृत)
१० भक्तमाल छप्पै (भारतेन्दु बा० श्रीहरिश्चन्द्रजी कृत)
११ रमूजे मिहरे वफा, फारसी (श्रीतपस्वीरामजी कृत)
१२ हरिभक्ति प्रकाशिका (पं० श्रीज्वाला प्रसादजी मिश्र कृत)

१३ भक्तनामावली (श्रीध्रुवदासजी कृत)
१४ भक्तनामावली (श्री राधाकृष्णदासजी कृत) काशीनागरी सभा
१५ भक्तमालका अंग्रेजी खर्रा (श्रीभानुप्रतापजी तिवारी कृत)
१६ मिलनिंग्स अंग्रेजी (सरजार्जग्रियर्सन कृत)। इनके अतिरिक्त संस्कृत श्लोकबद्ध भक्तमाल आदि अन्य भी अनेक हैं जिनका इस तालिका में उल्लेख नहीं है।

इनमें प्रथम परिगणित श्रीप्रियादासजी कृत भक्तिरस बोधिनी टीका ही एक ऐसी टीका है जो मूल का अभिन्न अंग बन गई है और भक्तमाल मूलको इस टीकाके बिना अब प्रायः कोई नहीं पढते सुनते।

संख्या ९ की श्रीरसिक भक्तमाल श्रीनाभास्वामीजी के पीछे के भक्तों की कथाका परमोत्तम ग्रन्थ है।

रींवानरेशकी श्री रामरसिकावली स्वतंत्र ग्रंथ है।

२४ निष्ठावाली उर्दू और हिंदी में बहुत कम कथायें संक्षिप्त और स्वतंत्र रूप से लिखी हुई है।

सं० ३ वाली में कुछ टीका कवित्त निकाल दिये गये हैं।

अंग्रेजी फारसी आदि एवं अन्यान्य सबके विषय में यही कहा जा सकता है कि ये सब भक्तमाल के कुछ भाव एवं कथाओं को लेकर निर्माण किये गये स्वतंत्र ग्रंथ हैं।

भक्तमाल श्रीप्रियादासजी की टीका के सहित मूल के और हिन्दी गद्य टीकाओंके सहित जितने भी संस्करण प्रकाशित देखने में आते हैं उनमें सामान्य पाठान्तर तो श्रीरामचरित मानस की तरह से देखे ही जाते हैं, इन पर हमें कुछ भी विचारणीय नहीं है जिनमेंकि ग्रंथ के छन्द में अथवा अर्थ में कोई अन्तराय नहीं उपस्थित होता, क्योंकि श्रीरामचरित मानस की भांति ही भक्तमाल की भी कोई प्रति ग्रंथकर्ता के हाथ की अथवा टीकाकार श्रीप्रियादासजी के हाथ की लिखि हुई उपलब्ध नहीं होती परन्तु पाठान्तरों के अतिरिक्त जो पाठ ऐसे अशुद्ध

मिलते हैं कि जिनसे ग्रंथका छन्द ही भंग हो जाता है अथवा तो अर्थ में महान ऐतिहासिक दोष उपस्थित होता है, वे संशोधनीय हैं और इस संस्करण में उनका संशोधन हुआ है।

(भक्तमाल संशोधन का आधार)

अनन्त श्रीस्वामी मणिरामकी की छावनी श्रीअयोध्याजी के सभा भवन में जब अनन्त श्रीगुरुदेव (श्रीअयोध्या जानकी घाट निवासी श्री साकेत वासीसाधुकुल कमल दिवाकर जगदोद्धारक जगद्गुरु अनन्त श्री पं० रामवल्लभाशरणजी महाराज) श्रीभक्तमालकी कथा करते थे तब विज्ञ सन्तों द्वारा यह प्रश्न हुआ ही करता था कि भक्त-माल ग्रंथमें जो ये छन्दभंग गतिभंग यतिभंग आदि महान काव्यदोष और ऐतिहासिक भ्रमोंके उत्पादक अप्रासंगिक अर्थदोष वाले अशुद्ध पाठ छपे हुए प्राप्त हैं यह अशुद्धियां श्रीनाभास्वामीजी की रचना में ही हैं अथवा पीछे से प्रतिलिपिकारों के अज्ञानवश एवं आग्रह विशेष के कारण आ गई है, एवं श्रीगुरुदेवका यही उत्तर होता था कि ऐसे महान काव्यदोषों को कोई भी ग्रंथकार अपने ग्रंथ में स्थान दे यह तो सर्वथा असंभव है, यह सब दोष पीछे से ही उन्हीं कारणों से उपस्थित हुए हैं जो आपलोग कह रहे हैं। ये सब संशोधनीय हैं, श्रीडिप्टीजी ने जब भक्तमाल छपाने को भेजी उससे पहले हमसे जिकर नहीं किया नहीं तो इनके संशोधनका हमारा विचार रहा और हम उनको संशोधनके लिये कहते।"

जब श्रीचरणों के द्वारा जयपुर के प्रेम प्रकाश प्रेस से प्रकाशित होने के लिये श्रीरामचरितमानस आदि श्रीगोस्वामीजी के ग्रंथों का संशोधन हो रहा था तब भी आप कभी कभी कहा करते थे कि "कभी समय पाकर भक्तमाल का संशोधन भी करना है।"

जयपुर से प्रकाशित होनेवाले सन्त पत्र में श्रीवृन्दावन निवासी भक्तमाल मर्मज्ञ सन्त परमहंस श्रीगंगादासजी महाराजने भी भक्तमाल का शुद्ध पाठ प्रकाशित करना आरंभ किया था, जिसमें इन अशुद्धियों का बहुत कुछ संशोधन हो चुका था परंतु कालकी करालता से सन्त का प्रकाशन स्थगित हो जाने के कारण वह कार्य अधूरा ही रह गया था। तभी से दास के मन में अनन्त श्रीगुरुदेव के हार्दिक भावों के अनुसार भक्तमाल का संशोधित शुद्ध संस्करण प्रकाशित करने की इच्छा चली आ रही थी।

भक्त भक्ति भगवन्त एवं श्रीगुरुदेव की असीम अनुकंपासे इधर १०।१२ वर्ष से दासका श्रीअवध वास हुआ तब यह भक्तमाल संशो-धन की भावना फिर जागरित हुई और श्रीअवधके भक्तमाल मर्मज्ञ श्रीयुगल माधुरीकुंज नजर बाग के श्रीमहाराजजी श्रीमैथिलीशरणजी महाराज की श्रीचरण सन्निधि में इसका जिकर आया तब आपके द्वारा प्रोत्साहन प्राप्त हुआ। फिर मणि पर्वत श्रीअयोध्याजी के भक्त-माल मर्मज्ञ मानस तत्वान्वेषी श्रीराम ग्रंथागार के संस्थापक और संचालक पं० श्रीरामकुमारदासजी महाराज के द्वारा भी प्रोत्साहन मिला इसी समय श्रीवृन्दावनस्थ श्रीजी की कुंज से भक्तमालका हिन्दी गद्य टीकायुक्त एक सुन्दर संस्करण प्रकाशित हुआ था जिसमें किसी विशेष आग्रह के वश श्रीप्रियादासजी की टीका के कुछ कवित्त छोड़ दिये गये थे, जिसके विरोध में भक्तमाल जगतमें हल चल (खच खच) उठी थी, श्रीअवध काशी वृन्दावनादि अनेक स्थानों में सभायें हुई थी, विरोध प्रकाशित हुए थे और उक्त संस्करण के संपादक एवं प्रकाशकों की ओर से समाधान होने पर ही वे कोलाहल शान्त हुए थे। इसी सिलसिले में श्रीचारुशीला स्थान श्रीजानकी घाट श्री अवध में जो सभा हुई थी उसमें जहाँ तक मुझे स्मरण है श्रीअवध के प्राय: सभी शीर्ष सन्त महन्त एवं विद्वान, जैसे बड़ा स्थान श्री अयोध्या जीके महन्त विन्दुगाद्याचार्य श्री रघुवर प्रसादाचार्यजी महाराज लक्ष्मण दुर्गके महन्त रसिकाचार्य श्री सीतारामशरणजी महाराज, दार्शनिक आश्रम श्री जानकी घाटके आचार्यपाद वर्तमान वाराणसेय संस्कृत

विश्वविद्यालय वाराणसी के वेदान्त व्याख्याता दार्शनिक सार्वभौम स्वामी श्री वासुदेवाचार्यजी महाराज, श्रीरामवल्लभाकुंज श्रीजानकी घाट के आचार्यपाद वेदान्ती श्री रामपदारथदासजी महाराज, श्री रामकुंज श्री रामघाटके आचार्यपाद पं० श्री अखिलेश्वरदासजी महाराज श्री मणि पर्वत श्री अयोध्याजी के उपरोक्त श्री मानस तत्वान्वेषीजी महाराज, श्रीमणिरामजीकी छावनीके ज्ञानवयोवृद्ध रामायणी श्रीरामसुन्दरदासजी महाराज, श्री तुलसी साहित्यके सिद्धान्त तिलक नामक विषदभाष्य कार स्वामी श्री श्री कान्तशरणजी महाराज, दुर्जन करि पंचानन परमहंस श्री रामचन्द्रदासजी महाराज, हरिद्वारके योगीराज डा० श्री गोवत्सजी महाराज, श्री वृन्दावनके महाकवि श्री जयरामदेवजी महाराज आदि अनेकानेक महाविभूतियोंकी सम्रुपस्थितिमें यह प्रस्ताव पारित हुआ था कि इन सब अशुद्धियोंका संशोधन होकर भक्तमालका शुद्ध संस्करण प्रकाशित होना चाहिये।

उपरोक्त प्रस्तावके अनुसार समन्वय नामक मासिक पत्रमें सटीक भक्तमालका शुद्ध पाठ प्रकाशित होना आरंभ भी हुआ था परंतु अनेक कारणोंसे समन्वय भी आगे न चलकर ४ या ५ महिने में ही बंद हो गया और भक्तमालका कार्य फिर रुक गया।

अभी कुछ मास पूर्व दासका अनायास श्रीकाशीजी आना हो गया और शुद्ध भक्तमाल प्रकाशित करने के लिये यहां से भी मिश्र-पोखरा स्थित श्रीकाशी विद्यामन्दिर के संस्थापक संचालक एवं अध्यक्ष आचार्यपाद दार्शनिक-पोस्टाचार्य स्वामी श्रीरामलक्ष्मणाचार्यजी महाराज, आदर्श श्रीमद्रामानन्द महाविद्यालयके प्रधानाचार्य विद्वद्वर्य पं० श्रीशिवरामदासजी महाराज, अपने श्रीगुरु बन्धु वेदान्ताचार्य पं० श्री रघुवर गोपालदासजी, व्याकरण वेदान्ताचार्य पं० श्रीबालमुकुन्ददासजी आदिके और यहीं पर वेदान्तपीठ अहमदाबाद (गुजरात) के आचार्यपाद पंडित सम्राट स्वामी श्रीवैष्णवाचार्यजी महाराज एवं विद्वद्वरिष्ट महंत स्वामी

श्रीवेंकटेश्वराचार्यजी महाराजके भी प्रोत्साहनात्मक आशीर्वाद प्राप्त हुए। श्रीरामनवमी पर श्रीअवध गया तब श्रीमणिरामजी की छावनी के वर्तमान होनहार महन्त श्रीनृत्यगोपालदासजी महाराज, भूतपूर्व कथावाचक श्रीदेवेन्द्राचार्यजी महाराज एवं वर्तमान व्यास श्रीहरिनाम दासजी महाराज, वाटिकावाले महाराजजी श्रीरामसेवकदासजी एवं दास पर पितृवत् वात्सल्य रखनेवाले रामायणी श्रीवासुदेवदासजी महाराज, जयपुर मंदिर एवं श्रीलालसाहब दरबार के श्रीमहन्त श्रीजानकी-रमणशरणजी एवं श्रीजानकीजीवनशरणजी महाराज एवं श्री हनुमान बाग वाटिकाके सन्तोंके द्वारा भी प्रोत्साहन मिले और काशीकी प्रमुख हिन्दी प्रकाशक फर्म ठाकुर प्रसाद एंड संस, राजदरवाजा के अध्यक्ष सेठ श्रीठाकुर प्रसादजी अग्रवाल ने सहर्ष प्रकाशन करना स्वीकार कर लिया जिसके फलस्वरूप भक्तमाल का यह शुद्ध संस्करण आप सब महानुभावों के कर-कमलों में सम्रुपस्थित है। विज्ञ पाठकों से मेरी करबद्ध प्रार्थना है कि इस संशोधन में जो आप लोगों को "सत्यं शिवं सुन्दरम्" देख पड़े उसको उपरोक्त महात्माओं का प्रसाद समझ कर ग्रहण करलें और जो असुन्दर प्रतीत हो उसको दास की भूल जानकर क्षमा करदें।

भक्तमाल की भक्तिरसबोधिनी कवित्त बद्ध टीका के रचयिता सन्त शिरमोर श्रीप्रियदासजी महाराज नितान्त यथार्थ (सत्य) वक्ता हैं। आपने आरम्भ में संख्या २ के कवित्त में कहा है "सचाई सुखदाई लागै" इसी के अनुसार जिन महापुरुषों के चरित्रों से पूर्ण परिचय प्राप्त करसके उन्हीं के चरित्रों का वर्णन आपने किया है, और रेलगाड़ी आदि यातायात साधनों के अभाव के उस युगमें श्री अयोध्या काशी आदि दूरदेशों के जिन महापुरुषों के चरित्रों से आप को पूर्ण परिचय नहीं हुआ उनके श्रीनाभा स्वामीजीके मूल वर्णन पर स्वयं कुछ भी न लिखकर अछूता ही छोड़ दिया है। दास ने इस

संस्करण में ऐसे स्थलों पर तत्तत्संप्रदाय के ग्रंथों से लेकर उनकी कथाओं को सम्मिलित करने की यथाशक्ति चेष्टा की है एवं जिन महापुरुषों के विषय में श्रीप्रियादासजी महाराज ने संक्षेप में लिखा है उनकी कथाओं में परिवर्धन भी किया गया है। टिप्पणी में कुछ कठिन शब्दों के अर्थ और सम्बन्धसूचक वाक्य भी दे दिये गये हैं।

भक्तमाल के अन्तमें श्रीअयोध्या मणिपर्वतीय श्रीरामग्रंथागार के संस्थापक सञ्चालक मानसतत्वान्वेषी स्वामी श्रीरामकुमारदासजी महाराज कृत "भक्त भास्कर नामक प्रायः २०० षट्पदियों का एक मौलिक ग्रंथ भी दिया गया है जिसमें विक्रम सम्वत की बीसवी शताब्दी के महापुरुषों (भक्तों) की संक्षिप्त कथायें वर्णित हैं। आशा है ये सब साहित्य भक्तमाल के प्रेमी पाठकों को परमोपयोगी और परम-प्रिय होंगे।

(भक्तमाल में अशुद्ध पाठों का समावेश और उनसे हुई हानियां)

मध्यकाल में यवन साम्राज्य के अत्याचारों के कारण उत्तर भारत के ग्रंथ समुदाय का महाविनाश हुआ, जो कुछ बचे वे अन्धकार मय स्थानों में ही बच पाये, यही कारण है कि यहां महात्माओं के मठ मन्दिरों में ग्रन्थ सम्पत्ति का प्रायः अभाव है। (इन पंक्तियों के लेखक को श्रीरामानन्द सम्प्रदाय के प्रमुख पीठ श्रीगलता और रेवासा के पुस्तकालयों को देखने का अवसर प्राप्त हुआ था। रेवासा में कोई ग्रन्थ ये ही नहीं हां गलता में कुछ पुराण एवं स्मृति ग्रन्थों की प्राप्ति होती है परन्तु श्रीसम्प्रदाय के महान आचार्य श्रीअग्रदेवाचार्यजी के अपार संस्कृत एवं हिन्दी ग्रन्थों की, भक्तमाल की, या पीछे होने होने वाले गलतागादी के आचार्य श्रीमधुराचार्यजी एवं श्रीहर्याचार्यजीके अपरिमित संस्कृत हिन्दी साहित्यमे से किसी ग्रन्थ की तो क्या किसी ग्रन्थके एक पत्रे या एक पंक्ति का भी दर्शन नहीं हुआ जबकि इनमें से बीसियों छोटे बड़े ग्रन्थ अन्यत्र के अन्धकार मय स्थानों से प्राप्त होकर प्रकाशित भी हो चुके हैं)

सांप्रदायिक साहित्य के अदृश्य हो जाने से मध्यकाल का श्रीरामानन्द सम्प्रदाय का इतिहास अन्धकाराच्छन्न हो गया। वास्तविक सांप्रदायिक इतिहास से अनभिज्ञ कुछ लोग श्रीरामानन्द सम्प्रदाय को श्रीरामानुज सम्प्रदाय के अन्तर्गत कहने और समझने लगे और इन्ही में से कुछ लोगों ने भक्तमाल के पाठों में मनमाने परिवर्तन करडाले जिनके फल स्वरूप ये सब गड़बड़ गोटाले समुपस्थित हो गये।

विज्ञ पाठक ध्यान देकर देखेंगे तो मालूम हो जायगा कि भक्तमाल के मूल छप्पै २८ के प्रथम चरण में "श्रीरामानुज उदार सुधानिधि,, पाठ होने से छन्द में एक मात्रा की वृद्धि होकर एवं रामानुज अथवा रामानुग उदार सुधानिधि पाठों में एक मात्रा की न्यूनता होकर छन्दोंभङ्ग होजाता है तथा इस स्थान पर "रामानन्द उदार सुधानिधि, पाठ होने से छन्द की आवश्यक मात्राओं की पूर्ति होकर छन्द शुद्ध हो जाता है। अतः इससे स्पष्ट ही परिलक्षित है कि यहां श्रीरामानुज, रामानुज या रामानुग पाठ (जोकि पूर्व मुद्रित प्रतियों में प्राप्त होते हैं) कविकृत नही, पविवर्तित पाठ हैं।

संख्या २९ के दोहे में भी पूर्व मुद्रित पाठ की प्रायः ऐसी ही स्थिति है और छप्पै १६ का चतुर्थ चरण जो (जाबाली यमदग्नि मायादर्श कश्यप पराशर परवत पदरजधरो) इतना लंबा छपा मिलता है उसका भी यही कारण है कि भगवान बोधायन महर्षिजी का नाम निकाल कर ये अनेक नाम समाविष्ट कर दिये गये हैं। इसी प्रकार मूल संख्या ३५ के छप्पै के अन्तिम चरण का पाठ भी नितान्त अप्रसङ्गिक है। उक्त पूरे छप्पै में यति सम्राट आनन्दभाष्यकार श्रीरामानन्दा-चार्यजी काही वर्णन हुआ है श्री रामानुजस्वामीजी का नहीं।

इन गड़बड़ झालों का परिणाम यह हुआ कि भक्तमाल और भक्तमाल में वर्णित भारत की महा विभूतियों (आचार्य प्रवर श्रीरामा-नन्दाचार्यजी एवं गोस्वामी पाद श्री तुलसी दासजी आदि) के विषय

में अन्वेषण करते हुए वास्तविक साम्प्रदायिक इतिहासों से अनभिज्ञ होने के कारण डा० सर ग्रियर्सन आदि पाश्चात्य एवं अनेकानेक भारतीय अन्वेषक गण बड़े भारी भ्रमजाल में पड गये और श्रीरामानुजाचार्यजी से अनेक पीढ़ी पीछे (शकाब्द १२९२ ईस्वी सन् १३७० में) जन्म लेने वाले आचार्यपाद श्रीवरवरमुनि स्वामीजी को इस्वी सन् १३०० से भी पूर्व अवतरित होने वाले आनन्दभाष्यकार भगवान श्रीरामानन्दाचार्यजी के अनेक पीढी पूर्व के आचार्यों का भी गुरु लिख मारा (उन भगवान बोधायन श्री पुरुषोत्तमाचार्यजी का भी गुरु बना डाला कि जिनका स्थितिकाल विक्रम से भी ५०० वर्ष पूर्व है और जिनके वृत्तिग्रंथ के विषय में आचार्यपाद श्रीरामानुजाचार्य स्वामीजीने अपने श्रीभाष्य में कहा है कि "भगवद्बोधायनकृतां विस्तीर्णां ब्रह्मसूत्रवृत्ति पूर्वाचार्याः सञ्चिक्षिपुः तन्मतानुसारेण सूत्राक्षराणि व्याख्यास्यन्ते" अर्थात् भगवान बोधायनकृत विस्तीर्ण ब्रह्मसूत्र वृत्तिको हमारे पूर्वाचर्यों ने संक्षिप्त किया है उसीके मत के अनुसार में ब्रह्मसूत्रों के अक्षरों की व्याख्या करूँगा)।

यूरोप के उक्त महान विद्वानों के द्वारा लिखाजाने के कारण यह सब गडबड गोटाला एतद्विषयक समस्त अंग्रेजी साहित्य में तो व्याप्त हो ही गया इंग्रेजी एवं अंग्रेजों से प्रभावित भारतीय विद्वानों के द्वारा हिन्दी के निबन्धों में भी फैल गया, इतनाही नहीं अंग्रेजी और फारसी के महा विद्वान हो कर तत्कालीन अंग्रेजी भारत सरकारकी सेवाओं में ३० वर्ष से भी अधिक विताने के कारण अंग्रेज अंग्रेजी और अंग्रेजियत में घुल मिल जाने से हमारे सन्त शिरोमणि डिप्टी साहब पूज्य पाद स्वामी श्रीसीतारामशरण भगवानप्रसाद (श्रीरूपकला) जी ने भी कोई ध्यान नहीं दिया और भक्तमालकी अपनी भक्तिसुधा स्वाद नामक गद्य टीका में भी लिख डाला (इस अंग्रेजी के कुप्रभाव के कारण ही आपने टीका में अनेक महात्माओं के जन्म संवत आदि भी

साम्प्रदायिक इतिहासों से भिन्न गलत-सलत लिखे हैं जिनके फल स्वरूप आगे के अन्वेषक भी उसी ढर्रे पर ढलते चले जा रहे हैं जिसके उदाहरणके रूप में डा० भगवती प्रसाद सिंह जी एम. ए. पी. एच. डी., का "रामभक्ति में रसिक संप्रदाय नामक ग्रंथ उपस्थित है।

अब भारत वर्ष स्वतंत्र हो चुका है (चाहे भाषा, शिक्षा संस्कृति आदि में अभी मानसी परतंत्रता ही भोग रहा हो) भारत के नौनिहाल विद्वान डाक्टरेकी उपाधि प्राप्तकरने के लिये अपना विषय चुनते हुए भारतीय विद्वानों ग्रन्थकारों महात्माओं आदि के अन्वेषण को अपनाने लगे हैं और इनको यथार्थ इतिहास जानने के लिये भक्तमाल की भी शरण लेनी ही पडती है, अतः इन सबको भक्तमाल के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान होना ही चाहिये इसलिये भक्तमाल में के उन पाठोंका संशोधन होना परमावश्यक हो गया है जो वास्तव में ग्रंथकार के लिखे नहीं हैं। अज्ञान या किसी आग्रह विशेषके वसीभूत होकर बदले गये हैं।

थोडा भी विचार करके देखिये कि कोई भी कवि ऐसे छन्दों भंगादि दोषों की सृष्टि कर सकता है क्या ? और ऐसे इतिहास विपरीत अप्रासंगिक प्रसंग भी समीचीन हो सकते हैं क्या ?

(भक्तमालकार श्रीनाभास्वामी का संप्रदाय)

जिन लोगों ने भक्तमाल का नाम लेकर श्रीरामानुज सम्प्रदाय और श्रीरामानन्द सम्प्रदाय को एक सम्प्रदाय कहा है या कहते हैं यह उनकी महान भूल है नितान्त भ्रान्त धारणा है।

द्वैत और अद्वैत का समन्वय कर विशिष्टा द्वैत वेदान्त सिद्धान्त के आदि प्रवर्तक उपवर्ष, कृत कोटि, अयाचित आदि अपरनामधेय भगवान बोधायन की अनुयायिता में एक होते हुए भी दक्षिणका श्रीरामानुज सम्प्रदाय और उत्तरका श्रीरामानन्द सम्प्रदाय परम्परया प्रथक हैं।

श्री रामानुज सम्प्रदाय भगवान बोधायनका सिद्धान्ततः अनुयायी है, उस सम्प्रदाय की श्री गुरुपरम्परा में भगवान बोधायन का नामस्मरण नहीं किया गया। वह परम्परा भगवान श्रीमन्नरायण

श्रीलक्ष्मीजी से आरंभ होकर द्रविड़ देश के महाभागवत श्रीशठकोपादि आल्वारों एवं श्रिनाथमुनि श्री यामुनाचार्यादि पूर्वाचार्योंको लेती हुई श्री रामानुजाचार्य स्वामीजी एवं आगे कुछ पीढियों के पीछे उन श्री वरवरमुनि स्वामीजी तक पहुंचती हैं जिनके जन्म का तिथि मास सम्वत आदि गीतार्थ संग्रह दीपिका नामक ग्रन्थ की भूमिका में कांची प्रतिवादिय भयंकर मठाधीश श्री अनन्ताचार्य स्वामीजी ने इस प्रकार से लिखा है।

आचार्योयं ४४७१ वर्षेषु कलेयतिषु ४४७२ तमे कल्पादि वर्षे १२९२ तमे शालिवाहन शकाब्दे (D. A. 1370) साधारण नामनि संवत्सरे तुलामासे शुक्ल चतुर्थ्यां मूलनक्षत्रेवतीर्णोऽभूत्। अस्यामवतार काल प्रतिपादकः श्लोकः पठचतेः —

पायोभावाद्गतायां कलियुग शरदि अब्दराये शकाब्दे
वर्णे साधारणाख्ये समधिगत तुले वासरे तीर संख्ये ॥
वारे जीवे चतुर्थ्यां समजनि च तिथौ शुक्ल पक्षे सुकर्मा
प्राजन्मूलाख्यतारे यतिपतिरपरो रम्यजामातृ नाम ॥१॥

श्री रामानन्द सम्प्रदाय की परम्परा पुरुष नर परात्पर पुरुषोत्तमाभिधेय श्री साकेताधीश्वर द्विभुज नित्यकिशोर धनुर्धर श्री राम श्री सीताजीसे हनुमान जी ब्रह्माजीके द्वारा श्री वशिष्ठ परासर व्यास शुक बोधायनादि ऋषिमहर्षियों को लेते हुए आनन्द भाष्यकार भगवान श्री रामानन्दाचार्यजी तक पहुँचती है, जिनके अवतार काल के विषय में अगस्त्यसंहिता अध्याय १३२ का ७ वां श्लोक प्रसिद्ध है "खं नभो लोक वेद प्रतिमे वर्षे गते कलौ" अर्थात विक्रम सम्वत १२५६ के व्यतीत होने पर सं० १२५७। (विद्वद्वर्य श्री रामावतार शर्मा जीने अपने 'ईश्वरवाद' नामक ग्रंथ में भी १२५७ लिखा है।) उपरोक्त श्लोक का पाठ "खं नभो लोकवेद'' के स्थान पर खंनभो वेद वेद" भी देखने में आता है जिसका अभिप्राय होता है विक्रम

सम्वत १३५६। श्री रामानन्द द्विग्विजयकार पण्डितराज स्वामी श्री भगवदाचार्यजी आदि अनेक लेखकों ने यही लिखा है।

यति सार्वभौम आचार्यपाद श्रीरामानन्दाचार्यजी का अवतार हुआ १२५७ या १३५६ विक्रम में, अर्थात् १२०१ या १३०० ईस्वी सन् में और रम्यजामातृ मुनि (श्री वरवर स्वामीजी) का जन्म हुआ १३७० ईस्वी में अतः श्री रामानन्दाचार्यजी से भी १७० या ७० वर्ष पीछे अवतरित होनेवाले श्रीवरवर मुनि स्वामी श्रीरामानन्दाचार्यजी के अनेक पीढी पूर्व के आचार्य भगवान बोधायन श्री पुरुषोत्तमाचार्यजी अथवा श्रीदेवानन्दाचार्यजी के गुरु कैसे सम्भव हो सकते हैं? यह किसी ने भी नहीं विचारा और श्रीरामानन्द सम्प्रदाय को श्रीरामानुज सम्प्रदाय के अन्तर्गत कह डाला एवं लिख डाला। खेद का विषय है कि डिप्टी साहब स्वामी श्रीसीतारामशरण भगवान प्रसादजी (श्री रूप कलाजी) की टीकाकी भक्तमालका प्रथम संस्करण छपने के बहुत पूर्व से उपरोक्त ऐतिहासिक तथ्य मुद्रित होकर प्रकाशित हो चुके थे परंतु संस्कृत की प्रायः अनभिज्ञता और अंग्रेजी एवं अंग्रेजों के लेखों का प्रभाव हृदय पर जमा होने के कारण आपका भी ध्यान इस ओर नहीं जा सका और भक्ति सुधा स्वाद टीका में भी उसी अशुद्ध पाठ परम्परा का समावेश हो गया। परन्तु यह तो निश्चय ही है कि इन सांप्रदायिक एवं ऐतिहासिक तथ्यों के प्रतिकूल जो लेख हैं वे भ्रमात्मक हैं, गलत हैं, फिर वे चाहे आजके लिखे हो या कुछ पहिले के हों।

यतिसम्राट श्री रामानन्दाचार्यजी के प्रधान द्वादश शिष्य प्रसिद्ध हैं, जिनमें सबसे बडे श्रीअनन्तानन्दाचार्यजीके शिष्य सिद्ध शिरोमणि पयोहारी श्रीकृष्णदासजी के शिष्य आचार्यपाद श्रीअग्रदेवाचार्यजी थे, इन्हींके शिष्य भक्तमालकार स्वामी श्री नारायणदासजी उपनाम श्री नाभा स्वामीजी हुए हैं। आचार्य शिरोमणि श्री रामानन्दाचार्यजी

के अन्य शिष्य श्री नरहर्यानन्दाचार्यजीके शिष्य विश्वविख्यात कवि श्रीरामचरितमानसकार गोस्वामीपाद श्री तुलसीदासजी हैं और श्री रैदासजी की शिष्या वे श्री मीराबाई हो गई हैं जो श्रीद्वारिकापुरी में सशरीर श्रीरणछोडरायजी के विग्रह में लीन हो गई थी।

श्री सम्प्रदायकी पूरी गुरु परम्परा का चित्र भी आप अन्यत्र इस पुस्तक में अवलोकन करेंगे।

(एक शंका और उसका समाधान)

इस संप्रदाय की परम्परा में कुछ लोग यह शंका किया करते हैं कि नर रूप श्रीरामजी श्रीसीताजी और श्रीहनुमानजी ने तो त्रेतायुग में अवतार लिया है और ब्रह्माजी तो समस्त संसार के उत्पन्न करने वाले पितामह हैं, फिर वे श्रीहनुमानजीके शिष्य कैसे हुए। अतः सम्प्रदायके मूर्धन्य विद्वान आचार्यपाद दार्शनिक सार्वभौम स्वामी श्रीवासुदेवाचार्यजी महाराजके प्रसाद रूपमें प्राप्त इस शंका का कुछ संक्षेप में समाधान भी यहाँ दिया जा रहा है।

श्री संप्रदाय के परमाचार्यवर्य गोस्वामी पाद श्रीतुलसीदासजी के श्रीरामचरितमानस को जिनने गौर से पढा है उन विज्ञ पाठको से यह अविदित नहीं है कि बालकांड अनुच्छेद १४० से आरंभ होने वाले श्रीमनु सतरूपाजी की तपस्या और वरदान के प्रकरण में श्रीशिवजी कहते हैं "जेहि कारण अज अगुण अनूपा। ब्रह्म भयेउ कोशलपुर भूपा॥" फिर महाराजा मनु का वचन है—

अगुण अखंड अनन्त अनादी। जेहि चिंतहिं परमारथ वादी॥
नेति नेति जेहि वेद निरूपा। चिदानन्द निरुपाधि अनूपा॥
शंभु विरंचि विष्णु भगवाना। उपजहिं जासु अंश तैं नाना॥
ऐसेउ प्रभु सेवक वश अहही। भक्त हेतु लीला तनु गहहीं॥

फिर तपस्या से प्रसन्न हो आकाशवाणी से वर माँगने की आज्ञा होने पर मनुजी कहते हैं—

"जो स्वरूप बस शिव मनमाहीं। जेहि कारण मुनि यत्न कराहीं॥

जो भुशुंडि मन मानस हंसा। सगुण अगुण जेहि निगम प्रशंसा॥
देखहि हम सो रूप भरि लोचन।" इस प्रार्थना पर प्रभु दर्शन देते हैं जिनकी रूप माधुरी का वर्णन वहीं पठनीय है। उन श्रीराम के पार्श्व में आदिशक्ति छविनिधि जगतकी जड़-अपने अंश से अनन्त लक्ष्मी, पार्वती और ब्रह्माणी को उत्पन्न करने वाली श्रीसीताजी भी सुशोभित हैं।

पाठकों को स्मरण रखना चाहिये कि आगे अयोध्या के महाराजा दशरथ और कौशल्या रूप में जन्म लेने पर पुत्र रूप से स्वयमेव अवतरित होने का वरदान देने वाले यही श्रीराम सीताजी अपने अनन्त नित्य परिकर (पारषद श्रीहनुमानजी आदि) के सहित त्रिपाद विभूति (नित्य श्रीसाकेतधाम) में नित्य विराजते हैं। इन्ही के लिये श्रीशिवजी ने पार्वतीजी को कहा है कि—

"पुरुष प्रसिद्ध प्रकाशनिधि, प्रकट परावर नाथ।
रघुकुलमणि मम स्वामि सोई, कहि शिव नायउ माथ॥"

अर्थात् पुरुष शब्द से जो वेदादि शास्त्रों में प्रसिद्ध हैं, प्रकाश (ज्ञान) के समुद्र हैं, पर (ब्रह्मा विष्णु शिव) जिनके सामने अवर हो जाते हैं ऐसे समस्त संसारके स्वामी ही श्रीरघुकुलमणि रूप में अवतरित हुए हैं और वे ही मेरे स्वामी हैं।

पुरुष सूक्त जो वेद का सर्व प्रधान भाग है और चारो वेदों में पठित है उसमें उस जगज्जन्मस्थितिलयादि हेतु वेदवेद्य आत्म नर पुरुष परमात्मादि शब्द वाच्य सच्चिदानन्द ब्रह्म को अनेक मंत्रों में पुरुष शब्द से बोधित किया गया है और श्रुति स्मृति पुराणेतिहासादि में सर्वत्र वे शिव ब्रह्मा विष्णुनारायणादि के आदि कारण परब्रह्म परमात्मा पुरुष नर आदि पदों से बोधित हुए हैं। पाठकों के सन्तोषार्थ ऐसे हजारों वचनों में से यहाँ दो चार वचन उधृत किये जा रहे हैं—

"वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम् आदित्यवर्णं तमसः परस्तात्।

तमेव विदित्वाऽतिमृत्यु मेति नान्यः पंथा विद्यतेऽयनाय ॥"

(पुरुष सूक्त)

"आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः ।
तास्तस्यायनं पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः ॥" (मनु)
"नराज्जातानि तत्वानि नाराणीति विदुर्बुधाः ।
तानितस्यायनं पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः ॥" (पुराण)
"सत्वं रजस्तम प्रकृतेर्गुणास्तै-
र्युतः परः पुरुष एक इहास्यधत्ते ।
स्थित्यादये हरि विरिञ्चि हरेति संज्ञाः
श्रेयांसि तत्र खलुसत्व तनोर्नृणांस्युः ॥" (भा० १।२।१)

अब भागवत में यह भी देख लीजिये कि वे पुरुष कौन हैं—

ध्येयं सदापरिभवघ्नमभीष्टदोहं तीर्थास्पदं शिवविरंचिनुतं शरण्यम् ।
भृत्यार्तिहं प्रणतपालभवाब्धिपोतं वन्देमहापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥
त्यक्त्वा सुदुस्त्यज सुरेप्सितराजलक्ष्मीं धर्मिष्ठआर्यवचसायदगादरण्यम् ।
मायामृगं दयितयेप्सितमन्वधावद्वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम् ॥

(भा० ११।५।३३,३४)

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के प्रथम सर्ग में महर्षि श्रीवाल्मीकिजी देवर्षि श्रीनारदजी से प्रश्न करते हैं—"महर्षे त्वं समर्थोसि ज्ञातुमेवं विधं नरम्" (श्रीरा० १।१।५) इस प्रश्न में यह कहा गया है कि ऐसे नर (परात्परब्रह्म) को जाननेमें आप समर्थ हैं । और श्रीनारदजी ध्यानके द्वारा प्रभुके स्वरूप रूप गुण विभूतिका अनुसंधान करके उत्तर देते हैं कि—

"मुने वक्ष्याम्यहं बुध्वा तैर्युक्तः श्रूयतां नरः ॥" (श्रीरा० १।१।७)

हे मुनिवर मैं (इन आपके द्वारा कथित अनन्त दिव्य कल्याण गुण गणाकर) नरको 'बुध्वा' (जानकर) कहता हूँ, आप (समाहित होकर) सुनिये !

अब विज्ञ पाठकों के विचारने की बात है कि इस श्रीनारदजी

और वाल्मीकिजीके प्रश्नोत्तरमें आया हुआ नर शब्द क्या मनुष्यका वाचक है ? नहीं, कभी नहीं । यहाँ यह नर शब्द दोनों ओरसे ही उसी आत्म नर पुरुष सच्चिदानन्द परब्रह्म आदि पद बोध्य नित्य किशोर द्विभुज साकेत विहारी श्रीराम का वाचक है यह निश्चय है ।

महर्षियों का अनुभव है कि—

वेद वेद्ये परे पुंसि जाते दशरथात्मजे ।
वेदः प्राचेतसादासीत्साक्षाद्रामायणात्मना ॥

अर्थात् वेद के द्वारा जानने के योग्य परात्पर ब्रह्म जब अयोध्याधि पति महाराजा दशरथ के पुत्र होकर अवतरित होते हैं तब वेद महर्षि वाल्मीकिजी के द्वारा श्रीमद्रामायण रूप में प्रकट होते हैं ।

विज्ञ पाठकों को यह भी ध्यान में रखने की बात है कि वेदों में उस पर पुरुष का वर्णन द्विभुज रूपमें ही हुआ है । पुरुष सूक्त के "बाहू राजन्यः कृतः" वचन में बाहू शब्द द्विवचनान्त होने से यह स्वतः सिद्ध है । कुछ आग्रही विद्वान पाणिनीय सूत्रों में महती बुद्धि लगाकर इस बाहू शब्द को एक वचनान्त कहने का प्रयास करते हैं, परंतु तैत्तिरीय पुरुष सूक्त में १२ वें मंत्र का "मुखं किमस्य कौ बाहू" द्विवचनान्त प्रश्न वचन उस प्रयासको असफल करके यह सिद्ध कर देता है कि यजुर्वेद में भी बाहू पद द्विवचनान्त ही है । अतएव यह सिद्धान्त है कि द्विभुज परब्रह्म ही परोपास्य हैं ।

सबसे बड़ी बात यह है कि यज्ञपुरुष भगवानसे ऋग्यजुः सामादि वेदोंका आविर्भाव कह अश्व गो अनादि सृष्टिका वर्णन करके "यत्पुरुषं व्यदधुः" (तै० पु० ११) से मानव देव सृष्टि का वर्णन करते हुए अन्तमें कहा है—"वेदाहमेतं पुरुषं महान्तम् । आदित्य वर्णं तमसस्तुपारे । सर्वाणि रूपाणि विचित्यधीरः नामानि कृत्वाऽभिवदन् यदास्ते ॥१६॥ धाता पुरस्ताद्यमुदाजहार शक्रः प्रविद्वान् प्रदिशश्चतस्रः । तमेवं विद्वानमृत इह भवति नान्य पंथाः अयनाय

विद्यते ॥१७॥ इस सिद्धान्त वाक्यमें "तमेवं विद्वान" वाक्य स्पष्ट कह रहा है कि द्विभुज परब्रह्मका उपासक उपासन वेलामें ही अमृतत्वको प्राप्त करता है। इतने कथनसे भी सन्तुष्ट न होकर श्रुति भगवती कहती है कि (अयनाय) मोक्षके लिए (अन्यः पन्थाः न विद्यते) दूसरा कोई मार्ग ही नहीं है।

मानव स्वभाव सुलभ अशुद्धियां इस संस्करणमें भी रही हैं, जिनका आगे लगाये गये शुद्धि पत्र से यथा शक्ति निराकरण किया गया है। मात्रा आदिके टूट जानेसे होनेवाली अशुद्धियां शुद्धि पत्रमें नहीं दी गई है। अतः पाठकोंसे प्रार्थना है कि सबअशुद्धियोंको शुद्ध करके पढ़ें।

प्राकथन लंबा हो गया है और जिन ग्रंथों से, व्यक्तियों से, एवं संस्थाओं से मुझे इस संशोधन संपादन में सहायता मिलि है उनका कृतज्ञ होना मेरा कर्तव्य है, नाम उनके बहुत हैं, अतः यहां उनके सब नाम न लिखकर मैं हृदयमें ही उनका स्मरण कर लेता हूँ और ग्रंथोंके रचयिताओं प्रकाशकों एवं मुझे प्राप्त करानेवालों, चित्र प्राप्त करानेवालों, प्रोत्साहन एवं आश्वासन प्रदान करनेवालों, ग्रंथको प्रकाशित करनेवालों, मुद्रित करनेवालों और किसी भी प्रकार से मुझे जिनने कुछ भी सहायता प्रदान की है उन सबका आभार मानता हुआ सबको शतशः धन्यवाद देता हुआ मैं अपने इस प्राकथन को यहीं समाप्त करता हूं। बोलो भक्त भक्ति भगवान और श्रीगुरुदेव की जय ! जय !! जय !!!

सन्त निवास आकाशापुरी
श्रीकृष्णजन्माष्टमी
सं० २०२२ वि०

आप सबका एक लघु सेवक
जानकीदास श्रीवैष्णव

व्यवस्थापकः-श्रीवैष्णव साहित्य संस्थान

श्रीरामवल्लभाशरणाश्रम
लड्डीवालों की बगीची, आगरा रोड
जयपुर (राजस्थान)

श्रीहनुमान वाटिका
श्री अयोध्याजी
(उत्तर प्रदेश)

भक्तमालका सूची-पत्र

(कृपया भक्तोंके नामोंके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामोंके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामोंके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामोंके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(भक्तोंके नामके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामोंके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

भक्तमाल-भास्करका सूची-पत्र

(कृपया भक्तोंके नामोंके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामोंके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें).

(कृपया भक्तोंके नामोंके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(भक्तोंके नामके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

(कृपया भक्तोंके नामके पूर्व "श्री" लगाकर पढ़ें)

प्रकाशक:-जानकीदास श्रीवैष्णव, श्रीहनुमानवाटिका, श्रीअयोध्याजी।
व्यवस्थापक:-श्रीवैष्णव-साहित्य-संस्थान, श्रीरामवल्लभाशरणाश्रम, आगरा रोड, जयपुर।

नीचेकी पंक्तिमें बायीं ओर सर्वप्रथम भक्तमालकार श्रीनाभा स्वामीजी खड़े हैं।

❀ श्रीजानकीवल्लभो विजयते। श्रीमते हनुमते नमः॥ ❀

नमो भगवते बोधायनाय। श्रीमद्रामानन्दाचार्याय नमो नमः॥

श्री अग्रदेवाचार्य चरण-कमल-चंचरी स्वामी

श्री नारायणदासजी (श्री नाभा स्वामीजी)

रचित

भक्त-माल

श्रीगौरांग-पदपद्म-मधुकर श्री प्रियादासजी कृत

भक्तिरसबोधिनी (कवित्त) टीका सहित



(संपादकीय मंगलाचरण एवं प्रस्तावना)

दो०— बन्दौं श्री सद्गुरु चरण, हरण जगत जंजाल।
जिनके सुमिरणते सकल सिद्धि होत तत्काल॥ १॥
श्रीपदवाच्या श्रीसिया, श्रीपति श्रीरघुनन्द।
श्रीहनुमत नित पारषद, बन्दौं पद सुखकन्द॥ २॥
जगकर्ता [1]अज [2]अजसुवन, बहुरि पराशर [3]व्यास।
जिन पुराण वर्णे बहुरि, किय वेदान्त प्रकाश॥ ३॥
व्याख्याता भागौतके, परमहंस-शिरताज।
शुकमुनि पद वन्दन करौं, जिनकर सुयश [4]दराज॥ ४॥

---

१ श्री ब्रह्माजी २ श्री वशिष्ठजी ३ श्री वेदव्यासजी ४ विख्यात

बोधायन आचार्य वर श्रीपुरुषोत्तम नाम।
युग मीमांसा शास्त्र जिन, विरची वृत्ति ललाम ॥ ५ ॥
द्वैताद्वैत विवादको, सुभग समन्वय कीन्ह।
रुचिर विशिष्टाद्वैत मत, थापि जगत जिन दीन्ह ॥ ६ ॥
धर्मसूत्र स्मृतिशास्त्र जिन, विरचे ग्रन्थ अनेक।
हरि हर आराधन कथे, भेद कियो नहिं नेक ॥ ७ ॥
गंगाधर आदिक सकल, पूर्वाचार्य महान।
बन्दौं सबके पद कमल, सकल सुमंगल खान ॥ ८ ॥
भाष्यकार [1]स्तवराजके, स्वामी हर्यानन्द।
तिनके श्रीयतिराज वर, स्वामि राघवानन्द ॥ ९ ॥
तिनके शिष्य अनन्त श्री रामानन्दाचार्य।
राखेउ हिन्दू धर्म जिन, किये परास्त [2]अनार्य ॥ १० ॥
[3]प्रस्थानत्रय पर रचे, भाष्य रुचिर आनन्द।
[4]भास्कर आदिक ग्रन्थ पुनि, रचे अनेक [5]अमंद ॥ ११ ॥
जगगुरु श्रीआचार्य वर, स्वयं राम-अवतार।
भक्ति सेतु बाँध्यो सुदृढ़, तारयो सब संसार ॥ १२ ॥
अजामील आख्यानके, [6]द्वादश भक्त प्रधान।

१. श्रीरामस्तवराज २. सत्य अहिंसादि हीन, अत्याचारी अनाचारी लोग। ३. उपनिषद, ब्रह्मसूत्र और गीता ४. श्रीवैष्णव-मताब्ज-भास्कर ५. देदीप्यमान .६ श्लोकः—स्वयंभूर्नारदः शंभुः कुमारः कपिलो मनुः। प्रह्लादो जनको भीष्मो बलिर्वैयासिकिर्वयम्। द्वादशैते विजानीमो धर्मं भागवतं भटाः ॥ (श्रीमद्‌ भागवते) अगस्त्य संहिता के अनुसार यही १२ महा भागवत अवतार लेकर यतिसार्वभौम श्री आचार्य महाप्रभुजी के प्रधान शिष्य हुए हैं जिनका वर्णन आगे के कवित्त में देखिये—

[1]अवतरि जिनकी शरणगहि, थापे भक्ति विधान ॥ १३ ॥
कृष्णदास शुभ नाम श्री पयहारी तपशालि।
जिन कलि महँ कृत युग कियो; अतिथि धर्म प्रतिपालि ॥ १४ ॥
अग्रदेव आचार्यवर, रसिक राज रसधाम।
पद पंकज विनवौं सदा, जन मन पूरण काम ॥ १५ ॥
अग्रदेव दाया लही, अन्तर बाहर दृष्टि।
भक्तमाल रचि जिनकरी, भक्ति सुधारस वृष्टि ॥ १६ ॥
अस श्रीनाभा के चरण, बन्दि हरण दुखद्वन्द।
दास प्रकाशित करत है, भक्तमाल सुखकन्द ॥ १७ ॥
परम अनूठो काव्य यह, भक्तमाल परिशुद्ध।
[2]लिपिकारन अज्ञान भो, ताकर पाठ अशुद्ध ॥ १८ ॥
मात्रा अक्षर की कहैं, पद अरु शब्द अनेक।
बढिगे अरु कछु बदलिगे, छपिगे [3]बिना विवेक ॥ १९ ॥
पुनि जे जन टीका लिखे, तिनहुँ न करी सँभार।
पाठ शुद्ध कीन्हे नहीं, ढरिगे वाही ढार ॥ २० ॥
याहीके परिणाम भ्रम, फैले अमित प्रकार।
कहन लगे नाभारचित, [4]इनकहँ बिना विचार ॥ २१ ॥
भारत और विदेशके, [5]अन्वेषकहु अनेक।
परिगे याही भ्रम विषै, तिनहुँ न [6]कियो विवेक ॥ २२ ॥

१. कवित्त—ब्रह्मा अनन्तानन्द, नारद सुरसुरानन्द, शंकर सुखानन्द, कुमार नरहरियानन्द। कपिल भे योगानन्द, मनु महाराजा पीपा, प्रह्लाद कबीर, पुनि जनक भे भावानन्द, भीष्म भये सेनभक्त, बलि भये धनाभक्त शुक भे गालवानन्द, रमादास यमछन्द। पद्मजांश पद्मावति, त्रयोदश प्रधान शिष्य विश्वगुरु रामरूप आचार्य श्रीरामानन्द ॥१॥ २. लिखनेवाले=प्रतिलिपि करनेवाले। ३. अज्ञान से। ४. अशुद्ध पाठोंको। ५. खोज करनेवाले ६. ध्यान नहीं दिया।

काहू यह सोची नहीं, कविकृत अस नहिं होय ।
छन्द भंग निज काव्य महँ, किमि राखै कवि कोय ॥ २३ ॥
श्रीनाभा मम कविप्रवर, रचि न सकत अस पाठ ।
अबुध और स्वार्थी जनन, ठाठे यह सब ठाठ ॥ २४ ॥
श्रीगुरु दीनदयाल मम, सकल सन्त शिरताज ।
अखिल विश्व फैल्यो सुभग, जिनकर सुयश दराज ॥ २५ ॥
जे दिनकर सम तपत भे, वैष्णव जगताकाश ।
विनश्यो अति अज्ञान तम, निज विज्ञान प्रकाश ॥ २६ ॥
श्री अनन्त युत नाम शुभ, पूरण जन मन काज ।
रामवल्लभाशरण श्री पंडितजी महाराज ॥ २७ ॥
अवध जानकी घाट पर, जिनकर स्थान महान ।
वर्तमान राजत जहाँ, सन्त सकल गुण खान ॥ २८ ॥
रामपदारथदासजी वेदान्ती महाराज ।
वैष्णव विद्वज्जनन विच, जिनकर शुभ यश भ्राज ॥ २९ ॥
श्रीगुरु अरु सन्तन कृपा पाठ भये मोहि प्राप्त ।
पाठ अशुद्धी और भ्रम, जिनतैं सब नशि जात ॥ ३० ॥
सोही हौं प्रकटित करत, लखिये सज्जन वृन्द ।
भूल चूक क्षमि दास पर, करिये कृपा अमन्द ॥ ३१ ॥
नहिं विद्या नहिं बुद्धि कछु, नहीं भजन तप त्याग ।
सब विधि दीन अबोध जन, जानि करिय अनुराग ॥ ३२ ॥
मूक महा व्याख्या करैं, पंगु गहन गिरि धाय ।
अस करुणा जो रावरी, ताकर आश्रय पाय ॥ ३३ ॥
दास जानकी कार्य यह, शिरपर लियो उठाय ।
या कहँ पुरवहु करि कृपा, सन्त हृदय हर्षाय ॥ ३४ ॥

(टीका मंगलाचरण और प्रस्तावना)

टीका क०—महाप्रभु कृष्णचैतन्य [1]मनहरणजूके
चरणको ध्यान मेरे नाम मुख गाइये ।
ताही समय नाभाजूने आज्ञा दई लई धारि
टीका विसतारि भक्तमाल की सुनाइये ॥
कीजिये कवित्त बद्ध छन्द अति प्यारो लगै
[2]जगै जगमाहिं कहि वाणी विरमाइये ।
जानौं निज मति ऐपै सुन्यो भागवत [3]शुक
द्रुमनि प्रवेश कियो ऐसेही कहाइये ॥१॥

(टीका का नाम एवं माहात्म्य वर्णन)

रची कविताई सो [4]सचाई सुखदाई लागै
निपट सुहाई [5]पुनरुक्ति लै मिटाई है ।
अक्षर मधुरताई [6]अनुप्रास [7]यमकाई
अति छवि छाई मोद झरीसी लगाई है ॥

१ श्री प्रियादासजी के गुरुदेव । २ प्रसिद्ध हो । ३ श्रीमद्भागवत में प्रसिद्ध है कि श्री शुकदेवजी जन्मते ही जब वन को चल पड़े और विरहातुर श्री वेदव्यासजी पीछे पीछे दौड़े, तब श्री शुकदेवजी ने अपने योगबल से वृक्षों में प्रवेश करके "शुकोऽहम् शुकोऽहम्" (मैं शुक हूँ, मैं शुक हूँ) कहलवाया था, उसी प्रकार से श्री नाभास्वामीजी भी मेरे ऊपर कृपा करके टीका की रचना करवा लेंगे । ४ चरित्रों की यथार्थता । ५ एक ही बात बार बार कही जाना । ६ शब्द के अन्त में एक ही अक्षर का बार बार प्रयोग । ७ काव्य चमत्कार ।

काव्यकी बड़ाई निज मुख न भलाई होत
नाभाजू कहाई तातैं प्रौढ़ कै सुनाई है।
हियो सरसाई जोपै सुनिये सदाई
अस [1]भक्तिरसबोधिनी सुनाम टीका गाई है ॥२॥

([2]भक्तिमहाराणी का शृङ्गार वर्णन)

श्रद्धाही [3]फुलेल औ उबटनो श्रवणकथा,
मैल अभिमान, अंग अंगते छुड़ाइये।
मनन [4]सुनीर अन्हवाय, अँगुछाय दया
[5]नवनि वसन, प्रण [6]सौंधो, ले लगाइये ॥
[7]आभरण नाम, हरि साधु सेवा कर्णफूल,
मानसी सुनथ, [8]संग अंजन बनाइये।
भक्ति महाराणी को शृङ्गार चारु, वीरी [9]चाह
रहै जो निहारि, [10]लहै लाल प्यारी [11]गाइये ॥३॥

(टीका का चमत्कार वर्णन)

शान्त दास्य सख्य वातसल्य औ शृङ्गार चारु
पाँचों रस सार विसतार नीके गाये हैं।
टीका को चमतकार जानोगे विचारि मन
इनके स्वरूप सो अनूप ले दिखाये हैं ॥

१ 'भक्तिरसबोधिनी' इस टीका का नाम है। २ भगवानकी भक्ति को मूर्तिमान (नायिका का) रूप देकर उसके वस्त्राभूषणों का वर्णन कर रहे हैं। ३ सुगंधित (चमेलीका) तेल। ४ सुन्दर जल। ५ नम्रता। ६ इत्र। ७ आभूषण। ८ सत्संग। ९ प्रभू मिलन की उत्कट इच्छा। १० श्रीयुगल सरकारको प्राप्त करैं। ११ शास्त्र गाते हैं।

जिनके न अश्रुपात पुलकित गात कभूँ
तिनहूको भावसिंधु बोरि सो छकाये हैं।
जोलों रहै दूर रहै विमुखता पूर हियो
होय चूर चूर नेक श्रवण लगाये हैं ॥४॥

(भक्तमाल का वैजयन्तीमाला के रूप में वर्णन)

[1]पंचरस सोई पंच रंग फूल [2]थाके नीके
पिया पहिरायवे को रचिके बनाई है।
[3]वैजयन्ती दाम भाववती [4]अली नाभा नाम
लायी [5]अभिराम श्याम मति ललचाई है ॥
धारी उर प्यारी माला करत न न्यारी प्रभु
देखो गति न्यारी हरि पायन को आई है।
भक्ति [6]छवि भार तातैं [7]नमित शृङ्गार होत
होत वश लखै जोई याते जान पाई है ॥५॥

(सत्संग महिमा वर्णन)

भक्ति तरु पौधा ताहि विघ्न डर [8]छेरीहूको
[9]बाड दे विचार वारि सींच्यो सतसंग सो।
लाग्योई बढन [10]गोंदा चहुँ दिशि कढन सो
चढन अकाश यश फैल्यो बहु रंग सो ॥

१ उपरोक्त शान्तादि पाँचों रस। २ गंडे=गुच्छे। ३ पाँच रंग के फूलों की माला को वैजयन्ती कहते हैं। ४ सखी। ५ परम सुन्दर। ६ शोभा। ७ आभूषणों के नीचे लटक आई है। ८ बकरी। ९ काँटों का घेरा। १० कोंपल।

सन्त उर [1]आलवाल शोभित विशाल छाया
जिये जीव जाल ताप गये यों प्रसंग सों।
देखो बढवार जाहि अजा हू की शंका हुती
ताही पेड़ बाँधे झूमें हाथी जीतें जंग सो ॥६॥

(ग्रन्थ और ग्रन्थकार की महिमा का वर्णन)

जाको जो स्वरूप सो अनूप लै दिखाय दियो
कियो ज्यों कवित्त पट [2]मंही मध्य [3]लाल है।
गुण जो अपार साधु कहे [4]आँक चार ही में
अर्थ विसतार कविराज [5]टकसाल है॥
सुनि सन्त सभा झूमि रही [6]अलि श्रेणी मानो
कहै घूमि घूमि यह कहा धौं रसाल है।
सुने हैं अगर अब जाने हम अग्र सही
[7]चोवा भये नाभा औ सुगन्ध भक्तमाल है ॥७॥

(भक्तमाल महिमा वर्णन)

बड़े भक्तिमान निशिदिन गुणगान करैं
हर जग पाप जाप रहैं भरपूर है।
जानि सुखमानि हरि सन्त सनमान साँचे
बाँचेउ जगत रीति प्रीति जानि [8]मूर है॥
तोऊ [9]दुराराध्य कोऊ कैसे कै अराध सकै
समझ्यो न जात मन काँपि भयो चूर है।

१ थामला=कुन्डी। २ पतले=झीने। ३ रत्न। ४ अक्षर। ५ परीक्षा स्थान। ६ भौंरोंका झुंड। ७ इत्र। ८ जड। ९ आराधना करनेमें कठिन।

शोभित तिलक भाल माल उर राजै तोपै
विना भक्तमाल भक्तिरूप अति दूर है ॥८॥

* मूल मंगलाचरण *

दो० [1]भगत भगति भगवन्त गुरु, [2]चतुर नाम [3]वपु एक। इनके पद वन्दन किये, नाशहिं विघ्न अनेक ॥ १ ॥

(भक्त, भक्ति, भगवान एवं गुरु के लक्षण वर्णन)

टीका क०—हरि गुरु दासन सों साँचो सोही "भक्त" सही
गही एक [4]टक फिर उरते न टरी है।
"भक्ति,, रस रूपा को स्वरूप यहै छवि सार
[5]चारु हरि नाम लेत अँसुवन झरी है॥
वही "भगवन्त,, सन्त प्रीति को विचार करैं
धर दूर ईशता ज्यों पांडव सों करी है।
"गुरु" गुरुताई की सचाई लै दिखाई ताहि.
गाई [6]पयोहारीजू की रीति रंग भरी है ॥९॥

मूल छ०—मंगल [7]आदि विचार रह, वस्तु न और अनूप। हरिजनको यश गावते, हरिजन

१ भक्त भक्ति, पाठ में शब्द शुद्ध रहते हुए भी दूषित 'र' गण होता है अतः मंगल मय 'न' गण युक्त 'भगत भगति' पाठ ही समीचीन है। २ चार। ३ शरीर=वास्तवमें। ४ प्रण। ५ सुन्दर। ६ भक्तमाल मूल सं. ३८ 'जाके शिरकर धरयो तासु करतरनहि अड्ड्यो'। ७ आरंभिक मंगलाचरणके विचार में अन्य कोई अनुपम वस्तु नहीं ठहरती।

मंगलरूप॥२॥सन्तन मथि निर्णय कियो, श्रुति पुराण इतिहास ॥ भजबे को दोही सुभग, कै हरि कै हरिदास ॥३॥ अग्रदेव आज्ञा दई, भक्तन को यश गाव ॥ भव-सागर के तरन को, नाहिन आन उपाव ॥४॥

(ग्रंथ रचना की आज्ञा का वर्णन)

टीका क०–मानसी स्वरूप में लगे हे अग्रस्वामीजू वे
करत [1]बयार नाभा मधुर सँभार सों।
चढयो जो जहाज परयो शिष्य एक आपदामें
करयो ध्यान [2]सरयो मन छूट्यो रूपसार सों॥
कह्यो हे समर्थ गयो [3]बोहित बहुत दूर
आओ [4]छविपूर फिरि ढरो [5]वाही ढार सों।
लोचन उघारिके निहारि कहा बल्यो कौन
वही जौन पाल्यो शीथ दै दै [6]सुकुमार सों॥१०॥
अचरज दयो नया यहाँ लों प्रवेश भयो
मन सुख छयो जानि सन्तन प्रभाव को।
आज्ञा तब दई यह भई तोपै सन्त कृपा
कहो उनहींके रूप गुण हिये भाव को॥

१ पवन। २ खिचा। ३ जहाज। ४ कोटिकाप विमोहन मधुरूप ५ पूर्व वत। ६ बचपन से।

बोले कर जोरि, याको मिलै नहीं [1]ओर छोर
गाऊँ राम कृष्ण नहिं पाऊँ भक्त, भाव को।
कही समझाय [2]वेही हिये आय कहैं सब
जिनने दिखाय दई [3]सागर में नाव को॥११॥

(श्री नाभा स्वामीजी की पूर्व कथा का वर्णन)

[4]हनुमान वंशही में जनम प्रसिद्ध जाको
भयो दृगहीन सो नवीन बात [5]धारिये।
उमर बरस पाँच मानके अकाल आँच
माता वन छोडि गई विपति विचारिये॥
कील्ह औ अगर ताही डगर दरश दियो
लियो यों अनाथ जानि पूछी सो उचारिये।
बड़े सिद्ध जललै कमंडल सों सींचे नैन,
चैन भयो खुले चचु जोडी को [6]निहारिये॥१२॥
[7]पाँव परे आँसू आये, [8]कृपाकरि संग लाये
कील्ह आज्ञा पाय मंत्र अगर सुनाये हैं।
गलते प्रगट साधु सेवा जो विराजमान
जानि अनुमानि ताहि टहल लगाये हैं॥

१ आदि अन्त। २ वे=सन्त ही। ३ समुद्र। ४ हनुमान वंश जिसको आगे (भक्तमाल छप्पै १००) लाखाजीकी कथा में वानर वंश कहा गया है। संभवतः जिसमें भाट चारण अथवा कथिक आदि गुण गान करने वाली जातियाँ परिगणित होती हैं। ५ समझो। ६ देखा। ७ श्री नाभाजी। ८ श्री कील्हस्वामीजी और श्री अग्र स्वामीजी।

चरण [1]प्रक्षाल सन्त [2]शोथ सों अनन्त प्रीति
ताते रस रीति जानी हिये रंग छाये हैं।
भई बढवार ताको पावै कौन पारावार
जैसे भक्त रूप सो अनूप गिरा गये हैं ॥१३॥

(भगवान के चौबीस अवतारों की प्रार्थना)

मूल छ०—जय जय [3]मीन [4]वराह [5]कमठ [6]नरहरि बलि-बावन। परशुराम रघुवीर कृष्ण कीरति जगपावन॥ बुद्ध सुकलकी व्यास पृथू हरि हंस मन्वन्तर। यज्ञ ऋषभ हयग्रीव सु ध्रुववरदेन धन्वन्तर॥ [7]बद्री-पति [8]दत्त कपिलदेव, सनकादिक करुणा-करो॥ चौबीस रूप लीला रुचिर, अग्र-दास उर पद धारो ॥५॥

टीका क०—जेते अवतार सुखसागर न पारावार,
करैं विसतार लीला जीवन उधार को।
जाहि रूप माहिं मन लागैं जाको पागै ताहि,
जागै हिये भाव सोही पावै क्यों न पार को॥

१ चरणामृत। २ शीथप्रसाद=उच्छिष्ट। ३ मत्स्य। ४ शूकर। ५ कच्छप। ६ नृसिंह। ७ बद्रीनारायण। ८ दत्तात्रेय।

सबही हैं नित्य ध्यान करत प्रकाशैं चित्त,
जैसे पावै वित्त जोपै जानै रत्न सारको।
केशन [1]कुटिलताई त्योंही मीन सुखदाई,
[2]अगर सु रीति भाई बसो उर हार को ॥१४॥

(सन्तों के सहायक श्रीरामजीकेचरण चिन्हों का वर्णन)

मूलछ०—अंकुश [3]अम्बर [4]कुलिश कमल यव ध्वजा धेनुपद। शंख चक्र स्वस्तिक जंबू-फल कलश [5]सुधाह्रद॥ अर्धचन्द्र षट्-कोण मीन [6]विंदूरध रेखा। अष्टकोण त्रयकोण इन्द्रधनु [7]पुरुष विशेषा॥ सीता पति पद नित बसत, एते मंगल दायका॥ चरण चिन्ह रघुवीर, के सन्तन सदा सहायका ॥६॥

टीका क०—सन्तन सहाय काज धारे नृपराज राम
चरण सरोजनमें चिन्ह सुखदाइये।
मन है [8]मतंग मतवारो हाथ आवै नाहिं,
ताके लिये अंकुश लै धारयो हिये ध्याइये॥

१ टेढ़ापना। २ श्री अग्रस्वामीजी की सुन्दर पद्धति ३ वस्त्र। ४ बज्र। ५ अमृतकुण्ड। ६ विन्दु और ऊर्ध्व रेखा ७ मनुष्य। ८ हाथी।

[1]शठता सतावे शीत ताते ही अम्बर धरयो,
हरें जन शोक ध्यान कीन्हे सुखदाइये ।
ऐसे ही कुलिश पाप परवत फोरिबेको,
भक्ति निधि जोरिबेको कंज मन लाइये ॥१५॥
सुनो यव हेतु सदा दाता सिद्धि विद्याको सो,
सुमति सुगति सुख सम्पति निवास है ।
छिनमें सभीत होत कलि की कुचाल लखि,
ध्वजा सों विशेष जानो अभै को विश्वास है ॥
गोपदसों होय भवसागरते पार जन,
जोपै नैन हियेमें लगावै मिटै त्रास है ।
कपट कुचाल मायाजाल सब जीतबेको,
दरको दरस किये, होत अनायास है ॥१६॥
कामही निशाचर को मारिवेको चक्रधरयो
मंगल कल्याण हेतु स्वस्तिक ही मानिये ।
मांगलिक जम्बुफल फल चार और मन-
कामना अनेक विधि पूरै जोपै ध्यानिये ॥
कलश सुधाको सर भरयो हरि भक्तिरस
नैन पुट पान कीजे जीजे मन आनिये ।
भक्तिको बढावै औ घटावै [2]तीनतापन को

१ मूर्खता । २ दैहिक (देहके) दैविक (दैवयोग से आ जानेवाले) भौतिक (भूत प्रेत राक्षस या पशु पक्षी कीट पतंग देव मनुष्य आदी जीवों से होनेवाले) ताप=दुःख ।

अर्ध चन्द्र धारण कारण यह जानिये ॥१७॥
विषय [1]भुजंग [2]बलमीक तनमाहिं बसै
दासको न डसै यातें यत्न अनुसरयो है ।
अष्टकोण षटकोण औ त्रिकोण यंत्र किये
धारण सो जानै जाने ध्यानउर धरयो है ॥
मीन विन्दु रामचन्द्र धारयो पद कंज माहिं
ताहीते [3]निकाय जन मन जात हरयो है ।
जगत समुद्र सों न पारावार पावै ताते
ऊर्द्ध रेखा दास हेतु सेतु बन्ध करयो है ॥१८॥
[4]धनु पद माहिं धरयो हरयो शोक ध्यानिनको
मानिनको मारयो मान रावणादि साखिये ।
पुरुष विशेष पद कमल बसायो राम
हेतु सुनो अभिराम श्याम अभिलाषिये ॥
सूधो मन सूधो बैन सूधी करतूति सब
ऐसो जन होय ताको याहि भाँति राखिये ।
जन बुधिवन्त रसवन्त गुण संपति में
करि हिय ध्यान हरिनाम मुख भाषिये ॥१९॥

१ सर्प । २ बिल । ३ समूह । ४ धनुष ।

श्रीसीतारामजी के युगल चरणों में शास्त्रों ने चौबीस चौबीस चिन्ह कहे हैं जिनके वर्णनका एक प्रातः स्मरणीय पंचक आगे देखिए—

(प्रधान द्वादश भक्तराज गुणगान)

मूल छ०–विधि नारद शंकर सनकादिक कपिलदेव मनुभूप। नरहरिदास जनक भीषम बलि शुकमुनि धर्मस्वरूप ॥ अन्तरंग अनुचर हरिजूके जो इनको यश गावैं। आदि अन्तलों मंगल तिनके श्रोता वक्ता पावैं ॥ अजामेल प्रसंग यह निर्णय परम धर्मको जान ? इनकी कृपा और पुनि समझे द्वादश भक्त प्रधान ॥७॥

श्रीरामदक्षिणपदस्थमथोर्द्ध्व रेखा स्वस्त्यष्ट कोण कमला हल मौसलंच ।
शेषं शराम्बर सरोज रथ सवज्रं ध्यायेद्यवं सुरतरुं जनकामपूरम् ॥१॥
भूयोंकुशध्वज किरीट युत सचक्रं सिंहासनं च कलितं यमदण्ड चिन्हम् ।
छत्रं सचामर नरं जयमालमेतद्दाक्षि संख्यमनिशं मनसा स्मरामि ॥२॥
वामे पदे स्थितमहं सरयू सुतीर्थं गोपाद भूमि घट शोभित सुत्पताकम् ।
जम्बूफलार्ध. शशि शंख षडस्र युक्ते त्रयकोणकंच गया सह जीव मीडे ॥३॥
विन्दुं च शक्त्यमृतकुन्ड बलित्रयं च मीनं स पूर्णशशि वीण महं भजामि ।
वंशी शरासन युते धुधि राजहंसं सीतापतेः श्रुतिनुतं सह चन्द्रिकं च ॥४॥
सीतांघ्रिपंकजमिदं हि विपर्ययेण वामे पदं च सुधियः परिभावयन्तुम् ।
चिन्हानि चाष्ट जलधिः प्रमितानि नित्यं ध्यायेज्जनो रघुपतेर्लभते सुधामम् ॥५॥

इनमें से श्री नाभा स्वामीजी ने यहाँ केवल २४ का ही स्मरण किया है।

(श्रीशिवजीकी सती मोह वाली कथा)

द्वादश प्रसिद्ध भक्तराज कथा भागवत
अति सुखदाई नानाविधि करि गाये हैं।
शिवजी की बात एक बहुधा न जानै कोऊ
सुनि सरसाने हिये भाव उरझाये हैं ॥
सीताके वियोग राम विकल विपिन देखि
शंकर निपुण सती वचन सुनाये हैं।
कैसे ये प्रवीण ईश ? कौतुक नवीन देख्यो
मनैहु करत सती वेष सो बनाये हैं ॥२०॥
सीताको स्वरूप वेष लेश हू न फेर फार
रामजू निहारयो नेक मनमें न आई है।
तब फिर आयके सुनायदई शंकरको
अति दुःख पाय बहु विधि समझाई है ॥
इष्टको स्वरूप धरयो ताते तनु परिहरयो
परयो बडो शोच मति अति भरमाई है।
ऐसे प्रभु भाव पगे पोथिन में जगमगे
लगे मोको प्यारे ताते बात रीझि गाई है ॥२१॥

(श्रीशिवजीकी दूसरी कथा)

चले मग जात उभै खेरे शिव दृष्टि परे
कियो सो प्रणाम हिये भक्ति लागी प्यारी है।
पारवती पूछी कियो कौन को प्रणाम प्रभु

---

१. दो। २ ग्राम।

दीसै नाहिं [1]जन कोऊ तब यों उचारी है ॥
बरस हजार दश वीते यहां भक्त भयो
अब पुनि व्है हैं दूजी ठौर वीते [2]धारी है ।
सुनके प्रभाव हरि दासन सों भाव बढ्यो
रह्यो कैसे जात रंग चढ्यो अति भारी है ॥२२॥

(श्रीअजामीलजी की कथा)

धर्यो पितुमातु नाम अजामेल साँचो भयो
भयो [3]अजामेल [4]छोटी तिया शूद्र जातिकी ।
कियो मद्यपान सो [5]सयान गहि दूर डार्यो
गार्यो तन वाही साथ कीन्हो जाने पातकी ॥
करि [6]परिहास काहू दुष्ट ने पठाये साधु
आये गृह देखि बुद्धि आयगई सात्विकी ।
सेवा करि सावधान सन्तन रिझाय लिये
नारायण नाम धर्यौ गर्भ बाल [7]बातकी ॥२३॥
आय गह्यो काल मोह[8] जाल में लपट रह्यो
महा विकराल यमदूत हू दिखाइये ।
सुत नाम नारायण वही जो कृपा के सन्त
दियो सो पुकार्यो स्वर आर्त [9]सो सुनाइये ॥
सुनत ही पारषद आये वाही ठौर दौरि
तोरि डारे पाश कह्यो धर्म समझाइये ।

१ मनुष्य । २ बहुत । ३ अजा=माया से मिलाप । ४ क्षुद्र । ५ चतुर=जातिपत्र । ६ हँसी=मजाक । ७ बात करनेपर । ८ अज्ञान । ९ दुःख भरे ।

हारि डारि पाश जाय स्वामिपै पुकारे, कही
सुनो बज्रमार मत जावो [1]हरि गाइये ॥२४॥

(श्रीमन्नारायण के पारषदोंकी प्रार्थना)

मूल छ०—विष्वक्सेन जय विजय प्रबल बल मंगलकारी । नन्द सुनन्द सुभद्र भद्र जग आमयहारी । चंड प्रचंड विनीत कुमुद कुमुदाक्ष कृपालय । शील सुशील सुषेण भाव भक्तन प्रतिपालय ॥ लक्ष्मी-पति [2]प्रीणन [3]प्रवीण भजनानँद [4]भक्ता-निहद । मो चित्तवृत्ति नित तहँ रहो जहँ नारायण पारषद ॥८॥

पारषद मुख्य कहे षोडष स्वभाव सिद्ध
सेवाही की [5]ऋद्धि बहु राखी हिये जोर कै ।
श्री पति नारायण के प्रीणन प्रवीण महा
ध्यान करै जन पालैं आय दृग कोर कै ॥
सनकादि दियो शाप प्रेरिके दिवायो आप
प्रगट ह्वै कह्यो पीवो सुधा मीजि [6]घोर कै ।
गही प्रतिकूलताई जोपै यही मनभाई
याते रीति [7]हद गाई धरी रंग बोर कै ॥२५॥

१ भगवान का नाम लिया है । २ प्रसन्न करने में । ३ चतुर । ४ भक्तों में सामारूप । ५ सम्पत्ति । ६ मसल घोलकर । ७ पराकाष्ठा ।

(प्रभुके प्यारे भक्तों से प्रार्थना)

मूल छ०—कमला गरुड सुनन्द आदि षोडष प्रभुपद [1]रति। हनू जाम्ब सुग्रीव बिभीषण शबरी खगपति। ध्रुव उद्धव अँबरीष विदुर अक्रूर सुदामा। चन्द्रहास चित्रकेतु ग्राह गज पांडव नामा॥ कोषारव कुन्ती [2]वधू पट ऐंचत लज्जा [3]हरी। हरिवल्लभ सब प्रार्थौं, जिन पदरज आशा धरी॥९॥

हरिके जे वल्लभ ते दुर्लभ भुवनमाँझ
तिनहीकी पदरेणु आशा जिय करी है।
योगी यती तपी तासों मेरो कछु काज नाहिं
प्रीति परतीति रीति मेरी मति हरी है॥
कमला गरुड हनुमान कपिपति आदि
सबै स्वादरूप कथा पोथिन में धरी है।
प्रभुसों सचाई जग कीरति चलाई अति
मेरे मन भाई सुखदाई रस भरी है॥२६॥

(श्री हनुमान जी की एक कथा)

रतन अपार सार सागर उद्धार किये
लिये हिय चावसों बनाय माला करी है।

१ प्रीतिवाले। २ द्रोपदी। ३ भगवान।

सब सुख साज रघुनाथ महाराज जू क
भक्तजो विभीषण सो आनि भेट धरी है॥
सभा केरी चाह अवगाह हनुमान गरे
डारि दई सुधि भई मति [1]अरबरी है।
राम विन काम कौन फोरि मणि डारि दिये
खोलि त्वचा नाम सो दिखायो बुद्धि हरी है॥२७॥

(श्री विभिषण जी की एक कथा)

भक्ति जो विभीषणकी कहै ऐसो कौन जन
तोपै कछू कही जात सुनो चित्त लायके।
चलत जहाज परयो अटकि विचार कियो
कोऊ अंगहीन नर दियो है बहाय के॥
लाग्यो लंका टापू ताहि राक्षसन गोदलियो
मोद भरे राजा पास गये [2]किलकायके।
देखत सिंहासन ते कूदि परे नन भरे
याही के आकार राम देख्यो भाग्य पायके॥२८॥
विरचि श्रृंगार सिंहासन लै बैठायो ताहि
राक्षसन [3]रीझ देत मानि शुभ घरी है।
जोवत मुखारविंन्द अतिहि आनन्द भरि
ढरकत नैन नीर ठाढे टेकि छरी हैं॥
तऊ न प्रसन्न होत क्षण क्षण [4]क्षीण होत
हूजिये कृपाल, कह्यो मेरी मति डरी है।

१ घबडाई। २ प्रसन्न होकर। ३ इनाम। ४ दुबला।

करो सिन्धु पार मोके यही सुख सार, दिये
रतन अपार लाय, वाही ठार करी है ॥२६॥
राम नाम लिखि शीश मध्य धरदियो वाके
यही जल पार करे भाव साँचो पायो है।
ताही ठौर बैठयो मानो नयो और रूप भयो
जा जहाज चढि आयो सोही फिरि आयो है ॥
लियो पहिचानि पूछी सब सो बखान कियो
हियो हुलसायो सुनि विनै के चढायो है।
शंका किये छुया नीर नेकु न परस करयो
हरयो मन देखि रघुनाथ नाम भायो है ॥३०॥

(श्री शवरीजी की कथा)

वन में रहत नित्य शवरी कहत सब
चहत टहल साधु तन न्यूनताई है।
रजनी रहत ऋषि आश्रम प्रवेश करै
लकरिन बोझ धरि आवैं मनभाई है ॥
न्हायबे को मग झारि काँकरी सो बीन डारें
वेगि उठि जाय कभूँ जात ना लखाई है।
उठत सँवारे ऋषि कहैं कौन झारि गयो
शोचत हृदय कोऊ वडो सुखदाई है ॥३१॥

१ करके। २ लोगों के शंका करने पर वह समुद्र में कूद गया परन्तु जल ने उसको स्पर्श नहीं किया (भिगोया नहीं)। ३ चली जाय।

वडे ही असंग वे मतंग रसरंग भरे
धरे देखि बोझ कहय कौन चोर आयो है।
कर नित चोरी सेवा, गहो वाहि एक दिन
विना पाये प्रीति वाकी मन भरमायो है ॥
बैठे निशि चौकी देत शिष्य सब सावधान
आय गई गहिलई काँपे शीश नायो है।
देखत ही ऋषि जलधारा चली नैनन तें
वैनन सों कह्यो ताहि कहा कछु पायो है ॥३२॥
दीठि हूँ न सौंही होत मानि तन गोत छाते
परी जाय शोचसोत कैसे के निकारिये ॥
भक्ति को प्रताप ऋषि जानत निपट नीके
केऊ कोटि विप्रताई यापे वारि डारिये ॥
दियो वास आश्रम में श्रवण में नाम दियो
कियो मुनि रोष सब कीन्ही पाँति न्यारिये।
शवरी सों कह्यो तुम राम दरशन करो
हम परलोक जात आज्ञा प्रभु पारिये ॥३३॥
गुरुको वियोग महा दारुण सो शोक भयो
जियो नहीं जात तोपै राम आस लागी है।
न्हायबे के घाट निशि रहत बुहारें सब
भई एक दिन वार देखि व्यथा पागी है ॥

१ इच्छा रहित। २ पकड़ लो। ३ सामने। ४ जाति की छूत। ५ चिन्ता धारा। ६ पालनी है।

छुइ गयो एक ऋषि खीझत अनेक भाँति
करिके विवेक गयो न्हावे [1]यह भागी है।
जल सो रुधिर भयो नाना कृमि भरि गयो
नयो पायो सोच तऊ जान्यो ना [2]अभागी है ॥३४॥
लागै वन बेर लागी रामकी ओसेर फल
चाखै धरि राखैं सोचै मीठे उन्ही योग हैं।
मारगमें जाय रहै लोचन बिछाय कभू
आवैं रघुराई दृग पावैं निज भोग हैं॥
ऐसेही बहुत दिन वीते मग [3]जोवत ही
आय गये औचक ही मिटे सब [4]सोग हैं।
ज्योंही तन न्यून ताई सुधि आई छिपी जाय
पूछैं आप शवरी कों ठाढे [5]जोई लोग हैं ॥३५॥
पूछि पूछि आये तहाँ शवरीको स्थान जहाँ
कहाँ वह भाग्यवती देखौं दृग प्यासे हैं।
आयी तब आश्रममें जानिके पधारे आप
दूरही ते दंडवत करी [6]चखु भासे हैं॥
[7]हबकि उठाय लई व्यथा तन दूर गई
नई नैन झरी लागी, प्रभु प्रेम प्यासे हैं।
बैठे सुख पाय फल खायके सराहि कह्यो
कहा कहौं मेरे सब मग दुःख नाशे हैं ॥३६॥

१. शवरी। २. वह अभागा ऋषि। ३. देखते। ४. शोक=दुःख। ५. जो लोग खड़े थे उनसे। ६. देख पडते ही। ७. लपक कर।

करत है शोच ऋषि वैठे निज आश्रमन्हि
जलको विगार सो सुधार कसे कीजिये।
आवत सुने हैं वन पथ रघुनाथ कहूँ
आवैं जब सब याको भेद कहि दीजिए॥
इतनेही भाँझ सुनी शवरीके वैठे आय
गयो अभिमान चलो पद गहि लीजिये।
आये [1]खुनसाय कही नीरको उपाय कहो
गहि पग भीलनीके स्वच्छ जल [2]भीजिये ॥३७॥

(पक्षिराज श्री जटायूजीकी कथा)

जानकी हरण कियो रावण मरणकाज
सुनि सीतावाणी खगराज दौरि आयो है।
बडीये लराई लीन्ही देह वार फेर दीन्ही
राखे प्राण राम मुख देखिवो सुहायो है॥
आये आप शीश गोद धारि दृगधार सींच्यो
पाय सीता सुधि निज करते जरायो है।
दशरथ तात सम मानि जलदान कियो
अति सनमान निजरूप धाम पायो है ॥३८॥

(महाराजा श्री अम्बरीषजीकी कथा)

अम्बरीष भक्तकी जो [3]रीस कोऊ और करै
बडो मति [4]बौर [5]क्योहूँ जात नहीं भाषिये।

१. खीझकर। २. स्नान करो। ३. बराबरी। ४. बावला। ५. किसी प्रकारसे भी।

दुरवासा ऋषि सीख सुनी नहीं काहूकी सो
मानि अपराध शिर जटा खैंचि नाखिये ॥
लई उपजाय काल कृत्या विकरालरूप
भूप महाधीर रहे ठाढे अभिलाषिये ।
चक्र दुःख मानिके [1]कृषानुतेज राखकरी
परी भीर ब्राह्मणको भागवत साखिये ॥३९॥
भाग्यो दशों दिशा सबलोक लोकपाल पास
गयो, नयो, चक्र तेज चूर्ण किये डारें है ।
ब्रह्मा शिव कही यह [2]टेव तुम बुरी गही
दासन को भेद नहि जान्यो वेद धारे है ॥
पहुँचे बैकुन्ठ जाय कह्यो दुःख अकुलाय
हाय हाय राखो प्रभु खरो तन जारे है ।
मैं तो हूँ आधीन [3]तीन गुणको न मान मेरें
भक्तवात्सल्य गुण सबही को टारे है ॥४०।
मोरे अति प्यारे साधु इनको अगाध मन
करयो अपराध तुम सह्यो कैसे जात है ।
धाम धन वाम सुत प्राण तन त्याग करें
ढरैं मेरी ओर निशिभोर मोरी बात है ॥
मेरे हू न सन्त विन और कछू साँची कहों

१. अपने तेज की अग्नि से । २. आदत । ३. शरणपाल, अर्तिहरण ब्रह्मण्यदेव इन आपके कहे तीनों ही गुणों का—

जाओ [1]वाही ठौर जाते मिटै उतपात है ।
बडे ही [2]दयालु वे दीन प्रतिपाल करैं
न्यूनता न धरै काहू, भक्ति गात गात है ॥४१॥
ह्वै कर उदास ऋषि आये नृप पास चले
गर्व सो गँवाय, पद गहे, [3]दीन भाषे हैं ।
राजा लाज मानि [4]भृत्यकहि सनमान करि
झुकि चक्र ओर करजोरि [5]अभिलाषे हैं ॥
भक्त न सकाम कभूँ कामना न चाहत हैं
चाहत हौं, विप्र दुःख दूर करो [6]चाखे हैं ।
देखिके विकलताई सदा सन्त सुखदाई
आई मन माँझ सब तेज ढाँकि राखे हैं ॥४२॥

(दूसरी कथा)

एक नृप सुता सुनि अम्बरीष भक्तिभाव
भयो हिये भाव ऐसो वर कर लीजिये ।
पितासों निशंक होके कही पति कियो में ही
विनै मानि मेरी वेगि चीठी लिखि दीजिये ॥
पाती लेके चल्यो विप्र [7]क्षिप्र वाही पुरी गयो
नयो चाव जान्यो तापै तिया कैसे [8]धीजिये ।

१. अंबरीषजी के पास । २. अंबरीषजी । ३. गरीबी के । ४. अपनेको दास कहकर । ५. चक्र से मांगा । ६. अपने कियेका फल चखलिया । ७. शीघ्र । ८. विश्वास किया जाय ।

कह्यो नृप कहो जाय रानी बैठी शत आय
बोल्यो ना सुहाय मोको, सेवा माँझ भीजिये ॥४३॥
कह्यो नृप सुतासों जू कीजिये जतन कौन
पौन जिमि गयो आयो काम नहीं किया [1]को ।
फिरिके पठायो सुख पायो मैं तो जान्यो यही
बडो धरमज्ञ वाके लोभ नहीं तियाको ॥
बोली अकुलाय मन भक्ति ही रिझाय लियो
कियो पति, मुख नहीं देखूँ [2]और पियाको ।
जायके निशंक तुम बात यह कहो मेरी
वेरी ज्यो न करिहो तो लेहो पाप [3]जियाको ॥४४॥
कही विप्र जाय, सुनि चाह, राय करि सभा
दयो लै खडग यासों फेरा फेरि लीजिये ।
भयो जू विवाह उतसाह कहूँ मात नाहीं
आई पुर अम्बरीष देखि छवि भीजिये ॥
कह्यो नये मन्दिर में झारिके बसेरा देवो
देवो सब भोग विभौ नाना सुख कीजिये ।
पूरब जनम कोऊ मेरे भक्ति [4]गंध हुती
जाहीते संबन्ध पायो यही मान लीजिए ॥४५॥
[5]रजनी के शेष पति भौन में प्रवेश किया
लियो प्रेम साथ ढिग मंदिर के आईये ।

१ कोई । २ अन्य पतिका । ३ प्राण हत्या का । ४ कामना । ५ कुछ रात रहते ।

बाहरी टहल पात्र चौका करि [1]रीझि रही
रही कोने जाय जामें [2]होत ना लखाइये ॥
आये जब राजा देखि [3]अनिमिष लोचन मे
कौन चोर आयो मेरी सेवा ली चुराइ ये ।
देखि दिन तीन फेर चीन्हके [4]प्रवीण कही
ऐसो मन जोपै प्रभु माथे पधराइ ये ॥४६॥
लई बात मानि मानो मंत्र लै सुनायो कान
होत ही [5]विहान सेवा नीके पधराई है ।
करके सिंगार फिर आपही निहार रहे
लहे नहीं पार दृग झरीसी लगाई है ॥
भई बढवार राग भोगसों अपार भाव
भक्ति विसतार रीति पुरसब छाई है ।
नृपहु सुनी तो अब लागी चोंप देखबेकी
आये ततकाल मति अति अकुलाई है ॥४७॥
[6]हरे हरे पाँव धरैं [7]पौरियन मनाकरै
खरे अरबरैं कब देखों भाव भरी को ।
गये चलि मंदिर लों सुन्दरी न सुधि अंग
रंग भीजि रहे दृग लाइ रहे झरीको ॥
वीण लै बजावै गावै लालही रिझावै त्यों-त्यों
अतिमन भावै कहे धन्य है या घरीको ।

१ प्रसन्न हुई । २. देख न पड़े । ३. आश्चर्य चकित हो टकटक देखने लगे । ४. चतुर राजा । ५. सबेरा । ६ धीरे धीरे । ७ पहरेदारोंको ।

द्वार पै रह्यो न जाय गये ललचाय ढिंग
भई उठि ठाढी देखि राजा गुरु हरीको ॥४८॥
वैसे ही बजावो वीण तान सो नवीन लैके
झीन स्वर कान परे जात मति खोइये।
जैसे रंग भीजि रही कही सो न जात मोपै
तोपै मन नैन चैन कैसे जात गोइये ॥
करके अलपचारी फेरिके सँवारी तान
आइ गयो ध्यान रूप ताही माँझ [1]भोइये।
प्रीति रसरूप भई रैनि सब बीत गई
ऐसी यह रीति नई जामें नहीं सोइये ॥४९॥
बात सुनी रानी और रजा रहे नई ठौर
भई शिरमोर अब कौन बाकी सरी है।
हमहू ले सेवा धरैं पति मति वश करैं
ध] नित ध्यान विषै बुद्धि राखि धरी है ॥
सुनिके प्रसन्न भया अति अम्बरीष हियो
लागी चोंप फल गई भक्ति घर घरी है।
बढ़ैं दिन दिन चाव ऐसोई प्रभाव भक्ति
पलटै स्वभाव लागै आनँद की झरी है ॥५०॥

(श्री विदुरजी की कथा)

न्हात रही विदुरानी अंगनि प्रक्षालि नीके
आय गये द्वार कृष्ण बोलिकै सुनायो है।

१ पग गई।

सुनतहि स्वर सुधि डारीलै निडरि मानो
रही मद भरि दौरी [1]पट न धरायो है ॥
डारिद्यौ पीत पट कटि लपटाय लयो
हियो अकुलायो वेष वेग ही बनायो।
बैठी आय ढिंग केरा छील के खवाये [2]छयोंत
आये पति खीझे दुःख कोटि गुनो पायो है ॥५१॥
प्रेम को विचार आप लागे [3]फलसार देन
चैन पाय कह्यो नारी बड़ी दुःखदाई है।
बोले रीझि श्याम तुम कीन्हो बड़ो काम तो पै
[4]स्वाद अभिराम वैसी वस्तु में न पाई है ॥
तिया सकुचाई कर काट डारौं हाय प्राण
प्यारे को खवाये छयोंत तोऊ तिन्हे भाई है।
हित ही की बात [5]दोऊ कोऊ पार पावै नाहिं
प्रभुहिं लडावै सोई जानै यहे [6]गाई है ॥५२॥

(श्री सुदामाजीकी कथा)

बड़ो निष्काम सेर चूनहू न धाम रहे
आई बाम ताने प्रीति हरि सों जनाई है।
सुनि शोच परयो हियो [7]खरो अरबरयो
मन गाढ़ो कैके बोल्यो हांजी अति [8]सरसाई है ॥

१ कपड़े भी नहीं पहने। २ छिलके। ३ गरी। ४ सुन्दर स्वादवाली। ५ प्रेम विभोर हो छिलके खिलाना भी और पत्नीको फटकारकर गरी खिलाना भी। ६ शास्त्रों ने और संतों ने कही है। ७ सचमुच। ८ प्रेम।

जाओ एक वार वह वदन निहारि आओ
जोपै कछु पाओ लाओ मोको सुखदाई है।
कही भली बात सातलोक में कलंक व्हैहैं
जानै जग याही लागि कीन्ही मित्रताई है॥ ५३॥
सुनि तिया कह्यो कृष्ण रूप क्यों न चाहो जाओ
दहै दुःख [1]आपही सों, वचन सो भाये हैं।
आई सुधि प्यारे की विचार दूर डारे सब
धारे पग मग झूमि द्वारावति आये हैं॥
देख के विभूति सुख उपज्यो [2]अभूत अति
चल्यो मुख माधुरी के लोचन तिसाये हैं।
डरपत हियो [3]ड्योढी लगि मन गाढो कियो
लियो कर गहि [4]चाह तहाँ पहुँचाये हैं॥५४॥
देख्यो श्याम आयो मित्र चित्रवत रहे नेक
हित को चरित्र रोइ दौरि गरे लागे हैं।
मानो एक तन भयो लयो ऐसे छाती लाय
नयो यह प्रेम छूटै नाहिं अंग पागे हैं॥
आई [5]दुबराई सुधि मिलनि छुड़ाई ताने
आनि जल रानी पावँ धोये भाग जागे हैं।
सेज पधराय गुरु चरचा चलाय सुख
सागर डुबाय आप अति अनुरागे हैं॥५५॥

१ अपने ही आप। २ जैसा कि पहले कभी नहीं हुआ था। ३ दरवाजा। ४ मिलने की लालसा। ५ दुर्बलता का खयाल।

चिरवा छिपाये कांख पूछी कहा लाये मोको
अति सकुचाये भूमिताक दृग भीजे हैं।
खैंचलई गांठ मूठी एक मुख मांझ दई
दूसरी हू लेत स्वाद पाय आप रीझे हैं॥
गह्यो कर रानी सुखदानी प्यारी वस्तु पाय
बाँटि पाई जात श्री सुदामा प्रेम धीजे हैं।
श्यामजू विचारि दीन्ही संपत्ति अपार विदा-
भये पै न जानी [1]सार, बिछुरन छीजे हैं॥५६॥
आये निज ग्राम यह अति अभि राम भयो
भयो पुर द्वारिका सो देखि मति गई है।
तिया रंग भीनी संग अमित सहेली लीन्ही
कीन्ही मनुहार यों प्रतीति उर भई है॥
वहै हरि ध्यान रूप माधुरी को पान तासों
राखै निज प्राण जासों प्रीति रीति भई है।
भोग की न चाह धरैं, तन निरवाह करैं,
करैं [2]सोई चाल सुख जाल रस मई है॥५७॥

(श्री चन्द्रहासजीकी कथा)

हुतो नृप एक ताको सुत चन्द्र हास भयो
परी जो विपत्ति [3]धाय लाई [4]और पुर है।
राजाको दिवान ताके घर रही [5]आनि बाल
आपने समान संग खेलै [6]रंग दुर है॥

१ तत्व=मर्म। २ वही पुरानी। ३ धात्री=दासी। ४ दूसरे। ५ बालकको लेके। ६ रंग (अलगाव) छुप गया।

भयो ब्रह्म भोज कोई ऐसोई संयोग बन्यो
आये वे [1]कुमार जहाँ विप्रनको [2]सुर है।
बोलि उठे सबै तेरी सुताको जु पति यह
हुयो चहै जानि सुनि गयो [3]लाज घुर है ॥५८॥
पर्‍यो सोच भारी कहा करों यों विचारी अहो
सुताजो हमारी ताको पति ऐसो चाहिए ?
डारौं याहि मार याको यही है उपाय ठीक
बोलि [4]नीचजन कह्यो मारो हियो [5]दाहिये ॥
गये लैके दूर देख्यो बाल [6]छविपूर यह
योनि परै घूर दुःख ऐसो [7]अवगाहिये।
बोले अकुलाय तोहि मारेंगे सहाय कौन
मांगो एक [8]बोल जोभी चाहो मन मांहिये ॥५९॥
माँग्यो यही [8]बोल सो [9]कपोल में से गोल एक
[10]गंडकीको सुत काढि सेवा नीके कीन्ही है।
भयो तदाकार यों निहारि [11]सुख भार भरि
नैननकी कोरही सों आज्ञा वध दीन्ही है ॥
[12]गिरे मुरझाय दया आई हिय भाय भरे
ढरे प्रभु ओर मति आनँद सों भीनी है।

१ चन्द्रहास। २ देवता (प्रधान)। ३ लज्जामें घुल गया। ४ बधिक लोग। ५ जलाता है। ६ महान सुन्दर। ७ डूबना पड़ता है। ८ वचन। ९ गाल=गलाफा। १० शालिग्राम। ११ अपार सुखमें भरकर। १२ बधिक लोग मुरझाकरगिर गये।

हुती छटी आंगरी सो काटिलई दूषण ही
भूषण भयी सो जाय दई साँच चीन्ही है ॥६०॥
वाही देश भूमि में रहत [1]लघु भूप और
और सुख सब ताके सुत चाह भारी है।
निकस्यो विपिन आय देखि याही [2]मोद भर्‍यो
कीन्हे खग छाँह घेरे मृगपति [3]सारी है ॥
दौरिके निशंक लियो मानों निधि पाई रंक
कियो मन भायो सो बधायो निधि वारी है।
कछु दिन बीते भये नृप चित्त चीते
दीन्हे राज को तिलक भाव भक्ति विसतारी है ॥६१॥
रहै जाके देश सो नरेश कर पावै नाहीं
बाँह बल जार दियो सचिव पठाय के।
आयो घर जानि कियो अति सनमान
सो पिछान लियो वहै बाल मारौं छल छाय के ॥
दई लिखि चीठी कही मेरे सुत हात दीजे
कहौ कीजे वही बात लायो जो लिखाय के।
आयो पुर पास बाग सेवा मति पागि करी
भरी नींद दृग नेक सोयो सुख पाय के ॥६२॥
सुता ताही मंत्री की सो खेलत सखिन संग
आई बाग मांझ भई न्यारी देखि रीझी है।

१ छोटे राजा=जागीरदार=जमीन्दार। २ आनन्द। ३ रक्षामें।

पागतें सो पाती छवि माती झुकि खैंचि लई
खोलि बाँची लिख्यो विष देन पिता खीझी है ॥
विषया सुनाम निज सोई दृग अंजन ले
विष्या बनायो मनभाई रस भीजी है।
आय मिली आलिन में लालन को ध्यान हिये
पिये मद मानो गृह आई तब धीजी है ॥६३॥
उठ्यो चन्द्रहास जिहि पास लिख्यो पत्र लायो
भयो देखि मन भायो गरे सों लगायो है।
दई कर पाती बात लिखी सो सुहाती बोलि
विप्र धरी एक माँझ व्याह उघरायो है ॥
करी ऐसी रीति लीन्हे बड़े नृप जीति
निधि देत गई बीति चाव पार पै न पायो है।
आयो पिता नीच देख घूम आई मीच मानो
बानो लखि दूलह को शूल सरसायो है ॥६४॥
बैठयो लै एकान्त सुत करी कहा भ्रान्ति तैंने
कह्यो सो वृत्तान्त कर पाती ले दिखाई है।
बाँचि आँच लागी मैं तो बडो ही अभागी तो पै
मारौं मति पागी बेटी राँडहू सुहाई है ॥
बोलि नीच जात कही जाओ तुम देवी मठ
आवे तहाँ कोऊ मारि डारो मोहि भाई है।

१ मस्तक पर की पगड़ी। २ क्रुद्ध हुई। ३ विश्वस्त हुई।
४ विधवा। ५ वधिक।

चन्द्रहासजी सों बोल्यो देवी पूज आओ आज
मेरी कुल पूज्य, सदा रीति चलीआई है ॥६५॥
चले ये करन पूजा देशपति राजा सोची
मेरे सुत नही राज वाही को ले दीजिये।
सचिव सुवन सों जु कह्यो तुम लाओ जाओ
पाऊँ न समय फिर अवै काम कीजिये ॥
दौरयो सुख पाय चाव मग ही में मिल्यो जाय
दियो सो पठाय नृप रंग माँझ भीजिये।
देवता सम्मान हेत गयो मंत्री सुत आप
जात मारि डारयो यासों भाष्यो भूप लाजिये ॥६६॥
काहू आय कही सुत तेरो मारयो नीचन ने
सींचत शरीर दृग नीर झरी लागी है।
चल्यो ततकाल देखि गिरयो हो विहाल शीश
पाथर सों फारयो मरयो, ऐसो ही अभागी है ॥
सुनी चन्द्रहास चलि वेग मठ पास आय
ध्याय देवता को विनै कीन्ही अनुरागी है।
कह्यो तेरो दोषी याही कोप करि मारयो मैं ही
विनै कै जिवाये दोऊ बडो बडभागी है ॥६७॥
कियो ऐसो राज सब देश भक्त राज भयो
ढिंग को समाज ताकी बात कहा भाषिये।
हरि हरि नाम अभिराम धाम धाम सुनै
और काम कामना न सेवा अभिलाषिये ॥

काम क्रोध लोभ मद आदि लैके दूर किये
जिये नृप पाय ऐसो नैनन में राखिये ।
कही जिती बात आदि अन्त लौं सुहात हिये
पढै प्रात पावै सुख जैमिनी है साखिये ॥६८॥

(भक्त समूह वर्णन)

कौषारव नाम जो बखान कियो नाभा जू ने
मैत्रेय ऋषि नाम जान लिजे बात में ।
आज्ञा प्रभु दई जाहु विदुर है भक्त मेरो
करो उपदेश रूप गुण गात गात में ॥
चित्रकेतु [1]प्रेमकेतु भागवत ख्यात जाने
पलट्यो[2] जनम प्रतिकूल फूल घात में ।
अक्रूर ध्रुव आदि भये सब भक्त भूप
उद्धव से प्यारे नीके ख्यात पात पात में ॥६९॥

(श्री कुन्तीजी की कथा)

कुन्ती की सी करतूत करै कौन दूजो प्राणी
माँगत विपत्ति जासों भागैं सब [3]जन हैं ।
देख्यो मुख चाहों [4]लाल ! देखे विन हिये [5]साल
[6]हूजिये कृपाल नहीं दीजे वास वन है ॥

१ प्रेम की ध्वजा । २ प्रभु आज्ञा से वृत्रासुर रूप विरोधी जन्म लेकर व्रज के प्रभाव को भी फूल सा अनुभव किया । ३ लोग । ४ हे श्री कृष्ण । ५ दुःख । ६ कृपाकर रहो या बनवास दे दो ।

देखि विकलाई प्रभु आँख भरि आई, फेरि
घर ही लेआई कृष्ण प्राण तन धन है ।
श्रवण वियोग सुनि नेकहू न रह्यो गयो
भयो [1]वपुन्यारो अहो येही साँचो प्रण है ॥७०॥

(श्री द्रौपदी जी की कथा)

द्रौपदी सती की बात कहै ऐसो कौन [2]पटु
खैंचत ही पट, पट कोटि गुने भये हैं ।
द्वारिका के नाथ कहि बोली तब साथ हुते
द्वारिका सों फिरि आये भक्त वाणी [3]नए हैं ॥
गये दुर्वासा ऋषि वन में पठाये नीच
धर्मपुत्र बोले न्हाय आओ प्रणलये हैं ।
भोजन निवारि तिय आई कही सोच परयो
चहैं तन त्याग, कही कृष्ण कहूँ गये ? हैं ॥७१॥
सुन्यो भागवती को वचन भक्ति भाव भरयो
कियो मन आये श्याम पूजे मनकाम है ।
आवतही कही मोहि भूख लागी देवो कछु
महा सकुचाये माँगैं प्यारे नहिं धाम है ॥
विश्व के भरणहार धरे हैं अहार अजू
हमसों दुराओ कही वाणी अभिराम है ।
लग्यो शाक पत्र पात्र जलसँग पाय गये
पूर्ण भे त्रिलोक विप्र गनै कौन नाम है ॥७२॥

१ शरीर छूट गया । २ चतुरा । ३ आदर किया है ।

(भक्त समूह से चरण कमलकी याचना)

मूल छं०—योगेश्वर श्रुतदेव अंग [1]मुचु प्रियव्रत जेता। पृथू परीक्षित शेष सूत सौनक [2]परचेता। [3]शतरूपा [4]त्रयसुता सुनीति सती मन्दालस। [5]यज्ञपत्नि [6]व्रजनारि किये केशव अपने वश। ऐसे नर नारी जिते, तिनही के गाऊं यशैं। पद पंकज [7]बाँछों सदा, जिनके हरि नितउर बसैं ॥१०॥

टीका क०—जिनही के हरि नितउर बसैं तिनहीकी
　　पदरेणु [8]चैन देन [9]आभरण कीजिये।
योगेश्वर आदि रस स्वाद में प्रवीण महा
विप्र श्रुतदेव ताकी वार्त कहि दीजिये॥
　　आये हरि घर देखि गयो प्रेम भर हियो
　　ऊँचो करि कर पट फेरि मति भीजिये।
जिते साधु संग तिन्है विनय प्रसंग कियो
[10]कियो उपदेश मोसो वडे पाँव लीजिये ॥७३॥

१ मुचुकुन्द। २ प्राचीन बर्हि के पुत्र प्रचेता। ३ मनुपत्नी। ४ तीन मनु कन्या (प्रसूती, आकूती और देवहुती)। ५ यज्ञ कर्त्ता माथुरोंकी पत्नियां। ६ गोपियां। ७ चाहों। ८ सुख। ९ आभूषण। १० (भगवान ने उपदेश दिया कि सन्त मुझसे भी बड़े हैं इनके चरण पकड़ो।)

(भक्त समूह से चरणरज की याचना)

मूल छं०—प्राचीन बर्हि सत्यव्रत रहुगण सगर भगीरथ। वाल्मीकि मिथिलेश गये जे जे गोविंद पथ। रुक्मांगद हरिचन्द भरत अरु दधिचि उदारा। सुरथ सुधन्वा शिविरु सुमति अति बलिकी दारा। नील मोरध्वज ताम्रध्वज अलर्क कीरति राचि हों। अंघ्री [1]अंबुज [2]पांशुको जन्म जन्म हों याचिहों ॥११॥

टीका क०—जनम जनम को न मेरे कछु शोच अहो
　　सन्त पदकंज रेणु शीश पर धारिये।
प्राचीनबर्हि आदि कथा सुप्रसिद्ध जग
उभय वाल्मीकि कथा उरते न टारिये॥
　　भये भील संग भील ऋषि संग ऋषिभये
　　राम दरसन पाय लीला विसतारिये।
जाहि जग गाय सुनि सकै न अघाय [3]क्योंहू
भाव भरै हियो, भरि नैन नीर ढारिये ॥७४॥

(श्री श्वपच वाल्मीकि जू की कथा)

　　हुतो एक श्वपच सु वाल्मीकि नाम ताको
　　श्याम ने प्रकट कियो [4]भारत में गाइये।

१ कमल। २ रज=धूरी। ३ किसी प्रकार से भी। ४ महाभारत।

पांडवन मध्य मुख्य धर्मपुत्र राजा आप
कीन्हो यज्ञ भारी ऋषि आये भूमि छाइये।
ताको [1]अनुभाव शुभ शंख सोप्रभाव कहै
जोपै नहिं बाजै, तो अपूरण जनाइये।
सोई बात भई वह बाज्यो नहीं शोक परयो
पूछी प्रभु पास आय [2]न्यूनता बताइये ॥७५॥
बोले कृष्णदेव याको भेव सब सुनि लेहु
नीके मानि लेव बात [3]दुरी समझाइये।
भागवत सन्त रसवन्त कोऊ जैंयो नाहिं
ऋषिन समूह भूमि चहुँ दिशि छाइये॥
जोपै कहो भक्त नाहिं, नाहीं कैसे कहो, याही
नगर बसै सो कुल जाति को [4]बहाइये।
दासनके दास अभिमानकी न [5]बास कहूँ
पूरण की आस जो पै ऐसो लै जिमाइये ॥७६॥
ऐसो हरिदास पुर आस पास दीसै नाहिं
[6]बास बिन कोऊ लोक लोकन में पाइये।
तुमरे नगर माँझ निशिदिन भोर साँझ
आवै जाय तोपै काहू बात ना जनाइये॥
सुनि सब चौंकि परे भाव अचरज भरे
हरे मन नैन अजू बेगही बताइये।

१ पूर्णताका लक्षण। २ कमी। ३ गुप्त। ४ छोडदी। ५ गंध। ६ वासना=कामना।

कहा नाम कहाँ ठाम जहाँ हम जाय देखैं
लेखैं निज भाग धाय पाँय लपटाइये ॥७७॥
जेते मेरे दास कभी चाहैं ना प्रकट भयो
करौं मैं प्रकाश मानैं महा दुःख दाइये।
मोको परयो शोच यज्ञ पूरण को [1]लोच हिये
लिये वाको नाम [2]जनि गाम तजि जाइये॥
[3]ऐसे प्रभु कहो जामें रहो तुम न्यारे सदा
हमही लिवाय लावैं नीके कै जिमाइये।
जावो वाल्मीकि घर बड़ो [4]निर्व्यलीक साधु
कियो अपराध हम दियो जो बताइये ॥७८॥
अर्जुन औ भीम सेन चले इन मित्रनकों
[5]अन्तर उघारि कह्यो भक्ति भाव दूर है।
पहुँचे भवन जाय चहुँ दिशि फिरे आय
परे भूमि झूमि घर देख्यो [6]छविपूर है॥
आये नृप राजनको देखि तजे काजन को
लाजन सौं काँपै तन भयो मन चूर है।
[7]पाँयन को धारियेजू जूठनिको डारियेजू
पाप गेह टारिये औ कीजे भाग भूर है ॥७९॥
[8]जूठन लै डारौं सदा द्वार को बुहारौं नाहीं

१ प्रेम। २ कहीं। ३ इस प्रकारसे। ४ माया रहित। ५ अन्तःकरण खोल कर। ६ भगवान। ७ यह अर्जुन ने कहा है। ८ यह बालमीकि ने कहा है।

और को निहारों अजू यही साँचोपन है।
[1]कहो कहा जेवों कछू पाछे लै जिवाँवो हमें
जानी गई रीति भक्ति भाव तुम तन है॥
[2]तब तो लजानो हिये कृष्णपै रिसानो नृप
चाहो सोही ठानो मेरे संग कोऊ [3]जन है।
[4]भोरही पधारो अब यही उर धारो और
भूलि ना विचारो [5]कही [6]भले जो पै मन है॥८०॥

कही सब रीति सुनि धर्मपुत्र प्रीति भई
करीले रसोई कृष्ण द्रौपदी सिखाई है।
जेतिक प्रकार सब व्यंजन सुधारि करो
आज तोरे हातन की होत सफलाई है॥
ल्याये जा लिवाय कही बाहर जिंवाय देवो
कही प्रभु आप लावो अंक भरि भाई है।
आनिके बिठायो पाकशालामें रसाल ग्रास
लेत बाज्यो शंख हरि छडी की लगाई है॥८१॥

ग्रास ग्रास प्रति क्यों न बाज्यो कछुलाज्यो कहा
भक्त को प्रभाव तू न जानत यों जानिये।
बोल्यो अकुलाय जाय पूछो अजी द्रौपदी सों
मेरो दोष नाहीं यह आप मन आनिये॥

१ यह अर्जुन का वचन है। २ वाल्मीकि का वचन है। ३ सहायक। ४ अर्जुन ने कहा। ५ वाल्मीकि ने। ६ अच्छा।

मानी साँची बात जाति बुद्धि आई देखि याहि
सबहि मिलाये मेरी [1]चातुरी बिहानिये।
पूछे ते कही सो वाल्मीकि में मिलायो याते
आदि प्रभु पायो पाऊँ स्वाद [2]उनमानिये॥८२॥

(श्रीरुक्मांगद जी की कथा)

रुक्मांगद बाग शुभ गंध फूल पागिरहे
करि अनुराग देव वधू लेन आवहीं।
एकदिन रही एक कांटो चुभ्यो बैंगन को
सुनि नृप माली, पास आयो सुख पावहीं॥
पूछी सो उपाय कहो जातें स्वर्ग जाय सको
कही एकादशी को संकल्प दिये जावहीं।
व्रत को तो नाम इहि ग्राम कोऊ जानै नाहीं
कीन्हों व्है अजान काल्ह लावो गुण गावही॥८३॥

फेरी नृप डोंडी सुनी बनिककी लौंडी भूखी
रही ही निगोडी निशि जागी उन मारीये।
राजा ढिंग आय करिदियो व्रतदान त्योंही
भरि सो उडान निज लोक को पधारी ये॥
महिमा अपार देख भूपने विचार कियो
एकादशी अन्नखाय ताहि मारि डारीये।
याहीके प्रभाव भाव भक्ति को विस्तार भयो
नयो चोज भयो सब पुरी लै उधारी ये॥८४॥

१ चतुराई को नष्ट कर दी। २ अनुभव होगा।

एकादशी व्रतकी सचाई लै दिखाई राजा
सुताकी [1]निकाई सुनो नीके चित्त लायके ।
पिता घर आयो पति भूख ने सतायो अति
माँगे तिया पास नहीं दियो यह भायके ।
आज हरि वासर सो [2]तासर न कोऊ पूछै
डर कहा [3]मीच को यों मानी सुख पाय के ॥
तजे उन प्राण पाये वेगि भगवान वधू
हिये सरसान भई कह्यो प्रण गाय के ॥८५॥

(भक्त समूह का वर्णन)

सुनो हरिचन्द कथा [4]व्यथा बिन दियो द्रव्य
[5]तथा नहीं राख्यो बेचे सुत तिया तन है ।
सुरथ सुधन्वाजू सों दोष के करत मरे
शंख औ लिखित विप्र भयो मैलो मन है ॥
इन्द्र और अग्नि गये शिवि पै परीक्षा लेन
काटि दियो मांस रीझे सांचो जान्यो प्रण है ।
भरत दधीचि आदि भागवत बीच गाये
सबन सुहाये जिन दियो तन धन है ॥८६॥

(राजा बालि की महारानी विन्ध्यावली की कथा)

विन्ध्यावली तिया सी न देखी कहूँ तिया नैन
बांध्यो प्रभु पिया देखि कियो मन चौगुनो ।

१ उत्तमता । २ आतिथ्य=भोजन की बात । ३ मृत्यु । ४ दुःख माने विना । ५ कुछ भी ।

करि अभिमान दान देन बैठ्यो [1]आप ही को
कियो अपमान मैं तो मान्यो सुख सौगुनो ॥
त्रिभुवन छीनि लियो दियो बैरी देवतान
प्राण मात्र रहे हेरि आन्यो नहीं [2]औगुनो ।
ऐसी भक्ति होय जो पै जागे रहै सोय भले
रहे भव माँझ तो पै लागै नही [3]भौगुनो ॥८७॥

(महाराजा श्रीमोरध्वजजी की कथा)

अर्जुन के गर्व भयो कृष्ण प्रभु जान लयो
दिय [4]रस भारी याहि रोग ज्यों मिटाइये ।
कही मेरो भक्त एक तोको ले दिखाऊँ ताहि
भये विप्र वृद्ध संग [5]बाल चलि जाइये ॥
पहुँचत भाष्यो जाय मोरध्वज राजा कहाँ
वेग सुधि देओ काहू बात यह जनाइये ।
राजा प्रभु सेवा करैं, नेक रहो, पाँव धरो,
जाय कहों, आप बैठो, आग सी लगाइये ॥८८॥
चले अनखाय पाँय गहि अटकाये जाय
नृप को सुनाई ततकाल दौरि आये हैं ।
बडी कृपा करी आज फरी मेरी [6]चाह बेलि
निपट नवल फल लाग्यो जानि पाये है ॥
दीजे आज्ञा मोहि सोई करौं सुख भरौं मन

१ भगवान । २ औगुण भी । ३ भव=संसार का गुण । ४ आनन्द । ५ अर्जुन को बालक बनाया । ४ इच्छा लता ।

पीजे रस आनि मेरे नैन ले सिराये हैं।
सुनि क्रोध गयो मोद भयो सो परीक्षा हेत
भयो चित्त चाव ऐसे वचन सुनाये हैं ॥८९॥
देवे की प्रतिज्ञा करो, करी जू प्रतिज्ञा हम
जाही भांति सुख होय सोही मोको [1]भाई है।
मिल्यो मग सिंह यहि बालक को खाये जात
कही खाओ मोहि, नहीं यही सुखदाई है ॥
काहू भाँति छोडो बोल्यो नृप को शरीर आधो
आवै तो तजों मैं याहि बात यों जनाई है।
बोलि उठी तिया अरधांगी मोहि जाय देवो
पुत्र कहै लेओ मोको बोले सुधि आई है॥९०॥
सुनो एक बात सुत तिया ल करोत गात
चीरैं धीरे धीरे यह पाछे सिंह भाषिये।
कीन्ही वाही भाँति आरो नासा लगि आयो जब
ढरयो दृग नीर भीर [2]बाकरी न चाखिये ॥
चले अनखाय गहि पाँव सो सुनाये बैन
नैन जल आयो अंग वाम [3]काहे [4]नाखिये !
सुनि भरि आयो हियो निज रूप श्याम लियो
दियो रूप सुख व्यथा गई [5]अभिलाषिये ॥९१॥

१ अच्छी लगती। २ सिंह। ३ क्यों। ४ फेंका जाय। ५ क्योंकि चिरकाल से अभिलाषा थी।

बदलो न दियो जाय निपट रिझाय लियो
तऊ रीझ दिये बिना मोरे हिय साल है।
मांगो वर कोटि [1]चोट बदलो न चूकै तऊ
सूखै मुख मेरो सुधि आये [2]वह हाल है ॥
बोले [3]भक्तराज आप बड़े महाराज, कोऊ
थोरो ही करै जो हित, मानो [4]कृत जाल है।
एक मोको दीजे दान, दियो जू बखानो बेग,
साधु की परीक्षा [5]जनि करो कलि काल है ॥९२॥

(श्रीअलर्कजी की कथा)

अलरक कीरति में [6]राचौं नित साँचे हिये
किये उपदेश हू न छूटै विषै वासना।
माताजू मन्दालसाकी बडी ही प्रतिज्ञा रही
आनै जो उदर मेरे रहै [7]गर्भआस ना ॥
पतिको [8]निहोरो ताते रह्यो छोटो कोरो
वाको ले निकास्यो देय काशी नृप [9]शासना।
[10]मुद्रिका उघारि औ निहारि दत्तात्रयजू को
भये भव पार करि प्रभु की उपासना ॥९३॥

१ घाव। २ आरीसे चीरने का। ३ मोरध्वज। ४ बहुत अधिक किया। ५ नहीं। ६ लगूँ। ७ दुबारा गर्भमें आनेकी आशा। ८ आग्रह। ९ भय। १० माता की दी हुई अंगूठी जिसमें लिखकर रख दिया था कि "संगः सर्वात्मना त्याज्यः यदि त्यक्तुं न शक्यते। सद्भिरेव प्रकर्तव्यः सत्संगो भव भंजनः ॥"

(मायामुक्त राजर्षि महर्षि भक्तगण चरण रज बन्दन)

मूल छ०—ऋभु इक्ष्वाकू ऐल गाधि रघु अँग शतधन्वा । अमुरति रन्ति उतंग भूरि देवल अरु मन्वा ॥ नहुष ययाति दिलीप पुरू यदु गुह मान्धाता । पिप्पल निमि भरद्वाज दक्ष शरभंग सँघाता । संजय शभीक उत्तानपाद, याज्ञवल्क्य यश जग भरे । तिन चरण धूरि मो भूरि शिर, जे जे हरि माया तरे ॥१२॥

(श्रीरंतिदेवजी की कथा)

अहो रन्तिदेव नृप सन्त भो दुष्यन्त वंश
अतिही प्रशंस सो आकाश वृत्ति लई है ।
भूखे को न देख सकै आवै सो उठाय देत
[1]नेति नहीं कर भूखे देही [2]क्षीण भई है ॥
चालीस औ आठ दिन पीछे जल अन्न आयो
दियो विप्र शूद्र नीच श्वान यह [3]नई है ।
हरि ही निहारे उनमांझ तब आये प्रभु
माँग्यो जग दुःख मैं ही [4]भोगों भक्ति लई है ॥६४॥

१ नाहीं । २ दुर्बल । ३ अभूत पूर्व बात । ४ मैं ही भोग लूँ (और किसी को न भोगना पड़े) ।

निषादराज श्रीगुहजी की कथा

भीलन को राजा गुह राम [1]अभिराम प्रीति
भयो वनवास मिल्यो मारग में आयके ।
करो यह राज जू विराज सुख दीजे मोको
बोले महाराज तज्यो आज्ञा पितु पायके ॥
दारुण वियोग अकुलात दृग अश्रुपात
पीछे लोहू आवै ताहि सकै कौन गायके ।
रहै नैन मूदि रघुनाथ बिन देखों कहा ?
अहो प्रेम रीति याके हिये रही छायके ॥६५॥
चौदह बरस पाछे आये रघुनाथ जबैं
साथ के जो भील कहैं आये प्रभु देखिये ।
बोल्यो अब पाऊँ कहाँ ? होती न प्रतीति मोहि
प्रीति करि मिले राम कही मोको पेखिये ॥
परसि पिछाने लपटाने सुख सागर-
समाने, प्राण पाये मानो, भाल भाग्य लेखिये ।
प्रेम की जो बात क्योंहू वाणीमें समात नाहीं
अति अकुलात कहौं कैसे कै विशेषिये ॥६६॥

(महाराजा निमि और नौ योगीश्वरोंकी प्रार्थना)

मूल छ०—कवि हरि कर भाजन सुभक्ति रत्नाकर भारी । अन्तरिक्ष अरु चमस अननता पधति उधारी । प्रबुध प्रेमकी

१ परम सुन्दर ।

राशि भूरिदा अविरहोता। पिप्पल द्रु मिल्ल प्रसिद्ध भवाब्धि पारके पोता। जयंती नन्दन जगतके, त्रिविधि ताप आमय हरण। निमि अरु नव योगेश्वरन, पादत्राण की हों शरण॥१३॥

(नवधा भक्ति के नेता भक्तराजों से दया याचना)

मूल छं०—श्रवण परीक्षित सुमति [1]व्यास सावक सुकीरतन। प्रभु पूजा प्रह्लाद स्मरण कमलापद सेवन। बन्दन [2]सुफलक सुवन दास्य दीपत [3]सुकपीश्वर। सख्यत्वे [4]पारत्थ समर्पण आतम बलि धर॥ [5]उपजीवी इन नामके, एते [6]त्राता अगतिके। पद पराग करुणा करो, [7]नेता नवधा भगति के॥१४॥

(महाराजा श्री परीक्षित जी की कथा)

श्रवण रसिक कहूँ सुनेना परीक्षित से
पान हू करत लागै कोटि गुनी प्यास है।

१ व्यास पुत्र=शुकदेव। २ अक्रूर। ३ सुन्दर श्रीहनुमानजी। ४ अर्जुन। ५ रूपराशि=भगवान। ६ दुर्गतिसे बचानेवाले। ७ अगुआ।

मुनि मन माँझ कभूँ आवत न ध्यावत हू
सोही गर्भ माँझ देखि आयो [1]रूप रास है॥
कही शुक देव जू सों [2]टेव मेरी लीजे जानि
प्राणलागे कथा नहीं तक्षक की [3]त्रास है।
कीजिये परीक्षा उर आनि मति सानी अहो
वाणी [4]विरमानी तहाँ जीवन [5]निरास है॥९७॥

(श्री शुकदेवजी की कथा)

गर्भ ते निकसि चले वन ही में कियो वास
व्यास से पिता को नहिं उत्तरहु दियो है।
[6]दशमश्लोक सुनि गुनि मति हरि गई
लई नई रीति पढि भागवत लियो है॥
रूप गुण भार मन सह्यो जात कैसे ताहि
आये नृप सभा ढरि भीज्यो प्रेम हियो है।
पूछै राजा ऋषिन उपाय भोरेपरे सब
आप उठे गाय, मानो [7]रंग झर [8]कियो है॥९८॥

(श्री प्रह्लादजी की कथा)

सुमिरण साँचो कियो लियो देखि सब ही में
एक भगवान कैसे काटै तलवार है।

१ भगवान को। २ आदत। ३ भय। ४ रुकी कि। ५ समाप्त। ६ श्रीमद्भागवत दशम स्कंध का श्लोक "अहो बकीयं स्तनकालकूटं जिघांसया पाय यदप्यसाध्वी। लेभेगतिं धात्र्युचितां ततोऽन्यं कं वा दयालुं शरणं भजेम॥" ७ रंग की झड़ी लगा दी। ८ अब क्या करना है? यही विचारते हैं।

काटिबो खडग जल बोरिबो है शक्ति जाकी
ताहि को निहारैं चहुँ ओर सो अपार है ॥
पूछे ते बतायो खम्भ, तँह ही दिखायो रूप
प्रगट अनूप, भक्त वाणी ही सों प्यार है।
दुष्ट डार्यो मारि गरे आँतैं लई डारि तऊ
क्रोध कोन पार, करौं कहा यों विचार है ॥९९॥
डरे शिव अज आदि-देख्यो नहिं क्रोध ऐसो
आवत न ढिंग कोऊ लच्मी हू को त्रास है।
तब तो पठायो प्रहलाद अहलाद भर्यो
महाभक्ति भाव पग्यो आयो प्रभु पास है ॥
गोदमें उठाय लियो शीश पर हाथ दियो
हियो हुल सायो वाणी कही विनै[1] रास है।
आई दया पग परि श्री नृसिंह जू सों धर्यो
जगहिं छुडावो कर्यो माया ज्ञान नाश है॥१००॥

(श्री सुफलक पुत्र अक्रूर जी की कथा)

चले अकरूर मधु पुरीतैं [2]विसूरि नैन
चली जल धारा कब देखौं छवि पूर को।
शकुन मनावै एक देखिबो ही भावै देह-
सुधि विसरावै लखि लोट [3]पग पूर को ॥

१ प्रह्लाद जी की वाणी को विनय समूह वाली बनादी और उन्होंने रसभरी स्तुति की। २ बिल खाकर। ३ चरण चिन्हों को।

वन्दन प्रवीण चाह निपट नवीन भई
दई शुकदेव कहि जीवनकी मूर को।
मिले राम कृष्ण [1]झिले मनोरथ पाय निज
हिले दृग रूप [2]भयो हियो चूर चूर को ॥१०१॥

(दैत्य राज श्री बलिजी की कथा)

दियो सरवस करि अति अनुराग बलि
पागि गयो हियो प्रहलाद सुधि आई है।
गुरु भरमावै कहि नीति समझावै बोल
उरमें न आवै, किती भीति उपजाई है ॥
कह्यो सोही कियो साँचे भाव प्रण लियो अहो
दियो डर हरिहू ने मति न चलाई है।
रीझि प्रभु रहे द्वार भये वश हार मानि
श्री शुक बखानी प्रीति रीति सोई गाई है ॥१०२॥

(श्रीप्रसाद का यशगान करनेवाले प्रामाणिक भक्त गण)

मूल छ०—शंकर शुक सनकादि कपिल नारद भगवाना। विष्वक्सेन प्रह्लाद बली भीषम जग जाना ॥ अर्जुन ध्रुव अँबरीष विभीषण महिमा भारी। अनुरागी अक्रूर सदा उद्धव अधिकारी ॥

१ प्रसन्न हुए। २ हृदय के टुकड़े टुकड़े हो गये।

भगवन्त भुक्त अवशिष्ट की कीरति कहन सुजान । हरि प्रसाद रसस्वाद के भक्त इते परमान ॥१५॥

(श्रीभगवद्भक्त ऋषिगणों से शरण याचना)

मूल छ०—पुलह पुलस्त्य अगस्त्य च्यवन सौभरि वसिष्ठ ऋषि । कर्दम अत्रि ऋचीक गर्ग गौतम सुव्यास शिषि ॥ लोमश भृगु दाल्भ्य अंगिरा शृंगि प्रकाशी । मांडव विश्वामित्र दुर्वासा सहस अठासी ॥ जाबाली यमदग्नि पराशर बोधायन पदरज धरौं । ध्यान चतुर्भुज चित धरयो तिन्है शरण हौं अनुसरौं ॥१६॥

(महर्षिवर्य श्री बोधायनजी की कथा)

भगवान बोधायन श्रीपुरुषोत्तमाचार्य जी का अवतारकाल विक्रम संवत से लगभग ५०० पांच सौ वर्ष पूर्व, नन्द काल है। आपके पूज्य पिताजी का नाम श्री शंकर दत्तजी एवं माताजी का नाम श्री चारुमती देवीजी था। आपकी जन्मस्थली एवं तपस्थली होने का सौभाग्य भी 'भूमि तिलक सम तिरहुत सब जग जानिय, वाली श्रीमिथिला मही को ही प्राप्त हुआ था। जगज्जननी श्रीजानकीजी

की प्राकाट्यस्थली (हलस्थली) वर्त्तमान श्रीसीता मढी से एक योजन पूर्व जिसको अब बन ग्राम कहा जाता है, (सीतामढ़ी से आगेवाले बाजपट्टी नामक स्टेशन से प्राय: १ मील दक्षिण श्रीबोधायनाश्रम का सरोवर बोधायन सर नाम से अद्यावधि प्रसिद्ध है, जहाँ श्रीबोधायन जयन्ती (पौषकृष्णार १२ को दूरदूर से धर्मप्राण नागरिक जन एवं आसपास के ग्रामीण एकत्रित होकर स्नानदान दर्शन परिक्रमा करके अपने आपको धन्य धन्य मानते हैं) इसी वन्य प्रदेश में आपके पिता श्रोत्रीय-शिरोमणि पंडित-प्रवर श्रीमान् शंकरदत्तजी निवास करते थे एवं घोर तपस्या करके श्री ब्रह्माजी से पुत्र बनकर अवतार लेने का वरदान प्राप्त किया था, अतः भगवान बोधायय श्री ब्रह्माजी के अवतार थे।

भगवान बोधायन के एक बड़े भ्राता थे जिनका नाम पंडित प्रवर श्री वर्षजी था, वर्ष पंडित अपने समय के अद्वितीय वय्याकरण थे। व्याकरण अष्टाध्यायी के रचयिता श्री पाणिनी मुनि एवं वार्तिक के ग्रंथकार श्रीवररुचि इन्ही महर्षि श्री वर्षजी के शिष्य थे।

भगवान बोधायन का जन्म नाम था श्री पुन्डरीक जी। ऋषिवर वर्षजी के आप अनुज थे, इससे लोग आपको उप वर्ष नाम से ही संबोधित किया करते थे। आगे चलकर आपके अलौकिक पांडित्य से मुग्ध होकर विद्वों के समूह ने आपको बोधायन (बुद्धि के खजाने) की पदवी प्रदान की, तब से आप बोधायन नाम से प्रसिद्ध हो गये। आपकी अपरिग्रह वृत्ति के प्रभाव से तत्कालीन पाटली पुत्र (वर्तमान पटना) के महाराजा श्री नन्द और उनकी सभा के सभासदों ने आपको अयाचित की पदवी प्रदान की, अतः आपका एक नाम अयाचित भी लिखा जाने लगा। शिष्यों के द्वारा कोटि स्वर्ण मुद्राओं के उपहार को अस्वीकार करके लौटा देने एवं कोटि संख्यक श्लोक परिमित ग्रन्थ रचना करने से आपको कृतकोटि कहा जाने लगा। तुरीया-

वस्था में भगवान श्री शुकदेव जी के द्वारा श्री वैष्णवी दीक्षा एवं तुरीयाश्रम की प्राप्ति पर आपका नाम श्री पुरुषोत्तमाचार्य जी हुआ। आपने युवावस्था में अनेकानेक धर्म सूत्रों, स्मृति शास्त्रों एवं देव मीमांसा तथा धर्म मीमांसा के ऊपर वृत्ति ग्रंथों का निर्माण किया, एवं तुरीयावस्था में भगवान वेद व्यास प्रणीत ब्रह्ममीमासा पर विस्तृत वृत्ति ग्रन्थका निर्माण किया अतः वृत्तिकार भी आपका एक नाम ही हो गया। आपके उपरोक्त सभी नाम प्राचीन ग्रन्थों में उल्लिखित हैं। परंतु विशेकर विद्वत समाज (श्रीशबर, शंकर, रामानुज आदि भाष्यकारों में) भगवान बोधायन, उपवर्ष और वृत्तिकार नामोंकी प्रसिद्धी अधिक है।

आपकी कथा को पूरे विस्तार से लिखने पर तो एक विशाल-काय स्वतंत्र ग्रन्थ होगा, उसके लिये यहां अवकाश नहीं, अतः अब मैं यही बताकर इस कथा को समाप्त करता हूँ कि आपके विषय में अधिक जानने की इच्छा रखने वाले पाठकों को कौन कौन प्राचीन एवं अर्वाचीन ग्रन्थ देखने चाहिये। १. श्री सोमदत्त विरचित कथा-सरितसागर एवं २. श्रीक्षेमेन्द्र विरचित वृहत्कथामंजरी आदि ग्रंथों में चरित्र, एवं भाष्यकार श्रीशबर स्वामी, श्रीशंकर स्वामी श्रीरामानुज स्वामी एवं श्रीरामानन्द स्वामी आदि के भाष्यों में, श्रीरामानन्द संप्रदाय के अनेकानेक ग्रन्थोंमें एवं श्रीरामानुज संप्रदाय के श्रीभाष्य, पाराशर्य विजय आदि अनेक ग्रंथों में आपके सिद्धान्त प्राप्त होंगे। इनके अतिरिक्त दार्शनिक आश्रय जानकीघाट श्रीअयोध्या निवासी, वर्तमान वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय के वेदान्तव्याख्याता आचार्यपाद दार्शनिक सार्वभौम स्वामि श्रीवासुदेवाचार्यजी महाराजकी कृपासे उनके पूर्व लेखोंको संकलित करके लहेरियासराय (दरभंगा-विहार) के सुप्रसिद्ध वकील महाभागवत बाबू श्रीपलटलालजी (श्रीसियारामजी) के द्वारा श्री बोधायनाख्यान नामक एक संक्षिप्त ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है जिसमें

सूत्र रूप से प्रायः सभी विषय संग्रहीत हो गये हैं। यह सब द्रष्टव्य हैं। श्रीबोधायनाख्यान ग्रंथ (स्वयं माँगने अथवा डाकव्यय के लिए टिकट भेजने पर) प्रकाशक से बिना मूल्य प्राप्त हो सकता है।

अन्त में आपके प्रशिष्य स्वामी श्री सदाचार्यजी विरचित श्री बोधायन पंचक एवं वैष्णव भाष्यकार पंडित-सम्राट स्वामी श्री वैष्णवाचार्यजी रचित श्री बोधायन मंगलाष्टक देकर इस लेख को समाप्त किया जाता है।

❀ श्रीबोधायन पञ्चक ❀

सीताराघवपादपद्मनिरतः पद्मासनेनास्थितः
तत्त्वज्ञाननिधिस्त्रिदण्डलसितो विज्ञान मुद्राधरः।
गौरो ध्यानपरायणोऽर्द्धविकसन्नीलाब्जतुल्येक्षणः
श्रीबोधायनवृत्तिकृद्ध विजयतां बोधायनः शाश्वतम् ॥१॥

योगत्यक्तकषायशुद्धहृदयः काषायवर्णाम्बरो-
न्यग्रोधस्य तले वशिष्ठतनयामूले कुशत्वचि।
आसीनः सुशिखोर्ध्वपुण्ड्रलसितो यज्ञोपवीती शमी
श्रीबोधायनवृत्तिकृद्ध विजयतां बोधायनः शाश्वतम् ॥२॥

पार्श्वे भाति शुभं कमण्डलु तथा दूर्वान्विता भूमिका
मीमांसार्थविकासिनी सुमहती वृत्तिः पुरोयस्य सः।
सद्रायुव्यजनैस्तथाच तरुभिः पुष्पैः समासेवितः
श्रीबोधायनवृत्तिकृद्ध विजयतां बोधायनः शाश्वतम् ॥३॥

रामो ब्रह्मपरात्परं श्रुतिमतं भक्त्यैव निःश्रेयसम्,
शेषायेन च शेषिणो रघुपतेर्जीवा इति स्वीकृतम्।
श्रौतं युक्तियुतं मतं खलु विशिष्टाद्वैतकं यस्य सः
श्रीबोधायनवृत्तिकृद्ध विजयतां बोधायनः शाश्वतम् ॥४॥

मन्त्रं रामषडक्षरं शुकमुनेर्वैयासिकेर्योऽग्रहीद्
ग्रीवायां तुलसीस्रजौ च परितोभास्वत्प्रभामण्डलम् ।
आचार्यः पुरुषोत्तमः सदपरं यस्याभिधानं परं
श्रीबोधायनवृत्तिकृद् विजयतां बोधायनः शाश्वतम् ॥५॥
बोधायन प्रशिष्य श्रीसदानन्दार्य निर्मितम् ।
पठताम्पञ्चकञ्चैतद्भयाच्छ्रेयो विधायकम् ॥

❀ श्रीबोधायन मङ्गलाष्टकम् ❀

ब्रह्मणो रामचन्द्रस्योपासकाय महर्षये ।
ब्रह्मणश्चावताराय बोधायनाय मङ्गलम् ॥ १ ॥
चारुमतीतनूजाय विप्रशंकरसूनवे ।
श्री वैष्णावावतंसाय बोधायनायमङ्गलम् ॥ २ ॥
यतीनां धर्मवक्त्रेच यतीनां वेष धारिणे ।
यतीनां सार्वभौमाय बोधायनाय मङ्गलम् ॥ ३ ॥
ब्रह्मविद्यानिधानाय ब्रह्मविद्योपदेशिने ।
व्याख्यात्रे ब्रह्मसूत्राणां बोधायनाय मङ्गलम् ॥ ४ ॥
विशिष्टाद्वैतसिद्धांतशालिने कीर्तिमालिने ।
जितवादिसमूहाय बोधायनाय मंगलम् ॥ ५ ॥
बोधायन महावृत्ति-विधात्रे ब्रह्मवादिने ।
शुकाचार्यस्य शिष्याय बोधायनाय मंगलम् ॥ ६ ॥
व्याससिद्धान्तवक्त्रे च व्याससिद्धांत वेदिने ।
व्यासस्य छात्रवर्याय बोधायनाय मंगलम् ॥ ७ ॥
पुरुषोत्तमवर्याय पुरुषोत्तमबुद्धये ।
श्रीपुरुषोत्तमार्याय बोधायनाय मंगलम् ॥ ८ ॥
वैष्णव भाष्यकार श्रीवैष्णवाचार्य निर्मितम् ।
मङ्गलं भवतादेतद्ध भव्यमङ्गलकारकम् ॥ ९ ॥

—❀—

(अष्टादश पुराणस्मरण)

मूल छ०—ब्रह्म विष्णु शिव लिंग पद्म असकँद विस्तारा । वामन मीन वराह अग्नि अरु कूर्म उदारा ॥ गरुड नारदी भविष ब्रह्मवैवर्त श्रवण शुचि । मार्कंडे ब्रह्मांड कथा नाना उपजै रुचि ॥ परम धर्म श्रीमुख कथित, चतुरश्लोकी निगम सत । साधन स्वरूप सतरह पुराण, फल रूपी श्रीभागवत ॥१७॥

(अष्टादशस्मृतिकार वन्दना)

मूल छ०—स्मृती मनू आत्रेय वैष्णावी हारित यामी । याज्ञवल्क्य अंगिरा शनैश्चर सँवृतक नामी ॥ कात्यायनि सांखल्य गौतमी [1]वशिष्ठि दाषी । सुरगुरू शातातपी पराशर क्रतुमुनि भाषी ॥ [2]आशा पाश उधार धी, परलोक लोक साधन उभौ । दश आठ स्मृति जिन उच्चरी, तिन पद सरसिज भाल मौ ॥१८॥

१. वाशिष्ठी । २. आशाकी फांसी से बुद्धिका उद्धार करनेवाली ।

(श्रीराम सचिव वन्दना)

मूल छ०—धृष्टी विजय जयन्त नीतिपर सुचिर विनीता। राष्ट्रवर्धनहिं निपुण सुराष्ट्र सु परम पुनीता। आनँद सदा अशोक धर्म पालक ततवेता। मंत्रीवर्य सुमंत्र चतुर्युग मंत्री जेता॥ अनायास रघुपति कृपा, भवसागर दुस्तर तरैं। लहैं भक्ति अन पापिनी, जे राम सचिव सुमिरण करैं॥१९॥

(श्रीराम सहचर वृन्दसे कृपाकटाक्ष याचना)

मूल छ०—दिनकर सुत हरिराज [1]बालिबछ [2]केशरि औरस। दधिमुख द्विविद मयन्द [3]ऋक्षपति सम को पौरुष॥ उल्का सुभट सुषेण दरीमुख कुमुद नील नल। शरभ सु गवय गवाक्ष पनस गँधमादन अतिबल॥ पद्म अठारह यूथपति, राम काज भट भीर के। शुभ दृष्टि वृष्टि मोपै करौ, ये सहचर रघुबीर के॥२०॥

१ बालिपुत्र=अंगद। २ केशरी सुवन=श्रीहनुमानजी। ३ श्रीजाम्बवानजी।

(अष्ट भ्राताओं सहित श्रीनन्दरायजीका वर्णन)

मूल छ०—धरानंद ध्रुवनंद तृतिय उपनंद सुनागर। चौथे तँह अभिनंद नंद सुखसिंधु उजागर॥ सुठि सुनंद पशुपाल विमल निश्चय अभिनंदन। कर्मा धर्मानंद अनुज वल्लभ जगवंदन॥ आसपास वा बगर के,विहरत पशुप स्वाच्छंद। ब्रजबडे गोप पर्जंय के सुत नीके नव नंद॥२१॥

(श्रीराधा कृष्ण परिकर चरण रज याचना)

मूल छ०—नन्द गोप उपनन्द धरानँद महरि यशोदा। कीरतिदा वृषभानु कुँवरि सहचरि मनमोदा॥ मंगल सुबल सुबाहु भोज अर्जुन श्रीदामा। मण्डल ग्वाल अनेक श्याम संगी बहु नामा॥ [1]घोष निवासिन की कृपा, बाँछत सुर नर आदि [2]अज। बाल वृद्ध नर नारि जे, हौं अर्थी तिन पाद रज॥२२॥

१. ग्वालों की बस्ती। २. ब्रह्माजी।

(श्रीकृष्ण अनुचर वर्णन)

मूल छ०—रक्तक पत्रक और पत्रि सबही मन भावै। मधुकराठी मधुवर्त रसाल विशाल सुहावै ॥ प्रेमकन्द मकरंद सदा आनँद चन्द्रहासा। पयद बकुल रसदान शारदा बुद्धि प्रकाशा ॥ सेवा समय विचारिके, चारु चरित चितकी चहैं। ब्रजराज सुवन संग सदन वन 'अनुग सदा तत्पर रहैं ॥२३॥

(सप्तद्वीप के भक्तों की वन्दना)

मूल छ०—जम्बू और पलक्ष शाल मलि बहुत राज ऋषि। कुश पवित्र पुनि क्रौंच कौन महिमा सो सके लिषि। शाक विपुल विस्तार प्रसिध नामी अति पुष्कर। पर्वत लोकालोक 'ओक टापूकश्चन धर॥ हरि भृत्य वसत जे जे तहां, तिनसों नित प्रति काज। सप्तद्वीपमें दास जे, ते मेरे शिर ताज ॥२४॥

१. सेवक। १. ओट।

(नौ खंड के भक्तों की वंदना)

मूल छ०—इलावर्त अधिपति संकर्षण अनुग सदाशिव। रमणक मछ मनुदास, हिरराय कूर्म अर्यम इव ॥ कुरु वराह भू भृत्य वर्ष नरहरि प्रहलादा। किं पुरुष राम कपि, भरत नारायण वीणानादा ॥ भद्राश्व ग्रीवहय भद्रश्रव, केतु काम कमला अनूप। मध्य द्वीप नव खंड में, भक्त जिते मम भूप ॥२५॥

(श्वेत द्वीप के भक्तों की कथा)

मूल छ०—श्रीनारायण वदन निरन्तर ताही देखैं। पलक परै जो बीच कोटि 'यम यातन 'लेखैं ॥ तिनके दर्शन काज गये तहँ 'वीणाधारी। श्याम दई करि सैन 'उलटु यह नहिं अधिकारी ॥ नारायण आख्यान दृढ़, तहँ प्रसंग नाहिन 'तथा। श्वेत द्वीपमें दास जे, श्रवण सुनो तिनकी कथा ॥२६॥

१ नरक की पीड़ा। २ समझते हैं। ३ नारदजी। ४ लौट जाओ। ५ वैसा=उपदेशादि का।

टीका क०—श्वेत द्वीप वासी सदा रूपके उपासी, गये
नारद 'विलासी उपदेश आशा लागी है।
दई प्रभु सैन जनि आओ इहि ऐन, दृग
देखे सदा चैन, मति अति अनुरागी है॥
फिरे दुःख पाय जाय कही, श्री वैकुण्ठ नाथ-
साथ लिये चले, लखो भक्ति अंग पागी है।
देख्यो एक सर 'खग रह्यो ध्यान धर, ऋषि
पूछी कहो हरि, कही बडो बड भागी हैं ॥१०३॥
बरस हजार बीते भये नहीं 'चित्त चीते,
प्यासो, जल रहै तोपै पानी नहीं पीजिये।
पावै जो प्रसाद तब जीभ सों सवाद लेत
खावै नहीं और याकी मति रस भीजिये॥
लीजे बात मानि, जलपान करि डारि दियो
लियो चोंच भरि, दृग भरि बुद्धि 'धीजिये।
अचरज देखि 'चख लगै न 'निमेष 'क्यों हूँ
'चहूँ दिशि फिरे, 'कहैं सेवा याकी कीजिये ॥१०४॥
चलो आगे देखो, कोऊ रहै ना परेखो, भाव
भक्ति करि लेखो, गये द्वीप हरि गाइये।

१ हास्यप्रिय। २ पक्षी। ३ मनचाहा॥ ४ विश्वास करके।
५ नेत्र। ६ पलक। ७ किसी प्रकार से भी। ८ परिक्रमा की।
९ कहने लगे कि इसकी सेवा करें।

आयो एक जन धाय आरती 'समो विहाय
खैंचि लिये प्राण फेर वधू वाकी आइये॥
वही इन कही, पति देखैं नहीं मही परयो?
हरयो याको जीव तन गिरयो मन भाइये।
ऐसे पुत्र आदि आये साँचे 'हित मैं दिखाये
फेरिके जिवाये ऋषि गाये चित लाइये ॥१०५॥

(श्री धामके द्वारपाल अष्टकुली नागोंका वर्णन)

मूल० छ०—इलावर्त अरु शेष राम कीरति
विस्तारत। पद्म शंकु प्रण प्रकट ध्यान
उरतें नहिं टारत॥ अँशु कम्बल वासुकी
अजित आज्ञा अनुवरती। करकोटक
तक्षक सुभद्द सेवा शिर धरती॥ आग-
मोक्त शिव संहिता, अग्र एक रस भजन
रति। उरग अष्टकुल द्वारपति, सावधान
हरि धाम थिति ॥२७॥

(वैष्णव चतुः सम्प्रदाय प्रधानाचार्यावतार वर्णन)

मूल छ०—रामानन्द उदार सुधानिधि
अवनि कल्पतरु। विष्णुस्वामि बोहित्थ
सिन्धु संसार पार करु। माध्वाचारज

१ समय। २ प्रेममय।

मेघ भक्तिसर ऊसर भरिया। निम्बादित
आदित्य कुहर अज्ञान जु हरिया॥ जग
जनमि भागवंत धर्मंकर, सम्प्रदाय थापे
अघट। चौबीस प्रथम हरि वपु धरे, त्यों
चतुर्व्यूह कलियुग प्रकट ॥२८॥
दोहा—रामानँद श्रीपद्धती, विष्णु स्वामि
त्रिपुरारि। निम्बादित सनकादिका, मधु-
कर गुरु मुख चारि ॥२९॥

(आचार्यपाद स्वामी श्रीनिम्बार्काचार्यजीकी कथा)

निम्बादित्य नाम जाते भयो अभिराम, कथा
आयो एक दण्डी ग्राम, न्योतो करि आये हैं।
पाक में अँवार भई, सन्ध्या मानिलई यति
रत्ती हूँ न पाऊँ, वेद वचन सुनाये हैं॥
आँगन में नीम तापै आदित्य दिखायो वाहि
भोजन करायो पाछे निशि चिन्ह पाये हैं।
प्रकट प्रभाव देखि जान्यो भक्ति भाव जग
दाव पाय नाम परयो हरयो मन गाये हैं ॥१०६॥

भगवान श्री निम्बार्काचार्य जी की श्री प्रियादासजी ने यह एक कथा लिख दी है, अन्य तीन आचार्य चरणों के विषय में तो कुछ भी नहीं लिखा।

श्री निम्बार्क संप्रदायमें आपके चरित्र के ऊपर प्रकाश डालने वाले

अनेक ग्रंथ हैं, जिनमें आपके शिष्य श्री औदुम्बराचार्य जी प्रणीत श्री निम्बार्क विक्रान्ति आदि मुख्य है। उक्त ग्रंथों के आधार पर आपके श्रीपिताजीका नाम श्री अरुण ऋषि और माताजीका नाम श्रीजयन्ती देवीजी था। आपका अवतार द्वापर युगके अन्तिम चरणमें कार्तिक शुक्ल १५को दक्षिण भारतमें ब्राह्मण कुलमें हुआ था। आप श्रीसुदर्शन चक्रके अवतार माने जाते हैं। आपकी गुरु परम्परा इस प्रकार है।

१ श्रीहंसावतार भगवान। २ श्रीसनकादिक भगवान। ३ देवर्षि श्रीनारद भगवान। ४ आचार्य पाद श्रीनिम्बार्क भगवान।

आपके सर्वप्रधान शिष्योंमें। १ श्री श्रीनिवासाचार्यजी। २ श्री औदुम्बराचार्यजी। एवं ३ श्रीगौरमुखाचार्यजी मुख्य हैं।

आपके द्वारा रचित ग्रंथों में। १ वेदान्त पारिजात सौरभ। २ मंत्र रहस्य षोडषी। ३ प्रपन्न कल्पवल्ली। ४ वेदान्त दशश्लोकी। ५ प्रपत्ति चिन्तामणि। ६ सदाचार प्रकाश। ७ श्रीमद्भगवद्गीता वाक्यार्थ एवं अनेक स्तोत्र प्रमुख हैं।

आपके विषय में विशेष जाननेकी इच्छावालों को साम्प्रदायिक ग्रंथोंका अवलोकन करना चाहिये।

(आचार्य पाद भगवान श्रीविष्णु स्वामीजीकी कथा)

श्रीरूप कलाजीने अपनी भक्तमाल टीकामें जो लिखा है उसके सिवा आचार्य पाद श्रीविष्णुस्वामीजी एवं श्रीमाध्वाचार्यजी के चरित्र इन पंक्तियों के लेखक को कुछ भी प्राप्त नहीं हो सके। अतः यहां पर पूज्य पाद श्रीरूपकलाजी के आधार पर ही संक्षिप्त परिचय लिखे जा रहे हैं। आचार्य पाद भगवान श्रीविष्णु स्वामीजी का अवतार दक्षिण देशमें ब्राह्मण कुलमें हुआ था, आप श्रीशिव सम्प्रदायके आचार्य हैं। आपके पूर्वाचार्य श्रीप्रेमानन्दजी या श्रीपरमानन्दजी को कांची पुरीमें श्रीवरदराज भगवानकी आज्ञा से भगवान श्रीशंकरजीने शिष्य किया था। अतः आपका संप्रदाय श्रीशिव संप्रदाय भी कहलाता है।

आगे चलकर आचार्यपाद भगवान श्रीवल्लभाचार्य स्वामी आपही की संप्रदायमें हुए हैं।

(आचार्यपाद स्वामी श्रीमाध्वाचार्यजीकी कथा)

स्वामी श्रीमाध्वाचार्यजी श्रीब्रह्म संप्रदायके आचार्य हैं, आप भी दक्षिण देशमें कांचीपुरीसे नैॠत्यकोणमें उरपीकृष्ण नामक ग्राममें ब्राह्मण कुलमें उत्पन्न हुए थे। आपने पंजाब देशमें पधार वहांके राजाके अभिमान को नष्टकर दलबल सहित उसको वैष्णव बनाया था। आपकी श्रीगुरुपरम्परा इस प्रकार कही जाती है।

१ श्रीहंस भगवान। २ श्रीब्रह्माजी। ३ श्रीनारदजी। ४ श्री वेदव्यासजी। ५ श्रीसुबुद्धाचार्यजी। ६ श्रीनरहर्याचार्यजी। ७ श्री माध्वाचार्य स्वामीजी।

आचार्यपाद अनन्त श्रीस्वामी रामानन्दाचार्यजीकी कथा आगे मूल संख्या ३५ में देखिये।

(श्री सिंधुजा संप्रदायके आचार्य गणका वर्णन)

मूल छ०—विष्वक्सेन मुनिवर्य सु पुनि शठ कोप प्रणीता। वोपदेव भागवत लुप्त उधरचो नव नीता॥ मंगल मुनि श्रीनाथ पुण्डरीकाक्ष परम यश। राममिश्र रस राशि प्रकट परताप परांकुश॥ यामुन मुनि रामानुज, तिमिर हरण ज्यों भानु। संप्रदाय शिरोमणी सिंधुजा, रच्यो सु भक्ति वितान॥३०॥

(श्री लक्ष्मी संप्रदायके पूर्वाचार्योंकी संक्षिप्त कथायें)

श्रीरामानुज संप्रदायके इन पूर्वाचार्योंके विषयमें श्रीप्रियादासजीने कुछ नहीं लिखा अतः इनकी कथायें श्रीप्रपन्नामृतादि ग्रंथोंके आधार पर अत्यन्त संक्षेपमें दी जा रही हैं।

श्रीविष्वक्सेन जी भगवान श्रीमन्नारायणके नित्य पारषद (सेनापति हैं) इन्हीके अवतार श्रीशठकोप स्वामी हुए जो इन्ही के शिष्य भी हुए। श्रीसठकोप स्वामीजीका अवतार कलियुगके ४३ दिन बीतने पर दक्षिण देशमें पूर्वी समुद्रके पश्चिम तट पर ताम्रपर्णी नदीके किनारे कुरिकापुरी नामक नगरीमें वैशाख शुक्ल १४ शुक्रवार को शूद्रवर्णके भक्त वर पिता श्रीकारिजी व माता श्रीनाथ नायकीजीसे हुआ था। आपने नगरी से बाहर एक तिंतृणीके वृक्ष कोटरमें निवास कर भगवान श्रीमन्नारायणका आराधन किया एवं सहस्त्रगीति आदि अनेकानेक द्रविण ग्रंथोंका निर्माण किया जो द्रविडागम या द्रविड वेद संज्ञासे प्रसिद्ध हैं। जिनके पठन पाठन से आगे चलकर द्विजवर्य आचार्यपाद श्रीयामुनाचार्य श्रीरामानुजाचार्य प्रभृति संस्कृत भाषा और वेद वेदान्तके महान आचार्योंने भी अपने आपको कृत कृत्य माना है।

छप्पैमें श्रीमद्भागवत के उद्धारक श्रीवोपदेवजी का नाम भी है, जिनका श्रीरामानुज संप्रदायकी गुरुपरम्परामें कोई उल्लेख नहीं मिलता, एवं मंगल मुनि पदको यदि श्रीनाथमुनि का विशेषण मान लिया जाय तो ठीक है अन्यथा प्रथक नाम माननेसे उनका भी वहाँ कोई उल्लेख नहीं है।

श्रीनाथ मुनिका अवतार चौल और तुंडीर के मध्यके प्रदेश में कलियुग के ३२४० वर्ष व्यतीत होनेपर जेष्ठ शु. १५ को ब्राह्मण कुल में हुआ। आपने ३२४० वर्ष पूर्व अवतरित होने वाले श्रीशठ कोप स्वामीजी से श्रीवैष्णवी दीक्षा प्राप्त कर उनके दिव्य द्रविड प्रबन्ध-ग्रंथों का प्रचार किया।

स्वामी श्री पुंडरीकाक्षजी श्रीरंगम् क्षेत्रसे वायव्य कोणमें तीन कोस पर श्वेत गिरि श्रीपद्माक्ष भगवान की नगरी में चैत्र पूर्णिमा को प्रकट हुए थे।

स्वामी श्रीराममिश्रजीका जन्म सौगन्धकुल नगर में माघ शुक्ल १४ को ब्राह्मण कुल में हुआ था।

आचार्य वर्य श्रीयामुनाचार्यजी श्रीनाथमुनीजी के पौत्र थे आपके पिताजीका नाम श्रीईश्वरमुनिजी और माताजी का नाम श्रीरंगनायकी देवीजी था। आप भगवानके सिंहासन के अवतार कहे गये हैं। कर्कमासकी पूर्णिमा को आप प्रकट हुए थे। आप भगवान श्रीरामानुजाचार्यजी के दादा गुरु थे आपके ५ शिष्यों से श्रीरामानुज स्वामीने शिक्षा दीक्षा प्राप्तकी थी जिनके नाम भक्तमालमें नहीं आये हैं।

(आचार्यपाद भगवान श्रीरामानुजाचार्यजी की कथा)

मूल छ०—गोपुर ह्वै आरूढ़ उच्चस्वर मंत्र उचारयो। सूते नर परे जाग चोहत्तर श्रवणन धारयो॥ तितनीही गुरुदेव [1]पधति भइ न्यारी न्यारी। कुरु तारक [2]शिष प्रथम भक्ति वपु मंगलकारी॥ कृपण पाल करुणा समुद्र, रामानुज सम नहि बियो। सहस्र आस्य उपदेश करि, जगत उधारण यतन कियो॥३१॥

१. पद्धति=परिपाटी। २. शिस्य।

आस्य सो वदन नाम, सहस हजार मुख
शेष अवतार जानो, वही सुधि आई है।
गुरु उपदेश मंत्र कह्यो नीके राखो अन्तः
जपत ही श्यामजू ने मूरति दिखाई है॥
करुणानिधान सोची सब भगवत पावैं
चढि दरवाजे सो पुकारयो ध्वनि छाई है।
सुनिलियो शिष्यन सो चोहत्तर सिद्ध भये
नये भक्ति चोज यह रीति लेके गाई है॥१०७॥
गये नीलाचल जगन्नाथजी के देखवे को
देख्यो अनाचार सब पंडा दूर किये हैं।
संग लै हजारों शिष्य रंगभरि सेवाकरैं
धरैं हिय भाव गूढ [1]दरसाय दिये हैं॥
बोले प्रभु वेई आवैं करे अंगीकार मैं तो
प्यार ही को लेत कभूं औगुण न लिये हैं।
तोऊ दृढ़ गहीं प्रभु कही नहीं कान कीन्ही
लीन्ही वेद-वाणी-विधि कैसे जात छिये हैं॥१०८॥
[2]जोरावर भक्तसों बसात नहीं कही किती
रत्ती हू न लावैं मन [3]चौज दरसायो है।
गरुड को आज्ञा दई सोई शीश धरी उन
शिष्यन समेत निजदेश छोडि आयो है॥

१. स्वप्नमें श्रीजगन्नाथ देख पड़े है। २. जब रदस्त। ३. कौतुक दिखाया।

जागे तो निहारि ठौर औरही मगन भये
दियो यों प्रकट करि गूढ भाव पायो है।
वेई सब सेवा करें श्याम मन हरें सदा
साँचो प्रेम हिये माहिं प्रभु जू दिखायो है ॥१०६॥

भक्तमाल और श्रीप्रियादासजी की टीकामें आपकी उपरोक्त दो तीन लीलायें वर्णित हैं, इनके अलावा आपकी सम्प्रदाय के श्रीप्रपन्ना-मृतादि ग्रंथोंमें जो आपका विशाल जीवन चरित्र वर्णित है उसके आधार पर कुछ मुख्य घटनाओंका उल्लेख किया जाता है।

प्रपन्नामृत में आपके जन्म संवतका उल्लेख नहीं मिलता है अतः वह अन्य ग्रन्थों से लिखा गया है।

प्रपन्नामृत की आदि अध्याय में वर्णित है कि एकबार श्रीवैकुण्ठ धाम में भगवान के मुखारविन्दको चिन्ताकुल देख श्री शेषजीने कारण पूछा तो भगवान ने कहा "इन जगतमें पडे जीवोंको हमारी सेवा प्राप्त हो, इसके लिये पहले हमने स्वयं अनेक अवतार लिये परन्तु इनने हमको परमेश्वर न जानकर केवल राजकुमार गोपकुमार आदि ही समझा। फिर चक्रादि पारषदों को भेजा परन्तु इससे भी पूर्ण सफलता न मिली, इसीसे खिन्नता है। अब आप जाकर इन मेरे जीवों को उपदेश द्वारा सचेतकर मेरे पास पहुँचाओ।" इस आज्ञाको शिरोधार्य करके ही फणीश श्रीशेषजी श्रीरामानुज नाम रूपसे प्रकट हुए।

आचार्य पाद भगवान श्रीरामानुजाचार्यजी का जन्म दक्षिण भारतके तोंडीर मंडल में पूर्व समुद्र से ३ योजन (२४ मील) पश्चिम भूतपुरी नामक नगरी में हारीत गोत्रीय द्विजवर श्रीकेशव यज्वाजी की धर्मपत्नी श्रीकान्तिमती देवीजी के गर्भ से मेष की संक्रान्ती में चैत्र शुक्ल ५ गुरुवारको रुद्र दैवत नक्षत्रमें मध्यान्ह समय कर्कट लग्न में हुआ (विष्णु चिन्ह ग्रन्थ के अनुसार कलि संवत ४११८ अतः विक्रम सं० १०७४ एवं ईस्वी सन् १०१७ था)

पूर्वकथित आचार्यपाद श्रीयामुन मुनि के शिष्य श्रीशैलपूर्ण स्वामी आपके मामा थे, अतः इनने निज भगिनी को पुत्र प्राप्ति के समाचार सुने तो भूतपुरी आगये। बालक के लक्षणों को देख इनको विश्वास हो गया कि श्रीगुरुदेव के द्वारा सुने गये शेषावतार यही बालक हैं। स्वामी श्री शैलपूर्णाचार्यजी ने आपको बारहीं के दिन ही श्री वैष्णवी दीक्षासे दीक्षित करके श्रीरामानुज नाम प्रदान किया।

यथा समय अन्नप्राशन मुण्डन मौंजीबन्धन उपनयन आदि संस्कार होकर ७ वें वर्ष में वेदाध्ययन आरंभ हुआ। १५ वर्ष की अवस्था में चारो वेदों के अध्ययन को समाप्त किया देख पिताजी ने १७ वर्ष की उमर में रक्षकाम्बा नाम की एक कुलवती कन्या के साथ आपका विवाह कर दिया।

पुत्र का कुछ दिन दांपत्य सुख देख पिताजी वैकुण्ठ वासी हो गये, तब आपकी शास्त्राध्ययनकी इच्छा प्रबल रूप से जागरित हो उठी अतः आप माता एवं पत्नी सहित कांची पुरी में आ गये एवं यहाँ के महा विद्वान यादव पंडित से अध्ययन करने लगे।

कुछ दिन के बाद कांची के राजा की कन्या को एक ब्रह्मराक्षस लग गया। उसके निवारण के लिये यादव पंडित भी बुलाये गये जिनको प्रेत ने फटकार दिया और कहा—इनके शिष्य रामानुज आकर मुझे अपना चरणामृत प्रदान करें तो मैं इस लड़की को ही नहीं, अपनी इस नीच योनि को भी छोड़ जाऊँ। श्रीरामानुज बुलाये गये, उनने आकर अपना चरण छुवाया, चरणामृत दिया और प्रेत जय जयकार करता हुआ दिव्य देह धारणकर वैकुण्ठ सिधार गया, लड़की स्वस्थ हो गई। राजाने विपुल धन भेंट किया, जो आपने गुरु यादव जी को अर्पण कर दिया। पंडितजीने धन तो ले लिया परन्तु अब अनायास प्राप्त हुई श्रीरामानुज को मान प्रतिष्ठा उनके हृदयको जलाने लगी और वह किसी उपाय से इनको मारडालनेकी सोचने लगे।

इसके कुछ ही पीछे श्रीरामानुजाचार्यजी के मौसेरे भ्राता श्री

गोविन्दाचार्य भी श्रीरामानुज स्वामीजी के सहवास एवं अध्ययन की इच्छा से कांची आकर यादव पंडितकी पाठशाला में पढने लगे।

एकदिन पंडित यादव जी एक श्रुतिका अर्थ समझा रहे थे, वह श्रीरामानुजको विपरीत जान पड़ा और इनने नम्रता पूर्वक कहा कि इस श्रुति का अर्थ ऐसा न करके ऐसा किया जाय तो समीचीन हो। पण्डितजी जले हुए तो थे ही, झल्लागये और कहने लगे अब तुम मेरे सामने मत आना। पाठशाला से निकल जाओ। ये घर चले आये और पाठशाला न जाकर स्वाध्याय ही करने लगे।

यादव और भी झल्लाया और शिष्यको भेजकर इनको बुलवाया। पहुँचने पर ऊपर से प्रेम प्रदर्शित किया और पाठशाला आने का आदेश दिया, क्योंकि उसके मनमें तो घात करने की जो बैठी हुई थी।

कोई पर्व काल का मौका देख, यादव ने पूरी पाठशाला सहित प्रयाग त्रिवेणी स्नान के लिये यात्रा कर दी और मध्यप्रदेशके वनखंडों में यादव की यह गुप्त जलन और मनोकामनायें जानकर गोविन्दाचार्य ने अपने जेष्ठ भ्राता श्रीरामानुज से कह दी, एवं यहीं से लुप्त हो भागजाने की सलाह दी। तदनुसार श्रीरामानुज वन में खो गये और छुपकर कांची का रास्ता पकड़ा। यादव ढूंढ ढांढ कर हताश हो आगे बढ गया और समझ लिया कि सहज में ही कलंक टला, उसको यहां कोई सिंह व्याघ्र उठा ले गया होगा।

रात्री होने पर श्री रामानुज एक वृक्ष के नीचे सो रहे और एक किरात दम्पति भी इनके समीप ही उसी वृक्ष तले आ कर सो गये। ये किरात नहीं भगवान श्री लक्ष्मीनारायण ही किरात वेष में प्रियवत्स श्री रामानुज की रक्षार्थ पधारे थे। प्रातःकाल उठ करके जब देखा तो इनने उस वृक्ष को कांचीपुरी से थोड़ी ही दूर पर एक कूप के समीप देखा। किरात दंपति ने प्यास लगना प्रकट किया और श्री रामानुज ने कूप से जल निकाल कर इनको पिलाया। वे दोनों जल

पी कर वहीं अन्तर्धान हो गये। श्री रामानुज ने घर आकर सब वृत्तान्त माता से कहा, माता भगवान को धन्यवाद देती हुई श्री रामानुज से कहने लगी- अब पाठशाला कभी मत जाना। यहां श्री वरदराज भगवान की सेवा में रहने वाले शूद्र जातीय महाभागवत श्री कांचीपूर्ण स्वामी हैं, उनसे जा कर सब समाचार कहो और भविष्य में उनके आज्ञानुवर्ती बन कर रहो। श्री रामानुज ने श्री कांचीपूर्ण स्वामी से सब वृत्त निवेदन किया, उनने कहा तुम मन्दिर से स्वर्णघट लेजाकर उसी कूप से नित्य सेवार्थ जल लाया करो, भगवान सब अच्छा करेंगे। आप उसी दिन से जलसेवा करने लगे।

इधर श्रीरंगपुरी में सिंहासनावतार श्री यामुनाचार्य स्वामी ने सत्संग कथा के उपरांत वैष्णव वृन्द से कहा—हमको मालूम हो गया है कि श्री वैष्णव धर्म के संरक्षण संवर्धन के अर्थ भगवान अनन्त श्री शेषजी अवतारित हो चुके हैं, अतः आप लोग देश देशान्तर का भ्रमण कर उनका पता लगाओ कि महान प्रतिभाशाली अवतारी बालक कोई कहां देखने में आता है। उन सब ने कुछ दिन अनुसंधान कर श्री यामुनाचार्य स्वामीजी से निवेदन किया कि आपके बताये लक्षणों से युक्त एक श्री रामानुज नामक बालक कांची में निवास करते हैं और यादव पंडितजी से अध्ययन करते हैं।

उधर यादव पंडित ने प्रयाग स्नान किया और यह सोचते हुए लौटे कि रामानुज कहीं भाग न गया हो? कांची न पहुँच गया हो? कांची आ कर श्री रामानुजाचार्यजी के समाचार सुन वह बहुत दुःखी हुआ, पर कर क्या सकता था। माथा ठनक कर रह गया।

श्रीरामानुजाचार्य विद्यागुरु से मिलने गये तो उसने पाठशाला आ कर अध्ययन चालू रखने का आग्रह किया और ऊपर से बडा प्रेम प्रदर्शित किया। आप पाठशाला जाने लगे।

श्री यामुनाचार्य स्वामीजी कांची में अवतारी बालक के होने के समाचार प्राप्त कर कांची पधारे और श्री वरदराज भगवान के

मन्दिर में यादव पंडित और समस्त विद्यार्थियों के साथ आये हुए श्री रामानुज स्वामी को दूर से देखा तथा शेषावतार होने का मन में ठीक निश्चय कर बिना ही परिचय किये कराये चुपचाप श्रीरंगम् लौट गये।

एक दिन की बात है कि पाठशाला में पाठ चल रहा था और यादव पंडित व्याख्या करते हुए ही तेल मालिश करवा रहे थे। श्री रामानुजाचार्य ही उनकी पीठ में तेल मल रहे थे, उस समय भगवानके नेत्रों की उपमा में आये 'कप्यास्य' श्रुतिपद का अर्थ पंडितजी ने किया कि वानर की चूतड के समान लाल भगवान के नेत्र हैं। यह सुन श्री रामानुज के नेत्रों में जल आ गया और कुछ बूंदें यादवजी की पीठ पर गिर पडी। यादवजी ने चकित हो पिछाडी देखा तो रामानुज की आखों में आँसू थे। उनके कारण पूछने पर श्री रामानुज ने कहा, उक्त श्रुति तो भगवान के नेत्रों को कमल के समान अरुण कहती है। यह सुन यादव फिर झल्ला गये और श्री रामानुज स्वामी को फिर पाठशाला जाना छोड देना पडा। आपने पुनः श्री वरदराज भगवान की जलसेवा करना आरंभ कर दिया तथा अधिक समय श्री कांचीपूर्ण स्वामी के सत्संग में बिताने लगे।

इधर श्रीरंगपुरी में स्वामी श्री यामुनाचर्यजी ने विचार किया कि हमको अब श्री वैकुंठ धाम गमन करना आवश्यक है, अतः शेषावतार रामानुज को श्रीरंग मन्दिर का अधिकार प्रदान कर देना चाहिये। ऐसा विचार कर आपने अपने प्रधान शिष्य श्री महापूर्ण स्वामी को कांची भेजा। ये जा कर श्री वरदराज भगवान के मन्दिर में टिके। प्रातःकाल भगवान को श्री यामुनाचार्य विरचित आलवन्दार स्तोत्र का पाठ सुना रहे थे उस समय में श्री रामानुज स्वामी भगवान का कलश ले कर पहुँचे और उस अत्यद्भुत स्तोत्र को सुन कर इनका मन उधर खिंच गया। वहीं खडे हो कर बडे ध्यान पूर्वक संपूर्ण पाठ सुनते रहे।

श्री आलवन्दार के श्रवण से आप बहुत प्रभावित हुए एवं श्री महापूर्ण स्वामी से स्तोत्रकार के विषय में प्रश्न करने लगे। उनने कहा इस स्तोत्र के रचयिता वैष्णव कुल कमल दिवाकर स्वामी श्री यामुनाचार्यजी श्रीरंगधाममें विराजते हैं। यह सुन कर उनके दर्शनार्थ आप श्री महापूर्ण स्वामी के साथ हो लिये।

अघटित घटना पटीयसी प्रभू की लीला तो विचित्र है, वे अपने स्वजनों का वैभव प्रकट करने के लिये नाना लीलायें किया ही करते हैं। आप लोगों को श्रीरंगपुरी में पहुँचने से पूर्व ही नदी किनारे श्री वैष्णवों का विशाल समूह देख पडा, समीप जा कर पता लगाने पर ज्ञात हुआ कि आचार्यपाद श्री यामुनाचार्य वैकुंठ सिधार गये जिनका शव अन्त्येष्टि के अर्थ यहां उपस्थित है।

ये दोनों भी समारोह में सम्मिलित हो गये और श्रीरामानुज स्वामीने समय से पश्चात पहुँचने का दुःख मानकर बहुत विलाप किया। आपने जब शव के दर्शन किये तो देखा कि श्रीयामुनाचार्य जी की तीन उंगलियां विशेष प्रकार से मुडी हुई हैं। आपके पूछने पर लोगों ने कहा कि जीवितावस्था में तो ये उंगलियाँ सीधी ही थीं, मुडी हुई नहीं थीं, न जाने कैसे मुड गई पता नहीं क्या कारण हुआ ?

श्रीरामानुज स्वामी यह सुनकर एक क्षण के लिये ध्यानस्थ से हो गये, फिर कहने लगे श्रीस्वामीजी की मुझे तीन आज्ञाये देने की इच्छा थी, इन उगलियों के मुड़ने का यही कारण है। मुझ अभागे के समय पर न पहुँचने के कारण संकेत के द्वारा श्रीस्वामीजी मुझे ये तीन आज्ञायें प्रदान कर रहे हैं। ये तो भगवानके नित्य पारषद हैं जन्म मरणादि तो इनकी लीलायें हैं। ऐसा कह कर कहने लगे मैं आपके संकेत को समझकर आप के हृदयङ्गत भावके अनुसार प्रतिज्ञा करता हूं कि यदि यह उंगलियाँ दासको यही संकेत प्रदान करने के अर्थ मुडी हैं तो इनको सीधी कर लेने की कृपा करें।

१. मैं वैष्णव मत को ग्रहण करके अज्ञान मोहित जनोंको पंच-संस्कार पूर्वक प्रपत्तिधर्म में दीक्षित कर धर्म रक्षा करूँगा।

२. वेद के तत्व ज्ञानके समस्त अर्थको एकत्रितकर श्रीवैष्णव धर्म रक्षार्थ श्रीभाष्यका निर्माण करूँगा।

३. पराशर मुनि रचित पुराणरत्न श्रीविष्णु पुराण का प्रचार करूँगा।

जैसे जैसे श्रीरामानुज स्वामीने प्रतिज्ञायें की वैसे वैसे श्रीयामुनाचार्यजी की एक एक उंगली सीधी होती गई और इस प्रकार तीनों उंगलियां सीधी हो गईं। उपस्थित समस्त जन समूह की यह धारणा दृढ हो गई कि श्रीयामुनाचार्यजी द्वारा तथाकथित शेषावतार यही श्रीरामानुज स्वामी हैं, तथा आपसे श्रीरंगम् पधार कर स्थानका भार वहन करने की सबने प्रार्थना की, परन्तु श्रीरामानुज स्वामीने कहा—श्रीरंगनाथ स्वामीने मुझे श्रीयामुनाचार्य स्वामी से मिलने भी नहीं दिया, अतः उनकी सेवामें इस समय प्राप्त होनेकी मुझमें शक्ति नहीं है। अभी तो मैं उनके दर्शन भी नहीं करूँगा। ऐसा कह आप वहाँसे कांचीपुरी लौट आये। यहां आकर सारा वृतान्त श्रीकांचीपूर्णजी से निवेदन किया जिसे सुनकर वे बड़े दुखी हुए।

श्रीकांचीपूर्ण स्वामी के भक्तिभावसे रामानुज स्वामी बहुत प्रभावित हो चले थे, इनको गुरुवत ही मानते थे, अतः एकदिन इनका भुक्तावशिष्ट (सीथ प्रसाद) लेनेकी कामनासे भोजनके अर्थ अपने घर पर इनको आमन्त्रित किया। निश्चित समयसे विलंब हुआ देख श्रीरामानुज स्वामी श्रीहस्तिशैल के दक्षिण मार्ग से मंदिर आये। इधर श्रीस्वामीजी उत्तर मार्ग से उनके घर पहुँच गये और उनकी पत्नी रक्षकाम्बासे प्रसाद मांगकर पा लिया तथा पत्तल बाहर फेंक, चौका लगा, दक्षिण मार्ग से मंदिर को रवाना हो गये। श्रीरामानुज स्वामी मार्ग में ही लौटते हुए मिल गये। इससे श्री रामानुज बड़े दुखी हुए परन्तु उनने उस दुःख को प्रकट नहीं

किया। घर आये तो देखा कि चौका बरतन होकर पुनः रसोई चढी हुई है। मनमें क्रोध तो बहुत आया परन्तु कहा किसी से कुछ नहीं। भगवानको भोग लगा, प्रसाद पाकर मंदिर पहुँच श्रीकांचीपूर्ण स्वामी से विधिपूर्वक अपना शिष्य बनालेनेकी प्रार्थना करने लगे। श्रीकांचीपूर्णने यह उचित नहीं समझा तब आपने कहा कि आप श्रीवादराज भगवान से पूछ कर बतावें कि मैं क्या करूँ ? किसका शिष्य बनूँ ? श्रीकांचीपूर्ण स्वामीने भगवान की आज्ञा पाकर बताया कि आप श्रीमहापूर्ण स्वामी के शिष्य बनिये। वह भगवदाज्ञा प्राप्त कर आप श्रीरंगम् को रवाना हो गये।

इधर श्रीरंगपुरीमें श्रीवैष्णवों की महती सभामें निर्णय हुआ कि स्वामी श्रीयामुनाचार्यजी के आदेशानुसार शेषावतार श्रीरामानुज स्वामी को यहां लाया जाय और श्रीरंगनाथ की सेवा का सारा भार उनके ऊपर डाला जाय, उनको लाने के लिये श्रीमहापूर्ण स्वामी स्वयं पधारें। इस निर्णय के अनुसार श्रीमहापूर्ण स्वामी रवाना हो गये और मार्ग में ही दोनों की भेट हो गई। श्रीरामानुज स्वामीने उसी स्थान पर दीक्षा प्रदान करने की प्रार्थना की तथा गुरुशिष्य संबन्धमें आबद्ध हो दोनों कांची चले आये। श्रीरामानुज स्वामीने अनुनय विनय कर श्रीमहापूर्ण स्वामीको सपरिवार अपने ही घर में निवास कराया तथा उनसे शास्त्र पुराणादि के गूढ रहस्यों का अध्ययन करते रहे। इसके प्रायः ६ मास पश्चात् माता श्रीकान्तिमती देवी का वैकुण्ठ वास हो गया तथा माता के उत्तरकार्य में व्यस्त श्रीरामानुज स्वामी को छोड़ श्रीरंगनाथ के मानसिक आदेश के अनुसार श्रीमहापूर्ण स्वामी श्रीरंगम् चले गये।

श्रीरामानुज स्वामी की धर्म पत्नी रक्षकाम्बा का स्वभाव बडा कर्कश था, सासके सामने तो उसका अधिक असर नहीं होता था पर अब तो वह सचमुच गृह स्वामिनी थी। एकदिन एक क्षुधार्त श्रीवैष्णव

को आया देख श्रीरामानुज स्वामीने कुछ सीधा सामान (अन्न) देने को कहा, परन्तु उत्तर मिला कि इस समय तो घर में कुछ है ही नहीं। यह सुन श्रीरामानुज स्वयं घर में गये और अन्न लाकर उनको दिया।

इससे पूर्व कई बार कूप पर जल भरते में गुरुपत्नियों तक का तिरस्कार किया जा चुका था, इन सब लीलाओं से तंग आकर श्रीरामानुज स्वामी ने गृहस्थाश्रम को छोड़ सन्यास ले लेने का निश्चय कर लिया और समय पाकर पत्नीको पिता के घर भेज श्रीवरदराज भगवानकी आज्ञाले आपने वैष्णव समूह की सन्निधि में तृदण्ड काषाय धारण कर सन्यास लेलिया तब श्रीकांचीपूर्ण स्वामी ने बड़े सम्मान के साथ चमर छत्र पालकी लेजाकर आपको मन्दिर में लाकर मन्दिर के मठ में निवास कराया और यतिराज शब्द से संबोधित करते हुए सब वैष्णवों ने आपकी स्तुति की।

आगरा निवासी श्रीअनन्त दीक्षित श्रीरामानुज स्वामी के बहनोई थे, इनके दो पुत्र श्रीकुरेश और श्रीदाशरथी (यतिराज के भानजे) आये और शिष्य हो गये। इसके पश्चात अपनी माता की शिक्षा और वरदराज भगवानकी आज्ञासे आपके विद्यागुरु यादव पंडित भी एक दिन आकर आपके शिष्य हो गये जिनका नाम गोविन्ददास पड़ा। इनने धर्म समुच्चय नामक ग्रंथका प्रणयन किया और थोड़े दिन पीछे वैकुण्ठ वासी हो गये।

कुछ काल पश्चात श्रीरंगपुरी के श्रीवैष्णवों की इच्छा और श्री रंगनाथकी आज्ञा पाकर श्रीयामुनाचार्यजी के पुत्र श्रीरंगीवर जी (जो अलौकिक गायक थे)· कांची आये और अपने गान तान से भगवान वरदराज को प्रसन्नकर वरदान में माँगकर यति रामको श्री रंगधाम ले गये। श्रीमहापूर्ण स्वामी के सहित श्रीरंगम्के श्रीवैष्णव समूह ने बड़ेसत्कार के साथ छत्र चमर पालकी आदि लवाजमें के साथ

ले जाकर श्रीरंगमन्दिर में निवास कराया। भगवान श्रीरंगनाथ ने आपको उभय विभूति का अधिकार प्रदान करते हुए आज्ञा दी कि अपने आश्रितों को लीला विभूति (इसलोक) में सुख सौख्य और दिव्य विभूति (श्रीवैकुण्ठ धाम) में हमारा कैंकर्य प्रदान करने का आपको पूर्ण अधिकार होगा।

श्रीयतिराजके मौसेरे भाई श्रीगोविन्दाचार्य (जो अध्ययन काल में आपके साथ थे और अब प्रयागराज में गंगा स्नान करते हुये प्राप्त हुए शिव लिंग का अर्चन पूजन करते हुए अपने को कट्टर शैव समझते थे) को सन्मार्ग पर लाने के लिये अपने मामा श्रीशैलपूर्ण स्वामीको भेजा जिनके उपदेश से वे यतिराज की शरण में आ गये (शिष्य हो गये)

श्रीयतिराज एकदिन अपने दीक्षागुरु श्रीमहापूर्ण स्वामी के घर गये और प्रार्थना पूर्वक उनसे द्वय मंत्रका अर्थ ग्रहण किया। वहां से श्रीगोष्ठी पूर्ण स्वामी के यहां गये और उनसे अष्टाक्षर मंत्रका अर्थ बताने की प्रार्थनाकी परन्तु उनने कहा—वह परम गोपनीय है अभी आप उसके अधिकारी नहीं हैं, आप निराश हो लौट आये।

एकबार किसी उत्सव पर श्रीगोष्ठी पूर्ण श्रीरंगम् आये तब स्वयं श्रीरंगनाथ ने आज्ञादी कि यतिराज श्रीरामानुज मंत्रार्थ के अधिकारी हैं उनको प्रदान करिये। तब आप श्रीयतिराज से कभी गोष्ठीपुर आने को कह गये, परन्तु फिर जानेपर वही कहा, और कहा समय आने दीजिये। इस प्रकार श्रीयतिराज ने अठारह बार प्रार्थनाकी और हताश होकर लौट आये। यतिराज इस परम रहस्य को जानने के लिये व्याकुल हो गये। यह व्याकुलता उत्सवमें दर्शनार्थ श्रीरंगधाम आनेवाले गोष्ठी पुर के श्रीवैष्णवों ने श्रीगोष्ठीपूर्ण स्वामी के सामने वर्णन की, तब अपना शिष्य भेजकर आपने श्रीयतिराज को बुलाया

और कहला दिया कि मनुष्यतो क्या यज्ञसूत्र और त्रिदंड के अतिरिक्त कोई जड पदार्थ भी आप के साथ न आना चाहिये।

आप श्रीदाशरथी और कूरेशको साथ लेकर पहुँचे। श्रीगोष्ठी पूर्णने कहा—यह तो हमारी आज्ञाका उल्लंघन हुआ, तब आपने विनम्र होकर कहा स्वामिन् यही तो मेरे सूत्र और त्रिदंड हैं। श्रीगोष्ठी पूर्ण स्वामी बोले यदि ऐसा है तो इनकी अधिकारी परीक्षा लेकर फिर कभी आप इनको उपदेश करना, अभी तो नहीं होगा। ऐसा कह एकान्त में लेजाकर किसीको न बताने की शपथ करा आपको न्यास मुद्रा ऋषि छन्द स्वर आदि जप विधि के सहित मंत्रार्थका उपदेश किया एवं महात्म्य सुनाया।

इस अवसर पर गोष्ठीपुर में श्रीनृसिंहोत्सव हो रहा था, श्री वैष्णव ब्राह्मणों की भीड़ लगी थी। श्रीयतिराजने यह उपयुक्त अवसर देख गोपुर (द्वार तोरण) पर चढ़ कर बड़े उच्च स्वर से मंत्रार्थ कहा जिसको ७४ चोहत्तर द्विजश्रेष्ठों ने धारण कर लिया (इसीका जिकर भक्तमाल में हुआ है) यह सुनकर श्रीगोष्ठीपूर्ण बहुत क्रुद्ध हुए और श्रीयतिराजको बुलाकर कहने लगे 'इसीलिये तो हम नहीं देते थे अवतो आपके लिये नरक का दरवाजा खुल गया, आपने करबद्ध हो उत्तर दिया—स्वामिन्! यदि इतना जन समुदाय श्रीवैकुण्ठ प्राप्तकर प्रभुसेवा का लाभ प्राप्त करें और उनके बदले में मैं एक नरक भोगूं तो इसमें मेरे उद्देश्य की सफलता ही तो है। श्रीगोष्ठी पूर्ण प्रसन्न हो गये और कहने लगे जिनको रहस्य प्रदान करने की आज्ञा स्वयं श्रीरंगेश प्रदान करें वे ऐसे क्यों न हों। हे यतिराज! आप सचमुच श्री शेषावतार हैं, अब मुझको भी पूर्ण विश्वास हो गया। आप जीवों के कल्याणार्थ ही अवतरित हुए हैं। फिर श्रीगोष्ठी पूर्ण स्वामीकी आज्ञानुसार श्रीयतिराजने श्रीरंगीवरजी एवं श्रीमालाधारीजी से चरम पुरुषार्थ और सहस्रगीति के रहस्यों को ग्रहण किया और

पूर्ण परीक्षा लेकर श्रीदाशरथी और श्रीकूरेशको सब रहस्य प्रदान किये।

एकदिन यज्ञ मूर्ति नामक एक महा विद्वान शास्त्रार्थ के लिये आया और हारकर वह यतिराज का शिष्य हो गया जिसका नाम श्रीदेवमन्न हुआ, श्रीरंगीवर श्रीगोष्ठीपर्ण श्रीमालाधारी गुरु आदि गुरु जनों के बंधु बांधव पुत्र कलत्र भी सब यतिराज के शिष्य हो गये।

ईर्ष्या वस कुछ अर्चकादि ब्राह्मणों ने प्रसाद में मिला कर एक दो बार श्रीयतिराजको विष भी खिलाया, जिसका कभी आपके ऊपर कोई असर नहीं हुआ, परन्तु फिर श्रीगोष्ठी पूर्ण आदि गुरुजनों के आग्रह से एक सुपरीक्षित शिष्य के द्वारा पृथक ही पाक बननेका प्रबन्ध हो गया।

इसके पश्चात् उत्तर अवस्था में आपने तीर्थ यात्रा की, जिसमें सर्व प्रथम श्रीशैलपूर्ण स्वामी के यहाँ गये। उनसे श्रीमद्रामायण का अध्ययन किया और गोविन्दाचार्यको मांगकर लाये। उत्तर भारत की यात्रा में काश्मीर से बोधायन वृत्ति लाने की चेष्टा हुई, परन्तु वे लोग मार्ग से ही उसको वापस ले गये, वह तो श्रीकूरेशने तब तक उसको हृदयंगम करली थी अन्यथा श्रीभाष्य निर्माणमें बड़ी कठिनाई होती। इस यात्रा से लौटकर ही आपने शारीरिक सूत्र एवं गीतापर भाष्य रचे।

इस समय चोल देशका राजा कट्टर शैव हुआ और उसने यति राज श्रीरानुजाचार्यजी को पकड़ कर ले आने को अपनी सेना श्री रंगम् भेजी, जिनके साथ श्रीकूरेश अपनेको रामानुज कह कर गये। यतिराज दंड काषय छोड़ वेष बदलकर उत्तर भारत में आ गये, इसी यात्रा में जगदीश पुरी और हजार मुखसे उपदेश करनेकी घटनायें हुई जो भक्तमालमें उल्लिखित हैं।

श्रीयादवाद्रीय भगवानको भूमितल से प्रकट करना, श्रीसंपत्कुमार भगवानकी मूर्तिको दिल्ली के बादशाह के यहां से लाकर नारायण पुर में प्रतिष्ठित करना, अनेकानेक आश्रितों की परीक्षायें लेकर उनके वैभवको फैलाना, अनेकानेक चतुर्थ वर्णीय वैष्णवों की महिमा को प्रशस्त करना और फिर रंगपुरीमें पधार कर इसीप्रकार के मंगलमय चरित्रोंका जो विस्तृत वर्णन श्रीप्रपन्नामृतमें हुआ है वह विस्तार भय से यहां नहीं दिया गया है। आपने अपनी १२० वर्ष की दीर्घायु के के प्रथम ६० वर्ष भूतपुरी कांची पुरी आदि में और उत्तर ६० वर्ष श्रीरंगपुरी एवं यात्रा आदि में बिताकर श्रीरंग भगवानकी आज्ञा प्राप्त कर श्रीवैकुण्ठ धामको गमन किया। आपके अन्तिम उपदेश ७२ वाक्य के नाम से प्रसिद्ध हैं जो सभी जिज्ञासु मुमुक्षुओं को द्रष्टव्य हैं।

(श्रीरामानुजाचार्यजीके चार गुरु भ्राताओंकी कथा)

मूल छं०—श्रुतिप्रज्ञा श्रुतिदेव ऋषभ पुष्कर इभ ऐसे। श्रुतिधामा श्रुतिउदधि पराजित बामन जैसे। रामानुज गुरु बन्धु विदित जग मंगलकारी। शिव संहिता प्रणीत ज्ञान सनकादिक सारी॥ इन्दिरा पधति उदार धी, सभा साखि सायर कहैं। चतुर महत दिग्गज चतुर, भक्ति भूमि दाबे रहैं॥३२॥

(आचार्य जामात् श्रीलालाचार्यजीकी कथा)

मूल छं०—मालाधारी मृतक बह्यो सरितामें आयो। दाह कियो ज्यों बन्धु न्योंति सब

कुटुम बुलायो। नाक सकोडहिं विप्र तबैं हरिपुर जन आये। जेंवत देखे सबन जात काहू न लखाये॥ लालाचारज लक्षधा, प्रचुरभई महिमा जगति। आचारज जामातकी, कथा सुनत हरि होय रति॥३३॥

टीका क०—आचारजको जामात बात ताकी सुनोनीके
पायो उपदेश सन्त बन्धु करि मानिये।
कीजे कोटि गुनी प्रीति, बनै जो न ऐसी रीति
तोपै एती करो, कभूँ घटती न जानिये॥
मालाधारी साधु तन सरिता में बह्यो आयो
लायोधर [1]फेरि कै विमान सभी जानिये।
गावत बजावत सो नदीतीर दाह कियो
हियो दुःख पायो सुख पायो [2]समाधानिये॥११०॥
कियो सो महोछौ ज्ञाति विप्रनकों न्योतोदियो
कोऊ नहीं आये कीन्ही शंका दुःख दाइये।
भये [3]इकठौरे माया करें सब [4]बौरे कछु
कहैं बात औरै मरी देह वही आइये॥

१ विमानको ग्राम में फिराते हुए। २ समझाने=सांत्वना देने पर। ३ एक स्थान पर=एकत्रित। ४ बावले=पागल।

यातें नहीं खात वाकी जानत न जात पांत
बड़ो उतपात घर लाय जाय दाहिये।
[1]मग जुगवत नहिं आये तब सोच परयो
सोही आय पूछी गुरु कैसेकै निवाहिये॥१११॥

आय श्रीआचार्य जू पै वारिज वदन देखि
करि साष्टांग बात कहि सो जनाईहै।
जाओ निःशंक वे प्रसादको न जानैं [2]रंक
जानैं जे प्रभाव आवैं बेग सुखदाई हैं।
देखो नभ द्वार आवैं वैकुण्ठ निवासी जन
देखे घर आय पांति ढिंग ह्वैके आई है।
कहैं वे विरोधी विप्र इन्हें अब जानदेवो
गहि करे हांसी जब खाय घर जाई हैं॥११२॥

आये देखि पारषद गयो पड़ि भूमि सद
हद करी कृपा यह जानि निज जनको।
पायो लै प्रसाद स्वाद कहि अहलाद भयो
नयो लयो मोद सांचो जान्यो सन्त पनको॥
विदाह्वै पधारे नभ मगते सिधारे, विप्र
देखत विचारे द्वार व्यथा भई मनको।
गयो अभिमान आये मन्दिर मगन भये
नये दृग लाज बीन बीन लेत कन को॥११३॥

१ बाट देखते हुए भी। २ दरिद्र=कंगाल=मूर्ख।

पांय लपटाय अंग धूरिमें मिलायकहै
करो मन भायो इमि दैन्य बहु भाष्यो है।
कही भक्तराज आप कृपा ये समाज पायो
गायो जो पुराणनमें रूप नैन चाख्यो है॥
छांडो उपहास अब करो निज दास हमें
पूजो हिय आस मन अति अभिलाष्यो है।
किन्ही सो प्रशंसा मानो हंस ये परम कोऊ
ऐसो यश लालाचार्य घर घर भाख्यो है॥११४॥

(श्रीसंप्रदायके उपदेष्टा भगवान बोधायन के शिष्य
स्वामी श्रीगंगा धराचार्यजकी कथा)

मूल छ०—गुरु गमन कियो परदेश शिष्य सुरधुनी दृढाई। नहिं मज्जन नहिं पान हृदय वंदना कराई॥ गुरु गंगामें प्रविशि शिष्यको बेग बुलायो। विष्णुपदी भय जानि कमल पत्रन पर धायो॥ पाद पद्म तादिन प्रकट, सब प्रसन्न मुनि परम रुचि। श्रीमारग उपदेश कृत, श्रवण सुनो आख्यान शुचि॥३४॥

टीका क०—सुरसरी तीर सो कुटीर बहु साधु संग
रहैं गुरु भक्त एक न्यारे नहिं ह्वै सकैं।
चले मुनि गाँव जनि तजो बलिजाउँ, कहो

करो भाव गंगा मम, पद कैसे ध्वै सकै॥
क्रिया सब कूप करें विष्णुपदी ध्यान धरें
रोष करें सन्तश्रेणी भाव नहि छ्वै सकैं।
आये गुरुदेव दुःख मानि ते बखान कियो
जानी मन आनी मुनि, अंग कैसे ध्वै सकैं॥११५॥
गये असनान मुनि शिष्य संग लैके गंग-
माहिं पैठि बोले सो अंगोछा वेगिलाईये।
करत विचार शोच सिंधु को न पावै पार
गंगाजू प्रकटि कह्यो कंजन पै आइये॥
चले सो अधर पग धरत मधुर जाय
वस्त्र हाथ दियो, लियो, नीर भीर छाइये।
निकसत धाय सब पाँय लपटाय गये
बढ्यो सो प्रताप अस निशिदिन गाइये॥११६॥

(पूर्वाचार्यों सहित भगवत्पाद श्रीरामानन्दाचार्य स्वामीजीकी कथा)

मूल० छ०—देवाचारज द्वितीय महा-महिमा हर्यानँद। तस्य राघवानन्द भये भक्तनको मानद। पत्रावलम्ब पृथ्वी करी व काशी स्थाई। चार वरण आश्रम सबहीको भक्ति दृढाई॥ तिनके रामानँद प्रकट, जगमङ्गल जिन वपुधरयो। रामानँद पद्धति प्रताप, अवनि अमृत ह्वै अनुसरयो॥३५॥

अनादिवैदिक श्रीसम्प्रदाय प्रधानाचार्य साक्षात् श्रीरामावतार प्रस्थानत्र आनन्दभाष्यकार जगद्गुरु भगवत्पाद अनन्त श्रीरामानन्दाचार्य जीके विषय में श्रीपियादासजी ने कुछ भी नहीं लिखा। अतः अन्य ग्रन्थों के आधार पर श्रीआचार्यपाद की कथा दी जा रही है।

ऋषिप्रणीत ग्रंथोंमें श्रीअगस्त्य संहिता भविष्य खंड के अध्याय १३१ से १३५ तक श्रीरामानन्द जन्मोत्सव व्रत कथा के हैं, जिनमें जन्म कथा एवं पूजा का विधान वर्णित है। उसको यहाँ अविकल उद्धृत किया जा रहा है।

अथ श्रीअगस्त्यसंहितोक्त श्रीरामानन्द जन्मोत्सव व्रत कथा प्रारम्भः।

सिंहासने समासीनः सहितः सीतयानुजैः।
अतसीकुसुमश्यामो रामो विजयतेऽनिशम्॥ १॥
स्वाश्रमे संश्रितं शिष्यैः प्रातर्हुत हुताशनम्।
बोधयन्तं परं तत्त्वं तमगस्त्यं महामुनिम्॥ २॥
कृतक्षणः सुतीक्ष्णस्तमुपागम्य कृतांजलिः।
पश्यन्वनानि रम्याणि विचरँश्च महामुनिः॥ ३॥
भाविनो न्दन्कलौ बुद्धा विषयासक्तचेतसः।
अज्ञानाल्पायुषः श्रीमच्छ्रीशांघ्रिविमुखान् भुवि॥ ४॥
संसारार्णवसंमग्नान् कृपालुर्मुनिसत्तमः।
उद्धर्तुं कामस्ताँस्तस्मात् पृष्टवान् श्रेय उत्तमम्॥ ५॥
भगवन्मुनिशार्दूल सर्वज्ञ कलशोद्भव।
नृणां श्रेयसिमूढानां श्रेयश्चिंतय सुव्रत॥ ६॥

उपायं वदनिश्चित्य तेषां श्रेयो यथा भवेत् ।
परोपकारनिरताः साधवो हि कृपालवः ॥ ७ ॥
कुम्भजोऽथ निशम्येत्थं वाचं मुनिसमीरिताम् ।
अल्पाक्षरमनल्पार्थां धर्मसंप्रश्नभूषिताम् ॥ ८ ॥
प्रसन्नवदनाम्भोजः प्रशस्य मुनिपुंगवः ।
तं प्रत्युवाच संप्रीतो वाचं हृदयहर्षणीम् ॥ ९ ॥
श्रूयतामितिहासोयं कुमारेभ्यो मया श्रुतः ।
मुनिवर्यो महाभाग जगतामुपकारकः ॥१०॥
हिरण्यगर्भसंभूतो मतिमान् वाग्विदाम्वरः ।
सर्वलोकजनान् दृष्ट्वा विमूढान् विमुखाञ्छ्रुतेः॥११॥
चिन्तयन्नवत तच्छ्रेयो दिव्यं धामं जगाम सः ।
कृपालुरच्युतस्याद्यं सिद्धिभिः सिद्धभूषणम् ॥१२॥
तत्र सिंहासनं दिव्य मध्यासीनं जगत्प्रभुम् ।
निर्जरैर्वरायुधैः सर्वैर्मूर्तिमद्भि रुपासितम् ॥१३॥
पार्षदप्रवरैः कृत्स्नैर्महार्हाम्बरभूषणैः ।
पद्मपत्रविशालाक्षं पद्मया पद्मनेत्रया ॥१४॥
उपविष्टं जगद्धेतुं नारदोऽपश्यदच्युतम् ।
दिव्याम्बरधरं देवं दिव्यभूषणभूषितम् ॥१५॥
प्रणतस्तं प्रतुष्टाव हृष्टात्मा जगदीश्वरम् ।
जगद्योनिरयोनिस्त्वं व्यक्तोऽव्यक्ततरो विभुः ॥१६॥
कर्त्रे विश्वस्य संभर्त्रे संहर्त्रे ते नमोनमः ।
आदिमध्यान्तहीनाय प्रभवे परमात्मने ॥१७॥

नमस्ते विश्वरूपाय नमस्ते विश्ववन्धवे ।
विश्वंभर नमस्तेस्तु विश्वनाथ कृपाम्बुधे ॥१८॥
संसारेऽस्मिन्महाघोरे पापाभिरतचेतसाम् ।
जन्तूनां का गतिर्देव कर्मणा भ्रमतामिह ॥१९॥
मुक्तिस्तेषां कथं श्रीश भवेद्धर्मे कथं रतिः ।
कृपाकूपार भगवञ्जन्तूनुद्धर माधवः ॥२०॥
श्रुतिस्मृत्युदिता धर्माः क्लेशसाध्या नृभिः सदा ।
अतस्त्वं सुकरोपायं वद त्वद्भक्ति वर्धनम् ॥२१॥
सर्ववन्धविनाशाय मुक्तये प्राणिनां प्रभो ।
प्रवक्तास्त्वं हि धर्माणां भविता जगतामपि ॥२२॥
इत्थमाकर्ण्य भगवान् वाचं मुनिसमीरिताम् ।
तं प्रत्युवाच संप्रीतः शुचिस्मितमुखाम्बुजः ॥२३॥
मुनिवर्य महाभाग जगतां हितकारक ।
मया जगद्धितायैव पुर तदवधारितम् ॥२४॥
दिव्ये हि भारते वर्ष तीर्थराजे सुविश्रुते ।
प्रयागे पुण्यसदने भवद्भिर्नित्यसूरिभिः ॥२५॥
सार्द्धमेवावतीर्याहं प्रणेष्ये मोक्षसाधनम् ।
दृढसंसारचक्रस्य शातनं भक्तिवर्धनम् ॥२६॥
सुबोधं सुकरं सर्वैर्धर्ममार्गं सुखावहम् ।
वेदवेदान्तसच्छास्त्रसारभूतं सदाश्रयम् ॥२७॥
तत्र तत्रावतीर्णास्तु भवन्तो वीतकल्मषाः ।
मदुक्तस्योपदेष्टारः प्राणिभ्यो मत्परायणाः ॥२८॥

भविष्यन्ति महात्मानो जगदुद्धार हेतवः ।
सुशीला धर्मनिरता जगतामुपकारकाः ॥२९॥
ये ग्रहीष्यन्ति सन्मार्गं प्राणिनो भक्तितत्पराः ।
स्यादनायासतो मोक्षस्तेषामत्र न संशयः ॥३०॥
वाणीपीयूषमास्वाद्य क्षणमासीद्धरेर्मुनिः ।
मग्नः सुखसुधाम्भोधौ विनीतो गतसंशयः ॥३१॥
निशम्य तद्वाक्यममोघमङ्ग तं हिरण्यगर्भाङ्गसमुद्भवो मुनिः ।
प्रहृष्टरोमावलिभूषिता कृतिः कृती कृतज्ञः कृतकृत्यईशितुः ॥३२॥
दृढव्रतस्याथ विनम्रकंधरः स्मरन् सुरेशस्य विभोः प्रतिश्रुतम् ।
प्रणम्य तं देववरं रमापतिं महाविभूतेनिरगात्ततः सुधीः ॥३३॥
सुवादयन् दिव्ययशोऽथ वल्लकीं हरेः स्वरब्रह्मविभूषितामसौ ।
गायँश्च लोके विचचार सर्वतः सुरासुरेन्द्रैरभिपूजितो मुनिः ॥३४॥
मुनीश्वरे देवऋषौ विनिर्गते सुरैरपीड्यो जगतामधीश्वरः ।
रेमे रमेशो रमयास्मिताननः प्रभूतभूतैर्निजदिव्यधामनि ॥३५॥

इति श्रीमदगस्त्यसंहिताय भविष्यखंडे अगस्त्य सुतीक्ष्ण संवादे श्रीरामानन्दावतारोपक्रमे श्रीविष्णुनारद सम्प्रश्नोत्तरं—नामैकत्रिंशदुत्तरशततमोऽध्यायः ॥१३१॥

व्यतीते द्वापरे पुण्ये श्रीमद्भगवतोज्झिते ।
कलौ सत्त्वहरे पुंसां प्रवृत्तेऽधर्मवर्द्धके ॥१॥
जनेऽधमरुचौ नित्यं शौचाचारविवर्जिते ।
मोक्षसाधनमार्गेभ्यो विमुखे पशुतां गते ॥२॥
मन्दे मन्दमतौ शश्वदल्पभाग्येऽल्पजीवने ।
तत्रत्ये पापनिरते महत्संगविवर्जिते ॥३॥

प्रवर्धमानानभितो वादैर्निर्जित्य नास्तिकान् ।
आचार्यैर्भगवद्धर्मो वेदवेदान्तपारगैः ।
स्थापितोऽपि महायोगैर्वृद्धिं नैव गमिष्यति ॥४॥
विधातुं सत्यमनघ सुरेड्यो निजभाषितम् ।
वीक्ष्य विष्णुः कृपासिन्धुः प्रबुद्धं तादृशं कलिम् ॥५॥
सदृशाँश्चजनान्सर्वान्दुर्मतीन्क्लेश संयुतान् ।
मनः कर्त्ताऽवताराय स्मृत्वाथो स्वं प्रतिश्रुतम् ॥६॥
खं नभो लोक वेद (४३००) प्र-मिते वर्षे गते कलौ ।
कालिन्दीजाह्नवी-संगशोभिते देवपूजिते ।
तीर्थराजे महापुण्ये प्रयागे तीर्थउत्तमे ॥७॥
गृहे श्रीपुण्यसदनद्विजातेर्भूरिकर्मणः ।
योगिनो योगयुक्तस्य कान्यकुब्जशिरोमणेः ॥८॥
पतिसेवापरा तस्य सुशीलागृहिणी ततः ।
माघकृष्णस्य सप्तम्यां शुभधर्मप्रवर्तके ॥९॥
सप्तदण्डोद्गते सूर्ये सिद्धयोगयुजि प्रभुः ।
नक्षत्रेत्वष्ट्रदैवत्ये कुम्भलग्ने शुभग्रहे ॥१०॥
एवंसर्व गुणोपेते देशे काले च माधवः ।
गुण्ये पुण्ये शरण्यः स शरणागतवत्सलः ॥११॥
आविर्भूतो महायोगी द्वितीय इव भास्करः ।
"रामानन्दः" इति ख्यातो लोकोद्धारणकारणः ॥१२॥
अष्टमेऽब्दे चोपवीतं जातं तस्य तदा ह्यसौ ।
ब्रह्मचर्यं गृहीत्वा तु विद्याभ्यासं करिष्यति ॥ १३ ॥

वर्षे द्वादशके जाते काश्यां गत्वा पुनः स्वयम् ।
वेदवेदाङ्गशास्त्राणि पुराणानि पठिष्यति ॥ १४ ॥
आचार्य लक्षणैर्युक्तं वेदवेदान्तपारगम् ।
श्रीसम्प्रदायश्रेष्ठं च जनोद्धारपरं सदा ॥ १५ ॥
विज्ञाय राघवानन्दं लब्ध्वा तस्मात्षडक्षरम् ।
रहस्यत्रयवाक्यार्थं तात्पर्यार्थं च सन्मतम् ।
आचार्यलक्षणैर्दिव्यैर्लक्षितो वै भविष्यति ॥ १६ ॥
प्रवक्ता सर्वधर्माणामनुष्ठाता च कर्मणाम् ।
रक्षिता धर्मसेतूनामुपदेष्टा महायशाः ॥ १७ ॥
शश्वद्वैष्णवधर्माणां महाकीर्तिरुदारधीः ।
प्रसन्नवदनाम्भोजो विशालाक्षो महाभुजः ॥ १८ ॥
कृपालुस्सर्वजीवानामितरेषां च नित्यशः ।
संसाराम्भोनिधेर्घोरात्समुद्धारपरायणः ॥ १९ ॥
वेदवेदान्तनिरतस्सर्वशास्त्रविशारदः ।
कामान्पूरयितानॄणां कविः कल्पद्रुमो यथा ॥ २० ॥
गुणवान्दयितः पूज्यस्सर्वज्ञो विजितेन्द्रियः ।
शोभिष्यति धर्मरतैस्सद्भिः परिवृतोऽनिशे ॥ २१ ॥
लोके पूर्णकलः खे वै शीतांशुर्भगणैरिव ।
सुशीलस्समदृक्शान्तो दान्तः श्रीमाञ्जगद्गुरुः ।
नित्यंसत्संप्रदायस्य वर्त्तयिता मुनीश्वरः ॥ २२ ॥
कृपया यस्यलोकेस्मिञ्जनास्सर्वे निरामयाः ।
श्रीरामभक्तिनिरतास्सदाधर्मपरायणाः ॥ २३ ॥

तादृशस्य महाबुद्धेर्योगिवर्यस्य सत्कवेः ।
गुणान्कात्स्न्येन संवक्तुं कविःकः क्षमतेऽधुना ॥ २४ ॥
तेऽथाप्यवतरिष्यन्ति भगवन्मतकोविदाः ।
स्वयंभूप्रमुखास्सर्वे महान्तो नित्यसूरयः ॥ २५ ॥
इंगितज्ञा हरेराज्ञां वहन्तः शिरसा मुदा ।
नाना देशेषु वर्णेषु तत्तत्कालेऽर्कसन्निभाः ॥ २६ ॥
आयुष्मन्कृत्तिकायुक्तपूर्णिमायां धने शनौ ।
स्वयंभूःकार्त्तिकस्याद्याऽनन्तानन्दो भविष्यति ॥ २७ ॥
योगनिष्ठः सदा धीमान् सदाचारपरायणः ।
शिष्य आचार्यवर्यस्य रामानन्दस्य धीमतः ॥ २८ ॥
जातः सुरसुरानन्दो नारदो मुनिसत्तमः ।
वैशाखासितपक्षस्य नवम्यां स वृषे गुरौ ॥ २९ ॥
शुक्र वरुणभे योगे शीलरत्नाकरो महान् ।
मन्त्रमन्त्रार्थसन्निष्ठो गुरुभक्तिपरायणः ॥ ३० ॥
तस्यामेव तुलालग्ने तादृशीन्दुरिवोग्रधीः ।
शम्भुरेव सुखानन्दः पूर्वाचार्यार्थनिष्ठकः ॥ ३१ ॥
व्यतीपातेऽनुराधाभे शुक्रे मेषे गुणाकरे ।
वसाखकृष्णपक्षस्य तृतीयायां महामतिः ॥ ३२ ॥
कुमारो नरहरीयानन्दो जात उदार धीः ।
वर्णाश्रमकर्मनिष्ठश्शुभकर्मरतस्सदा ॥ ३३ ॥
वैशाखकृष्णसप्तम्यां मूले परिघसंयुते ।
बुधे कर्केऽथ कपिलो योगानन्दो जनिष्यति ॥ ३४ ॥

योगनिष्ठो महायोगी सत्सेवित पदाम्बुजः ।
सदा वैष्णवधर्माणामुपदेशपरायणः ॥ ३५ ॥
मनुः पीपाभिधो जात उत्तराफाल्गुनी युजी ।
पूर्णिमायां ध्रुवे चैत्र्यां धनवारे बुधस्य च ॥ ३६
निष्ठातदीयकैंकर्ये सतस्तस्य महात्मनः ।
नक्षत्रे शशिदैवत्ये चैत्रकृष्णाष्टमीतिथौ ॥ ३७ ॥
प्रह्लादोपि कबीरस्तु कुजे सिंहे च शोभने ।
जातो वेदान्तसन्निष्ठः चैत्रवासरतस्सदा ॥ ३८ ॥
भावानन्दोऽथ जनको मूले परिघसंयुते ।
वैशाखकृष्णषष्ठ्यां तु कर्के चन्द्रे जनिष्यति ।
रामसेवापरो नित्यं स महात्मा महामतिः ॥ ३९ ॥
भीष्मस्सेनाभिधो नाम तुलायां रविवासरे ।
द्वादश्यां माधवे कृष्णे पूर्वाभाद्रपदे शुभे ।
तदीयाराधने सक्तो ब्रह्मयोगे जनिष्यति ॥ ४० ॥
वैशाखस्यासिताष्टम्यां वृश्चिके शनिवासरे ।
धनाभिधो बलिस्साक्षात्पूर्वाषाढयुते शिवे ॥ ४१ ॥
वरो भक्तिमतां जातस्तदीयाराधने रतः ।
सदाचारपरो धीमान् गुरुपादाम्बुजार्चकः ॥ ४२ ॥
वासवो गालवानन्दो जात एकादशीतिथौ ।
चत्रे वयासक्तिश्चन्द्रे कृष्णे लग्ने वृषे शुभे ॥ ४३ ॥
सर्वदा ज्ञाननिष्ठोऽयमुपदेशपरायणः ।
वेदवेदान्तनिरतो महायोगी महामतिः ॥ ४४ ॥

चैत्रशुक्लद्वितीयायां शुक्रे मेषेऽथ हर्षणे ।
यम एव रमादासस्त्वाष्ट्रे प्रादुर्भविष्यति ॥ ४५ ॥
पालनं वैष्णवाज्ञानां कुर्वन्नित्यमतन्द्रितः ॥
धर्ममेवाचरँल्लोके धर्माधीश उदारधीः ॥४६॥
चैत्रे शुक्लत्रयोदश्यां गुरौ कर्के ध्रुवान्विते ॥
उत्तराफाल्गुनीसंज्ञे जाता पद्मावती सती ॥४७॥
श्रीमदाचार्यसन्निष्ठा सा पद्मेवापरासदा ॥
धर्मज्ञा धर्मनिरता गुरुभक्तिपरायणा ॥४८॥?
एवमेतादृशैस्तैस्तैः शिष्यैर्द्वादशभिर्महान् ॥
शोभिष्यत्यर्चितो देव्या पद्मावत्या च संततम् ॥४९॥
श्रीमानाचार्यवर्योऽयं रामानन्दो महामतिः ॥
शिष्योपशिष्यैरन्यैश्च शोभितोऽहर्दिनं भुवि ॥५०॥
पूज्यो ध्येयश्च जगतां रामरूपो जगद्गुरुः ॥
हेतुः कल्याणमार्गस्य शुभदो ज्ञानदोऽनिशम् ॥५१॥
यस्य दर्शन मात्रेण स्मरणेन सदा क्षितौ ॥
नामव्याहरणाद् यस्य नरा मुक्ता न संशयः ॥५२॥
यदीयमतमालम्ब्य मंत्रमंत्रार्थभूषितम् ॥
भूष्यते भूरियं लोकैराजितैमु निवृत्तिभिः ॥५३॥
शरच्चन्द्रायते लोके कीर्तिर्यस्य महात्मनः ॥
विशदा पावनी पुण्या शृण्वतां पाप नाशिनी ॥५४॥
हरिभक्तिप्रदा नृणां तथा ज्ञानप्रकाशिनी ॥
मोहान्धकारसंघप्रध्वंसिनी शुभदायिनी ॥५५॥

स एष भगवद्रूपो धर्मो विग्रहवानिव ॥
द्विषतामिह दुर्धर्षस्सेवनीयस्सतां सदा ॥५६॥
तज्जन्ममासर्क्षतिथौ तदीयैस्तदीयजन्मोत्सवमुत्सवोत्सुकैः ॥
विधेयमेव प्रतिवर्षमुत्तमं विधानविज्ञै विधिना हि वैष्णवैः ॥५७॥
पूजोपहारै रुचिरैर्यथोचितं देवं समभ्यर्च्य सशिष्यसंघम् ॥
वाद्यैर्मृदंगादिभिरद्भुतैः परैर्नृत्यैस्तथागीतवरैः प्रसादयेत् ॥५८॥
तदीयजन्मोत्सवसत्कथाभिस्तत्तोषहेतुस्तुतिभिस्तथैव ।
अन्यैस्तदीयाचरितैर्व्रतादिभिर्निस्तन्द्रिरेवं गुरुभक्तितत्परः ॥५९॥
एवं सकुर्वन् विधितस्तदर्चनं तत्तोषहेतुं च महोत्सवं बुधः ।
निरालसो भक्तियुतोलभेत स्वाभीष्टसिद्धिं महतीं न संशयः ॥६०॥
निशम्य तद्वाक्यमथो महात्मनो मुनेः प्रहृष्टः कलशोद्भवस्य ।
मुनिः सुतीक्ष्णस्ससुतीक्ष्णबुद्धिर्विधिं च प्रष्टा हि तदर्चनेपुनः ॥६१॥

इति श्रीमदगस्त्यसंहितायां भविष्यखण्डे अगस्त्यसुतीक्ष्ण-
संवादे श्रीमद्रामानदावतारोपाख्यानं नाम
द्वात्रिंशदुत्तरशततमोऽध्यायः ॥१३२॥

॥ सुतीक्ष्ण उवाच ॥

तज्जन्म पावनं पुण्यं कथितं परमं त्वया ।
तदर्चनविधिं मह्यं वक्तुमर्हस्यथाऽधुना ॥ १ ॥
जगतामुपकर्ता त्वं दयालुर्धीमतां वरः ।
समभ्यर्च्यजना येनाचार्यं श्रेयं समाप्नुयुः ॥ २ ॥
श्रूयतामितिचामन्त्र्य कथयिष्यति कुम्भजः ।
अम्बुजं वर्तुलाकारं त्रयोदशदलान्वितम् ॥ ३ ॥
सुव्यक्तं तैर्दलैर्व्यक्तैर्दर्शनीयं सुशोभनम् ।
तन्मध्येकर्णिकायान्तु यंत्रं षट्कोणमालिखेत् ॥ ४ ॥

तत्राचार्यवरं देवं रामानन्दमुदारधीः ।
विन्यसेत्सांगमब्जाभं तं दिव्यगुणशालिनम् ॥ ५ ॥
सपूर्वदिशमारभ्य दलेषु क्रमशो न्यसेत् ।
अनन्तानन्दमुख्यांस्तान्पद्मावत्या तया सह ॥ ६ ॥
यंत्रमेवं सुसंपाद्य तदर्चनपरायणः ।
पूजयेत्तत्र तान्सर्वानर्घ्यपाद्यादिभिर्वरैः ॥ ७ ॥
पूजोपहारैस्सकलैर्भक्त्या परमया युतः ।
एकाग्रमनसो भूत्वा तमेव मनसा स्मरन् ॥ ८ ॥
नम आचार्यवर्याय रामानन्दाय धीमते ।
मोक्षमार्गप्रकाशाय चतुर्वर्गप्रदाय च ॥ ९ ॥
इति मंत्राभिधानेन समर्चेद् विधिनार्चकः ।
अर्घ्यपाद्यादिभिस्तैस्तैर्गन्धपुष्पाक्षतैः फलैः ॥१०॥
नैवेद्य रुत्तमैः श्रेष्ठैः षड्रसैः सु मनोहरैः ।
ताम्बूलैर्दक्षिणाभिस्तं तोषयेन्नृत्यगीतिभिः ॥११॥
एवं दलेषु शिष्यांस्तान्पूजयेदमलात्मना ।
प्रणवादि चतुर्थ्यन्त नाममन्त्रैर्विधानतः ॥१२॥
स्तुवीत स्तुतिभिर्देवं सशिष्यं भक्तितत्परः ।
ज्ञानविज्ञानदीपं तमुदारयशसं प्रभुम् ॥१३॥
जगद्गुरो नमस्तेऽस्तु हरये विश्वबन्धवे ।
मोक्षमार्गप्रकाशाय प्रणतार्ति हराय ते ॥१४॥
सपार्षदाय सांगाय सदापावनकीर्त्तये ।
नमस्तेऽगाधबोधाय प्रणताभीष्टदायिने ॥१५॥

सत्यव्रताय शान्ताय दान्ताय जगदात्मने ।
नमोऽनन्ताय महते निर्जिताशेष विद्विषे ॥१६॥
विधृतज्ञानमुद्राय योगिने योगशालिने ।
नमस्तेऽस्तु दयासिन्धो जगज्जन्मादि हेतवे ॥१७॥
भीमे भवार्णवेऽनन्यः शरणः पतितः प्रभो ।
पादपद्मद्वयं तेहं व्रजामि शरणं सदा ॥१८॥
इत्यभिष्ट्य तं धीमान्दद्यात्पुष्पाञ्जलिं मुदा ।
प्रणमेद्दण्डवद्भूमौ साष्टाङ्गं विधिवत्ततः ॥१६॥
अथ जन्मकथान्तस्य शृणुयात्पापनाशिनीम् ।
गदतां शृण्वतामाशु विशदां तां शुभप्रदाम् ॥२०॥
एवं मुने त्वं जानीहि तदर्चनविधिं महत् ।
लोकेऽनेन विधानेन तमभ्यर्च्य महामनिम् ॥२१॥
प्राप्स्यन्ति च क्षितौ लोका वाञ्छितार्थमसंशयम् ।
नरास्तद्भावनायुक्ताः प्रणता विशदाशयाः ॥२२॥
मुने स भगवान्नित्यं सुतीक्ष्ण जगदीश्वरः ।
सत्यसन्धो हरिर्जातो विधास्यति शुभं नृणाम् ॥२३॥
चार्वाकादिमतारूढान्बहुधा दुर्मतीन्कलौ ।
करिष्यति नरान्जित्वा रामभक्ति परायणाम् ॥२४॥?
यत्प्रतापवशादेव भविष्यन्ति कलौनराः ।
धर्मनिष्ठास्तपोनिष्ठा मोक्षमार्गरतास्सदा ॥२५॥
तस्मिन्महीतलं याते नृणां किं वर्णयाम्यहम ।
भाग यं साक्षाद्धरौ प्रीते सच्चिदानन्दविग्रहे ॥२६॥

धन्यास्तदा तन्मुखपंकजं नराः द्रक्ष्यन्ति ये तापहरं च पश्यताम् ।
श्रोष्यन्ति वाचं परमामृतायनां ते भूरिभाग्या बत निर्मलाशयाः ॥
इति श्रीमदगस्त्यसंहितायां भविष्यखण्डे सुतीक्ष्णागस्त्यसंवादे
सांग–सशिष्य–श्रीरामानन्दयंत्रार्चनप्रकारो नाम
त्रयस्त्रिंशदुत्तरशततमोऽध्यायः ॥१३३॥

शिष्यैर्द्वादशभिः श्रीमानथ तैरर्कसन्निभैः ।
सूर्यैर्द्वादशभिर्नित्यं यथा विष्णुः प्रतापवान् ॥१॥
विराजमानस्सततं पर्यटन्नवनीमिमाम ।
द्वारकादिषु तीर्थेषु तत्र तत्र जगद्गुरुः ॥२॥
विद्विषां जित्वरो वादैः श्रुतिस्मृतिसमुत्थितैः ।
विपरीतान्वशीकुर्वन् कुर्वन् शिष्याँश्च तानथ ॥३॥
षडक्षरं मंत्रराजं तेभ्यश्चोपदिशन्मुनिः ।
मंत्राऽर्थं श्रावयन्नित्यं मंत्रज्ञैस्तैरुपासितः ॥४॥
आसमुद्रं चतुर्दिक्षु विचरन्धर्मतत्परः ।
कर्त्ता वै बहुधालोकं रामाभिरतमुत्तमम ॥५॥
लेष्यन्ति नास्तिकास्तस्य प्रतापहततेजसः ।
तमोपऽहे यथा सूर्येऽभ्युदिते तारकागणाः ॥६॥
एवमेवात्र विचरन् सुतीक्ष्ण सर्वं तो मुनिः ।
श्रेयः संपादयन्नृणां हरन्नज्ञानजं तमः ॥७॥
राजिष्यते स्वयं स्वीयैर्भानुभिर्भानुमानिव ।
असंख्येयैर्गुणैः शुभ्रैं जगत्पालनतत्परः ॥८॥
प्रकृत्या शीलसम्पन्नो दयारत्नाकरो महान् ।
धर्मत्राणाय लोकेऽस्मिन्नवतीर्णः परः पुमान् ॥६॥

महाव्रतधरो धीमान् सर्वविद्याविशारदः ।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यः स्वात्मारामो महामुनिः ॥१०॥
रामानन्द उदारकीर्तिरतुलः श्रीयोगिवर्याग्रणीः ।
पाखण्डाद्रिविभेदनाशनिरहो धर्माभिसंवर्द्धनः ॥
श्रीमान् दिव्यगुणालयो निजयशः स्तोमाङ्कितक्ष्मातलः।
सिद्धध्येयपदाम्बुजो विजयतेऽज्ञानान्धकारोऽपहः ॥११॥
वेदार्थसंपादकसम्मुखाम्बुजस्त्रितापसंहारक चारुलोचनः ।
भवाब्धिसंतारकपादपंकजो निजेष्टपूर्त्यार्पितकल्पपादपः ॥१२॥
विभूतशत्रुर्धृतिमान् धरातलं यशस्समूहैर्विदधत्सुनिर्मलम् ।
प्रकाशमानात्मविभूतिभूषितः प्रभूतविद्याप्रभवः प्रभाववान् ॥१३॥
प्रतापसंतापितशत्रुमण्डलः सुसद्यशोऽलङ्कृत भूमिमण्डलः ।
समीहिता शेष जगत्सुमंगलः सदर्चनीयोऽखिलमंगलायनः ॥१४॥
सत्संप्रदायाम्बुज भास्करोऽग्रणी विनीतनीवाखिलवाञ्छितार्थदः ।
निगूढवेदार्थविदीपनस्तैरुदारवृत्तैर्महितो महात्मभिः ॥१५॥
गुणेन शीलेन श्रुतेन कर्मणा प्रकाशमानः किरणैर्यथा रविः ।
हरंस्तमो नैशमुदारदीधितिर्विनिर्जिता शेष सपत्न संहतिः ॥१६॥
करोतु नोऽद्भ्रदयोधिमङ्गलं सपार्षदोदर्शितभूर्यनुग्रहः ।
गृहीतधर्मायतनाकृतिः कृती कृतार्थयँल्लोकमिमञ्चराचरम् ॥१७॥
उपप्लुतं धर्मावरोधिभिर्जगत्सनाथमाद्यो विदधत्कृपानिधिः ।
विधत्सुरस्याघ निबर्हणं यशस्तनोतु नोऽजस्रमसौ सुमङ्गलम् ॥१८॥
जगत्प्रतीपानभितो निरस्ययश्चकार धर्माभिरतं सतां प्रभुः ।
अशेषसत्पूजितपादपंकजस्सुमंगलं नो वितनोतु सर्वदा ॥१९॥
इति श्रीमदगस्त्यसंहितायां भविष्यखण्डे अगस्त्य सुतीक्ष्ण संवादे श्रीरामानन्द
दिग्विजयवर्णनं नाम चतुस्त्रिंशदुत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १३४ ॥

रामानन्दमहं वन्दे योगिध्येयांघ्रिपंकजम् ।
उदारयशसं देवं शान्तमूर्तिं शुभप्रदम् ॥१॥
अष्टोत्तरशतं वक्ष्ये नाम्नां यस्य महात्मनः ।
यैरिज्यमानो भगवान्कामानाशु प्रदास्यति ॥२॥
पठतां पठितैर्ध्यातैर्ध्यायतां शृण्वतां श्रुतैः ।
शुभप्रदैस्सतां ग्राह्यैर्महापापप्रणाशनैः ॥३॥
रामानन्दो रामरूपो राममंत्रार्थवित् कविः ।
राममंत्रप्रदो रम्यो राममंत्ररतः प्रभुः ॥४॥
योगिवर्यो योगगम्यो योगज्ञो योगसाधनः ।
योगिसेव्यो योगनिष्ठो योगात्मा योगरूपधृक् ॥५॥
सुशान्तः शास्त्रकृत् शास्ता शत्रुजिच्छान्तिरूपधृक् ।
समयज्ञश्शमी शुद्धः शुद्धधीश्शुद्धवेषधृक् ॥६॥
महान्महामतिर्मान्यो वदान्यो भीमदर्शनः ।
भयहृद् भयकृद् भर्त्ता भव्यो भवभयापहः ॥७॥
भगवान्भूतिदो भोक्ता भूतेज्यो भूतभृद्विभुः ।
ज्ञातज्ञेयोऽतिगंभीरो गुरुर्ज्ञानप्रदो वशी ॥८॥
अमोघोऽमोघदृग् दान्तोऽमोघभक्तिरमोघवाक् ।
सत्यस्सत्यव्रतस्सभ्यः सत्प्रियः सत्परायणः ॥९॥
सिद्धपः सिद्धिदः साधुः सिद्धिभृत् सिद्धिसाधनः ।
सिद्धसेव्यः शुभकरः सामवित्सामगो मुनिः ॥१०॥
पूतात्मापुण्यकृत्पुण्यः पूर्णः पूर्तिकरोऽघहा ।
अर्च्योऽर्चकः कृती सौम्यः कृतज्ञः क्रतुकृत् क्रतुः ॥११॥

अजय्यः शीलवाञ्जेता विनेतानीतिमान् स्वभूः ।
वाग्मी श्रुतिधरः श्रीमान् श्रीदः श्रीनिधिरात्मदः ॥१२॥
सर्वज्ञः सर्वगः साक्षी समः समदृशिः सदृक् ।
शुभज्ञः शुभदः शोभी शुभाचारः सुदर्शनः ॥१३॥
जगदीशो जगत्पूज्यो यशस्वी द्युतिमान्ध्रुवः ।
इतीदं कीर्तितं यस्य नाम्नामष्टोत्तरं शतम् ॥१४॥
अधीयीताथ शृणुयाद्यश्चापि परिकीर्त्तयेत् ।
अवाप्नुयाच्छ्रियंलोके विपुलां श्रद्धया युतः ॥१५॥
अर्चेत्स्तवेन यो नित्यमुपचारैस्सुसम्भृतैः ।
अनेन विधिवत्तस्य प्रसीदेत्स गुणाकरः ॥१६॥
तस्मिन्देवे प्रसन्ने तु न किञ्चित्तस्य दुर्लभम् ।
इहलोके परत्रापि जगदीशे जगद्गुरौ ॥१७॥
श्रद्धया माघमासेऽर्चेत्सप्तम्यां तु विशेषतः ।
संवत्सरार्चनाज्जातमाप्नुयात्फलमुत्तमम् ॥१८॥
श्रद्धालवे सुशीलाय गुरुभक्तियुताय च ।
उपदिशेद् ब्रह्मनिष्ठाय वेदव्रतरताय च ॥१९॥
गोपनीयमिदं सद्भिस्सदा सर्वं प्रयत्नतः ।
न देयं नास्तिकायाथ निन्दकाय गुरुद्रुहे ॥२०॥
स पूजितेष्टप्रदपादपङ्कजः समर्चकानां विदधातु मंगलम् ।
स तामजस्रं जगदीश्वरो हरिर्यथाऽश्रितोऽसौ कलिकल्पपादपः ॥२१॥

विराजतेऽयं तपसां प्रसूतिर्गुणाकरस्सच्चरितो द्विजार्य भूः ।
सज्जनाग्र्यसाभिष्टुतो वशंवदो बृहद्व्रतश्चारुरूपावलीडितः ॥२२॥
इति श्रीमदगस्त्यसंहितायां भविष्यखण्डे अगस्त्यसुतीक्ष्ण-
संवादे श्रीरामानन्दाऽष्टोत्तरशतनामार्चनमाहात्म्यवर्णनं
नाम पंचविंशदुत्तरशततमोऽध्यायः ॥ १३५ ॥

❀ इति श्रीरामानन्दजन्मोत्सव सम्पूर्णम् ❀

इस अगस्त्य संहितोक्त श्रीरामानन्द जन्मोत्सव व्रत कथाका ललित हिन्दी पद्यानुवाद (दोहा चौपाई में) श्रीअयोध्या निवासी साकेतवासी प्रसिद्ध भक्तमाली श्रीराघवेन्द्रसखा स्वामि श्रीसीतारामशरण रामरस-रंगमणिजी ने श्रीरामानन्दयशावली नाम से किया है वह आगे देखिये ।

अथ श्रीरामानन्द यशावली प्रारम्भः ।

श्लोकाः—

रामं कोमलश्यामसुन्दरतनुं पीताम्बरालंकृतम् ।
कोटीन्द्वर्कप्रकाशमानममलं राजीवनेत्रं विभुम् ।
कैशोरं द्विभुजं धनुःशरधरं श्रीसीतया संयुतम्
वन्देऽहं भरतादिबन्धुसहितं राजाधिराजं परम् ॥ १ ॥
फुल्लश्यामसरोजसुन्दरदृशीं सौंदर्यसद्मैभवाम्
भास्वत्कोटितनुप्रभां स्वजनहृद्ध्वान्तापहां तापहाम् ।
सीतां कोटिशरच्छशिच्छवियुतां श्रीरामपार्श्वेस्थिताम्
वन्देराघवराजपट्टमहमहिषीं माधुर्यसीमामुखीम् ॥ २ ॥
रामानन्दमहं वन्दे श्रीरामांशाऽवतारकम् ।
आचार्याणां शिरोरत्नं मंत्रराजप्रचारकम् ॥ ३ ॥

सो०–वन्दौं सीताराम, भरत लखण रिपुहन सहित ।
सरयू अवध सुधाम, सकल संत हनुमंत गुरु ॥ १ ॥
वन्दौं देव गणेश, भक्ति भारती शिव शिवा ।
रामायण श्रुति शेष, कुम्भजादि मुनि राम रत ॥ २ ॥
जय जगजलधिजहाज, भक्ति प्रपत्ति सुनिधि भरित ।
श्रीसम्प्रदा दराज, कर्णधार आचार्य जय ॥ ३ ॥

एक समय कुम्भज ऋषिराजू । करि प्रभात हवनादि सुकाजू ॥
बैठे आश्रम शिष्यन पाहीं । रामतत्व उपदेश कराहीं ॥
मुख्य शिष्य तेहि समय सुहाये । आय सुतीक्षण पद शिरनाये ॥
बैठे गुरु सम्मुख कर जोरी । पर उपकार कृपामति बोरी ॥
होनहार कलिमहँ नर जानी । अल्पायुषी अधम अभिमानी ॥
विषयविलीन विमुख रघुवीरा । सब विधि बूडे भवनिधि नीरा ॥
तिन सुखकारण तारण काजू । पूछे परम उपाय जहाजू ॥
मुनिप सिन्धु शोषक मम स्वामी । करुणाकर सर्वज्ञ अरामी ॥
कलियुग नर ह्वैहैं अति मूढा । वेद विमुख पातक आरूढा ॥
तिनकर जेहि उपाय कल्याणा । होइ कहिय सोइ कृपा निधाना ॥
सुनत अगस्त्य सुतीक्षण वाणी । धर्म प्रश्न परमारथ सानी ॥
आखर अल्प अर्थ विस्तारा । भे प्रसन्न मन मुदित उदारा ॥

दो०–बोले वचन सुतीक्षणहिं, अति सराहि सुख पाय ।
पर उपकारी कलशभव, शिष्य हियहिं हर्षाय ॥१॥
धन्य सुतीक्षण धन्य तुम, पर उपकार प्रवीण ।
कीन्ह प्रश्न अतिशुचि सुखद, कारक कलिमल क्षीण ॥२॥

कहौं सुनहु इतिहास सुहावा । जो सनकादिक मोहि सुनावा ॥
बडभागी मुनिवर मतिभारी । विधिसुत नारद जग उपकारी ॥
लोक विलोकि लोग अघलीना । वेद विमुख विमूढ बहु दीना ॥
तब चिन्तत तिनकर कल्याणा । दिव्यधाय गे मुनि मतिमाना ॥
तहाँ महा सिंहासन माहीं । बैठे प्रभु शिर छत्र सुछाहीं ॥
सिद्धिन सहित सिद्धि अवतंसा । वेद वन्दि वपु करत प्रशंसा ॥
सकल वरायुध वरतनु धारे । सेवहिं प्रवर पारषद प्यारे ॥
दिव्य विभूषण वसन सम्हारे । निज निज सेवा लिये सुखारे ॥
श्याम कामशत सुभग कृपाला । उर भुज राजिव नयन विशाला ॥
नख शिख दिव्य विभूषण भ्राजैं । दिव्य दुकूल पीत अति राजैं ॥
वाम भाग वामा अभिरामा । शोभित सारस नयनी श्यामा ॥
युगल किशोर अखंड अनूपा । राजत सच्चित आनँद रूपा ॥

दो०–अस आसीन अशेष जग कारण करुणाधाम ।
नारद नयन निहारी छवि, कीन्हेउ दंड प्रणाम ॥३॥
करि प्रणाम कर जोरि तन पुलकित गद्‌गद बैन ।
करन लगे अस्तुति अमल, नेह नीर भरि नैन ॥४॥

जय जगयोनि अयोनि अनूपं । विभु अव्यक्त व्यक्त तर रूपं ॥
नमो अनन्त स्ववश अविकारी । भव संभव पालन लयकारी ॥
जय जय प्रभु परमातम स्वामी । रहित आदि मध्यान्त अरामी ॥
प्रभो विश्ववपु विश्व सुवन्धो । जय विश्वम्भर करुणा सिन्धो ॥
नाथ जीव पातक रत भारी । परे घोर संसार मझारी ॥
भ्रमत अमित कर्मन वश परिके । सहत दुसहु दुख बहुतनु धरिके ॥
धर्म विमुख आलस आधीना । विषय विवश मानस अतिदीना ॥
सुखहित करहिं उपाय अनेका । लहहिं न लेशहु सुख लव एका ॥
ते केहि युक्ति मुक्ति सुख सोवैं । केहि विधि धर्म निरतमति होवैं ॥
कृपासिंधु सोइ करिय उपाई । जेहि विधि जीवन कर दुख जाई ॥

कहे धर्म वेदादिक माहीं। कष्ट साध्य नर करत सो नाहीं॥
ताते अतिशय सुगम उपाऊ। कहहु नाथ निज भक्ति बढाऊ॥

दो०–बन्धन विविध विनाशकर, जीव मुक्ति दातार।
जग रक्षक अस धम के, तुमहि बतावन हार॥५॥
सुनि शुचि नारद की विनय, विहँसि वदन वर वैन।
प्रीति सहित रसरङ्गमणि, बोले राजिव नैन॥६॥

सुनिये मुनिवर अति बड़भागी। कहत आप जो जगहित लागी॥
सो प्रथमहिं हम मन गुणिराखा। करब तुम्हार पूर अभिलाषा॥
भरतखंड मंडित अनुरागा। तेहि मधि तीरथ राज प्रयागा॥
प्रथित पुण्यमय वेदन माहीं। लेव अंश अवतरु तहाँ ही॥
तुमहिं आदि निज नित्य समीपी। परिकर प्रेम प्रभाव प्रदीपी॥
अवतीरण होई सवन समेता। युक्ति प्रचारब मुक्ति सुहेता॥
जो भव चक्र वक्र शमनीया। वर्धक भाव भक्ति रमणीया॥
सुगम सुसाधन बोध विधायक। सुखद धर्म पथ परम सहायक॥
वेद शास्त्र वेदान्त न सारा। शुचि सन्तन आचरित अचारा॥
तहँ तुम सब अवतरि शुभदेशा। करिहौ मम मारग उपदेशा॥
जे गहिहैं मम सत्पथ प्राणी। भक्ति समेत परमहित जानी॥
ते बिन श्रम संशय सुख खानी। लहिहैं सुगति सुधारस सानी॥

छ०–सानी सुधारस नाथ वाणी सुनि सुमुनि नारद तहाँ।
आनन्द अम्बुधि मग्न मानस मिटगये संशय महा॥
वह प्रेम अम्बु प्रवाह अम्बक वपुष पुलकावलि छई।
अनुभवत दृढ़व्रत हरि वचन अभिलाष उर पूरण भई॥१॥
पुनि जोरिकर कृत कृत्य श्रीपति पद पदुम शिरनायके।
पर धामते गमने परम मुद छाय आयसु पायके॥

स्वर ब्रह्म लीन बजाय बीण सुगाय रघुवर गुण पगे॥
पूजित सुरासुर विधिसुवन मुनि लोक तिहुँ विचरन लगे २

सो०–गमने देवऋषीश, तव सुर मुनि वन्दित मुदित।
बसत रमत जगदीश, दिव्यधाम रामा सहित॥३॥
कारक जीव उधार, हरि नारद संवाद यह।
भयो यथा अवतार, सुनहु सुतीक्ष्ण सो चरित॥४॥

जब गत द्वापर पुण्य निधाना। गे निज लोक कृष्ण भगवाना॥
तब प्रवेश कीन्हो कलि काला। अधरम वर्धक कठिन कराला॥
भे पातक रत सब नर नारी। शौच अचार रहित अविचारी॥
विमुख सुगति साधन पथ नाना। निन्द्य मन्दमति पशुन समाना॥
अल्पायुष सुख रहित अभागी। विषयी सन्त-संग -परित्यागी॥
बाढे जे नास्तिक चहुँ ओरी। तिन कहँ जीति वाद बरजोरी॥
आचारज वेदान्त विज्ञाता। भगवत धर्म सदा सुखदाता॥
थापन यदपि किये जगमाहीं। पै नहिं बढत देखि तिनकाहीं॥
तब हरि कृपा सिंधु भगवाना। कारक सत्य वचन निज बाना॥
बढत विलोके अति कलि काला। दुख दुर्मतियुत जीव विहाला॥
सुमिरि प्रथम निज गिरा उदारा। तब मन कीन्ह लेन अवतारा॥
विधि नारद आदिक अनुगामी। सबहिं दिये अनुशासन स्वामी॥

दो०–चारि सहस शत तीनिभो, गत कलिकाल मलीन।
तेहि अवसर नरलोक हरि, निवसन हित चित दीन॥७॥
गंग यमुन संगम जहाँ, तीरथराज प्रयाग।
पुण्यरूप जेहि पूजहीं, देव सहित अनुराग॥८॥

तहाँ महाभागी अनुरागी। कान्य कुब्ज द्विज जाति आदागी॥
नाम भूरिकर्मा शुभ शर्मा। भक्ति योग युत रत निज धर्मा॥

नाम सुशीला तिनकी नारी । मनहुँ अदिति कश्यप की प्यारी ॥
आयो माघ अमोघ पुनीता । पक्ष असित सातैं रवि प्रीता ॥
नखत सुचित्रा चारु विचित्रा । सिद्ध योग युत परम पवित्रा ॥
प्रभु प्रकटन कर अवसर जानी । तब ग्रह योग भये शुभ थानी ॥
विमल सलिल निर्मल नभ आशा । शुचिसन्तन मन परम हुलासा ॥
मधुर बयारि बहै सुख देनी । दुग्धधार चलि-ललित त्रिवेणी ॥
सात दंडदिन आयो जबही । कुम्भ लग्न संभव भो तबही ॥
प्रकटे रवि इव करुणाकन्दा । सन्त सरोजन प्रद आनन्दा ॥

दो०--जगनिवास जगदीशहरि, जगत शरण दातार ।
जनरक्षण प्रण दक्ष अति, लीन्ह मनुज अवतार ॥६॥

छं०--अवतरे परेशा मनहुँ दिनेशा सुतद्विजेश तनुधारी ।
पूजित शिव शेष शुभ उपदेशा तारकमंत्र प्रचारी ॥
कलिकलुषविनाशी प्रेमप्रकाशी सुखराशी दुखहारी ।
प्रभु इच्छाचारी स्ववशविहारी जगजीवन्ह उपकारी ॥३॥
रक्षक श्रुतिसेतू सत्कुलकेतू वन्दित सदा अमानं ।
निगमादिसुगीतं चरितपुनीतं भवभयशमन निदानं ॥
सेवित वर चरणं चातुर वरणं शरणाद कृपानिधानं ।
प्रदमणिरसरंगहिं सियवरसंगहि प्रेमभक्ति वरदानं ॥४॥

दो०--अघ घालक गो सन्त द्विज,पालक कृपाअगार ।
बालकवपु रोवनलगे' खलन रुवावन हार ॥१०॥

सुनि मृदु रुदन सदन सब नारी । गाय उठी सोहिलो सुखारी ॥
तब द्विजवर मन मोद अगाधा । किये कर्म नान्दीमुख श्राद्धा ॥
दयी बहुत संपदा लुटाई । बजन लगी आनन्द बधाई ॥

द्विज जाया सजि मंगलथारा । आईं सब द्विजराज अगारा ॥
करहिं निछावर देहिं अशीषा । चिर जीवहु सुत हे जगदीशा ॥
भो अस जन्म महोत्सव भारी । कीन्ह छठे दिन छठी सुखारी ॥
होत गान आनन्द बधावा । बरहौं नामकरण दिन आवा ॥
ज्ञाता गणक पुरोहित आये । विधि सम जन्मपत्र लिखि लाये ॥
मंगलकर्म सविधि करवाये । रामानन्द सुनाम सुनाये ॥
लखि लक्षण अद्भुत अनुरागे । फल कुण्डली सुनावन लागे ॥
सुनहु द्विजेश सुकृत परिपाके । सकल विलक्षण लक्षण याके ॥
होइहि अति आयुषी अरोगी । आचारज लक्षण युत योगी ॥

दो०--विशद वेद वेदान्त सत्-शास्त्र समेत पुराण ।
ज्ञाता वक्ता धर्मको, कर्ता कर्म महान ॥११॥
कीरतिवान उदार अति, ज्ञानवान गुणवान ।
नीतिमान मतिमान पुनि, ह्वै है यशी निदान ॥१२॥

धर्म सेतु रक्षक उपकारी । भवनिधि बूड़त जीव उधारी ॥
वैष्णव धर्म सदा उपदेशी । राम भक्त पर प्रेमावेशी ॥
पूज्य सबहिंप्रिय इन्द्रिय जेता । जगद्गुरु मुनि शील निकेता ॥
चारिउ वर्ण इतर जिव जाला । शरणद सब पर परम कृपाला ॥
समदर्शी विरक्त श्रीमंता । श्रीसंपदा विवर्धन वन्ता ॥
आनन अम्बुज सदा प्रसन्ना । अमित दिव्यलक्षण संपन्ना ॥
कहँ लगि गुणगण कहौं द्विजेशा । तव सुत भयो मनहु परमेशा ॥
सुनिसुत गुण दम्पति द्विज राजा । भये मुदित मन सहित समाजा ॥
दिये दान बहुमान समेता । गये पुरोहित आशिष देता ॥
नित नव मंगल द्विज वर गेहा । लालत सुवनहिं सहित सनेहा ॥
अन्न प्राशनी आदि उछाहा । करत भये सादर द्विज नाहा ॥

दो०--यहिविधि रामानन्द प्रभु,परम प्रेम आधीन ।
सब शिशुलीला ललित करि, मात पितहिंसुखदीन ॥१३॥
पाँचवर्ष बीते विमल, जबही बाल विनोद ।
किये द्विजाति सुजातियुत, मुण्डन मंडित मोद ॥१४॥

तब लै बहु महिसुरसुत संगा । बीथिन विचरहिं बाल उमंगा ॥
खेलहिं मिले बालकन माहीं । रघुवर लीला ललित कराहीं ॥
जस लख प्रभु पूजन पितु पाहीं । तैसेइ करि हरि ध्यान धराहीं ॥
बपु बुधि विमल बढ़ै यहि भाँती । जस शशिकला पक्षसित राती ॥
आठ वर्ष के भे मतिमाना । भयो यज्ञ उपवीत विधाना ॥
तबते ब्रह्मचर्य व्रत लीन्हे । पढ़न विशद विद्या चितदीन्हे ॥
पितहिं प्रबोधि बोध सुख राशी । पुनि आये करुणाकर काशी ॥
तहाँ वेद वेदान्त विशेषा । सकल किये करतल अवशेषा ॥
सोरह वर्ष विमल वय जानी । करन चहे सतगुरु विज्ञानी ॥
जोहि जानि जग जलधि जहाजू । श्रीसंप्रदा नलिन दिनराजू ॥
गुरु राघवानन्द महाना । राम भक्त विज्ञान निधाना ॥
आतम अरपि लिये उपदेशा । तारक राममन्त्र परमेशा ॥

दो०--दोउ महान मिलि सोहहीं,सम वशिष्ठ रघुनाथ ।
उपमा अपर समुद्र जस, सहित ब्रह्मद्रव पाथ ॥१५॥
स्वामिहिं सेवा वश किये, रामानन्द उदार ।
दै सरवस गुरु रामपुर, गवने दशयें द्वार ॥१६॥

तब श्रीरामानन्द दिनेशा । उदित भये तारक उपदेशा ॥
छायो लोक प्रताप प्रकाशा । कलि करतब पातक तमनाशा ॥
घोर कुपन्थ चोर बिलखाने । कुमुद कर्म कांडी सकुचाने ॥
सोहंवादी तारा तय भे । नास्तिक कुल उलूक लुकि लयभे॥

रामभक्त सरसीरुह वृन्दा । रविलखि भे विकसित सानन्दा ॥
श्रद्धा विरति भागवत धर्मा । लहे कोक कोकी सुख परमा ॥
जबते रामानन्द सुपासी । निवसे जगत प्रकाशी काशी ॥
तबते भये सकल सुखराशी । काशी काशीईश निवासी ॥
नितप्रति रामकथा सतसंगा । कहत बहत जनु दूसरि गंगा ॥
तारत जीवन मरत महेशू । स तन तरत स्वामी उपदेशू ॥
मरे खलन कहँ भैरव सोधैं । प्रभु दै दण्ड जियत परबोधैं ॥
गुण अनन्त तिनके सुखकारी । सब वरणै अस को मति धारी ॥

छ०--भारी प्रभाव प्रताप रामानन्दको को कहिसकै ॥
जो परम प्रभु अवतार शारद वदत यश जाको जकै ॥
जे गणक गुण प्रथमहिं सुनाये कुण्डली गाये जवै ॥
ते प्रगट लक्षण जग विलक्षण देखिये दूने सबै ॥५॥
जय धन्य रामानन्द स्वामी लोकमें जाकी कृपा ॥
श्रीराम भक्त अशेष वेश विलोकि खल खाते त्रपा ॥
जेहि संप्रदाय सुआय दुखगत विमुख सब शुभ अंगहू ॥
भो सुखी सीतारामशरण कहाय मणिरसरङ्गहू ॥६॥

सो०--राम लियो अवतार, रामानन्द कहाय के ।
सो सब चरित उदार, कहेउ सुतीक्ष्ण गायके ॥
प्रभु अनुशासन पाय, विधि शिव नारद आदि दै ।
अवतीरण भे आय,जेहि विधि अब सो यश सुनो ॥७॥

भये प्रगट परिकर हरि प्यारे । श्री सम्प्रदा प्रचारन हारे ॥
जानन वारे गति हरि मनकी । कारक शिर धरि आज्ञा तिनकी ॥
विधि नारद शिव सनत कुमारा । कपिलदेव मनु-भूप उदारा ॥
तिमि प्रहलाद जनक अरु भीषम । बलि शुकदेव रमा तैसहिं यम ॥

ये तेरह प्रगटे जगमांहीं। पाय सु प्रभु अनुशासन काहीं ॥
भये स नाना वरण विनीता। नाना देशन किये पुनीता ॥
नखत कृत्तिका कातिक पूनू। शनि धन लग्न भये द्विज सूनू ॥
प्रथम आय अवतरे विधाता। नाम अनन्तानन्द विख्याता ॥
पढ़े वेद वेदान्त द्विजाई। सुमिरि स्वरूप शिष्य भे आई ॥
सिद्ध परम प्रेमी रघुनाथा। सियजू हाथ धरे जिन्ह माथा ॥
रामानन्द शिष्य वर सोई। जेहि समान जग और न कोई ॥
पुनि वैशाख कृष्ण गुरु बारा। तिथि नवमी वृष लग्न उदारा ॥

दो०-मुनि नारद द्विज वंश महँ, भये सुरसुरानन्द।
श्रीरामानँद शिष्य निज, कीन्हे करुणा कन्द ॥१७॥
सन्त प्रसाद प्रभाव विद, प्रथमहिं पाये स्वाद।
सोइ याहू तन सत करी, महिमा महाप्रसाद ॥१८॥

माधव शुक्ल नौमि भृगु दिवसा। तुलालग्न सतभिषा सुनिवसा ॥
सुखानन्द भे शंभु सुजाना। शीलवान मतिमान महाना ॥
आचारज गुरुभक्ति निधाना। निरत मंत्रमंत्रार्थ विधाना ॥
तीज कृष्ण वैशाख सुमासा। मेष लग्न दिन शुक्र सुवासा ॥
व्यतीपात अनुराधा माहीं। सनतकुमार धरे तन काहीं ॥
भयो नाम नरहरियानन्दा। राम भक्त कुल कैरव चन्दा ॥
तिमि सोइ मास कृष्ण बुध सातैं। कर्क लग्न अरु मूल मिलातैं ॥
योगानन्द कपिल भे आई। योग निधान निरत रघुराई ॥
कारक रामतत्व उपदेशा। परम भागवत धर्म हमेशा ॥
प्रभुके पौत्र शिष्य सुखकन्दा। दीन्हे मंत्र अनन्तानन्दा ॥
चैत्र लग्न धन पूरण मासी। ध्रुव बुध उत्तर फाल्गुनि खासी ॥
मनु महाराज अवतरे पीपा। रामानन्द शिष्य कुल दीपा ॥

दो०-जगत विदित सियरामपद, पीपा प्रेम प्रताप।
लगी भागवत भुजन में, जिनकी लाई छाप ॥१९॥
असित अष्टमी चैत्रकी, सिंह लग्न कुज वार।
नखत मृगशिरा जानिये, शोभन योग उदार ॥२०॥

नाम कबीर भये प्रहलादू। छाके रामनाम रस स्वादू ॥
रामभक्त वेदान्त विज्ञाता। काशी वास निरत जन त्राता ॥
छठ वैशाख असित शशि वारा। मूल परिघ तनुकर्क उदारा ॥
जनमें आय जनक महाराजा। भावानन्द सुनाम दराजा ॥
निरत राम सेवा मतिमाना। गूढ प्रेम विज्ञान निधाना ॥
माघव कृष्ण द्वादशी काहीं। पूर्वा तुला भानुदिन माहीं ॥
भीष्म सो सेन भक्त अवतारा। भये रामपद प्रेम अगारा ॥
सदा सन्त सेवा मति पागी। भक्तियोगयुत अति बड भागी ॥
तीनैं मास पक्ष वृश्चिक शनि। आठैं पूर्वाषाढ नखत भनि ॥
बलि अवतीर्ण भये अतिदाता। धना नाम जग धन्य विख्याता ॥
सुमति सन्त सेवा लयलीना। सदाचार गुरु भक्ति प्रवीणा ॥
चैत्र असित एकादशि काहीं। सोम धनिष्ठा धनतनु माहीं ॥

दो०-भे शुकदेव सुज्ञान निधि, नाम गालवानन्द।
उपदेशक वेदान्तविद्, योगी रत रघुचन्द ॥२१॥
चत्र शुक्ल चित्रा दुइज, भृगुदिन लग्न सुमेष।
जनमत भे यमराज जग, रचि रैदास सुवेष ॥२२॥

रामदास शासन मति दासी। सदा भागवत धर्म प्रकाशी ॥
निष्किंचन उदार गुरुसेवी। भावुक रामतत्वके मेवी ॥
कर्कलग्न सित चैत्र त्रयोदशि। ध्रुव गुरुदिन उत्तर फाल्गुनिलसि ॥
पद्मावती पद्मजा अशा। अवतीरण भइ तिय अवतंसा ॥

विषय विगत रघुवर रति सानी । गुरु पद भक्ता तन मन वाणी ॥
परम पुरुष गुनि राम विहारी । और सबै जग जान्यो नारी ॥
ये प्रभु शिष्य मुख्य मति माना । तरुण तरणि सम तेज निधाना ॥
नाना वरण सु नाना देशा । प्रगटि आय लीन्हे उपदेशा ॥
इनके चरित विमल विधि नाना । भक्तमाल यशजाल प्रमाणा ॥
सहित तेरहौं शिष्य अरामी । राजत श्री रामानँद स्वामी ॥
शिष्य शिष्य उप शिष्य समेता । शोभित पूजित कृपा निकेता ॥
जगद गुरु आचारज भूपा । रामानन्द रामके रूपा ॥

छं०-श्रीरामरूप अनूप रामानन्द स्वामी हैं सदा ।
शुचिज्ञानदायक ध्यानलायक हरण मल माया मदा ॥
श्रीसंप्रदाय बढाय विरचे सेतु सम रघुनाथ के ।
जग जलधि से जीवन उतारे जलधि करुणापाथ के ॥८॥
जिन्ह नाम गावत चरण ध्यावत जीव विगत प्रयासही ।
प्रभु मनहि भावत भुक्ति मुक्तिहुँ लहत जन संशय नहीं ॥
गहि जासु तारक मंत्र मारग लहि अभय जन गाजहीं ।
भू लोक को भूषित किये वर वृत्ति मुनि सम राजहीं ॥९॥

सो०-शारद शशी समान, कीरति रामानन्द की ।
पावन पुण्य महान, हरणी पातक वृन्द की ॥६॥
रामभक्ति दातार, ज्ञान विराग विधायनी ।
सुनतहिं भली प्रकार, सुखदमोह तम हारणी ॥७॥

अस प्रभु भगवत रामानन्दा । परम धर्म तनु जनु सुखकन्दा ॥
हिय विचार किय कृपा निकेतू । महि दिग्विजय करनके हेतू ॥
संग शिष्य पर शिष्य अनन्ता । तिमि तिहुँ सम्पदाय बहु संता ॥
आगे फहरत ध्वजा निशाना । तेहि पर लसैं वीर हनुमाना ॥

जय जय सियाराम ध्वनि छाई । चले विजयकर शंख बजाई ॥
प्रथम पूर्व जगदीश पधारे । शासन रघुवर भक्ति प्रचारे ॥
पुनि गे दक्षिण दिशि अभिरामा । रामेश्वर रंगादिक धामा ॥
तदुपरि पश्चिम दिशि प्रभु आये । द्वारिकादि लखि दुरित दुराये ॥
पुनि उत्तर बद्रीपति पेखी । आश्रा थापन किये विशेषी ॥
तिमि सब अन्तर के शुभदेशा । स्ववश स्वामि कीन्हे उपदेशा ॥
जीति कुवादिन बेद विवादा । थापन करी धर्म मर्यादा ॥
हिंसा कर्म कांड रत जेते । किये भक्त नरसिंहके ते ते ॥

दो०-चारवाक मतनिरत अरु, जैनी बोधी वाम ।
उच्छृंखल खल चेटकी, औरो नास्तिक आम ॥१३॥
खंडन किये कुपंथ सब, यथा योग्य दै दण्ड ।
सतमारग आने तिनहिं, करि उपदेश अखंड ॥२४॥

चरिउवर्ण आश्रमन माहीं । कीन्हे रामभक्त सब काहीं ॥
राम मंत्र मन्त्रार्थ विधाना । यथा योग्य दीन्हे मतिमाना ॥
यहि विधि करि दिग्विजय उदंडा । थापी रघुपति भक्ति अखंडा ॥
प्रभु जिहि हेतु लियो अवतारा । सत्यसंध सोइ कियो प्रचारा ॥
शिष्यन मध्य विराजहि कैसे । द्वादश भानु सहित हरि जैसे ॥
पुनि तारागण सज्जन वृन्दा । रामानन्द सु पूरणचन्दा ॥
चरणाश्रित जन कुमुद चकोरा । विकसित सुखी लखहिं प्रभु ओरा ॥
बहुतकाल वपु धारण कीन्हे । भूमहँ भक्ति भावभरि दीन्हे ॥
जासु तिलक विलोकि जनभाला । होत जगत यमदूत विहाला ॥
जीवन्ह राम उपासक कारी । विदित विश्व मंगल वपुधारी ॥
रामानन्द प्रताप अपारा । को कवि लहै कथन करि पारा ॥
तदपि यथा मति अति सुखदाई । रामानन्द विजय मैं गाई ॥
अस प्रभु जगपावन वपुधारी । कृपासिंधु दासन हितकारी ॥

दो०—आचारजवर दिग्विजय, जे जन सुनहिं सप्रेम ।
विजय विवेक विभूति ते, लहहिं भक्ति युतक्षेम ॥२५॥
रामानन्द उदार अति, कलिमल नाशनहार ।
सेवतभक्ति समेतशुभ, भुक्ति मुक्ति दातार ॥२६॥

अस प्रभु जग पावन वपुधारी । कृपासिन्धु दासन हितकारी ।
दुराधर्ष अति दुष्टन काहीं । सज्जन सेवन योग्य सदाहीं ॥
ताते तासु जन्मदिन माहीं । जन्म महोत्सव रचैं उछाहीं ॥
प्रति संवत विधि जाननहारे । करैं सकल वैष्णव हरिप्यारे ॥
पूजासाज सँवारि सचेता । पूजैं स्वामिहिं शिष्य समेता ॥
नाच गान आनन्द बधाई । व्रत अरु स्तुतिहु करैं मनलाई ॥
जन्म कथा मम कथित सुहाई । सुनैं सुतीक्ष्ण जन कहवाई ॥
तजि आलस यहि भाँति सचेता । करैं महोत्सव भक्ति समेता ॥
सो गुरुभक्त रामप्रिय होई । लहि हैं सकल मनोरथ सोई ॥
सुनत सुतीक्षण गुरुवर बाणी । रामानन्द कथामृत सानी ॥
अति प्रमुदित पुनि पुनि पुलकाहीं । बहै प्रेमजल नयनन माहीं ॥
पुनि कर जोरि बैन सुखदाई । बोले कुम्भज पद शिर नाई ॥

दो०—धन्य आप प्रभु धन्य अति, कथा यथारथ गाय ।
आचारज अवतारकी, दीन्ही मोहि सुनाय ॥२७॥
जन्म कर्म पावन परम, सुन्यो सुयश शुभ गाथ ।
अब पूजनकी विधि सकल, अरु स्तुति कहिये नाथ ॥२८॥

जग उपकारी आप महाना । दयावान मतिमान सुजाना ॥
ताते कहिये सविधि बखानी । पूजन करि तरिहैं भव प्राणी ॥
सुनत अगस्त्य सुतीक्ष्ण बैना । बोले बचन उमगि उर चैना ॥
तीक्ष्ण सुमति सुतीक्ष्णतोरी । पर उपकार प्रीति नहिं थोरी ॥
ताते कहौं सुनहु मतिमाना । आचारज पूजन सविधाना ॥

ताम्र पीठपर यंत्र बनावैं । अथवा चन्दन सों लिखवावैं ॥
वर्तुल ललित कमल तेरह दल । मध्य कर्णिका कलित लिखै भल ॥
लिखि षटकोण यंत्र के माहीं । तहँ आचार्यदेव वर काहीं ॥
थापै सहित अंग सुख कन्दहि । ध्यावै रवि सम रामानन्दहि ॥
गौर वर्ण वपु बैठ सुखासन । चरणकमल नखद्युति तम नाशन ॥
कटि काषाय दंड उपवीता । रोमराजि उर उदर पुनीता ॥
भुजन छाप सरचाप विराजै । सियवर नामावलि भलि भ्राजै ॥

दो०—ऊरधपुंड्र सभाल श्री, तिलक द्वादशहु अंग ।
युगल तुलसिका माल गल, पुही प्रेम परसंग ॥२६॥

शुभ प्रबोध मुद्रा कर धारी । आनन चन्द्र ताप त्रय हारी ॥
हित उपदेशक सुधा सुवयना । कृपाविलोकनि राजित नयना ॥
अस स्वरूप चिंतै मनमाहीं । प्रेम सहित पूजै प्रभु काहीं ॥
शिष्यन थापै दलन सुजाना । दक्षिनावर्त्त पूर्वक्रम माना ॥
अनन्तानन्द सुरसुरानन्दा । तदुपरि सुखानन्द सुखकन्दा ॥
पुनि नरहरियानन्द सुदीपा । योगानन्द लिखै पुनि पीपा ॥
लिखै कबीरहि भावानन्दहि । बैसेइ सेनाधना अमन्दहि ॥
बहुरि गालवानन्द प्रतापी । रमादास पुन्नावति थापी ॥
प्रणव बीज युत इनके नामा । पुनि कहि आय नमो अभिरामा ॥
यहि विधि जानै सबके मंत्रा । तेइ लिखि पढि पूजै वर यंत्रा ॥
करि आवाहन आसन दाना । अर्घ्य पाद्य आचमन विधाना ॥
पुनि असनान बसन उपवीता । चन्दन भूषण सुमन पुनीता ॥

दो०—धूप दीप नैवेद्य बहु, षटरस युत फल मूल ।
जल अचवन अरु बीटिका, आरति अंजलि फूल ॥३०॥
यहि विधि सब शिष्यन सहित, स्वामिहिं पूजि सप्रीत ।
करि प्रदक्षिणा जोरि कर, विनती करै विनीत ॥३१॥

जय जय जय श्रीरामानन्दा । हरि अवतार हरण दुख द्वन्दा ॥
जय त्रयताप शमन सुख कन्दा । राम भक्तकुल कैरव चन्दा ॥
आत्माराम काम मद जेता । योगिराज मुनि ऊरधरेता ॥
नमो सत्यव्रत दान्त महन्ता । जगदात्मा शुचि शान्त अनन्ता ॥
जयति जगद्गुरु करुणासिन्धो । आश्रित पाल दीन जन बन्धो ॥
दीक्षादान दक्ष कुल केतुं । भक्ति पक्ष रक्षक श्रुति सेतुं ॥
जयति मोह रावण रघुवीरं । भगवद्धर्म धुरंधर धीरं ॥
वर्धन विमल विराग सुवेशं । सम्प्रदाय श्री नलिन दिनेशं ॥
जय तृदण्ड-र खल खग बाजं । नास्तिक मत्त हस्ति मृग राजं ॥
नमो राघवानन्द सुनन्दन । बौधी वामी वृन्द निकन्दन ॥
जैनी जलधर पटल प्रभंजन । सुमति सुगंधि वहन जन रंजन ॥
जयति दयानिधि दुर्गुण रंजन । पावन कीरति कलुष विभंजन ॥

दो०–जयति पतित पावन प्रभो, जगत विदित गुणगाथ ।
जय जग जलनिधि सेतु कर, यथा सिन्धु रघुनाथ ॥३२॥

जयति प्रेमपथ पूरण पंडित । रामभक्त विज्ञान अखंडित ॥
चारवाक वन सघन धनंजय । जय आचारज जन अघगंजय ॥
आसमुद्र मुद्रित महि मंडल । जय कारक दिग्विजय अखंडल ॥
जय अमान मानद मुद मंडन । कुलिश कुधर पाखंड विहंडन ॥
जयति तरण तारण दुखदारण । जियपर करुणाकरण अकारण ॥
तज्ञ कृतज्ञ अज्ञता नाशक । राम नाम जप यज्ञ प्रकाशक ॥
नमो मोक्षमग सुगम विधायक । सब विधि सुजन मनोरथ दायक ॥
जयति भक्ति विस्तारक सुखमय । अजित अगाध बोध तव जय जय ॥
तारक मंत्र प्रचारक स्वामी । शिष्य त्रयोदश सहित नमामी ॥
कर्म वचन मन शरण तुम्हारी । पाहि पाहि प्रणतारति हारी ॥
करुणा करि रसरंगमणी पर । राम भक्ति अविचल दीजे वर ॥

दो०–करि यह अस्तुति अमलअति, चरण कमल मन लाय ।
करै दंडवत प्रणति पुनि, त्राहि त्राहि मुख गाय ॥३३॥
दै पुष्पांजलि तब करैं, हरिदासन सतकार ।
बहुरि कथा सुनि नाम धुनि, नृत्यगान अनुसार ॥३४॥
यहि विधि रामानन्द की, पूजा यंत्र प्रकार ।
कहेउ सुतीक्षण जे करिहिं, ते उतरिहिं भवपार ॥३५॥
सुमति सुतीक्षण मुनि चरित, अरचन रीति अमन्द ।
गुरु कुम्भज पद नाय शिर, पूरे परमानन्द ॥३६॥

यह आचारज गुण अनुवादा । करण मोद मन हरण विषादा ॥
जे जन गावहिं सुनहिं सप्रेमा । ते पावहिं सुख मंगल क्षेमा ॥
गुरु आचारज चरण सनेहा । केवल प्रभु तोषण व्रत येहा ॥
ताते रामानन्दिन काहीं । करिबो उचित उछाह सदाहीं ॥
तासु जन्म दिन भे न अनन्दी । कहवावत श्री रामानन्दी ॥
तो मैं कहा कहौं तिन काहीं । समुझि लेहिं सज्जन मन माहीं ॥
चार सहस्र त्रय शत कलिकाला । बीते प्रकटे परम कृपाला ॥
तबते विमल विराग सुवेषा । पूरेहु पुहुमी माहिं अशेषा ॥
नीचहु जासु अनुग कहवाई । पूजित होत साधु समताई ॥
ताहि भजिय हिय प्रेम बढाई । को नहि गुरुन भजे गति पाई ॥
दुइज चन्द्र शिव शिर संयोगा । कुटिल मन्द वन्दहिं सब लोगा ॥
श्रीयुत रामानन्द प्रभावा । केहि विधि जाय एकमुख गावा ॥

दो०–मलिनहु मम वाणी विमल, भई स्वामियश गाय ।
यथा कुजल रससंगमणि; गंग संग सुचिताय ॥३७॥
अनमिल बालक वत वचन, मम गुणगण युत नाहिं ।
जननि जनक सम सुजन सुनि, सुख पैहैं मनमाहिं ॥३८॥

सत संगति वश यहौ भलाई । भई हेतु सोउ देउँ सुनाई ॥
अवध महल मानसके हंसा । गुरु आचार्य निष्ठ अवतंशा ॥
कृपा पात्र श्रीशीलमणी के । सीताशरण सखा सियपीके ॥
तिन निजअनुज-ढीठ मोहिजान्यो । कनक भवन असवचन बखान्यो ॥
मुनि कुम्भज स्वसंहिता माहीं । खंड भविष्य सुतीक्षण पाहीं ॥
रामानन्द जन्म यश गाये । करहु ताहि भाषा मन लाये ॥
जायँ समझि परै सब काहीं । गावहिं स्वामि जन्मदिन माहीं ॥
यहिविधि आरज आज्ञा पाई । करि रसरंगमणी सुढिठाई ॥
विरचि दियो दोहा चौंपाई । सुजन सुधारहिं ·क्षमि चपलाई ॥
उनइस सौ पैंतालिस साला । चैत राम नवमी मुदमाला ॥
अवध सरयु सिय कुंड समीपा । पूरण कियो कृपा रघुदीपा ॥
जय जय अवध जननि जय सरजू । देहि निवास भक्ति सियवरजू ॥

दो०-जय जय श्री आचार्यवर, स्वामी रामानन्द ।
करिय कृपा निज जानि जन,हरिय सकल दुखद्वन्द ॥३९॥
जय जय जय गुरुदेव श्री कामदेन्द्रमणि मोर ।
सबविधि सुधरे रावरे, कृपा नयन की कोर ॥४०॥
आचारज वर चरित मणि, अवली अति अभिराम ।
रामानन्दयशावली, भया ताहित नाम ॥४१॥

इति श्रीमन्महाराजाधिराज श्रीरामचन्द्रतारकमंत्रप्रचारक श्रीमदाचार्यवर्य चारु चरित चिन्तामणि मंजरीक रसरंगमणि मति सूत्र पोत कलिमल तम नाशनि निर्मली श्रीरामानन्दयशावलीसमाप्तः ।

पूजामंत्र :—नमआचार्यवर्याय रामानन्दाय धीमते ।
मोक्षमार्ग प्रकाशाय चतुर्वर्गप्रदाय च ॥

—:*:—

अगस्त्य संहिताके अतिरिक्त वैश्वानर संहिता और भविष्यपुराण में भी आपके विषयमें कुछ वर्णन मिलते हैं । जो कुछ सामान्य भेद के साथ इस अगस्त्य संहिता के वर्णन के अतर्गत हो जाते हैं ।

इन ऋषि प्रणीत आर्ष ग्रंथोंके अतिरिक्त यतिराजराजके जीवन चरित्र विषयक एक प्राचीन (तत्कालीन) ग्रंथ "प्रसंगपारिजात,, नामक प्राप्त होता है । इसमें उल्लिखित है कि इस "प्रसंगपारिजात" नामक ग्रंथकी रचना पिशाचगण भाषाके सांकेतिक शब्दयोगसे देशवाडी प्राकृत भाषा पद्य (अष्टपदी अदना छन्द) में श्रीमदाचार्यपादके सदैव साथ रहनेवाले प्रियशिष्य कविवर श्रीचेतनादासजीने, श्रीमदाचार्यपादके श्रीसाकेत गमनके १ वर्ष पीछे विक्रम संवत १५१६ में आरंभ की और संवत १५१७ के श्रीमदाचार्यपाद जयन्ती उत्सव (माघ कृ. ७) को पूर्ति की ।

यह भाषा संभवतः वर्तमानमें कहीं भी बोलचाल या ग्रंथ लेखन में प्रचलित नहीं पाई जाती । प्रस्तुत इसके जानकार भी प्रायः अप्राप्य हैं । काशी अयोध्या जयपुर में तो यथाशक्ति पूर्ण प्रयत्न करने पर भी कोई नहीं प्राप्त हुए ।

इसकी हिन्दी टीका आजसे प्रायः ४० वर्ष पूर्व श्रीअयोध्याजा से प्रकाशित होनेवाले श्रीतुलसी पत्रके यशस्वी सम्पादक महात्मा श्रीबालकरामजी विनायक ने की है जो २ स्थानों से प्रकाशित हो चुकी है। एक तो श्रीअयोध्या रायगंज श्रीरामनाम मन्दिर के अध्यक्ष पं० श्रीभगवद्दासजी मिश्रके द्वारा मूलके साथ प्रकाशित हुई है जो २) रु० मे वहीं से प्राप्त होती थी, परन्तु अब इस समय अप्राप्य है । यहीं से इस हिंदी टीकाका अंग्रेजी अनुवाद भी प्रकाशित हुआ है जो ३) रु० मूल्यमें प्राप्य है । एवं दूसरी श्रीहनुमत प्रेस श्रीअयोध्याजी में छपकर प्रकाशित हुई है जो केवल टीकामात्र है ।

इस ग्रंथकी प्राचीन दो प्रतिया इन पक्तियोंके लेखक ने उक्त सन्त

श्रीविनायकजी के पास उन्हीं दिनों में देखी थी जब वे टीका लिख रहे थे। एककी लिपि ऐसी थी जो पढ़ने में नहीं आती थी और दूसरी फारसी लिपि में लिखी हुई थी। उनसे नागरी लिपि में टीकाके साथ श्री विनायकजी ने तीसरी प्रति बनाई थी और उस टीका की प्रति लिपियां श्रीअवध के अनेकानेक महात्माओं ने करली थी जिनमें से १ मेरे ज्येष्ठ गुरुभ्राता पं० श्रीरामकिशोरजी शुक्लवकीलके द्वारा मुझे भी प्राप्त हुई थी।

इसी टीकाके आधार पर श्रीमदाचार्य पाद के चरित्र की मुख्य मुख्य घटनाओं को एक सूची सी बनाकर यहां दी जा रही है। जो कि सूचीमात्र होने से पढने में सरस न होते हुए भी ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है। इस ग्रंथ में श्री आचार्यपाद के पठन पाठन, ग्रंथ प्रणयन आदि सामान्य चरित्रों की अपेक्षा चमत्कारपूर्ण चरित्रों का वर्णन अधिक हुआ है, इससे आज की पाश्चात्य विचारधारा की दासता में जकड़े हुए पाठकों को इनमें श्रद्धा न होना स्वाभाविक है, परंतु जो इतिहास के विद्वान तत्कालीन सिद्धों के इतिहास से परिचित हैं उनको इसमें कुछ भी विचित्रता नहीं जान पड़ेगी। यवन साम्राज्य की तलवार और आसुरी सिद्धियोंसे आतंकित भारतवर्षमें उस समय परिस्थिति ही ऐसी थी कि जिसको श्रीमदाचार्यपादने ही विषय विरक्त और धर्म अनुरक्त समाज को संघटित कर जनबल और अपने अलौकिक सिद्धिबलके द्वारा परास्तकर हिन्दू धर्मकी रक्षाकी थी। 'प्रस्थान-त्रयी (श्रीमद्भगवद्गीता, उपनिषद और ब्रह्मसूत्रों) पर आनन्दभाष्य और श्रीवैष्णवमताब्जभास्करादि ग्रंथों का प्रणयन कर श्रीसम्प्रदायका संवर्धन किया था और उत्तर कालमें अपने शिष्य प्रशिष्यों को जनवाणी में श्रीराम गुणगानका आदेश दिया था, जिसके परिणाम स्वरूप श्रीराम-चरित मानस जैसे विश्व विख्यात यशस्वी ग्रंथों का प्रणयन हुआ है। "प्रसंग पारिजात" नामक उक्त ग्रन्थ में १०८ अष्टपदियाँ हैं, जिनमें इस प्रकार से श्रीमदाचार्यपाद के चरित्रोंका वर्णन है।

प्रसङ्गपारिजात ग्रन्थमें :—

अष्टपदी १ से ४ में नित्य विभूति में पधारकर श्री नारदमुनि का भगवान से कलिजीवों के उद्धार के अर्थ प्रार्थना करना और प्रभु का आश्वासन देते हुए श्रीरामानन्द नाम से प्रयाग राज में अवतरित होकर मनोर्थ पूर्ण करने का वरदान देना एवं जन्म प्रसङ्ग वर्णित है, जिसमें तत्कालीन भारतवर्ष की दुर्दशा का भी समुचित वर्णन हुआ है।

५ में मुण्डन कर्णवेध मौंजीबन्धन आदि एवं अध्ययनारंभ के वर्णन में कहा गया है कि अक्षरारंभ के दिन ही आपने श्रीमद्वाल्मी-कीय रामायणको पढ़कर ही नहीं प्रत्युत सस्वर गान करके सुना दिया. जिसको सुनकर सब उपस्थित महानुभाव कहने लगे कि यह बालक मनुष्य नहीं कोई अवतार है। ८ वर्ष की आयु में यज्ञोपवीत हुआ, फिर काशी आगये, माता पिता भी साथ आये और नैयायिक पं० ओंकारे श्वरजी के यहां विराजे जोकि श्री आचार्यचरण के मामा थे।

७. में वर्णित है कि १६ वर्ष से पूर्व ही आप वेद वेदांग और शास्त्र पुराणमें पारंगत हो गये। एक अलौकिक वृद्धा द्वारा विवाह के सम्बन्ध में प्रश्न हुआ, जिसमें आपने साफ इनकार करते हुए आजीवन नैष्ठिक ब्रह्मचारी रहनेका निश्चय सुनाया, तब भी पिताजी को संतोष न होकर एक सांडिल्य गोत्रीय द्विज कुमारी से विवाह संबंध स्थिर किये जाने का आयोजन हुआ तथा कुमारी को विवाह होने पर तुरन्त विधवा हो जाने का स्वप्न हुआ।

८वीं अष्टपदी में उपरोक्त कन्या के भी आजीवन ब्रह्मचर्य पूर्वक जीवन बिताने का निश्चय करके परमार्थ दीक्षार्थ काशी आने और श्री आचार्यपाद से ही दीक्षा ग्रहण कर तत्काल ब्रह्मांड फटकर उसमें से निकली ज्योति के सूर्य किरणों में विलीन हो जाने की कथा है।

९ और १० में वर्णन है कि माता पिताओं को अपनी पूर्व जन्म की तपस्याओंकी स्मृतिसे, कुमारीकी दीक्षासे और महा प्रयाण लीला से

एवं पुत्रकी जन्म से अवतक की अलौकिक लीलाओं से निश्चय हो गया कि हमारे पुत्र साक्षात् भगवान श्रीराघवेन्द्र के अवतार हैं। वे भगवद्भाव से भावित हो पुत्र से ही दीक्षा देने की प्रार्थना करने लगे। जब पिताजीका दीक्षा प्रदानका आग्रह अधिक बढा, तब कुमार श्रीरामानन्दाचार्य अदृश्य हो गये, माताजी पुत्र वियोग से दुखित हो परलोक सिधार गई और उस समय परमाचार्यवर्य स्वामी श्रीरामानन्दाचार्यजी ने वहाँ पधारकर दर्शन दिया।

११ में पिताजी एवं प्रेमी वृन्द की स्वामी श्रीराघवानन्दाचार्यजी से कुमार के दर्शन करा देने की प्रार्थना, प्रार्थियों की प्रेम परीक्षा, श्रीपरमाचार्यवर्य द्वारा यज्ञानुष्ठान, कुमार का प्राकट्य एवं परमाचार्यवर्य श्रीराघवानन्दाचार्यजी द्वारा श्रीवैष्णवी दीक्षा तथा इच्छामरण के वरदान की कथा है।

१२ और १३ में पिताजी के द्वारा श्रीपरमाचार्यवर्य एवं सज्जनों के प्रति कृतज्ञता प्रकाश और श्रीरामानन्दाचार्य महाप्रभु का पिताजी से विदा हो गंगातट निवासका वर्णन है।

१४, १५ और १६ में कलियुगका आगमन प्रार्थना और वरदान का वर्णन है।

१७ में यक्ष्मा रोगसे पीडित पुत्रको लेकर सुधावलकी रानीका आना, रुग्ण पुत्रको गंगाजीमें फेंक देनेकी आज्ञा पाना, माताके ऐसा न कर सकने पर श्रीआचार्य वचनों पर दृढ विश्वास कर राजकुमार का स्वयं गंगामें कूद पडना, वहां दिव्यलोककी लीलाओंका आनन्द प्राप्तकर एक सप्ताहमें स्वस्थ हो श्रीगंगाजीसे निकलकर माता एवं परिकर वृन्दको आनन्दित करते हुए काशी वासियों को आश्चर्य चकित कर देना वर्णित है।

१८. में भोगके लिये स्वयं श्रीगंगाजीके पायस लाने की और श्री रैदासजीके पूर्व जन्म की कथा है।

१९, २० में शृंगेरी मठके शंकराचार्य श्रीभारती तीर्थजीका अनुज समेत आना और गीताके कर्तृत्वाभिमान एवं फलानुसन्धान रहित कर्मयोग पर सत्संग का वर्णन है।

२१, २२ में महाशिवरात्री को श्रीविश्वनाथजी का दर्शन अर्चन एवं परस्पर नमन स्तुति का वर्णन है।

२३, २४ में पुण्य क्षेत्रमें पवित्र द्विजकुलमें पिता श्रीअवधूजी और माता श्री सौरियाजी के यहाँ कार्तिकी पूर्णमासी सम्वत् १३४३ में अभिराम शर्मा के नामसे श्रीब्रह्माजीके अवतार लेकर सामगानमें परमनिपुण और ब्रह्मविद्याके धुरंधर विद्वान होकर बालपनेमें प्रसिद्ध होते हुएश्रीचरण शरणमें आ श्रीवैष्णवी दीक्षा प्राप्तकर श्री अनन्तानन्द नामकरण होनेकी तथा शशि नामकी राजकुमारी के आकर अभिलषित (प्रियतम) को प्राप्त करने की कथा है।

२५. में जफरखां नामक नौकर सहित गंगू नामक ब्राह्मणके आने, उसके गंगाजीके भँवरमें पडजाने और श्रीरामानन्दाचार्य नामके जयघोष के प्रभावसे एक अद्भुत सौंदर्यशाली श्यामसुन्दर कुमारके द्वारा बचाया जाकर श्रीचरण शरणमें प्राप्त होने की कथा है।

इसकी टिप्पणीमें लिखा है कि उक्त जफर खां संवत १४०४में गुलबर्गाका बादशाह हुआ और उसने वहां अपना नाम हसन गंगू रखा।

२६, २७, २८ में देश और विदेशों से आकाश और भूतलकी महाविभूतियोंका श्रीयतिराज राजकी संनिधिमें प्राप्त हो, उपदेश सत्संगसे क्षीण संशय होकर आनन्द विभोर हो लौटनेका वर्णन है।

२९ में श्रीपाचर मुनिको और ३० में श्रीअनन्तानन्दाचार्यजी को प्रदान किये गये श्रीआचार्य चरण के उपदेश कथित हैं।

३० में श्रीमनुशतरूपाजीके वरदानकी, ३१ में जगज्जननी श्री जानकीजी द्वारा श्रीहनुमानजी को श्रीहनुमानजी द्वारा श्रीब्रह्माजी को और श्रीब्रह्माजी द्वारा श्रीवशिष्ठजी आदि ५ मानस पुत्रों को श्रीराम-

मंत्र प्रदानकी तथा ३२ में श्रीमंत्रराजके माहात्म्यकी कथा है।

३३ में दक्षिण भारतके शैव वैष्णवों के परस्पर विरोधका एवं उत्तरमें वैष्णव विरोधी पाशुपत, लिंगायत, वीर शैव, कामरूप, कुलाचारी पंचमकारी, चामुंडी, भैरवी आदिके अत्याचारोंका वर्णन है तथा वैष्णव शिरोमणि समझकर श्रीआचार्य चरण को अपने विद्याबल योगवल तपोवल जनवल एवं शस्त्रवल आदिसे परास्त करनेकी इच्छासे काशी आकर उपद्रव मचानेका और श्रीयतिराज राज पर किसी भी क्रिया या छलकपटका कुछ भी प्रभाव न होता देख विलज्जित हो लौटने तथा मार्ग में ही श्रीभैरवनाथ द्वारा अपने कुकृत्यों के फल स्वरूप प्राणदंड प्राप्त करने का वर्णन है।

३४ में पडुआ ग्राम निवासी पशी मतके अनतोली नामक एक प्रेत सन्तका श्रीचरणों में प्राप्त हो अधमयोनि से उद्धार का वर्णन है।

३५, ३६ में योगीराज कृपाशंकरजीका धवलागिरिसे जमात सहित आकाश मार्गसे आना, श्रीअनन्तानन्दाचार्यजी द्वारा अधर (आकाश) में ही उनका स्वागत सत्कार एवं श्रीमदाचार्य चरणके दर्शन उपदेश से कृतार्थ हो तत्कालही प्रणवमें विलीन हो जाना वर्णित है।

३७ में श्रीआचार्यपादका श्रीअनंतानन्दाचार्यजीको प्रदत्त निम्न उपदेश वर्णित है।

महर्षि अगस्त्यजी के आश्रममें संप्राप्त भगवान सदा शिवसे महर्षि सांडिल्यजीने प्रश्न किया कि "मन और वाणीसे परे कौन हैं? समस्त ईश्वरोंका ईश्वर कौन है? निर्गुण और सगुण दोनों से परे कौन है? कार्य और कारणसे परे कौन है? मुक्तिका निवास किस मंत्रमें है?

भगवान शंकर ने उत्तर दिया कि "जिसके नाम रूप लीला धाम चिन्मय हैं, जिसके प्रकाश को ही सनातन ब्रह्म कहा जाता है और जिसकी ख्याति नाम रूपमें विद्यमान है वही मन वाणीसे अगोचर श्री साकेताधिपति भगवान श्रीराम हैं। उन्हीं के दक्षिणांश क्षीराब्धि पति नारायण, हृदयांश परनारायण, वामांश रमावैकुंठाधिपति नारायण

एवं चरणांश नर नारायण हैं। जिनका महान महिमाशाली नाम रकार मकार युक्त है। जिनके अनन्त मंत्रोंमें तीन मंत्र, अनन्त यंत्रोंमें तीन यंत्र, प्रधान हैं एवं चतुर्वर्ग के दानी हैं। इसके अधिकारी वेही हैं जिनने कर्मका स्वरूपतः त्याग न करते हुए हृदयसे कर्मफल एवं कर्तृत्वाभिमानको त्याग दिया है और सत रज तम इन तीनों गुणोंसे अलग हो गये हैं।

३८ में काशीवासी स्वामी विद्यारण्यजीका ईश्वर बुद्धि उत्पादक उपाय के प्रश्न युक्त पत्र लेकर उनके शिष्यका आना एवं उत्तर पत्र प्राप्तकर कृत कृत्य हो लौटना वर्णित है।

३९ और ४० में चंद्र ग्रहण के अवसर पर श्री क्षीरेश्वर शास्त्री जी को अगुआ बनाकर महानुभाव सम्प्रदायका काशी आ श्रीमदाचार्य पाद का सत्संग प्राप्त कर कृतार्थ होना वर्णित है।

४१ और ४२ में प्रसिद्ध कर्म कांडी पं० विश्वनाथ जी का श्री राम नाम तत्व ज्ञान विशयक प्रश्न, श्रीआचार्यपाद का समाधान और उनका शरण ग्रहण कर कृत कृत्य होना वर्णित है।

४३ में श्रीसेनभक्तजी के शरण में आनेकी और ४४ में ऊषी नामक किन्नरी का उद्धार होने की कथा है।

४५ में श्री कबीरजी के जेष्ठ पूर्णिमा को प्रकट होनेकी और एक योगीराज को निर्वाण प्रदान की कथा है।

४६ मेंश्रीकबीरजी के नीरू और नीमा नामक जुलाहा दंपत्ति द्वारा पालन पोषणकी, नाम करणके समय मोमिनको आश्चर्य चकित करने की और कर्मा नामक ब्राह्मणी का स्तन पान करने की कथा है।

४७ में एक रमतेराम सूरदास को अन्तर बाहरकी दृष्टि प्रदान होने की ४८ और ४९ में काहडा ग्राम के ज्ञानी और तत्व वेत्ता पं० भीटाजी को उपदेश की तथा ५० में भगवान श्रीशिवजी के श्रीसुखानन्दाचार्य के रूप में अवतरित होकर शरणमें आने की कथाएँ हैं।

५१ में अयोध्या नरेश हरिसिंह के भ्राता गज सिंह का आकर यवनों के अत्याचार निवेदन करना और उसको शांत करनेकी प्रार्थना है। गजसिंह कहते हैं-प्रभो ! मेरे भाई वैशाख शु० १० शनिवार संवत १३८१ को सिंहासन छोड़ तराईमें चले गये, हम सब अयोध्या वासी यवनस्पर्श से धर्म भ्रष्ट होगये, जिसके प्रायश्चित्त के लिये हमने यहां भी पंडितों से बहुत प्रार्थना की, परंतु ठुकराये ही जारहे हैं। आप पतित पावन हैं, हम पर करुणा कर, हमारा उद्धार करने की कृपा करिये। श्रीमदाचार्यपाद यतिराजाराजने उसको सांत्वना देते हुए कहा—आज के ठीक तीसवें दिन तुम सब श्री अयोध्याजी में सरयुतट पर एकत्रित रहना, हम आवेंगे और एक साथ सबका उद्धार करेंगे। ऐसाही हुआ और समस्त धर्म पतितों को श्री आचार्य चरण ने श्री सरयू स्नान करा जय राम का मंत्र प्रदान कर उनका उद्धार किया।

५२ में श्रीसुरसुरानन्दाचार्यजी का शरण में आना ५३, ५४ और ५५ में वेदान्ताचार्यजी नामक ज्ञानीदाक्षिणात्यको उपदेश एवं दीक्षा प्रदान करना वर्णित है!

५६ में एक जैनी और एक अद्वैतवादी के (जिनमें दस महिने से विवाद चलता था उनके) द्वारा तत्व निर्णय के उपदेश की प्रार्थना और जैन एवं अद्वैत के समन्वय पूर्वक उनका समाधान कथित है।

५७ में बल्लभीपुरी के धनमदमत्त एवं अपुत्रतासे दुखी लिउटा नामक वणिकको मदहरण पूर्वक शरण प्रदान एवं पुत्रदान की कथा है।

५८ में श्रीनरहर्यानन्दाचार्यजीके शरणमें आनेकी ५९,६० में लुम्बवाहन एवं चन्द्रप्रभ नामक गंधर्वों के शाप मुक्त होने एवं दीक्षा प्राप्तकर कृत कृतकृत्य होने की कथा है।

६१ में बाँसवाड़ा वाले काशीवासी न्याय के प्रकांड विद्वान श्री

अग्रेशदत्तजी के भगवान शंकर के उपदेश से आकर श्रीआचार्यचरण की शरण ग्रहण कर श्रीयोगानन्दाचार्य नाम प्राप्त करने की कथा है।

६२ में हिमालय गह्वर के लोहिएनाथजी योगिराजका कृत कृत्य होना एवं ६३ में एक अजामुखी कुमारीका शाप मुक्त होना वर्णित है।

६४ में एक सन्त के मानस रोगोंका निवारण ६५ में विन्नी नामक मांत्रिका द्विज कुमारी के अत्याचार से मृत युवक को प्राणदान एवं विन्नी का उद्धार होने की कथा है।

६६ में दक्षिणी पं० चिपलूणकरजी एवं ६७ में सिन्धी विनय मुनिजी के सत्संग से कृत कृत्य होने की कथा है।

६८ में गांगरोनगढ नरेश श्रीपीपाजी के श्रीआचार्यचरण शरण में आने की एवं ६९ में दो प्रेतों की मुक्ति तथा वेश्य कुमार की प्रेतबाधा मुक्ति की कथा है।

७० में असराक देश के परमार्थ प्रिय नामवर नामक अमीर के कृत कृत्य होकर काशी वास करने की तथा ७१ में एक श्रीनिम्बार्क सांप्रदायिक भजनानन्दी महात्माकी श्रीप्रिया प्रियतम के प्रत्यक्ष दर्शन कराये जाने की कथा है।

७२ में श्रीकबीरजीको लेकर होने वाले काशी के कोलाहल और उसकी शान्तिका एवं ७३ में धवरहा (काशी) के मातृपितृ भक्त दूधनाथ नामक व्यक्ति को तथा एक पतिप्राणा सती ब्राह्मणी के पतिको प्राण-दान की कथा है।

७४ में ख्वाजा निजामुद्दीन औलिया के शिष्य कविवर खुसरु का पत्र लेकर आना, पीछे से दोना पक्षी के रूप में औलियाजीका आना तथा कृत कृत्य होकर जाना वर्णित है।

७५, ७६ और ७७ में दिल्ली में तैमूर के अत्याचारों और लखनऊ के उपद्रवों से त्रस्त महानुभावों के कष्ट निवारण एवं दुष्टों

को उचित दंड प्रदान होने की प्रार्थना एवं श्री यतिराज राजके प्रभाव से समस्त भारत की मस्जिदों में नमाज की अजान के समय मुल्लाओं के कंठ रुक जाने और अजान न देपाने की तथा इसके फल स्वरूप दिल्ली से अधिकारी वर्ग सहित मुख्य मुल्ला मौलवियों के श्रीकबीरजी की शरण में आने की एवं श्री कबीरजी को लेकर श्रीमदाचार्य चरण की शरण में प्राप्त होने की कथा है तथा उन लोगों के द्वारा बादसाह के निम्न १२ शर्तें स्वीकृत करके अजान के लिये गले खुलवाने का वर्णन है। शर्तें इस प्रकार हैं—

१. जजिया कर हटा दिया जाय।
२. मंदिर बनवाने की रोक हटा ली जाय।
३. बलपूर्वक धर्म-परिवर्त्तन न हो।
४. मस्जिद के सामने से जाने वाले वर (दुलहा) को पालकी से न उतारा जाय।
५. गाय की कुरबानी बन्द हो।
६. धर्माम्नाय प्रचार में मुल्ला लोग विघ्न न करें।
७. धर्म-ग्रन्थ न जलाये जाँय।
८. मुहर्रम में हिन्दू त्योहार मनाने पर रोक न हो।
९. स्त्रीयों के सतीत्व की रक्षा हो।
१०. कुम्भ आदि पर्वों पर कर न लगें।
११. कथादि में शंख ध्वनि पर रोक न हो।
१२. यदि कोई हिन्दू श्रद्धा करके किसी फकीर के पास जाय तो उसको हिन्दू धर्म में दृढ़ किया जाय, मुसलमान न बनाया जाय।

७८ में दक्षिण देश के तिरुभरि ग्राम में द्विजकुल में श्रीलक्ष्मीजी के श्रीपद्मावती नाम से अवतार लेकर श्रीआचार्यपाद की शरण में आने की कथा है।

७९, ८०, ८१ में दाक्षिणात्य भाऊजी शास्त्री के अनेकानेक दार्शनिकों सहित आने एवं श्रीआचार्यपाद के दर्शन उपदेश तथा गुफा में सूत्रकार भगवान वेदव्यासाचार्य एवं अनेकानेक प्राचीन भाष्यकारों के दर्शन से कृतकृत्य होकर लौटने की कथा है।

८२ में दक्षिण से श्रीविट्ठल पंतजी का शरण में आकर श्री भावानन्दाचार्य नाम प्राप्त करने की पीछे उनकी पत्नी के प्रणाम करने पर पुत्रवती होने का वरदान प्राप्त करने की तथा विट्ठलपन्तजीको दिव्य सन्ततिका प्रबोध करा कर वापस घर भेज दिये जाने की कथा है।

८३ में दुष्काल से पीडित लोगों का आसाम से आकर श्रीमदाचार्य चरण कृपा से सफल मनोर्थ होना कथित है।

८४ में श्रीरैदासजी एवं श्रीकबीरजी को पंथ प्रवर्तितकर समाज से बहिस्कृत लोगों को भी सुरतिशब्द (श्रीरामनाम) में प्रवृत्तकर प्रभु संमुख करने की आज्ञाका वर्णन है।

८५ में यात्रा के प्रस्थान की, गांगरौनगढ पधारकर महाराजा पीपाजीको कृतार्थ करने की तथा सती साध्वीरानी श्रीसीता सहचरीजी सहित उनको वैराग्य प्रदान कर यात्रामें साथ लेने की कथा है।

८६ में श्रीजगदीशपुरी में स्वयं भगवान श्रीजगन्नाथजी द्वारा स्वागत सत्कार प्राप्तकरने, श्रीकबीरजी के द्वारा चिमटा गाडकर समुद्र के आक्रमणको रोकने एवं श्रीयोगानन्दाचार्यजीके द्वारा चन्दन तालाब में जल श्रोतके आविर्भाव होने की कथा है।

८७ में श्रीरामेश्वर के शैव वैष्णव विरोध और श्रीआचार्य पाद द्वारा उसकी शांति की एवं स्थाई शांति व्यवस्था के लिये श्रीयोगानन्दाचार्यजी को वहां छोड़े जानेकी कथा है।

८८ में विजयनगर के महाराजा बुक्कारायका हृद्रोगसे मुक्त होना एवं सेवा सत्कार किया जाना कथित है।

८९,९०,९१ में जमातका कांचीपुरी पहुँचा, वहां के ब्राह्मण

समाजका जात्याभिमान मद से अंधे होकर चर्मकार और जुलाहा कह कर श्रीरैदासजी और श्रीकबीरजी का एवं जमातका तिरस्कार करना, ब्राह्मणोंको अपने अपने घर पर चौके में श्रीरैदासजी और कबीरजी के दर्शन होना और श्रीसीता सहचरीजी के द्वारा वस्त्र व्यवसाय के नष्ट होने का शाप एवं शापानुग्रह का वर्णन है।

९२ में श्रीविद्यारण्यजीको उपदेश एवं पंजाबमें श्रीविदेहराज, बंगाल में श्रीकृष्ण भगवान तथा महर्षि श्रीवाल्मीकीजी और श्रीहनुमानजी के अवतरित होने की भविष्य वाणियां वर्णित है।

९३,९४ में जमातका श्रीरंगम् पद्मनाभ जनार्दन एवं वेंकट गिरि आदिकी यात्रा करते हुए श्रीद्वारिकाजी पहुंचना, वहां श्रीपीपाजी का श्रीरणछोड़ भगवान के प्रत्यक्ष दर्शनार्थ समुद्र प्रवेश कर जाना, उनको दिव्य द्वारिका और श्रीभगवानके दर्शन एवं शंख चक्र चिन्ह प्रदान होना ८ दिन पीछे समुद्र से बाहर आकर सबको आश्चर्य चकित करना तथा जमात का द्वारिका से मथुरा वृन्दावन होते हुए माया-पुरी (हरिद्वार) पहुँचना और श्रीनरनारायणका स्वयं हरिद्वार आकर दर्शन देना वर्णित है।

९५ में जमात का हरिद्वार से लौटकर पुनः वृन्दावन आना, वहां श्रीआचार्यपाद द्वारा व्रजवासी समस्त कुमार कुमारियों का भंडारा किया जाना और उसमें श्रीश्यामसुन्दर का पधार कर श्रीआचार्यपाद से मांगकर तस्मई ग्रहण करने का वर्णन है।

९६ में श्रीवृन्दावन से श्रीचित्रकूट पधारना, श्रीचित्रकूट में भगवान शिवशंकर द्वारा स्वागत सत्कार, चातुरमास भर चित्रकूट निवास, श्री चित्रकूट की अलौकिक लीलाओंका अवलोकन, वहाँ से चलकर १ दिन प्रयाग में ठहरते हुए श्रीकाशी पधारना एवं काशी वासियों के हर्षोल्लास तथा उत्सवादि का वर्णन है।

९७ में यात्रा के पश्चात विशाल भंडारा, ९८ में दिग्विजयी विद्वानों

का विद्यामद निवारण एवं ९९ में विद्वज्जनों को भोजन वस्त्र दान दक्षिणा एवं उपदेश प्रदान होने का वर्णन है।

१०० में पर्व विशेष पर एकत्रित भारत के सभी धर्म संप्रदायों एवं मतपंथों के सन्तों का एकही पंक्ति में विशाल भंडारा, प्रसाद महिमा तथा श्री कबीरजी आदिकों के सहित सभी साधु सन्त औलिया फकीर आदि को उपदेश एवं सत्संग सुख प्रदान होने की कथा है।

१०१ में शान्ति की कामना करने वालों को अपने हृदय मन्दिर को पवित्र बनाने का आदेश, छिन्नूभक्त की श्रद्धा समभाव एवं सत्कार का उपदेश तथा एक स्त्री पुरुषके चिन्ह रहित बालक को पुरुषत्व प्रदान होने की कथा है।

१०२ में पूजा काल के अतिरिक्त सदैव श्रीआचार्यपाद के दर्शन उपदेश, सत्संग का द्वार खुलजाने का वर्णन है।

१०३ में पश्चिम से रिजिहा स्वामीके दो शिष्यों (चाकणूर नाम के सर्पराज और हाडा नाम के व्याघ्र राज) का आना, काशी में कोलाहल होना, आश्रम में आने पर उनका देव रूप होकर श्रीआचार्य-पाद का उपदेश श्रवणकरना एवं अपने गुरु महाराज के लिये सन्देश ले कृत कृत्यहो लौट जाना कथित है।

१०४ में भारुकी नामक महा पंडित का सर्पदंश से मृत्यु को प्राप्त होकर शव का आश्रम पर लाया जाना; भारुकी को जीवनदान मिलने पर सर्प का आकर उलहना देना एवं श्री आचार्यपाद के उपदेश से कृत कृत्य हो पंडित और सर्प दोनों का श्रीचरण शरण ग्रहण कर कृतार्थ होना वर्णित है।

१०५ में हंस और कपोत के रूप में आकर श्रीब्रह्माजी और धर्मराज का महाप्रस्थान के अर्थ प्रार्थी होना। श्रीचरण द्वारा 'एवमस्तु, कहना, उनकी वाणी और चेष्टा को समझने वाले सिद्ध सन्तों का दुःखी होना, इन दोनों देवताओं की बात को टाल देने की श्री कबीरजी

की प्रार्थना और श्री आचार्यपाद का उपदेश तथा लोक कल्याणार्थ प्रवृत्त समस्त प्रवृत्तियों को चालू रखने एवं बढाते रहने का शिष्यों को आदेश वर्णित है।

१०६ में चैत्र शुक्ल प्रतिपदा संवत १९१५ शनिवार को अग्नि कुण्ड की प्रतिष्ठा, महान कर्मकांडी पंडितों द्वारा तारक महामन्त्र का अनुष्ठान, दीन हीन विकलांग असहाय नर नारियों का सेवा सत्कार, सन्त जमातों की सेवा, प्रेमी वृन्दों का जमाव, उपदेशामृत वर्षा के द्वारा प्रेमी जन रूपी चातकों को कृत कृत्य करना आदि की, श्रीआचार्यपाद का अनेक रूप धारण कर सभी स्थानों में एक ही समय में समुपस्थित हो दर्शन उपदेश से कृतार्थ करने की तथा अष्टमी रविवार को अनुष्ठान की समाप्ति के समय पादजों को अलग करके समाज के पैरों पर कुठाराघात न करने के उपदेश होने की, किसी को भी साथ चलने का आग्रह न कर धर्माचरण में प्रवृत्त रहने की एवं अन्तिम क्षमापन की कथायें हैं।

१०७ में कथित है कि रामनवमी सोमवार को प्रातः काल ही आश्रम पर जनतायी अपार भीड में बड़े जोर से शंख ध्वनि सुनाई पड़कर सदा के लिये विलीन हो गई। आश्रम पर की भीड़ बढ़ने लगी, मध्यान्ह समय में अन्तरिक्ष (आकाश) से फिर वही तुमुल शंख ध्वनि सुनाई पड़ी, जिसने सभी के हृदय संताप को हरण कर लिया। शिष्य गण श्री आचार्य चरण की चरण पादुका लेकर श्री गंगाजी आये, वहां गंगाजी का स्पर्श कर पादुकाओं ने पाषाण रूप धारण कर लिया जो आश्रय में प्रतिष्ठित हुई। इस समय श्री कबीरजी ६० वर्ष के थे।

१०८ में श्री अनन्तानन्दाचार्यजी द्वारा श्री आचार्य चरण के आठ मुख्य शिष्यों को दिग्गजों के समान आठो दिशाओं में स्थापित करना, वार्षिक भंडारे पर समस्त शिष्यों सन्तों और प्रेमी वृन्दों के

समारोह में कविवर श्री चेतनदासजी को श्री आचार्यपाद के अलौकिक चरित्रों का संकलन कर ग्रंथ लेखन की आज्ञा होना। तदनुसार देश बाडी प्राकृत में पिशाच (गण) भाषा के सांकेतिक शब्द योग द्वारा अदना छन्द की १०८ अष्टपदी में सं० १५१७ के श्री आचार्यपाद के जन्मदिन (माघ कृ० ७ शुक्रवार) को इस प्रसंग पारिजात नामक ग्रंथ के पूर्ण होने की कथा है।

इन प्राचीन ग्रंथों के अतिरिक्त श्रीमदाचार्यचरण के चारु चरित्र विषयक आधुनिक काल में निर्मित भी संस्कृत हिन्दी एवं भारत की अन्यान्य प्रान्तीय भाषाओं में अनेकानेक सुललित काव्य ग्रंथ एवं लघु विशाल गद्य पद्य निबन्ध प्रस्तुत हैं, जिनमें से सर्व प्रथम गणनीय हैं पंडितराज स्वामी श्री भगवदाचार्यजी द्वारा विरचित "श्रीरामानन्द-दिग्विजय" नामक संस्कृत काव्य ग्रंथ एवं स्वामी श्रीजयरामदेवजी महाकवि विरचित "श्रीरामानन्दायन" नामक हिन्दी काव्य ग्रन्थ। श्री रामानन्द दिग्विजय का कथानक एवं वर्णन शैली सर्वथा स्वतंत्र है जिसमें ऐतिहासिक विवेचन सहित हिन्दी भूमिका भी प्रथम संस्करण के साथ छपी है, वह द्रष्टव्य है तथा दूसरे हिंदीकाव्यश्रीरामानन्दायन के कथा भाग में अधिकांश रूप से उपरोक्त प्रसंग पारिजात का आधार लिया गया है। इनके अतिरिक्त इस छै सौ वर्ष के दीर्घकाल में आपके चरित्र विषयक लिखे गये ग्रंथ समूह में से अधिकांश तो उस विदेशी और विधर्मी शासन के विप्लव काल में विलुप्त हो गये और जो अवशिष्ट हैं उनकी भी गणना करने पर एक महान संख्या होती है जिन सबके नामोल्लेख भी यहां स्थानाभाव से असंभव हैं। उनमें से जो पत्र पत्रिकाओं में या पुस्तकरूप में प्रकाशित हो चुके हैं, उनको प्रेमी पाठक देख सकते हैं। इनमें पंडितराज स्वामी श्री भगवदाचार्य जी, पंडित सम्राट स्वामी श्री वैष्णवाचार्यजी, श्रीरामानन्दाश्रम जनकपुर धामके अध्यक्ष स्वामी श्री अवध किशोरदासजी श्री वैष्णव आदि महानुभावों

के निबन्ध प्रचुर परिमाण में और परमोत्तम हैं। जो पाठकों को प्राप्त हो सकते हैं।

अब हम यहां प्रस्थानत्रयके आनन्द भाष्यकार साक्षात् श्रीरामावतार अनादि वैदिक श्री संप्रदायाचार्य अनन्त श्री संवलित जगदुद्धारक जगद्गुरु श्री रामानन्दाचार्य महाप्रभुजी के समय निर्णयके विषय में कुछ ऐतिहासिक विवेचन देकर इस कथा को समाप्त कर रहे हैं।

अगस्त्यसंहिता, वैश्वानरसंहिता, भविष्य पुराण और प्रसंग पारिजात नामक ऋषि प्रणीत आर्ष एवं पूर्वाचार्य प्रणीत प्राचीन ग्रंथोंमें श्री आचार्यपाद के अवतार काल के तिथि नक्षत्र मास पक्ष योग लग्न आदि का तो वर्णन प्राप्त है परन्तु संवत का वर्णन किसी भी ग्रन्थ में नहीं है। सम्वत के वर्णन का आधार श्रीअगस्त्य संहिता में एक श्लोकार्ध प्राप्त होता है जो श्लोक संख्या में परिगणित भी नहीं है और अलगही सा लिखा एवं छपा हुआ है "खं नभो लोक वेद प्रतिमे वर्षे गते कलौ" जिसका अर्थ होता है कि "कलियुग के ४३०० वर्ष बीतने पर आपका अवतार होगा। इसी के पाठान्तर में "खंनभो-वेद वेद" पाठ भी प्राप्त है जिसका अर्थ होता है कलियुग के ४४०० वर्ष बीतने पर आप अवतरित होंगे। कलियुग के ४३०० वर्ष होते हैं विक्रम संवत १२५६ में और ४४०० वर्ष होते हैं १३५६ में।

यह भी ध्यान देने की बात है कि अगस्त्य संहिता में आपके प्रधान द्वादश शिष्यों के जन्मों के भी मास पक्ष नक्षत्र आदि उल्लिखित हैं परंतु संवत का उल्लेख नहीं है, इससे इस श्लोकार्ध पर प्रक्षिप्त होने की शंका होना भी स्वाभाविक है। भगवान के और पूर्वाचार्यों के अवतारों में तिथि नक्षत्र योग लग्नादि के साथ सम्वत का उल्लेख बहुत ही कम ग्रंथों में देखने में आता है। प्रपन्नामृत जैसे श्रीरामानुज संप्रदाय के ग्रन्थ में भी आचार्यपाद श्री रामानुजाचार्यजी के जन्म संवत का उल्लेख नहीं है। अतः प्राचीन काल में संवत के उल्लेख की प्रथा कम ही देख पड़ती है।

विद्वान आधुनिक काव्यादि के निर्माताओं के सामने उक्त श्लोकार्ध का "खंनभो वेद वेद" पाठ ही आया होगा इसी से उन्होंने विक्रम संवत १३५६ में अवतार होना उल्लिखित किया है परंतु आपके समय की कुछ तथ्यपूर्ण घटनायें यह बताती हैं कि आपका अवतार १३५६ में न होकर इससे १०० या ५० वर्ष पूर्व ही होना संभव है।

भक्तमाल, प्रसंगपारिजात, मराठी ज्ञानेश्वर चरित्र और अनेकानेक निबन्धों से सिद्ध है कि मराठी की प्रसिद्ध ज्ञानेश्वरी श्रीमद्भगवद्गीता टीका के रचयिता स्वामी श्रीज्ञानेश्वर या ज्ञानदेवजी के पिता श्रीविट्ठलपन्तजी, श्रीज्ञानेश्वरजी आदि अपनी चारों ही सन्तानों के जन्म से बहुत पहिले ही श्रीरामानन्दाचार्य महाप्रभु के शिष्य हो चुके थे एवं श्रीज्ञानेश्वरजी का जन्म १३३२ विक्रम में हुआ है यह भी प्रायः निर्विवाद है।

"प्रसंगपारिजात" में दक्षिण भारत में वेद भाष्यकार स्वामी श्रीविद्यारण्यजी से समागम एवं राजा बुक्काराय द्वारा सम्मान सत्कार आदि का वर्णन है। यह सब भी १३५६ में जन्म होने से संगत नहीं होते। अतः उक्त श्लोकार्ध का "वेद वेद" नहीं प्रत्युत "लोकवेद" पाठ ही ग्राह्य है। विद्वद्वर्य श्रीरामावतार शर्माजी ने अपने "ईश्वर वाद" नामक ग्रंथ में श्रीआचार्यपाद का जन्म संवत १२५७ लिखा है। यह आपको उक्त श्लोक के इस शुद्ध पाठ से प्राप्त हुआ अथवा कहीं अन्यत्र से यह तो हम नहीं जानते परंतु यह संवत ठीक मिल गया है यह अवश्य जान पड़ता है।

रह जाती है पाश्चात्य अन्वेषक श्रीफर्कुहर साहब, डा० ग्रियर्सन श्रीजेम्स हेस्टिंगस् आदि और उनके पदचिह्नों पर चलनेवाले भारतीय विद्वानों के लेखों के मतभेदों की बात, सो इन सब के मूल में यह भ्रांत धारणा है कि किसी भी मनुष्य का (और सो भी प्रायः भारत जैसे उष्ण जलवायु वाले देश में) १०० वर्ष से अधिक तो क्या ८० वर्ष से अधिक जीवन भी असम्भव है। परंतु इसके विपरीत सजीव

तथ्यों की उपस्थिति में इन भ्रान्त धारणाओं का अब क्या मूल्य रह गया है यह पाठक विचारेंगे।

१०० वर्ष के लगभग आयु के जीवित महानुभावों का अस्तित्व आज भी भारत में उपस्थित है। इसमें किसी को शंका हो तो अयोध्या आकर के देखलें। १२५ वर्ष के महात्माओं ने कुछ ही वर्ष पूर्व शरीर छोड़े हैं जिनमें सुविख्यात नवाही (मिथिला) के परमहंस श्रीरामशरणजी कामदकुञ्ज श्री अयोध्याजी के श्री महन्तजी और कुदरहा के श्रीयोगीराजजी के दर्शन करने वाले अयोध्याजी में सैकड़ों सन्त उपस्थित हैं। जयपुरमें प्रहलाददासजी नामक एक औघड़ संप्रदाय के योगि साधु थे, उनको शरीर छोड़े अभी २० वर्ष भी नहीं हुए है, उनको इन पंक्तियों के लेखक ने ४० वर्ष तक वैसेके वैसे (५० या ६० वर्ष की उमर के जैसे) देखा है और अपने पितामह जैसे महानुभावों से सुना है कि हमने हमारे पिता पितामह से भी यही सुना है कि हमने इनको बालपन से ऐसा ही देखा है। अतः वे लगभग २०० वर्ष अवश्यही जीये होंगे। काशी के श्री द्वारकाधीश मन्दिर के श्रद्धास्पद आचार्य योगिराज श्रीघोराहा बाबा (जिनको भारत राष्ट्र के भूतपूर्व राष्ट्रपति स्वर्गीय श्री राजेन्द्रबाबू और राजर्षि श्री पुरुषोत्तमदासजी टण्डन अपने सद्गुरु मानते थे) भी १०० वर्ष से अधिक के परम प्रसिद्ध विराजमान हैं। समाचार पत्रों में भी देश विदेश के कभी कभी दीर्घजीवी भाग्यवानों के समाचार देखने में आही जाते हैं, फिर न जाने क्यों इन आधुनिक इतिहास लेखकोंको श्रीमदाचार्य के दीर्घ जीवन में असम्भाव्यता लगती है ?

भक्तमालमें १०० वर्ष से अधिक रहने वाले अनेक महात्माओं के चरित्र आये हैं परन्तु श्रीनाभास्वामी ने "बहुत काल वपु धारि कै" केवल श्रीयतिराजराज के लियेही कहा है। श्रीविट्ठल पंतजी और श्रीकबीरजी के श्रीमदाचार्यपाद के शिष्य होने के उल्लेख मराठी हिन्दी आदि अनेक भाषाओं के ग्रंथों में उल्लिखित हैं और जगत प्रसिद्ध हैं।

विट्ठल पंतजी के दीक्षा से पीछे की सन्तानों का जन्म १२३० विक्रम है और श्री कबीरजी का जन्म १४४५ विक्रम का अतः श्री मदाचार्यपाद का जन्म विक्रम १३०० से पूर्व और महाप्रस्थान १५०० के पश्चात् होने से ही इन सबकी संगति होती है।

श्रीमदाचार्य के महाप्रस्थान काल का संवत १५१५ का स्पष्ट उल्लेख हैं तब क्यों दीर्घ जीवन को असम्भाव्य मानने की निराधार तर्क के आधार पर इन सब ऐतिहासिक सत्योंसे मुंह मोड़ा जाता है ? इसमें विदेशी शासकों की सिवा इस चालबाजी के कि "भारतीय जनता की अपने पूर्वजों के ऊपर श्रद्धा न रहे, वे सदा अपनी और अपने पूर्वजों की हीनता की भावनाओं से ही ओत प्रोत रहें, के अतिरिक्त अन्य कोई ऐतिहासिक तथ्य नहीं हो सकता। हम भारतीयों के दुर्भाग्य का विषय है कि अब दासता की बेडियां कटजाने पर भी हमारी मानसिक दासता नहीं जा रही है। हम अब भी अंग्रेजों से नहीं तो उनकी भ्रान्त विचार धाराओं से, उनकी भाषा और वेष भूषा से चिपके हुए हैं।

अब हम श्री यतिराजराज आचार्यपाद के समकालीन एक विधर्मी सन्त ने आपके विषय में जो लिखा है सो यहां दे रहे हैं।

गोरखपुरीय प्रसिद्ध पत्र कल्याण के सं० १९९४ के सन्त अंक में श्री अयोध्याजी के प्रसिद्ध साहित्यकार संत श्री बिन्दु ब्रह्मचारीजी का "श्री रामानन्दाचार्य" शीर्षक से एक लेख छपा है उसमें उसका अनुवाद इस प्रकार छपा है—

काशी वासी मौलाना रसीदुद्दीन साहब अपने "तजकीरउलफुकरा" नामक ग्रंथमें लिखते हैं कि "इस (काशी) नगरी में पंचगंगा घाटपर एक प्रसिद्ध महात्मा रहते हैं। तेजः पुंज और पूर्ण योगेश्वर हैं। वैष्णवों के सर्वमान्य आचार्य हैं। सदाचार एवं ब्रह्म निष्ठा के स्वरूप ही हैं। परमात्मरहस्य तत्वके पूर्ण ज्ञाता हैं। सच्चे भगवत्प्रेमियों

एवं ब्रह्म विदों के समाज में उत्कृष्ट प्रभाव रखते हैं। अपितु धर्माधिकार में वे हिन्दुओं के धर्मकर्म के सम्राट हैं। केवल ब्रह्म वेलामें अपनी पुनीत गुफासे गंगास्नानके लिये बाहर निकलते हैं। उन पवित्र आत्माको "स्वामी रामानन्द" कहते हैं। उनके शिष्यों की संख्या ५०० से अधिक है उस शिष्य समूह में १२ गुरु के विशेष कृपापात्र हैं। कबीर पीपा और रैदास आदि। भागवतों के इस समुदाय का नाम विरागी है। जो लोक परलोक की इच्छाओं का त्याग करता है, उसे ब्राह्मणों की भाषा में विरागी कहते है। कहते हैं कि इन संप्रदायकी प्रवर्तिका आपि जगज्जननी (श्री) सीताजी हैं। उन्होंने प्रथमतः अपने सविशेष सेवक पार्षद रूप (श्री) हनुमानजी को उपदेश किया और उनऋषि आचार्य के द्वारा संसार में उस रहस्य (मंत्र) का प्रकाश हुआ। इस कारण इस संप्रदायका नाम 'श्री संप्रदाय, है। और उसके मुख्य मंत्र को रामतारक कहते हैं। और यह कि उस पवित्र मंत्र की गुरु शिष्यके कानमें दीक्षादेते हैं और उर्ध्वपुंड्र तिलक लाम और मीपके आकारका ललाट तथा अन्य ११ स्थलोंपर लगाते हैं। तुलसीका हीरा जनेउ में गूंथकर शिष्यके गले में पहनाते हैं। उनकी जिह्वा जपमें और मन सच्चे प्रियतम के दर्शनानुसन्धान में रहा करता है। पूर्णतया भजनमेंही रहना इस सम्प्रदायकी रीति है। अधिकांश सन्त आत्मारामी अथवा परमहंसी जीवन निर्वाह करते हैं।"

प्रसंग परिजात ग्रंथ के मूल पाठ से विज्ञ पाठकों को परिचित कराने के लिये यहां हम उसमें से प्रथम और अन्तिम दो अष्ट पदियां उद्धृत कर रहे हैं। कोई महानुभाव इनकी व्याख्या करके सुना देने की क्षमता रखते हों। तो कृपाकर सूचित करें, इन पंक्तियों के लेखक को इससे महान प्रसन्नता होगी। ऐसे विद्वान का परिचय प्राप्त कराने वाले महानुभाव को पुण्य और यश तो स्वतः ही प्राप्त होगा एवं यदि वे गृहण करेंगे तो यथा शक्ति आर्थिक सेवा भी की जावेगी।

प्रसंग पारिजात ग्रंथ की आरंभिक अष्टपदी यह है—

हिम हिम हमन्ता हौलडी, मद माघ माधवा मौलडी।
तल तडित ताडण तौलडी, घर घर घुरन्ता घौलडी॥
वत्सया करींदी सरसई, गङ्गा गलौंजा गडरई।
तिङ्गति तलछा मदमई, आसार साणे वैथई॥
सारङ्ग धर ठिप्पण ठिया, वाजुरट विभु वैगुण त्रिया।
माधूम मत्सर मौलिया, चिर छैभ जारण जाजिया॥
मवतूल सण्डित वाहुणी, आमुल मलेच्छ मथा गुणी।
अणु फागुणी तणु पारुणी, तुरकान दल दल दारुणी॥
हाहूम दोसिक तिप्पिया, भरदार वौडा किप्पिया।
लोलिम नाकरा लिप्पिया, सिविका सणारा छिप्पिया॥
हृषि फाम फाता फैवडा, सरसूत तोनिस तैवडा।
घुण वास डीहम घैवडा, हिंसक अहिंसक सैवडा॥
पालूत पैरामू जणस, सावूत तैरम तोहमस।
आयूप कैवम दौंद दस, संकर जु पोरस वरस जस॥
आहूम तावर चवरसा, कैयूम वरवा हिच्छरा।
जे भूम केसव धम्मदा, सासूम सणित सव्वहा॥

और अन्तिम अष्टपदी यह है—

सजणी सुमा सामं हुरा, सामी अनन्तानन्द तुरा।
अठ्ठष उठय केमु लुरा, पसगेथ भुरदालं कुरा॥
लेवाहसी मुस्तंघु तस, पेमा विसन्तिह चंतु मस।
दिहकी कुवासी हंबु लस, तिणही दिणाची जंपु वस॥

धिप धिम चुणाचृ धेम धुर, निपहाभु चेतणदास नुर ।
वित्तां तवरिस लेस उर, ढिगमर सियाले पम्म दुर ॥
वसुवीट किरम्मरस भुकै, पधि वेहु खुर भासतरुकै ।
उचहा चुमण खीजा णुकै, हितु हर हिमर थाणुं पुकै ॥
पलु पंभरा तप चालुली, मछु वेहरा गिण वांकुली ।
अभणे वुअर्रा त्राभुली, मकु मिह कुपा दुह धामुली ॥
अंजाम भण वासीलुपू, देशवाडि प्राकृत सुमु तुपू ।
पैशाचि छवदा चिघ घुपू, छन्दाणु अदला लिभुतुपू ॥
लोभाणु तासभ जुपु तही, थिह भिचु वतापिभु टिपु तही ।
मचुलो रिवासुह हितु तही, कपलण पिणरचा इव तुही ॥
वासपिट सिव श्रासिण वुगी, दिति और साहित मिह चुगी ।
छुप सांग पारी जातुगी, हिहणेपु रामचु पातुगी ॥

पाठकोंको भगवत्पाद अनन्त श्रीरामानन्दाचार्यजीकी रचनासे परिचित होनेकी अभिलाषा होना स्वाभाविक है अतः आपके ग्रंथोंमेंसे सबसे छोटा और मानवमात्रका कल्याणकारी श्रीवैष्णव मताब्ज भास्कर ग्रंथ संक्षिप्त हिन्दी टीका सहित यहाँ दिया जा रहा है ।

* श्रीमते रामानन्दाय नमः *

अनादि वैदिक श्रीसम्प्रदायाचार्य हिन्दूधर्म रक्षक आनन्दभाष्यकार यतिसार्वभौम जगद्गुरु अनन्त श्रीरामानन्दाचार्य प्रणीत

* श्रीवैष्णव-मताब्ज-भास्करः *

(अथ मङ्गलाचरणम्)

श्रीमन्तं श्रुतिवेद्यमद्भुतगुणग्रामाग्र्यरत्नाकरं,
प्रेयःस्वेक्षणसंकुलज्जितमहीजाताक्षिकोणेक्षितम् ।

भक्ताशेषमनोभिवाञ्छितचतुर्वर्गप्रदस्वद्रुमं,
रामं स्मेरमुखाम्बुजं शुचिमहानीलाश्मकान्तिं भजे ॥१॥

वेदोंसे जानने योग्य, लोकोत्तर गुणसमूहरूप श्रेष्ठरत्नोंके अखण्ड भण्डार, प्रियतम श्रीप्रभुके अपनी ओर देखनेके कारण अत्यन्त लज्जायुक्त श्री भूमिजाजूके दृगकोरसे देखे गये हुये, भक्तोंके मनोवाञ्छित समस्त धर्म, अर्थ, काम और मोक्षको देनेमें कल्पवृक्षके समान, खिले हुये कमलके समान मुखवाले, परम निर्मल महानील मणिके समान कान्तिवाले, भगवान् श्रीरामको मैं भजता हूं ॥१॥

प्रत्यूहव्यूहभङ्गे विदधदुरुबलः शक्तिमान् सर्वकारी,
भूरिश्रेयःप्रतापो मुनिवरनिकरैः स्तूयमानो विमानः ।
रक्षोदैत्यादिनाशी क्षुभितजलनिधिर्लोकजिल्लोकमान्यो,
धन्यो नो मङ्गलौघं सपदि स कुरुताद्रामशस्त्रास्त्रसंघः॥२॥

अत्यन्त बलवाले, महान शक्तिशाली, सब कुछ करनेवाले, अपरिमित श्रेय और प्रतापवाले, मुनिवर्य समूहसे स्तुति किये जानेवाले, रावणादि शत्रुओंके मानको दलन करनेवाले, अगाध समुद्रको भी क्षुब्ध कर देनेवाले, समस्त लोकोंको जीतनेवाले, तीनोंलोकोंके मान्य, विजयादि ऐश्वर्यको प्राप्त तथा विघ्नोंके समूहका सर्वदा नाश करते हुये, भगवान् श्रीरामके शस्त्रास्त्र समूह शीघ्र हमारा कल्याण करें ॥२॥

ऐश्वर्यं यदपाङ्गसंश्रयमिदं भोग्यं दिगीशैर्जग-
च्चित्रं चाखिलमद्भुतं शुभगुणा वात्सल्यसीमा च या ।
विद्युत्पुञ्जसमानकान्तिरमितक्षान्तिः सुपद्मेक्षणा,
दद्यान्नोऽखिलसम्पदो जनकजा रामप्रिया साऽनिशम्॥३॥

दिक्पाल आदिके अद्भुत भोग्य ऐश्वर्य, तथा यह समस्त चित्र जगत्, जिनके कृपाकटाक्षके आश्रित है, जो अनन्त शुभ गुणवाली है,

जो वात्सल्यकी पराकाष्ठायुक्त अनन्त विद्युत्‌के समान कान्तिवाली, अपरिमित क्षमावाली और सुन्दर कमलके समान नेत्रोंवाली हैं, वे भगवान् श्रीरामकी प्राणप्यारी श्रीजानकीजी हमलोगोंको सर्वदा मोक्ष आदि समस्त सम्पत्ति प्रदान करें ॥३॥

(श्रीसुरसुरानन्दाचार्य उवाच)

तत्त्वं किं किं च जाप्यं रघुपतिशरणैर्वैष्णवैर्ध्यानमिष्टं,
मुक्तेः किं साधनं सत्सुमतिमतिमतो धर्म एकोस्ति कश्च ।
धर्माणां वैष्णवास्ते गुरुवर कतिधा लक्षणं किं च तेषां,
कालक्षेपः किमाप्य कथमुरुशुभदं कुत्र कार्य्यो निवासः॥४॥

श्रीसुरसुरानन्दाचार्यजीने पूछा। हे अज्ञानरूप अन्धकारको नाश करनेवाले आचार्य वर्य इस जगत्‌में (१) तत्त्व क्या है? (२) श्री रामजीकी शरणागति स्वीकार करनेवाले वैष्णवोंको क्या जपना चाहिये? (३) उनकेलिये इष्ट ध्यान क्या है? (४) उनकी मुक्तिका उत्तम साधन क्या है? (५) अनेक धर्मोंमें प्रशस्तविद्वानोंकी बुद्धिसे परिगृहीत और श्रेष्ठ धर्म कौन सा है? (६) वे वैष्णव धर्म कितने प्रकारके होते हैं? (७) उनका लक्षण क्या है? (८) कालक्षेप कैसे करना चाहिये? (९) मोक्षप्रद साधन क्या है? और (१०) वैष्णवोंको निवास कहां करना चाहिये? ॥४॥

(श्रीरामानन्दाचार्य उवाच)

इत्थं पृष्टस्त्वया यः सकलहितकरः प्रश्नराशिर्गरिष्ठो,
वेद्यः सर्वश्रुतीनां जगति सुरसुरानन्द सद्यः स तुभ्यम् ।
प्राचार्य्याचार्य्यवर्य्यान् यतिपतिसहितान्सादरं तान् प्रणम्य,
सम्यक्शास्त्रानुसारं गुरुवरवचसा प्रोच्यते श्रूयतां तत् ॥५॥

श्रीयतिसम्राट ने कहा—हे सुरसुरानन्द! संसारमें सबके लिये हितकर, सर्ववेदोंद्वारा वेद्य, गुरुतम जो प्रश्न तुमने इस प्रकारसे पूछे हैं,

उन्हें मैं यतिपति—श्रीस्वामि राघवानन्दाचार्य्यसहित, प्राचार्य-श्रीहनुमान्‌जी, श्रीवशिष्ठ, श्रीपराशर, श्रीव्यास प्रभृति प्रकृष्ट आचार्यों तथा आचार्य्यवर्यान्—अन्य श्रीपुरुषोत्तमचार्य्यसे लेकर श्रीहर्यानन्दाचार्य्यादि सब आचार्य्योंको आदर सहित प्रणाम करके गुरुवर—श्रीमद्राघवानन्दाचार्य महाराजके वचनोंसे सुना हुआ शास्त्रानुसार अच्छे प्रकारसे वर्णन करता हूँ, तुम सुनो ॥५॥

(अथ प्रथम प्रश्नस्योत्तरम्)

(प्रकृतिनिरूपणम्)

पृष्टानामेकमाद्यं त्रिकमपि शृणु तद्भेदतो नामभेदै-
र्नित्याऽज्ञाऽचेतना सा प्रकृतिरविकृतिर्विश्वयोनिःशुभैका ।
नाना वर्णात्मिकाऽजा त्रिगुणसुनिलयाऽव्यक्तशब्दाभिधेया,
निर्व्यापारा परार्था महदहमितिसूरुच्यते तत्त्वविद्भिः ॥६॥

तुम्हारे पूछे हुए प्रश्नों में एक जो सर्वप्रथम तत्त्व विषयक प्रश्न है उसके तीन भेद हैं। एक ही सूक्ष्मचिदचिद्विशिष्ट ब्रह्म तत्त्व, अचित्, चित् और ईश्वर भेदसे तीन प्रकार का हो जाता है। उसको अचिदादि नामभेद से सुनो। (इन तीन में से) प्रथम अचित्—प्रकृति का निरूपण करते हैं। तत्त्ववेत्ता लोग कहते हैं कि—विकार रहित सकल विश्व की कारण, एक होकर भी बहुत प्रकार से शोभमान शुक्ल आदि भेद से बहुत वर्णोंवाली, सतोगुण रजोगुण और तमोगुण की आश्रय; अव्यक्त, प्रधान आदि शब्दों से वाच्य, स्वतन्त्रव्यापारशून्य, परार्थ अर्थात् भगवानके आधीन रहनेवाली, तथा महत्तत्व और अहङ्कार आदिको उत्पन्न करनेवाली को प्रकृति कहते हैं ॥ ६ ॥

(अथ जीवस्वरूपनिरूपणम्)

नित्योऽज्ञश्चेतनोऽजः सततपरवशः सूक्ष्मतोऽत्यन्तसूक्ष्मो,
भिन्नो बद्धादिभेदैः प्रतिकुणपमसौ नैकधा सूरिवर्य्यैः ।

श्रीशाक्रांतालयस्थो निजकृतिफलभुक्तत्सहायोऽभिमानी,
जीवः संप्राच्यते श्रीहरिपदसुमते तत्त्वजिज्ञासुवेद्यः ॥७॥

जो नित्य अर्थात् सर्वदा एकरूप रहनेवाला है, (जिसका आदि मध्य और अन्त नहीं है,) जो अज्ञ अर्थात् अल्पज्ञ है, चेतन है, अज है, सर्वदा भगवानके आधीन है, सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म है, प्रतिशरीरमें बद्ध, मुक्त और नित्य आदि भेदों से अनेक प्रकारवाला होकर भिन्न भिन्न है, भगवान्की व्याप्तिसे युक्त जो शरीरमें रहनेवाला है, स्वकर्मानुसार फल भोगनेवाला है, भगवान् सर्वदा जिसके सहायक हैं, मैं कर्ता हूँ मैं भोक्ता हूँ, इस प्रकार के अभिमानवाला है, जो तत्त्व के जिज्ञासुओ के जानने योग्य है, उसे श्रेष्ठ विद्वान् जीव कहते हैं ॥ ७ ॥

(अथ ईश्वरनिरूपणम्)

विश्वं जातं यतोऽद्धा यदवितमखिलं लीनमप्यस्ति यस्मिन्,
सूर्य्यो यत्तेजसेन्दुः सकलमविरतं भासयत्येतदेषः ।
यद्भीत्या वाति वातोऽवनिरपि सुतलं याति नैवेश्वरो ज्ञः,
साक्षी कूटस्थ एको बहुशुभगुणवानव्ययो विश्वभर्ता ।८।
श्रीमानर्च्यः शरण्यो बहुविधविबुधैर्योगिगम्यांघ्रिपद्मोऽ–
स्पृश्यः क्लेशादिभिः सत्समुदितसुयशाः सूरिमान्यो वदान्यः।
शश्वच्छ्रीरामचन्द्रः सुमहितमहिमा साधुवेदैरशेषै–
र्निर्मृत्युः सर्वशक्तिर्विकलुषविजरो गीर्मनोभ्यामगम्यः ।९।

जिनसे यह समस्त विश्व उत्पन्न हुआ है, रक्षित है, और जिनमें लीन होता है; जिनके तेज से सूर्य और चन्द्रमा निरन्तर–रात्रि और दिन के विभाग से इस समस्त जगत् को प्रकाशित करते हैं। जिनके भयसे वायु बहता है, पृथिवी भी पातालमें नहीं जाती है; वही परमज्ञानवान्, आत्माओंके कर्मोंके साक्षी, अपने से भिन्न अन्य सब लोकों

को घेरकर (आक्रान्त करके) कूटस्थ–लोहघनके समान स्थिर रहनेवाले अद्वितीय, कृतित्व, कृतज्ञत्व, निभृतत्व, संभृताकारत्व, अमोघक्रोधहर्षत्व, प्रियसत्यवादित्व, शरणागतवत्सलत्व दृढव्रतत्व, मृदुत्व, सौलभ्य स्थिरप्रज्ञत्व, सत्यसन्धत्व, आदि अनन्तकल्याणगुणाकर, अविनाशी समस्त जगत्के पालन करनेवाले, शरणमें रखनेवाले योगि श्रेष्ठोंसे ध्यायमान हैं चरण-कमल जिनके, जो अपनी कृपाके अतिरिक्त किसी भी क्लेश (साधन) द्वारा नहीं मिल सकते, समस्त देव मुनि महात्मासे मान्य और स्तुति किये जानेवाले, सत्पुरुषोंसे जिनका यश वर्णन किया गया है, विद्वानोंके जो मान्य हैं, मोक्ष आदि दुर्लभ पदार्थों को भी जो देनेवाले हैं, समस्त वेदों के द्वारा जिनका माहात्म्य वर्णित है, जो अमर हैं, सर्व शक्तिमान् हैं, निष्पाप हैं, अजर हैं, वाणी और मन से अगोचर हैं, नित्य हैं, वही श्री सीताजी के सहित श्री रामचन्द्रजी ईश्वर हैं ॥ ९ ॥

(अथ द्वितीय प्रश्नस्योत्तरम्)

(श्रीमन्त्रराजपरमार्थनिरूपणम्)

संज्ञाप्यस्तारकाख्यो मनुवर इह तैर्वह्निबीजं यदादौ,
रामो ङे प्रत्ययान्तो रसमितशुभदस्वक्षरः स्यान्नमोऽन्तः ।
मन्त्रो रामद्वयाख्यः सकृदितिचरमप्रान्वितो गुह्यगुह्यो,
भूताद्युत्संख्यवर्णः सुकृतिभिरनिशं मोक्षकामैर्निषेव्यः ।१०।

वह्निबीज जिसके आदिमें है, 'नमः' अन्तवाला चतुर्थी विभक्तियुक्त रामशब्द जिसमें विद्यमान है, शुभप्रद छै अक्षर हैं, ऐसा श्रीराम तारक नामक मन्त्रराज समस्त मोक्षाभिलाषियों को जपना चाहिये। तथा सुकृती पुरुषों को चरममन्त्रयुक्त २५ अक्षरोंवाले, अत्यन्त गोपनीय रामद्वय नामक मन्त्रका भी निरन्तर सेवन करना चाहिये ॥ १० ॥

मन्त्राणां व्यापकानां भगवत इह चाव्यापकानां तु मध्येऽ–
तिश्रेष्ठो व्यापकः स श्रुतिमुनिसुमतः शिष्टमुख्यैर्गृहीतः ।

नित्यानामाश्रयोऽयं परित उरुशुभो राममन्त्रः प्रधानं,
प्राप्यश्च प्रापकोऽपि प्रचुरतरगुणज्ञानशक्त्यादिकानाम्।११।

श्रीराममन्त्र अव्यापक भगवन्मन्त्रोंसे श्रेष्ठ तो है ही, अपितु व्यापक मन्त्रों की अपेक्षा भी श्रेष्ठ है। वेदों और मुनिजनों से आदृत है। परम शिष्ट पुरुषों से परिगृहीत है। हनुमदादि नित्य जीवों का आश्रय है, सब ओर से परम कल्याणप्रदाता है। प्रधान है। प्राप्य है तथा अधिकाधिक गुण, ज्ञान और शक्ति आदिका प्रदाता भी है। ऐसा यह श्रीराममन्त्र सब मन्त्रों में परम श्रेष्ठ है ॥ ११ ॥

यावद्वेदार्थगर्भं प्रणवि जगदुदाधारभूतं सविन्दु,
प्रव्यक्तं रामवीजं श्रुतिमुनिगदितोत्कृष्टषड्व्याप्तिभेदम्।
रेफारूढत्रिमूर्ति प्रचुरतरमहाशक्ति विश्वोन्निदानं,
शश्वत्संराजते यद्विविधसकलसंभासमानप्रपञ्चम् ॥१२॥

समस्त वेदार्थ जिसके अन्तर्गत हैं, प्रणव (ओङ्कार) जिसमें सन्निहित है, समस्त जगत् का जो सर्वोपरि आधारभूत है, विन्दु सहित जो विद्यमान है, जो अत्यन्त व्यक्त है, जिसमें अधिकतम महती शक्ति है, जो विश्व का सर्वोत्कृष्ट मूलकारण है, नाना प्रकार के समस्त प्रपञ्च जिसमें भासमान हैं 'ऐसा परम प्रसिद्ध रामवीज (राममंत्र का बीज 'रां') जिसमें निरन्तर विराजमान हो रहा है ॥१२॥

तत्राद्येन पदेन रेण भगवान् सीतापतिः प्रोच्यते,
श्रीरामो जगतां गुणैकनिलयो हेतुश्च संरक्षकः।
तच्छेषी पदतोऽप्यतो भगवतोऽनन्यार्हशेषत्वकं,
व्यावृत्तिस्तु सुरान्तरादिगतसत्तच्छेषताया मुहुः ॥१३॥

उस बीज के आदि पद रेफ से (समग्र ऐश्वर्य, वीर्य, यश, श्री, वैराग्य और मोक्ष आदिसे नित्ययुक्त, विदेहराज जनकके तपोबलसे

प्राप्त, विपुलसम्पत्तिवर्द्धनी भगवत्तुल्य ऐश्वर्य, शील, वय, कुलाचार आदि से युक्त अयोनिजा महाराज्ञी) श्रीसीता के पति; (शौर्य, वीर्य माधुर्य्य, कृतज्ञत्व, दृढ़व्रतत्व, सर्वज्ञत्व, सौलभ्य आदि) लोकोत्तर गुणोंके एकमात्र आकर; समस्त जगत्के एकमात्र कारण, (संकल्प-विशिष्टवेष से निमित्त सूक्ष्मचिदचिद्विशिष्टवेषसे उपादान, और सहकारि-भूत कालादि के अन्तर्यामी होने से सहकारी कारण), सबके संरक्षक और संहारक; सर्व जीवों के शेषी भगवान् श्रीरामजी का वर्णन किया जाता है। और अकार पद से भगवन् की अनन्यशेषार्हता और ब्रह्मादि देवतान्तर की शेषता की व्यावृत्ति कही जाती है ॥१३॥

पितापुत्रत्वसंबधो जगत्कारणवाचिना।
रक्ष्यरक्षकभावश्च रेण रक्षकवाचिना ॥१४॥

ब्रह्मादिजगत् के निमित्त, उपादान और सहकारि कारणवाची 'र' से पिता पुत्र सम्बन्ध तथा रक्षक वाची 'र' से रक्ष्य रक्षक सम्बन्ध भी श्रीरामजी का जीवों के साथ कहा जाता है ॥१४॥

शेषशेषित्वसंबन्धश्चतुर्थ्या लुप्तयोच्यते।
भार्याभर्तृत्वसंबन्धोऽप्यनन्यार्हत्ववाचिना ॥१५॥

र के आगे लुप्त चतुर्थी विभक्ति के द्वारा शेषशेषित्व सम्बन्ध और अनन्यार्हत्ववाची मध्यगत अकार से भार्याभर्तृत्व सम्बन्ध भी कहा जाता है ॥१५॥

अकारेणापि विज्ञेयो मध्यस्थेन महामते !
स्वस्वामिभावसम्बन्धो मकारेणाथ कथ्यते ॥१६॥

तथा ज्ञानार्थक मन धातु से बने हुये म् कार के द्वारा स्व (जीव) और स्वामि (ईश्वर) का स्वस्वामिभाव सम्बन्ध कहा जाता है ॥१६॥

आधाराधेयभावोऽपि ज्ञेयो रामपदेन तु।
सेव्यसेवकभावस्तु चतुर्थ्या विनिगद्यते ॥१७॥

रामपद से आधाराधेय भाव संबन्ध जानना चाहिये एवं आगे की चतुर्थी विभक्ति से सेव्यसेवकसंबन्ध कहा जाता है ॥१७॥

नमः पदेनाखण्डेन त्वात्मीयत्वमुच्यते ।
षष्ठयन्तेन मकारेण भोग्यभोक्तृत्वमप्युत ॥१८॥

नमः शब्द दो प्रकार का है एक अखण्ड और दूसरा सखण्ड । अखण्ड नमः पद से आत्मा और आत्मीयभाव कहा जाता है तथा खण्ड करने से 'न' के आगे 'मः' यह षष्ठयन्त पद है और उससे भोग्य भोक्तृत्व सम्बन्ध कहा जाता है ॥१८॥

ज्ञानानन्दस्वरूपोऽवगतिसुखगुणो येन वेद्योऽणुमानो,
देहादेरप्यपूर्वो विविदितविविधस्तत्प्रियस्तत्सहायः ।
नित्यो जीवस्तृतीयेन तु खलु पदतः प्रोच्यते स्वप्रकाशो,
जिज्ञासूनां सदेत्थं शुभनतिसुमते शास्त्रवित्सज्जनानाम् ।१६।

हे शुभ कार्य्यों में सुन्दरबुद्धिवाले सुरसुरानन्द ! तृतीयपद 'म' कार से, शास्त्रज्ञ सज्जन जिज्ञासुओं के सदा जानने योग्य ज्ञानानन्दस्वरूप, ज्ञान और सुख आदि गुणोंवाला, अणु परिमाणवाला, देह इन्द्रियादि से अपूर्व, बद्ध आदि भेद से अनेकों प्रकारवाला प्रसिद्ध, परमात्मा का प्रिय, मोक्षादि में परमात्मा ही जिसका सहाय है, जो नित्य और स्वप्रकाश है, वह जीव कहा जाता है ॥१९॥

मवाच्योऽहं रवाच्याय शेषभूतोऽस्मि सर्वदा ।
इतीत्थमेव बोध्यो ह्यैर्वाक्यार्थस्तद्विवित्सया ॥२०॥

ऐसे ही विद्वानों को यदि मन्त्र का वाक्यार्थ जानने की इच्छा हो तो यह जानना चाहिये कि 'म्' वाच्य मैं (जीव) 'र' वाच्य सर्वशेषी (भगवान् श्रीरामजी) के लिये सर्वदा शेषभूत हूँ ॥२०॥

रामायेति चतुर्थ्येन श्रिया देव्यास्तु सर्वदा ।
चेतनाचेतनानां च रमणाश्रयतेर्य्यते ॥२१॥

रामाय इस व्यक्त चतुर्थ्यन्त पदसे श्रीपदवाच्या श्रीजानकी रमण ही चेतन अचेतनके सर्वदा रमण के आश्रय हैं यह कथित है ॥२१॥

ससर्वविधबन्धुत्वं सर्वप्राप्यत्वमेव च ।
सर्वप्रापकता तेन तथा चोभयलिङ्गता ॥२२॥

उसीसे सर्व प्रकार बन्धुत्व सर्वप्राप्यत्व सर्वप्रापकत्व निरस्तनिखिल दोषत्व कल्याणगुणाकरत्वरूप और उभयलिङ्गता भी कथित होती है ।

पदेनैवोच्यते सत्यानन्दचिद्रूपता तथा ।
यावद्विभूतिनेतृत्वं रामपादाब्जसन्नते ॥२३॥

उसी 'रामाय' पद से भगवान् में सत्यस्वरूपता, आनन्दस्वरूपता चित्स्वरूपता तथा निखिलविभूतिका स्वामित्व भी प्रतिपादित है ।

रागादिकारणे बन्धौ तेनैव विनिवर्त्यते ।
बन्धुत्वप्रतिपत्तिश्च भासमानाऽविचारतः ॥२४॥

(चतुर्थी से ही) अविचारसे प्रतीयमान राग आदिके कारणभूत भ्राता, पुत्र, कलत्र मित्रादिमें बन्धुत्वज्ञानकी भी निवृत्ति हो जाती है ।

तच्चतुर्थ्या स्वानुरूपकैङ्कर्य्यप्रार्थनोच्यते ।
विषयान्तरसेवाऽपि प्राप्ता सा विनिवर्त्यते ॥२५॥

चतुर्थी विभक्ति से ही स्वानुरूप (अपने योग्य) भगवान्के कैङ्कर्य्यकी प्रार्थना तथा अन्य विषयोंकी सेवाकी निवृत्ति भी कही जाती है ।

पदेन नेनात्र तु पञ्चमेन सं–प्रकथ्यते वै तदनन्यशेषता ।
प्रहेयमन्यार्थ्यमथो स्वतन्त्रता निवर्त्यते जीवगणस्य सन्ततम् ।

ऊपर कहा जा चुका है कि नमःपद अखण्ड और सखण्ड भेदसे दो प्रकारका है । अब सखण्ड पक्षको लेकर 'न' और 'मः' इनमेंसे 'न' पदका अर्थ बताते हैं ।

चतुर्थ पदकी व्याख्याके अनन्तर इस मन्त्रमें 'न' इस पञ्चम पदसे निश्चय ही जीवोंकी अनन्यशेषता अर्थात् जीवोंका भगवान्‌के अतिरिक्त किसीके भी शेष (भोग्य) नहीं होना कथित है। तथा त्याज्य जो भगवदतिरिक्त प्रयोजन और जीवोंकी स्वतन्त्रता है इनकी सदाके लिये निवृत्ति भी इसी 'न' पदसे की जाती है। तात्पर्य यह है कि भगवान्‌से अतिरिक्त, जीवोंका किसीके साथ कोई प्रयोजन नहीं है और जीव स्वतन्त्र नहीं किन्तु सर्वदा श्रीरघुनाथजीके परतन्त्र ही हैं ॥२६॥

पदेन षष्ठेन म इत्यनेन स्वस्वाम्यनन्यार्हकशेषतापि ।
समुच्यते चेतनवाचिना तु तत्किङ्करत्वैकफलाधिपत्यम्॥२७॥

जीववाची षष्ठ 'म' पदसे अपने आपका स्वामित्व (स्वातंत्र्य) और अनन्यार्ह शेषता (भगवदतिरिक्त अन्यका शेष नहीं होना) तथा भगवत्कैङ्कर्यरूप प्रधान फलका संग्रह किया जाता है। तात्पर्य यह है कि 'म' इस पदसे यह बोधित होता है कि भगवान् ही जीवोंके एक मात्र स्वामी हैं, वही शेषी हैं, उनकी सेवा ही एकमात्र फल है ॥२७॥

उपायार्थपरेणात्र त्वखण्डनमसोच्यते ।
उपायो हि मवाच्यस्य रवाच्यो राम एव सः ॥२८॥

उपायार्थपरक अखण्ड नमः शब्दसे तो मवाच्य जीवके 'र वाच्य' श्रीरामजी ही उपाय हैं, यह प्रतिपादित होता है ॥२८॥

बीजेनैवाथ जीवस्य स्वरूपं प्रतिपाद्यते ।
रामायेति परस्यापि चतुर्थ्या तत्फलस्य च ॥२९॥

बीज (रां) से जीवका स्वरूप, 'रामाय' से भगवत्स्वरूप और चतुर्थी विभक्तिसे उसके फलके स्वरूपका प्रतिपादन किया जाता है।

उपायस्य त्वखण्डेन नमःशब्देन चोच्यते ।
सखण्डे तु मकारेण षष्ठयन्तेन विरोधिनः ॥३०॥

अखण्ड नमः शब्दसे उपायका स्वरूप कहा जाता है और सखण्ड पक्षमें षष्ठयन्त मकारसे विरोधीका स्वरूप प्रतिपादित होता है ॥३०॥

तात्पर्यार्थः समस्तानां शास्त्राणां रुचिसंश्रयः ।
वाक्यार्थः प्राप्यसंबन्धिस्वरूपाभिनिरूपणम् ॥३१॥
तारकस्य प्रधानार्थः स्वस्वरूपनिरूपणम् ।
संबन्धानुसन्धानमनुसन्ध्यर्थ इष्यते ॥३२॥

समस्त वेदादि शास्त्रोंकी रुचि (अभिमत) का आश्रयण करना, तारक मन्त्रराजका तात्पर्यार्थ है, भगवान् श्रीरामजीके स्वरूपका निरूपण करना वाक्यार्थ है, जीवस्वरूपका निरूपणकरना प्रधानार्थ है और जीव तथा ईश्वरके अनेक विध सम्बन्धोंका अनुभव करना अनुसन्धानार्थ है ॥३१॥३२॥

(अथ द्वयमन्त्रप्रकरणम्)

उक्त्वेत्थं तारकार्थं तु द्वयार्थः प्रतिपाद्यते ।
निर्मत्सराः प्रपश्यन्तु तं गृह्णन्त्ववयन्तु च ॥३३॥

इस प्रकारसे तारक मन्त्रके अर्थको कहके अब 'रामद्वय' मन्त्रका अर्थ निरूपण किया जाता है। मत्सररहित विद्वान् इसका चाक्षुषज्ञान (दर्शन) प्राप्त करें, शब्दतः ग्रहण करें और अर्थतः इसे जानें ॥३३॥

श्रीरामद्वयमन्त्रमद्भुततमं वाक्यद्वयं षट्पदं,
बाणाक्षिप्रमिताक्षरं तु खलु विद्धि त्वं दशार्थान्वितम् ।
युक्तं तं त्रिपदेन तत्र सुमते पूर्वं शुभस्यास्पदं,
वाक्यं पञ्चदशाक्षरं तदनु दिग्वर्णात्मकं तूत्तरम् ॥३४॥

दो वाक्य छ पद और पचीस अक्षरोंसे युक्त दश अर्थोंवाला अत्यन्त आश्चर्यप्रद, मोक्षका परम प्रापक उस श्रीरामद्वयमन्त्रको जानो। जिसका पूर्व वाक्य पन्द्रह अक्षर और तीन पदोंसे युक्त है तथा उत्तर वाक्य दश अक्षरोंसे युक्त है ॥३४॥

सर्वाधीशेश्वरप्राप्तिर्हेतुस्तत्राभिधीयते ।
सीता पुरुषकारार्था श्रीत्यनेन पदेन तु ॥३५॥

प्रथम वाक्यमें स्थित 'श्री' पदसे सकल पदार्थके स्वामी भगवान् श्रीरामचन्द्रजीकी प्राप्तिकी हेतुभूत पुरुषकार प्रयोजनवाली महाराणी श्री सीताजीका वर्णन किया गया है ॥३५॥

मता पुरुषकारस्य नित्यसंबन्ध उच्यते ।
रामचन्द्रेतिपदतो वात्सल्यादिगुणस्य च ॥३६॥

'श्रीमत्' में श्रीके आगे जो मतुप् प्रत्ययका 'मत्' है उससे 'अनन्या च मया सीता भास्करेण प्रभा यथा' इस वचनके अनुसार प्रभा और सूर्यके अपृथक सिद्धि सम्बन्धकी तरहसे स्थित सर्वेश्वर भगवान् श्रीरामजीके साथ पुरुषकारस्वरूपा श्री अम्बाजीका नित्य संबन्ध प्रतिपादित होता है। तथा 'रामचन्द्र' इस पदमे भगवान्में वात्सल्य आदि दिव्य गुणोंका नित्य सम्बन्ध कहा जाता है ॥३६॥

चरणावित्यनेनैव वात्सल्यादिकसीतयोः ।
विलक्षणस्य दिव्यस्य विग्रहस्याश्रयस्य च ॥३७॥
शरणेतिपदेनैवोपायस्तद्विग्रहो बुधः ।
उपायाध्यवसायस्तु प्रपद्य इति वर्ण्यते ॥३८॥

'चरणौ' इस पद से वात्सल्यादि दिव्य गुणोंका, श्रीसीताजी का तथा विलक्षण दिव्य विग्रह के आश्रय का ॥ ३७ ॥

'शरण' पद से भगवद्विग्रहरूप उपाय का और 'प्रपद्ये' पद से उपाय विषयक निश्चय का विद्वाज्जन वर्णन करते हैं ॥३८॥

प्राप्यं मिथुनमेवेति श्रीमत पदतो मतम् ।
रामचन्द्रेतिपदतः स्वामित्वं प्रतिपाद्यते ॥३९॥

'श्रीमते' पदसे 'श्रीसीतारामजी ही प्राप्य हैं' यह कहा गया है तथा 'रामचन्द्र' पद से स्वामित्व का प्रतिपादन करते हैं ॥३९॥

विभक्त्याऽऽयेति पदतः शेषवृत्तिर्महात्मभिः ।
विरोधिनो निरासस्तु नमःशब्देन वर्ण्यते ॥४०॥

महात्मा लोग विभक्ति 'आय' से शेषवृत्ति का और नमः शब्द से काम क्रोध आदि विरोधियों के निरास का प्रतिपादन करते हैं ॥

तात्पर्यार्थोऽस्य विज्ञेय आचार्यरुचिसंश्रयः ।
वाक्यार्थस्तु मताभिज्ञैरेष निर्णीयते बुधैः ॥४१॥
प्राप्यप्रापकसम्बन्धिस्वरूपाभिनिरूपणम् ।
प्रधानार्थस्तु तद्युग्मकैङ्कर्यस्य प्रधानता ॥४२॥
स्वदोषाभ्यनुसन्धानमनुसन्ध्यर्थ उच्यते ।
एवमेवानुसन्ध्येयं मोक्षकामैरहर्दिवम् ॥४३॥

आचार्य्य (श्रीगुरुदेव) की रुचि के अनुकूल रहना, (उनकी आज्ञा का अनुसरण करना) विद्वान् जन इस मन्त्र का तात्पर्यार्थ जानते हैं। प्राप्य (श्रीरामजी) प्रापक (जीव) दोनों के सम्बन्धि-स्वरुप का निरुपण वाक्यार्थ निर्णीत किया है। युगल प्रभु श्रीसीता रामजी के कैंकर्य की प्रधानता इस मन्त्र का प्रधानार्थ है ॥४२॥ अपने दोषों का अनुसन्धान करना अनुसन्धानार्थ कहा जाता है। मोक्षार्थियोंको सदा यही अनुसन्धान करना चाहिये।

(चरममन्त्रप्रकरणम्)

प्रोक्ता वत्सक ! मन्त्ररत्नविवृतिः सन्मानसाभीष्टदं
सद्वेद्यं सकृदित्यवेहि चरमं निर्णीतवाक्यार्थकम् ।
रामीयं हि तदीयमन्त्रनिरतैरुद्बोधनीयं परं
द्वात्रिंशत्प्रमिताक्षरं मनुपदं द्व्यर्द्धं जगद्विश्रुतम् ॥४४॥

हे वत्स (सुरसुरादन्द) ! मन्त्ररत्न का विवरण भले प्रकार से कहा गया। अब सत्पुरुषों के मनके अभीष्ट फल के देनेवाले,

सत्पुरुषों के ही जानने योग्य, निर्णीत वाक्यार्थवाले, भगवन्मन्त्रानुरागियों के लिये परमज्ञेय, ३२ अक्षर और १४ पदवाले (पूर्वार्द्ध और उत्तरार्ध) दो अर्धवाले, निश्चय ही सर्व प्रधान, जगत्प्रसिद्ध, श्रीरामजी सम्बन्धी 'सकृदेव०' इस चरम मन्त्र को समझो ॥४४॥

अत्रोपायान्तरस्याथो निवृत्तिः प्रतिपाद्यते ।
सकृदित्येवकारेणान्योपायनिरपेक्षता ॥४५॥

इस चरममन्त्र में 'सकृत्' पद से भगवदतिरिक्त अन्य उपाय की निवृत्ति तथा 'एव' पद से निरपेक्षा का प्रतिपादन करते हैं ॥४५॥

प्रपन्नायेति पदतस्तूपायस्थानमुच्यते ।
उपायत्वं भगवतस्तवेतिपदतस्तथा ॥४६॥

'प्रपन्नाय' पद से प्रपन्न (उपासक) के लिये कही गई षिड्वध प्रपत्तिरूप परमोपायका आश्रय तथा 'तव' पदसे प्रपत्तिके फलदाता भगवान् श्रीरामजीका ही उपायत्व प्रतिपादन किया जाता है ।

अस्मीत्यनेन चोपायस्वीकारः प्रतिपाद्यते ।
समाप्त्यर्थेतिशब्देन तूपायानन्यतोच्यते ॥४७॥

'अस्मि' पद से उपाय का अङ्गीकार प्रतिपादित होता है और समाप्ति अर्थवाले 'इति' शब्द से उपाय में अनन्यता (प्रपति से परे अन्य कोई भी मार्ग न होने) का प्रतिपादन किया जाता है ॥४७॥

चकारतो ऽनुक्तसमुच्चयार्थतो
निगद्यते ऽथान्य उपाय आत्मवित् ।
उपायसंसेव्यधिकारलक्षणं
पदेन व याचत इत्यनेन तु ॥४८॥

हे आत्मवेदिन् ! नहीं कहे गये अर्थ के भी संग्राहक 'च' पद से अन्य उपाय कहा जाता है । और 'याचते' पद से उपाय के, सेवन करने वाले अधिकारी का लक्षण (स्वरूप) कहा जाता है ॥४८॥

अथाभयमिति प्राप्यप्रतिबन्धकवारणम् ।
सर्वभूतेभ्य इत्येव प्राप्यस्य प्रतिबन्धकम् ॥४९॥

अभय पद प्राप्य (श्रीसीतारामजी) की प्राप्ति के प्रतिबन्धकों का निवारक है । तथा 'सर्वभूतेभ्यः' इस पद से प्राप्य श्रीरघुनाथजी के प्रतिबन्धक का स्वरूप निरूपण किया जाता है ।

यहां 'सर्वभूतेभ्यः' यह पद पञ्चम्यन्त और चतुर्थ्यन्त दोनों है । पञ्चम्यन्त पक्ष में अर्थ होता है कि भगवान् प्रतिज्ञा करते हैं कि—'सत्यप्रतिज्ञ, सर्वलोकशरण्य आदि गुणयुक्त मैं, मुझसे अथवा अन्य किसी से उत्पन्न हुये भय से शरणागत की रक्षा करता हूँ । तथा चतुर्थ्यन्त पक्ष में अर्थ है कि केवल शरणागत श्री विभीषण कोही नहीं प्रत्युत सभी शरणागतों को मैं अभय (मोक्ष) प्रदान करता हूँ ॥ ४९ ॥

ददामीतिपदेनाथोपायस्याखिलशक्तिता ।
एतदित्येव पदतोऽसंशयत्वंमितीर्यते ॥५०॥

'ददामि' पद से उपाय भूत प्रपत्ति का अथवा प्रपत्ति के फलदाता भगवान् श्रीरामजी में सर्वशक्तिमत्ता का निरूपण, और 'एतत्' पद से उसमें संशयाभाव का प्रतिपादन किया जाता है ॥ ५० ॥

निर्भरत्वानुसन्धानं ममेति प्रतिपाद्यते ।
पदेन व्रतमित्यत्र, तद्दार्ढ्यमभिधीयते ॥५१॥

'मम' इस पद से 'प्रभु सर्वदा हमारी रक्षा करेंगे' इस चिन्तन का प्रतिपादन किया जाता है । और 'व्रतम्' इस पद से इस विषय में उसकी दृढता का प्रतिपादन किया जाता है ॥ ५१ ॥

तात्पर्यार्थोऽस्य विज्ञेयः शरण्यरुचिसंश्रयः ।
तत्प्रापकस्वरूपस्य वाक्यार्थोऽथ निरूपणम् ॥५२॥

इस चरममन्त्र का तात्पर्यार्थ भगवान् की प्रसन्नता का संश्रयण करना जानना चाहिये। अपने आपको प्राप्त करानेवाले श्रीरामजी के स्वरूपका निरूपण वाक्यार्थ है ॥५२॥

प्रधानार्थः परेशस्य स्वरूपस्य निरूपणम् ।
निर्भरत्वानुसन्धानमनुसन्ध्यर्थ उच्यते ॥५३॥

श्रीरामजी के स्वरूप का निरूपण प्रधानार्थ है और निर्भरता का अनुसन्धान करना अनुसन्धानार्थ है ॥५३॥

(अथ तृतीय प्रश्नस्योत्तरम्)

(ध्यानप्रकरणम्)

अथोच्यते महाप्राज्ञ ध्यानं ध्येयस्य चिन्तनम् ।
बुधैरात्मरतैर्नित्यं जितप्राणैर्जितेन्द्रियैः ॥५४॥

भगवान्के महान अनुरागी, प्राणायामपरायण और जितेन्द्रिय विद्वान् भगवान्के तैलधारावत्–अविच्छिन्न चिन्तनको ध्यान कहते हैं।

विकचपद्मदलायतवीक्षणं विधिभवादिमनोहरसुस्मितम् ।
जनकजादृगपाङ्गसमीक्षितं प्रणतसत्समनुग्रहकारिणम् ॥

विकसितकमलकी पंखुरियोंके समान नेत्रवाले, ब्रह्म शिवादिके भी मनोंको हरण करनेवाले, हास्य युक्त श्रीजानकीजीके नेत्रोंके कटाक्ष से देखे गये और प्रणत सत्पुरुषोंपर अनुग्रह करनेके स्वभाववाले—

मुनिमनःसुमधुव्रतचुम्बितस्फुटलसन्मकरन्दपदाम्बुजम् ।
बलवदद्भुतदिव्यधनुःशरामहितजानुविलम्बिमहाभुजम् ॥

मुनिजनोंके मनरूपी सुन्दर भ्रमरसे आस्वादित मकरन्दसे सुशोभित कमलके समान चरणोंवाले, लोकोत्तर बलशाली, अद्भुत दिव्य धनुष् और बाणोंसे युक्त जानुपर्यन्त विशाल भुजाओंवाले— ॥५६॥

परार्घ्यहाराङ्गदचारुनूपुरं सुपद्मकिञ्जल्कपिशङ्गवाससम् ।
लसद्घनश्यामतनुं गुणाकरं, कृपार्णवं सद्धृदयांबुजासनम् ॥

अमूल्य हार, भुजबन्द और सुन्दर नूपुरोंवाले, कमलकी केशरके समान सुन्दर पीत वस्त्रवाले, नूतन मेघके समान शोभायमान शरीरवाले, दिव्य गुणोंकी खान, कृपाके सागर, सत्पुरुषोंके हृदयकमलमें विराजमान— ॥५७॥

प्रसन्नलावण्यसुभृन्मुखाम्बुजं, जगच्छरण्यं पुरुषोत्तमं परम् ।
सहानुजं दाशरथिं महोत्सवं, स्मरामि रामं सह सीतया सदा ॥

लावण्यपूर्ण विकसित कमलके समान प्रसन्न मुखवाले, सबको शरण देनेवाले, पुरुषोत्तम, प्राणप्रिया श्रीजानकीजी और भ्राता श्री लक्ष्मणजी सहित, महोत्सवस्वरूप, श्रीदशरथ–कुमार, सर्वश्रेष्ठ सनातन परमात्मा श्रीरामका मैं सदा स्मरण करता हूं ॥५८॥

द्विभुजस्यैव रामस्य सर्वशक्तेः प्रियोत्तम !
ध्यानमेवं विधातव्यं सदा रामपरायणैः ॥५९॥

हे प्रियोत्तम ! रामभक्तोंको सर्वदा सर्वशक्तिमान् द्विभुज, धनुर्धारी भगवान् श्रीरामजीका इस प्रकारसे ध्यान करना चाहिये ॥ ५९ ॥

(अथ चतुर्थ प्रश्नस्योत्तरम)

(मुक्तिसाधन-पञ्चसंस्कार-प्रकरणम्)

एवं तेऽभिहितं ध्यानं शृणु तन्मुक्तिसाधनम् ।
मुमुक्षूणां परं वेद्यं विधेयं प्रिय सर्वदा ॥६०॥

इस प्रकारसे मैंने तुम्हें ध्यान कहा। अब मुमुक्षुजनोंको जानने और सर्वदा अनुष्ठान करने योग्य मुक्तिके साधनको सुनो ॥६०॥

तप्तेन मूले भुजयोः समङ्कनं शरेण चापेन तथोर्ध्वपुण्ड्रकम् ।
श्रुतिश्रुतं नाम च मन्त्रमालिके संस्कारभेदाः परमार्थहेतवः ॥

भुजाओंके मूलमें तप्त बाण और धनुषका अंकन, ऊर्ध्वपुण्ड्रतिलक नाम, मंत्र और मालिका (श्रीतुलसी कंठी) ये पांच प्रकारके संस्कार परमार्थ (मोक्ष) के कारण है ॥६१॥

परीक्ष्यशिष्यं समुपासकं गुरुर्वर्षं समभ्यर्च्य च वह्निदेवताम् ।
चापादिभिर्हेतिवरैः सुतापितैर्दिने सुपुण्ये नियतः समङ्कयेत् ॥

समाहित चित्त गुरु, सद्भाव से गुरु और भगवान की उपासना करनेवाले (निष्ठा आदि युक्त) शिष्य को १ वर्ष परीक्षा करके विधि विधान से अग्निपूजन करके तपाये हुये धनुष् और बाणआदि भगवदायुधों से पवित्र दिन में अङ्कित करे ॥६२॥

तथोर्ध्वपुण्ड्रं सुमृदा विधाय वैरामदि दास्यान्तमथो समुच्चरेत्
मन्त्रंतथैवोपदिशेद्विधानतोमालां वरां तां तुलसीसमुद्भवाम् ।

पश्चात् सुन्दरमृत्तिका से ऊर्ध्वपुण्ड्र (तिलक) लगाकर रामादि भगवत् नामपूर्वक दास्यपदयुक्त नाम कहे, विधि पूर्वक मन्त्रका उपदेश करें और तुलसीकी माला (कण्ठी) धारण करावे ॥६३॥

एवंमहान् भागवतः सुसंस्कृतो श्रीरामभक्तिं विदधात्वहर्निशम् ।
महेन्द्रनीलाश्मरुचेः कृपानिधेःश्रीजानकीलक्ष्मणसंयुतस्य वै ।

इस प्रकार से पञ्च संस्कारों द्वारा संस्कृत हो, महाभागवत बनकर, प्राणप्रिया श्रीजानकीजी और श्री लक्ष्मणजी सहित महाइन्द्रनीलमणिके समान श्यामकान्तिवाले कृपानिधान श्रीरामजीकी अहर्निश भक्ति करे ।

(पराभक्तिलक्षणम्)

उपाधिनिर्मुक्तमनेकभेदकं, भक्तिः समुक्ता परमात्मसेवनम् ।
अनन्यभावेन मुहुर्मुहुः सदा, महर्षिभिस्तैः खलु तत्परत्वतः ॥

परमभक्तिरसरसिक विद्वद्वर्य महर्षियों ने, अनन्यभाव से तत्परता के साथ छल कपट प्रपञ्च आदि उपाधियों से रहित परमात्मा सनातन श्रीरामजी की सदा सेवा को ही पुनः पुनः भक्ति कहा है ॥६५॥

(पराभक्तिसाधनम्)

सा तैलधारासमनित्यसंस्मृतिसन्तानरूपेशि परानुरक्तिः ।
भक्तिर्विवेकादिकसप्तजन्या तथा यमाद्यष्टसुबधोकाङ्गा ॥

वह तैलधारा के समान अविच्छिन्न (दर्शन समानाकारा अनुस्मृति रूपा) भगवान की भक्ति विवेकादि साधन सप्तक से प्रकट होती है और यमादि आठ अंगोंवाली परज्ञान रूपा है ॥६६॥

आनन्दभाष्कार भगवान श्रीरामानन्दाचार्यजी का यह श्लोक आपके १४ पीढी पूर्व के पूर्वाचार्य, विशिष्टाद्वैत वेदान्त के आद्याचार्य भगवान वेदव्यासजी के प्रशिष्य, भगवान बोधायन श्रीपुरुषोत्तमाचार्य के उस अभिमत का अक्षरशः अनुसरण करता है जो उनने अपनी बोधायनवृत्ति में ब्रह्मसूत्र के प्रथम सूत्र की व्याख्या में व्यक्त किया है । यथा—

"उपासनं स्याद्ध्रुवानुस्मृतिर्दर्शनान्निर्वचनाच्च" "तल्लब्धिर्विवेक-विमोकाभ्यासक्रियाकल्याणानवसादानुद्धर्षेभ्यः सम्भवान्निर्वचनाच्च" "जात्याश्रयनिमित्तादुष्टादन्नात्कायशुद्धिर्विवेकः ।" "विमोकः कामानभिष्वङ्गः ।" "आरम्भणसंशीलनं पुनःपुनरभ्यासः ।" पञ्चमहायज्ञाद्यनुष्ठानंशक्तितः क्रिया ।" "सत्यार्जवदयादानाहिंसानभिध्याकल्याणानि" "देशकालवैगुण्याच्छोकवस्त्वाद्यनुस्मृतेश्चतज्जंदैन्यमभास्वरत्वं-मनसोवसादः" "तद्विपर्ययजातुष्टिरुद्धर्षः ।"

अर्थात् वह अविच्छिन्न तैलधारावत दर्शनसमानाकारा अनुस्मृति (जिसका नाम पराभक्ति है) इन विवेक आदि ७ साधनों से प्राप्त होती है । आगे उन ७ साधनों को समझाते हैं ।

१. जातिदूषित (प्याज लहसुन गृंजन कुलंजन एवं तामसी पदार्थ) आश्रयदूषित (असत्य हिंसा आदि के आश्रय से प्राप्त) और निमित्तदूषित (नखलोमादि असत्पदार्थों के संसर्ग से एवं श्राद्धादि संकल्प के) अन्न से बचकर शरीर को शुद्ध रखने को विवेक कहते हैं ।
२. असत् कामनाओं के आधीन न होना विमोक कहाता है ।
३. अष्टयाम सेवादि का निरन्तर संशीलन अभ्यास है ।

४. पंचमहायज्ञादि के यथाशक्ति नित्य अनुष्ठान का नाम क्रिया है।
५. सत्य आर्जव दया दान अहिंसा अनभिध्या कल्याण हैं।
६. देशकालादि विषमताजन्य मनोमालिन्य न होने को अनवसाद कहा है।
७. देशकालादि की अनुकूलताजन्य हर्ष का न होना अनुद्धर्ष कहाता है।

यह साधन सप्तक पराभक्ति का प्रादुर्भाव करनेवाला है और यम नियम आसन प्राणायाम प्रत्याहार धारणा ध्यान और समाधि ये ८ साधन भक्ति के अंग हैं।

(नवधाभक्ति वर्णनम्)

उदारकीर्तेः श्रवणं च कीर्तनं हरेर्मुदा संस्मरणंपदश्रितिः।
समर्चनं वन्दनदाससख्यका न्यात्मार्पणं सा नवधेति गीयते॥

महान कीर्तिवाले भगवान् श्रीरामचन्द्रजीकी कथा श्रवण, नाम कीर्तन, उनके रूप एवं गुणका स्मरण, चरण सेवन, पूजा, वन्दन दासता सख्यभाव और आत्मनिवेदन ये नवधा भक्ति कही गई है ॥६७॥

(एकादशीव्रतनिर्णयम्)

एकादशीत्यादि महाव्रतानि च कुर्याद्विवेधानि हरिप्रियाण्यथ। विद्धा दशम्या यदि साऽरुणोदये सद्वादशीं तूपवसेद्विहाय ताम् ॥६८॥

भगवान् के प्रसन्न करनेवाले वेधरहित एकादशी आदि महान व्रत भी मुमुक्षुओं को करने चाहिये। एकादशी अरुणोदयकाल में दशमी से विद्धा हो तो उसे छोड़कर द्वादशी का व्रत करे ॥ ६८ ॥

शुद्धा दशम्या सुयुतेतिभेदत एकादशी सा द्विविधा च बुध्यताम्। वेधोऽपि बोध्यो द्विविधोऽरुणोदये, सूर्योदये वा दशमीप्रवेशतः ॥६९॥

शुद्धा और दशमीसे विद्धा इन दो भेदोंसे एकादशी दो प्रकार की जानो। ऐसे ही, अरुणोदय कालिक एवं सूर्योदयकालिक दशमीके प्रवेश से वेध भी दो प्रकारके होते हैं ॥६९॥

सपञ्चपञ्चप्रमितो बुधो बुधै कालस्तु षट्पञ्चमितोऽरुणोदयः। प्रातस्तु सप्तेषुमितो निगद्यते सूर्योदयः स्यात्तु ततः परं तथा ॥७०॥

विद्वान जन ५५ दण्डात्मक कालको उषः काल, ५६ दण्डात्मक को अरुणोदय काल ५७ दण्डात्मकको प्रातःकाल और ५७ से अधिक के कालको सूर्योदय काल कहते हैं ॥७०॥

प्रातश्चतस्रो घटयोऽरुणोदयो द्विनिश्चयः कालविमर्शिभिः कृतः। तथाऽत्र वेधप्रभृतेर्विपश्चितः प्राहुर्विभागश्चतुरो विवेकतः ॥७१॥

कालके विचारक विद्वानोंने प्रातःकालकी चार घडीको अरुणोदय काल निश्चय किया है। इस प्रकारसे विवेकपूर्वक वेधप्रभृतिके भी चार विभाग कहे है ॥७१॥

घटीत्रयं सार्द्धमथारुणोदय वेधोऽतिवेधो द्विघटिस्तु दर्शनात् रविप्रभासस्य तथोदितेऽर्द्धके सूर्ये महावेध इतीर्यते बुधैः७२

सूर्यके तेजोदर्शनसे पूर्व साढे तीन घड़ी काल अरुणोदय वेध है, दो घड़ी अतिवेध है और सूर्यके आधे उदय हो जानेपर महावेध काल है ऐसा विद्वान् कहते हैं ॥७२॥

योगस्तुरीयस्तु दिवाकरोदये तेऽर्वाक्सुदोषातिशयार्थबोधकाः। सर्वेऽपि वेधा मुनिभिर्विनिश्चिता निर्णेतृभिस्तस्यतु तत्त्वदर्शिभिः ॥७३॥

सूर्योदयमें तुरीय योग होता है। वेधके तत्त्वको जाननेवाले, मुनियोंने सम्पूर्ण वेधोंको दोषातिशयके बोधक निश्चित किया है ॥७३॥

पूर्णेति सूर्योदयकालतः सा या प्राङ् मुहूर्तद्वयसंयुता च।
अन्या तु विद्धा परिकीर्तिता ह्येकादशी सा त्रिविधापि शुद्धा

सूर्योदय कालसे पूर्व दो मुहूर्त संयुक्त एकादशी पूर्ण (शुद्धा) कही जाती है। इससे भिन्न विद्धा कही जाती है। शुद्धा एकादशीको भी विद्वानोंने तीन प्रकारका वर्णन किया है ॥७४॥

एका तु द्वादशीमात्राधिका ज्ञेयोभयाधिका।
द्वितीया च तृतीया तु तथैवानुभयाधिका ॥७५॥

एक तो वह, जिसमें केवल द्वादशी अधिक हो। दूसरी वह, जिसमें दोनों अधिक हों। तीसरी वह जिसमें दोनों ही अधिक न हों। इन तीनोंमें प्रथम सर्वोत्कृष्ट है ॥७५॥

तत्राद्या तु परैवास्ति ग्राह्या विष्णुपरायणैः।
शुद्धाप्येकादशी हेया परतो द्वादशी यदि ॥७६॥

इन में से प्रथम अर्थात् द्वादशीमात्र अधिक ही वैष्णवोंको ग्रहण करनी चाहिये और यदि आगे द्वादशीकी वृद्धि हो तो शुद्ध एकादशी भी छोड़ देनी चाहिये ॥७६॥

उपोष्य द्वादशीं शुद्धां तस्यामेव च पारणम्।
उभयोरधिकत्वे तु परोपोष्या विचक्षणैः ॥७७॥

चतुर विद्वानोंको शुद्ध द्वादशीमें उपवासकरके, दूसरे दिनकी अवशिष्ट द्वादशीमें ही पारण भी कर लेना चाहिये। दोनोंकी अधिकता में परका उपवास करना चाहिये ॥७७॥

उन्मीलिनी वञ्जुलिनी सुपुण्याः सत्रिस्पृशाथो खलु पक्षवर्धनी। जया तथाष्टौ विजया जयन्ती द्वादश्य एता इति पापनाशनी ॥७८॥

उन्मीलिनी, वञ्जुलिनी, सत्रिस्पृशा, पक्षवर्धनी, जया, विजया, जयन्ती, और पापनाशनी ये आठ द्वादशी अत्यन्त पवित्र हैं ॥७८॥

आषाढभाद्रोर्जसितेषु संगता मैत्रश्रवोऽन्त्यादि-
गताद्यपान्त्यकैः। चेद्द्वादशी तत्र न पारणं बुधः पादैः
प्रकुर्याद्व्रतवृन्दहारिणी ॥७९॥

यदि द्वादशी आषाढ़ भाद्र और कातिक मास शुक्लपक्षमें अनुराधा, श्रवण, रेवतीके प्रथम, द्वितीय और तृतीय चरणसे संयुक्त हो तो उसमें पारण न करें क्योंकि वह समस्त व्रतोंका नाश करनेवाली है ॥७९॥

(श्रीरामनवमीव्रतनिर्णयः)

मासे मधौ या नवमी सुयुक्ता शुक्लाऽदितीशेन शुभेन भेन।
कर्के महापुण्यतमा सुलग्ने जातोऽत्र रामः स्वयमेव विष्णुः

पुनर्वसु नक्षत्रसे युक्त चैत्रमासके शुक्लपक्षकी जो परमकल्याणप्रद परम पवित्र नवमी है उसके शुभ कर्क लग्नमें सर्वत्र व्यापक श्रीरामजी स्वयमेव अवतरित हुए हैं ॥८०॥

तामष्टमीवेधयुतां विहाय व्रतोत्सवं तत्रतु वैष्णवश्चरेत्।
असंख्यसूर्यग्रहतोऽधिका वै या केवला सा नवमीप्युपोष्या

अष्टमीके वेधसे युक्त नवमीको छोड़कर अविद्धा नवमीमें वैष्णवों-को व्रतोत्सव करना चाहिये। जो रामनवमी पुनर्वसु नक्षत्रसे रहित हो वह भी अनन्त सूर्यग्रहणसे अधिक फलवाली है अतः उसमेंभी सदा उपवास करना चाहिये ॥८१॥

अत्र प्रकुर्वीत मुदा व्रतोत्सवं रामार्चनं जागरणं महाफलम्।
अनेकजन्मार्जितपापनाशनं रामस्य कीर्तेः श्रवणं च कीर्तनम्

इस श्रीराम नवमी को प्रसन्नता पूर्वक व्रत उत्सव श्रीरामार्चन और जागरण महान फलदायक है। श्रीरामजी के यश का श्रवण और

कीर्तन अनेक जन्मों के एकत्रित किये गये पापों का नाश करने वाला है ॥ ८२ ॥

(श्रीजानकीनवमीव्रतनिरूपणम्)

पुष्यान्वितायां तु कुजे नवम्यां श्रीमाधवे मासि सिते हलेन कृष्टा क्षितिः श्रीजनकेन तस्याः सीताविरासीदुव्रतमत्र कुर्यात्

वैशाख शुक्ल, नवमी, पुष्यनक्षत्र, मंगल के दिन श्रीजनकराजने हल से पृथ्वी को जोताथा, उसी से श्रीसीताजी का प्रादुर्भाव हुआ था अतः इस दिन व्रत करना चाहिये ।

(अथ श्रीहनुमज्जन्मव्रतोत्सवनिरूपणम्)

स्वात्यां कुजे शैवतिथौ तु कार्तिके कृष्णेऽञ्जनागर्भत एव मेषके । श्रीमान् कपीट् प्रादुरभूत्परन्तपो व्रतादिना तत्र तदुत्सवं चरेत् ॥८४॥

कार्तिक, कृष्ण, चतुर्दशी, मङ्गलवार, स्वाती नक्षत्र, मेषराशि में अञ्जनाके गर्भसे शत्रुतापक कपीश्वर श्रीहनुमानजी प्रकट हुये, उस दिन उनका व्रत उत्सव करना चाहिये ॥ ८४ ॥

(अथ नृसिंहजयन्तीनिर्णयः)

वैशाखमासीयचतुर्दशी सिता निशामुखे याऽनिलभेन संयुता । सोमेऽवतारो नृहरेरभूदथो व्रतोत्सवं तत्र मुदा समाचरेत् ॥

स्वाती नक्षत्र युक्त वैशाख शुक्ल चतुर्दशी, सोमवार के दिन सायंकाल श्री नृसिंहजी का अवतार हुआ है । अतः उस दिन प्रेम से व्रतोत्सव करना चाहिये ॥ ८५ ॥

स्मरेण विद्धा तु चतुर्दशी यदा भवेद्धनापत्यविनाशिनी तदा । तत्रोपवासो न जनैर्विधीयतां महात्मभिर्विष्णुपरायणैरपि ॥

यदि चतुर्दशी त्रयोदशी से विद्धा हो तो वह धन और सन्तानकी नाश करनेवाली होती है । अतः विष्णु भक्त महात्माजनोंको भी उस दिन उपवास नहीं करना चाहिये ॥ ८६ ॥

अथ कृष्णाष्टमीनिर्णयः

भाद्रेऽसिते निशीथेऽथ रोहिण्यामष्टमीतिथौ । सिंहमर्के गते सौम्ये कृष्णो जातो विधूदये ॥८७॥

भाद्रपद कृष्ण, सिंह के सूर्य, रोहिणी नक्षत्र, और अष्टमीतिथिमें, चन्द्रोदय होनेपर आधीरात में श्रीकृष्ण भगवान् का प्रादुर्भाव हुआ ।

त्याज्याष्टमी चेदथवाजिविद्धा तथाग्निविद्धं विधिभं च हेयम् चेदष्टमी नो विधिभेन युक्ता महात्मभिर्विष्णुपरायणैस्तैः ॥

यदि अष्टमी रोहिणी नक्षत्र से युक्त न हो और सप्तमी विद्धा हो तो वह महात्मा वैष्णवजनों के लिये त्याज्य है वैसे ही कृत्ति का नक्षत्र से विद्धा रोहिणी नक्षत्र भी त्याज्य है ।

विद्धा जयन्ती यदि सप्तमीयुता शुद्धा तथा सा नवमीयुता यदि । या रोहिणीवह्नियुता तु विद्धिका ज्ञेया च शुद्धा यदि सा परान्विता ॥८८॥

श्रीकृष्ण जयन्ती सप्तमी युक्त विद्धा और नवमीयुक्त शुद्धा हैं तथा रोहिणी नक्षत्र कृति का युक्त विद्धा और पर (मृगशिरा) युक्त शुद्धा जानो ॥ ८९ ॥

(अथ वामनद्वादशीनिर्णयः)

भाद्रेऽथ शुक्लेऽभिजिति प्रभुर्हरिर्या द्वादशी वैष्णवभेन संयुता । तत्रादितावाविरभूच्च वामनो व्रतोत्सवं तत्र मुदा समाचरेत् ॥ ९० ॥

श्रवण नक्षत्र से युक्त भाद्रपद शुक्ल द्वादशी के दिन अभिजित (मध्याह्न) में परम समर्थ सम्पूर्ण पापों के नाश करनेवाले भगवान् श्रीराम वामनरूप से अवतीर्ण हुये । उस दिन आनन्द से व्रतोत्सव करना चाहिये ॥९०॥

स्पृशत्येकादशीं किंवा श्रवणं द्वादशी यदि।
विष्णुशृङ्खलयोगोऽसौ तत्रोपोष्य महत्फलम् ॥९१॥

यदि द्वादशी एकादशी तिथि वा श्रवण नक्षत्रका स्पर्श करती हो तो विष्णुशृङ्खल नामक योग होता है उसमें उपवास करके मनुष्य परम फलको पाता है ॥ ९१ ॥

(अन्य उत्सवविधानम्)

तथा यथाकालमतन्द्रितैस्तकैरथ/थिरोपादिकमुत्सवादिकम्।
सद/ विधेयं हरितोषणं परं, शुभप्रदं तद्बहुशास्त्रसम्मतम् ॥

तथा समयानुसार सावधान होकर वैष्णवों को, अनेक शास्त्र सम्मत मङ्गलप्रद, प्रभुको प्रसन्न करनेवाले रथयात्रादि सर्वोत्तम उत्सव सदा करने चाहिये ॥ ९२ ॥

(निर्हेतुक कृपाप्राकट्यनिरूपणम्)

कर्मप्रवाहेण तु चेतनस्य मग्नस्य संसारमहार्णवे चिरम्।
उपर्यहो संसरतोऽवशस्य सा कृपोभद्वत्येव हरेरहेतुका ॥९३॥

कर्म प्रवाहके द्वारा इस संसार महासागरमें चिरकालसे डूबते (जन्मते मरते) अस्वतन्त्र जीवके ऊपर प्रभुकी निर्हेतुक कृपा प्रकट होती है।

मोक्षे मुमुक्षोर्नहि तारतम्यं फले प्रपन्नस्य तु सत्प्रपत्तेः।
अस्त्येव तद्विष्णुकृपोपलभ्ये पतिं श्रियोऽनन्तगुणार्णवंतम्

प्रपन्न मुमुक्षुवोंको मोक्ष रूप फलमें कोई तर तम भाव नहीं हैं श्रीरमण भगवान की प्राप्ति रूपी मोक्ष उनकी कृपासे प्राप्त होती है ॥९४॥

भवन्त्युपायान्तर एव सर्वे स्वातन्त्र्यतो मुक्तिपदप्रदास्ते।
सुकर्मसंवेदनभक्तियोगाः प्रपत्तिनिष्ठैः समनुष्ठितास्तु ॥९५॥

प्रपन्नोसे अनुष्ठित भगवद्भक्ति से संवलित कर्मयोग ज्ञानयोग भक्तियोग सभी उपायान्तर मुक्ति के देनेवाले होते हैं ॥९५॥

विभुत्वतो निर्भरतापरैस्तैः श्रीव्याप्तिरार्य्यैरभिधीयते हि।
प्रपञ्चनिर्मातृविरिञ्चिहेतुश्रीरामपादाब्जनिविष्टचित्तैः ॥९६॥

प्रपंच निर्माता ब्रह्माजीकी भी कारण रूपा श्री (श्रीजनकजाजू) सहित श्रीरामजीके चरणों के अनुरागी आर्य पूर्वाचार्य श्रीजीकी विभुतापर निर्भर हो सब जगह श्रीजीकी व्याप्ति वर्णन करते हैं ॥९६॥

नित्यं सा पुरुषकारभूता श्रीरनपायिनी।
अनुपायान्तरै विज्ञैरुच्यते तदुपायता ॥९७॥

विज्ञ समस्त उपायान्तरों से अप्राप्य भगवत्प्राप्ति में अनपायनी पुरुषकार रूपा श्री (सीता) जी को ही नित्य उपाय मानते है ॥९७॥

इष्टं वात्सल्यसिन्धोश्च वात्सल्यं दोषभोगिता।
नित्यं समुच्यते तज्ज्ञैः सदाचारपरायणैः ॥९८॥

सदाचार निष्ठ भगवान के गुणोंका अनुसन्धानकरनेवाले आचार्यगण वात्सल्य गुण महोदधि भगवान श्री रामजीके दोष भोग्यता गुणको ही वात्सल्य कहते हैं। भगवान भक्तोंके दोषोंको उसी तरह भोग्यबनालेते हैं जिसतरह गऊ नवजात वत्सके अंगपर लिपटे मल मूत्र रुधिरादिको भोग्य बनाकर चाट लेती है ॥९८॥

दयान्यदुःखस्य निगद्यते बुधैरप्राकृतैस्तैरसहिष्णुता स्तुता।
कृपामहाब्धेः स्तुतकीर्तिसन्ततेर्विष्णोरचिन्त्याखिलवैभवस्य वै

परमोत्कृष्ट विद्वानोंने महानकृपाके समुद्र, परमकीर्तिवाले, और समस्त अचिन्त्य वैभवशाली भगवान श्रीरामजीके दूसरोंके दुःखोंको न सह सकने को ही दया कहते है ॥९९॥

(न्यासस्वरूपनिर्णयः)

स्वीय प्रवृत्तेस्तुनिवृत्तिरिष्टो न्यासोऽथ वेद्योपि बुधैः सदैव।
ऐकान्तिकैस्तत्त्वविचारदक्षैः परात्मनिष्ठैः परमास्तिकैस्तै ॥

तत्त्वविचारमें निपुण, भगवन्निष्ठ, परम आस्तिक, चतुर, एकान्ती विद्वानोंने अपनी प्रवृत्ति (सुखेच्छा) की निवृत्ति को ही न्यास (शरणागति) कहा है ॥१००॥

सर्वे प्रपत्तेरधिकारिणो मताः शक्ता अशक्ता पदयोर्जगत्प्रभोः । नापेक्ष्यते तत्र कुलं बलं च नो न चापि कालो न हि शुद्धतापि वा ॥१०१॥

उन सर्वेश्वर के चरणोंकी प्रपत्तिमें शक्त और अशक्त सभी अधिकारी माने गये हैं । उसमे में कुल, बल, काल और पवित्रता आदि की अपेक्षा नहीं है ॥१०१॥

धर्मत्यागोऽपि परमैकान्तिकैरुच्यते वरैः ।
इत्थं हि कर्मणां त्यागः स्वरूपस्याखिलस्य च॥१०२॥

श्रेष्ठ परमैकान्तिक भक्तोंने "सर्व धर्मान्परित्यज्य" के अनुसार अपने लिये कर्म प्रवृत्तिके त्यागके द्वारा ही सर्व कर्म परित्याग कहा है ।

अथोपायान्तराण्येव प्रवदन्ति मनीषिणः ।
विरोधीनि प्रपत्तेः संबन्धज्ञानस्वरूपिणः ॥१०३॥

सम्बन्ध ज्ञानके जाननेवाले विद्वान् प्रपत्ति के अतिरिक्त उपायान्तरको ही प्रपत्तिका विरोधी कहते हैं ॥१०३॥

लोकसंग्रहणार्थं तु श्रुतिचोदितकर्मणाम् ।
शेषभूतैरनुष्ठानं तत्कैङ्कर्यपरायणैः ॥१०४॥

भगवच्छेषभूत, भगवत्कैंकर्य परायण, महाजन लोग केवल लोकसंग्रहार्थ ही श्रुतिविहित कर्मोंका अनुष्ठान करते हैं ॥१०४॥

तन्न्यासाङ्गानुकूल्यादौ यस्य कस्य महात्मभिः ।
शेषवृत्तिपरैर्हानौ प्रपत्तिन्यूनता न हि ॥१०५॥

भगवच्छेषवृत्तिपरायण महात्मा, भगवत्प्रपत्तिके अनुकूल्यादि अङ्गोंमेंसे किसी एककी हानि होनेसे भी प्रपत्तिकी न्यूनता नहीं मानते ।

रामप्रसादहेतुर्हि न्यासोऽयं विनिगद्यते ।
नित्यशूरैः सदाचारैर्हरिपादाब्जमानसैः ॥१०६॥

सदाचारपरायण हरिचरणकमलानुरागी नित्यशूर (महात्माजन) इस न्यास (शरणागति) को श्रीरामजीकी प्रसन्नताका कारण कहते हैं ।

कृतप्रपत्तिस्मरणं प्रायश्चित्तमथोच्यते ।
परमाप्तैश्च तन्निष्ठैः कोविदैस्तैर्मुमुक्षुभिः ॥१०७॥

भगवन्निष्ठ, परम आप्त विद्वान् मुमुक्षुजन, प्रपत्तिके स्मरण (अनुसन्धानको) ही प्रायश्चित कहते हैं ॥१०७॥

उत्कृष्टवर्णैरपि वैष्णवैर्जनैः निकृष्टवर्णः स तदीयसेवने ।
तथानुसर्तव्य इतीष्यते बुधः शास्त्रैर्विधेये विधिगोचरैःपरैः

शास्त्रकी मर्यादाको पालनेवाले ब्राह्मणादि उत्कृष्ट वर्णके वैष्णवों को भी चाहिये कि जैसे अन्य वर्ण वाले, भागवज्जनोंकी शास्त्रीय विधानानुसार सेवा करते हैं वैसे ही वे भी करें, पूर्वाचार्योंने यही चाहा है ।

अणुव्याप्तौ च भगवानणुत्वणुरुच्यते ।
पराकाष्ठापरैर्विज्ञैर्मतविद्भिर्महात्मभिः ॥१०९॥

भक्तिकी पराकाष्ठामें परायण विज्ञ सम्प्रदाय तत्व वेत्ता महात्माजन अणुव्याप्ति विषयमें भगवान्‌को अणु से भी अणु कहते हैं॥१०९॥

आत्मारामैस्तथोपायस्वरूपज्ञानिभिश्च तैः ।
मतज्ञैर्विरजापारं कैवल्यमिति मन्यते ॥११०॥

वे आत्माराम उपायके स्वरूपको जाननेवाले, संप्रदाय रहस्यज्ञ, विद्वान्, विरजाके पार भगवद्धाम है ऐसा मानते हैं ॥११०॥

जितेन्द्रियश्चात्मरतो बुधोऽसकृत्सुनिश्रितं नाम हरेरनुत्तमम् ॥ अपारसंसारनिवारणक्षमं समुच्चरेद्वैदिकमाचरन् सदा ॥१११॥

जितेन्द्रिय आत्मनिष्ठ विद्वज्जनों ने ठीक से निश्चित किया है कि वैदिक धर्मों का आचरण करते हुए, संसार रूपी अपार समुद्र से पार करने में परम समर्थ भगवान के नाम को सदा उच्चारण करता रहै।

(अथ पञ्चमप्रश्नस्योत्तरम्)

श्रीवैष्णवधर्मप्रकरणम् ॥

एवं तेऽभिहितं वत्स ! प्रकृष्टं मुक्तिसाधनम् ।
उत्तमं सर्वधर्माणां शृणु धर्मं सनातनम् ॥११२॥

हे वत्स सुरसुरानन्द ! इस प्रकार से सर्वोत्कृष्ट मुक्ति साधन मैंने तुमको कहा; अब सर्वधर्मों में उत्तम सनातन धर्म को सुनो ॥ ११२ ॥

दानंतपस्तीर्थनिषेवणं जपो न चास्त्यहिंसासदृशी शुभा कृतिः। हिंसामतस्तां परिवर्जयेज्जनः सुधर्मनिष्ठो दृढधर्मवृद्धये ॥

अहिंसा के समान दान, तप, तीर्थनिवास, और जप आदि कोई भी शुभकर्म नहीं हैं। अतः सुन्दर धर्म में निष्ठा रखनेवाले जन दृढधर्म की वृद्धि के लिये हिंसाको छोड़ दें ॥ ११३ ॥

श्रयन्ति धर्मास्तु तया पृथक् स्थितान् सुवक्रगाः सिन्धुमिवापि निम्नगाः। काष्ठस्थवन्हेरिव घातको हरेश्चराचरस्थस्य च जन्तुहिंसकः ॥ ११४ ॥

टेढ़ी-मेढ़ी नदियां भी समुद्रको प्राप्त होती हैं वैसे ही हिंसासे पृथक रहनेवाले मनुष्यको भी सब धर्म आश्रयण देते हैं। जो हिंसक मनुष्य है वह काठमें अग्निकी भांति चराचरमें व्याप्त रहनेवाले प्रभुकाही घातकरता है।

जलस्थलोत्पन्नशरीरिहिंसया विवर्जयेन्मांससमुदारधीः सदा। दयापरोऽधोगतिहेतुरूपया चिराय लभ्यं भवभीनिवृत्तये ॥ ११५ ॥

उदारबुद्धि दयालु वैष्णव अधोगति और जन्ममरण के कारण भूतमांस को त्याग दे ॥१२५॥

शुभानि कर्माणि समर्पयेत्सदा रामाय भव्यं च निवेद्य भक्षयेत् अहर्दिवं वीतभयः समुत्तमं विमुक्तिधीः स्वाघनिवृत्तिकामनः ॥ ११६ ॥

मुक्तिकी इच्छावाला पुरुष सम्पूर्णपापोंकी निवृत्तिके लिये शुभकर्मों को भगवदर्पण करें तथा सभी पदार्थ भगवान् श्रीरामको निवेदन करके भोजन करे। ऐसा करने से वह संसारके भय से मुक्त हो जाता है।

(अर्चावतारनिरूपणम्)

अर्चावतारोऽपि च देशकालप्रकर्षहीनः श्रितसम्भवश्च। सहिष्णुरप्राकृतदेहयुक्तःपूर्णोऽर्चकाधीनसमात्मकृत्यः११७

अर्चावतार (पूजार्थ प्रतिष्ठित मूर्तिरूप भगवान) देशकालकी उत्कृष्टतासे रहित अर्चकके सम्पूर्ण अपराधोंको क्षमा करनेवाले, आश्रिताभिमत दिव्यदेहसे युक्त; अपने समस्त कृत्यों में अर्चककी अधीनता स्वीकार करनेवाले होते हैं ॥११७॥

स्वयंव्यक्तश्च दैवश्च सैद्धो मानुष एव च।
देशादौ हि प्रशस्ते स वर्तमानश्चतुर्विधः ॥११८॥

प्रशस्त देश आदिमें वर्तमान वह अर्चावतार स्वयं व्यक्त (श्री शालग्रामादि स्वयं प्रकट नेहोवाले) दैव (देवताओं द्वारा प्रतिष्ठित) सैद्ध (सिद्ध पुरुषों द्वारा पूजित) और मानुष (मनुष्यों द्वारा प्रतिष्ठित) भेद से चार प्रकारके हैं ॥११८॥

(अर्चाविधिनिरूपणम्)

आवाहनासनाभ्यां च पाद्यार्घ्याचमनैस्तथा।
स्नानवस्त्रोपवीतैश्च गन्धपुष्पसुधूपकैः ॥११९॥
दीपनैवेद्यताम्बूलप्रदक्षिणविसर्जनैः।
षोडशार्चाप्रकारैस्तमेतैरर्चेत्सदा सुधीः ॥१२०॥

विद्वान् पुरुष आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, यज्ञोपवीत, गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, प्रदक्षिणा, विसर्जन आदि षोडशोपचारसे उक्त अर्चावतारोंका पूजन करें ॥१२०॥

जगत्पते श्रीशजगन्निवास प्रभो जगत्कारण रामचन्द्र । नमो नमः कारुणिकाय तुभ्यं पदाब्जयुग्मे तव भक्तिरस्तु ॥

हे जगत्के स्वामी श्रियःपति जगदाधार जगत्कारण प्रभो परमदयालु श्रीरामचन्द्रजी ! आपको पुनः पुनः मेरा नमस्कार स्वीकार हो । तथा आपके दोनों चरणकमलमें मेरी भक्ति हो ॥१२१॥

मनोमिलिन्दस्तव पादपङ्कजे रमार्चिते संरमतां भवे भवे । यशः श्रुतौ ते मम कर्णयुग्मकं त्वद्भक्तसङ्गोऽस्तु सदा मम प्रभो ॥१२२॥

हे प्रभो ! लक्ष्मीसे पूजित आपके चरण कमलों में मेरा मनरूप भ्रमर जन्म-जन्म रमण करे । मेरे दोनों कान आपके यशको सुननेके लिये उत्सुक रहें और सदा आपके भक्तोंका सङ्ग प्राप्त होता रहे ॥१२२

उरःशिरोदृष्टिमनोवचःपदद्वयप्राजत्करयुग्मजानुना । श्रद्धायुतस्तं प्रणमेन्महीतले दीर्घं कृती सत्कृतधीश्च दण्डवत्

श्रद्धालु, कृती और बुद्धिमान् पुरुष, वक्षः स्थल, शिर, दृष्टि, मन, वचन, पाद, कर और जानु इन आठ अंगोंसे पृथ्वीके ऊपर दण्डके समान पड़कर प्रणाम करे ॥१२३॥

प्रसार्य बाहू चरणौ च साञ्जलिः स्तवैः स्तुवन्यश्च नमेद्रघूत्तमम् । शतैः क्रतूनां तु सुदुर्लभां गतिं स चाप्नुयाद्विष्णुपरायणो जनः ॥१२४॥

जो हाथ पग फैलाकर, हाथ जोड़कर, स्तोत्रोंके द्वारा स्तुती पूर्वक, भगवान् श्रीरामजीको प्रणाम करते हैं वे सैकड़ों यज्ञोंसे भी दुष्प्राप्य गतिको पाते हैं ॥१२४॥

(अथ षष्ठप्रश्नस्योत्तरम्)

(वैष्णवभेदनिरूपणम्)

अथोच्यते वैष्णवभेद ईप्सितो ज्ञातुं च ते विष्णुपरायणैर्जनैः । सुवेदनीयो बहुधा प्रियोत्तम ! सुनिश्चितो विज्ञवरैर्महर्षिभिः ॥ १२५ ॥

हे प्रियतम (सुरसुरानन्द) ! वैष्णव जनों एवं तुम्हारे जानने योग्य परम चतुर विद्वानों द्वारा सुनिश्चित वैष्णवोंके भेदों को कहते हैं ।

प्राप्तुं परां सिद्धिमकिञ्चनो जनो द्विजादिरिच्छञ्छरणं हरिं व्रजेत् । परं दयालुं स्वगुणानपेक्षितक्रियाकलापादिकजातिबन्धनम् ॥ १२६ ॥

मोक्षरूप परासिद्धि की इच्छा वाले ब्राह्मणादि सभी जन, अपने वात्सल्यादिगुणों के द्वारा जाति बन्धन एवं क्रियाकलापादि की अपेक्षा न रखनेवाले परम दयालु श्रीरामजी की शरण में जावें ॥ १२६ ॥

बद्धमुक्तप्रभेदेन चेतनोऽमन्यत द्विधा ।
बद्धो मुमुक्षुरित्येवं बुभुक्षुरिति च द्विधा ॥१२७॥

बद्ध और मुक्त भेदसे चेतन दो प्रकारके माने गये हैं । बद्धभी दो प्रकारके हैं । एक मुमुक्षु और दूसरे बुभुक्षु ॥१२७॥

अनादिकर्मोत्करजातनानादेहाभिमानी सुमतोऽथ बद्धः । स चाच्युताहेतुकृपाकटाक्षाद्विद्येतराद्याभिरुचिप्रवृत्तेः १२८ विमोक्तुमिच्छुस्तु मुमुक्षुरुक्तः संबन्धतः प्राज्ञसुसंमतोऽयम् । तथैव सांसारिकभोगमिच्छुर्बुभुक्षुरन्यः खलु कथ्यते ज्ञैः ॥

अनादिकर्म समूह से नाना प्रकार के देहों का अभिमानी जीव बद्ध माना गया है । वही भगवान् की निर्हेतुक कृपादृष्टि से कर्मों की

प्रवृत्ति के सम्बन्ध से छूटने की इच्छावाला, मुमुक्षु कहाता है तथा जो सांसारिक भोग की इच्छा वाले हैं उन्हें विद्वज्जन बुभुक्षु कहते हैं।

मुमुक्षवोऽपि द्विविधा महर्षिभिः प्रोक्ता अकामाः स्मृतिभक्तिनिष्ठिता। वेदोक्तवर्णाश्रमकर्मकारिणस्तूपास-कादिप्रतिभेदभेदिताः।

महर्षियों ने मुमुक्षु भी दो प्रकार के कहे हैं। कामनारहित तैलधारावदविच्छिन्न भगवत्स्मरणपरायण और वेदोक्तवर्णाश्रम कर्म के करनेवाले उपासक ॥ १३० ॥

स्वकर्मविज्ञानचयाधिसाधनं तथोररीकृत्य हि वत्स कंचन। सम्प्राप्य संबन्धविशेषमुत्तमं सदा भवन्त्येव च मोक्षनिश्चयाः ॥ १३१ ॥

हे वत्स सुरसुरानन्द ! (वे) स्व-अनुष्ठितकर्मविज्ञानादि को ही प्रधान साधन स्वीकार करके भगवान के साथ दास्य सख्यादि किसी उत्तम संबन्ध को प्राप्त होकर सदा मोक्ष में निश्चय वाले होते हैं ॥ १३१ ॥

विहाय चान्यत् परमं कृपानिधिं प्राप्यं समर्थं निरपायमीश्वरम। उपायमेतेऽध्यवसीय सुस्थिताः ज्ञेयाः प्रसन्नाः सततं हरिप्रियाः ॥ १३२ ॥

जो जन अन्य सब कुछ छोड़कर परमदयालु समर्थ, अविनाशी भगवान् श्रीरामजी को ही प्राप्य और उपाय समझकर सुस्थित रहते हैं उन्हें भगवान के सतत प्रिय प्रपन्न जानना चाहिये ॥१३२॥

पुरुषकारैकनिष्ठास्तु हरिस्वातन्त्र्यमेत्य च।
कृपाप्रचुरमाचार्यं मत्वोपायमवस्थिताः ॥१३३॥

तथा जो पुरुषकार निष्ठावाले जन हैं वे श्री रामजीकी स्वतन्त्रता का विचार करके, परम कृपालु आचार्य को ही उपाय मानकर स्थित रहते हैं ॥ १३३ ॥

ते चाचार्य्यकृपामात्रप्रपन्ना द्विविधा मताः।
तथा सेवातिरेकप्रपन्नाश्चेति सदा सताम् ॥१३४॥

वे आचार्यावलम्बी प्रपन्न तथा प्रभुसेवावलम्बी प्रपन्न इन भेदों से दो प्रकार के माने गये हैं ॥ १३४ ॥

प्रपन्नश्चापि दृप्तः स तथा चार्त इति द्विधा।
शरीरस्थितिपर्यन्तमाद्योऽत्र यथोचितम् ॥१३५॥
प्राप्तदुःखादि भुञ्जानः शरीरान्तेऽवसीय च।
महाबोधोऽतिविश्वासो मोक्षसिद्धिमवस्थितः ॥१३६॥
अथान्त्योऽसहमानस्तत्क्षणमेव तु संसृतिम।
तथैव भगवत्प्राप्तौ सत्वरस्वान्त उच्यते ॥१३७॥

वह भी दो प्रकार के हैं। दृप्त और आर्त। दृप्त स्वकर्मानुसार प्राप्त सुख दुःखादिको शरीर की स्थिति पर्यन्त यहां ही भोग करते हुये शरीर के अन्तमें मोक्ष सिद्धि के महान ज्ञान और अत्यन्त विश्वास-युक्त रहते हैं। और जो संसार रूप बडवानलको न सहन करते हुये भगवत्प्राप्ति में अत्यन्त शीघ्रता चाहनेवाले हैं उन्हें आर्त कहते हैं।

श्रवणादिमात्रनिष्ठाः शुद्धभक्ताः प्रकीर्तिताः।
अन्तर्भाव्यास्तत्र तत्र तथानुक्ता मुमुक्षवः ॥१३८॥

भगवान्के यशके श्रवणकीर्तनादिमें ही निष्ठा वालोको शुद्ध-भक्त कहते हैं। यहांपर मुमुक्षुओंके जो अन्य भेद नहीं कहे गये हैं उन्हें पूर्वोक्तमें ही अन्तर्भूत समझ लेना चाहिये ॥१३८॥

(मुक्तभेदनिरूपणम्)

नित्यकादाचित्कभेदान्मुक्तद्वैविध्यमुच्यते।
नित्याः कदाचित्त्रापि सिद्धाः सुपुरुषा नराः॥१३९।

गर्भजन्मादिदुःखं मेऽननुभूय स्थिताः सदा ।
सीतारामप्रियाः शश्वत्ते हनूमन्मुखा मताः॥१४०॥

नित्य और कदाचित्क भेदसे मुक्त दो प्रकारके हैं। गर्भजन्मादि दुःखका अनुभव न करके निरन्तर स्थित रहते हैं वे श्रीसीतारामजीके परमप्रिय हनूमदादि श्रेष्ठ पुरुष नित्य मुक्त कहाते हैं ॥१३९॥१४०॥

परिजनाः परिच्छदा नित्यमुक्ता अपि द्विधा ।
मारुत्याद्याः किरीटाद्याः क्रमात्ते च प्रकीर्तिताः १४१

नित्य मुक्त भी दो प्रकारके हैं परिजन और परिच्छद, श्रीहनुमदादि परिजन हैं और किरीट कुण्डलादि परिच्छद कहे जाते हैं १४१

भागवताः केवलाश्च कादाचित्का अपि द्विधा ।
तत्र भागवता बोध्या ये तु ते भगवत्पराः॥१४२॥

कादाचित्कोंके भी दो भेद हैं। भागवत और केवल। जो भगवत्परायण हैं उन्हें भागवत और अन्यों को केवल जानना चाहिये ॥१४२॥

भगवद्भोग्यभूत्यादिसाक्षात्कारसुखाश्रयाः ।
श्रीराममानसा नित्यं तदनुध्यानतत्पराः ॥१४३॥

भागवतोंके भी दो भेद हैं। एक तो वे जो भगवानके भोग्य ऐश्वर्यादिके साक्षात्कारजन्य सुखके आश्रय हैं। दूसरेवे जो नित्य भगवत्परायण हैं तथा भगवान्का ही ध्यान किया करते हैं ॥१४३॥

केचिद्गुणानुसन्धानपराः कैङ्कर्यतत्पराः ।
इत्थं महर्षिभिः प्रोक्ता द्विविधा भगवत्पराः॥१४४॥

भगवद्गुणानुसन्धान परायण और कैंकर्य परायण, इस प्रकारसे महर्षियोंने भागवतों के भी दो भेद कहे हैं ॥१४४॥

द्विविधाः केवला बोध्या दुःखभावैकतत्पराः ।
आत्मानुभूतिपरमा इति चोक्ता महर्षिभिः ॥१४५॥

एक दुःखभावपरायण तथा दूसरे आत्मानुभूतिपरायण इस प्रकारसे महर्षियोंसे केवल भी दो प्रकारके कहे गये हैं ॥१४५॥

(अथ सप्तमप्रश्नस्योत्तरम)

(वैष्णवलक्षणनिरूपणम्)

समुच्यते सम्प्रति लक्षणं सन्महात्मनां सद्गुणवैष्णवानाम्
विरिंचिशम्भुश्रितरामचन्द्रपदारविन्दस्थितचेतसां तु १४६

अब ब्रह्मा और शिवके द्वारा आश्रयण किये गये भगवान् श्रीरामजी के चरणकमलमें स्थित मनवाले महापुरुष वैष्णवोंके समीचीन लक्षण कहते हैं ॥१४६॥

धृतोर्ध्वपुंड्रस्तुलसीसमुद्भवां दधच्च मालाममलो हि कण्ठतः
सज्जन्मकर्माणि हरेरुदाहरेद्गुणाश्च नामानि शुभप्रदानि

ऊर्ध्वपुण्ड्र और गलेमें, तुलसीकी मालाको धारण करता हुआ, निर्मल-निर्विकार होकर, भगवान्के कल्याणप्रद दिव्य जन्म कर्म और नामोंका गान करे ॥१४७॥

धनुर्धरस्याशृणुयान्निरन्तरं कथां च गायेत्सुयशोऽङ्कितां मुहुः
रूपं तदीयं तु चराचरात्मकं पश्यन्सतां सङ्गमुदारधीश्चरेत्

उदारबुद्धिवाला होकर धनुर्धारी भगवान् श्रीरामजी के सुन्दर यशकी कथा निरन्तर सुने, यशका गान करे तथा भगवान्के चराचरात्मक रूपका दर्शन करता हुआ सत्पुरुषोंका सङ्ग करे ॥१४८॥

चापादिपञ्चायुधचिन्हिताङ्गकः समीक्ष्य दृष्टश्च हरिप्रियानसौ। तथाविधान्भक्तिपरः समर्चयेत्सुवैष्णवाञ्जन्मफलादि संस्तुवन् ॥१४९॥

भगवान्‌के धनुर्बाण आदि पञ्चायुधोंसे अंकित भगवत्प्रिय पवित्र वैष्णवोंको देखकर, प्रसन्न हो (अपने) जन्म-फल आदिकी प्रशंसा करता हुआ, भक्तिपरायण होकर (उनकी) पूजा करे ॥१४९॥

पञ्चायुधाङ्का भुवि वैष्णवा ये मुखाग्रजक्षत्रियवैश्यशूद्राः ।
स्त्रियस्तथान्येऽपि चविष्णुरूपा जगत्पवित्रप्रपवित्रिणस्ते

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, स्त्री, तथा अन्य जो भी कोई पृथ्वी पर भगवान्‌के पञ्चायुधोंसे अंकित हैं वे विष्णुरूप होनेसे जगतके पवित्र करनेवाले तीर्थादिको भी पवित्र करनेवाले हैं ॥१५०॥

ते सर्वतीर्थाश्रयभूतदेहा देशे महाभागवता वसन्ति ।
यत्रैव तद्दर्शनतत्स्थितिभ्यां जातः सुपुण्यो निखिलाघशून्य

समस्ततीर्थों के आधार भूत देहधारी वे महाभागवत जिस देश में रहते हैं वह देश उनके दर्शन और निवाससे पवित्र एवं पाप रहित हो जाता है ॥१५१॥

तदर्चनात्तत्पदनीरपानात्तत्सङ्गतेस्तत्प्रणतेर्विधानात् ।
तद्भोजनानन्तर भोजनाच्चस्यात्कोटिजन्मार्जितपापनाशः

उन महाभागवतोंके पूजन, चरणामृत ग्रहण, प्रणाम, सत्सङ्ग और उनके पश्चात् भोजन करनेसे करोड़ों जन्मके पाप नष्ट होते हैं ॥१५२॥

कार्पासकैः सप्तभिरद्भुतैर्गुणैःसुनिर्मितं तत्कटिसूत्रमुत्तमम् ।
कौपीनकं वस्त्रयुगं च धारयेत्तथोर्ध्वपुण्ड्रादिकमेव वैष्णवः ॥

वैष्णव जन कपासके सुन्दर सात धागोंसे बने उत्तम कटिसूत्र, कौपीन, ऊर्ध्ववस्त्र और ऊर्ध्वपुंड्रादिको धारण करें ॥१५३॥

(अथ अष्टमप्रश्नस्योत्तरम्)

(कालक्षेपप्रकारनिरूपणम्)

अथ कार्य्यः सदा सद्भिः कालक्षेपो मुमुक्षुभिः ।
परमात्मपरैरित्थं वैष्णवैरिति कथ्यते ॥१५४॥

अब मुमुक्षु सत्पुरुष भगवत्परायण वैष्णवोंको कालक्षेप जिस प्रकारसे करना चाहिये सो कहा जाता है ॥१५४॥

त्रिकालसन्ध्यादि विधाय शक्तैः श्रीरामचन्द्रं च समर्च्य नित्यम् । भाष्येण रामायणतो हि कालक्षेपो विधेयोऽपि च भारतेन ॥१५५॥

शक्त पुरुषोंको प्रातः मध्यान्ह और सायंकालमें सन्ध्यादि कर्म एवं भगवान् श्रीरामजीकी पूजा करके, भाष्य (प्रस्थानत्रयीके आनंद-भाष्य एवं भगवान बोधायन श्रीपुरुषोत्तमाचार्य्यकृत भाष्य (वृत्ति) श्रीमद्रामायण और महाभारतके द्वाराही नित्य कालक्षेप करना चाहिये ।

स्याच्चेदशक्तः शृणुयात्कुतश्चिद्ग्रन्थानमून्सुद्धत-माद्विशुद्धः । श्रीरामसन्नामसुकीर्तनं च द्वयानुसन्धानमथो विदध्यात् ॥१५६॥

यदि इसमें अशक्त हो तो किसी परमपवित्र वैष्णव से इन उपर्युक्त ग्रन्थों का श्रवण, श्रीरामजी के उत्तम नामका सुन्दर कीर्तन और द्वयमन्त्र का अनुसन्धान करे ॥ १५६ ॥

दिव्येषु देशेषु सतां प्रसङ्ग तदीयकैंकर्यपरायणो वै ।
यावच्छरीरान्तमहर्दिवं तत्कथामुदारां शृणुयाद्भवघ्नीम् ॥

अयोध्या चित्रकूट आदि दिव्य देशों में सत्पुरुषों का सङ्ग करता हुआ, भागवतकैंकर्य्यानुरागी बनकर, जब तक शरीर रहे तब तक संसार की बाधा को नष्ट करनेवाली भगवत्कथा को श्रवण करता रहे ।

तत्राप्यशक्तास्तु कुटीरमात्रं विधाय कुर्युस्त्वथ राघवाद्रौ । अन्यत्र वासं च गुरूपदिष्टान्मन्त्राञ्जपन्तो ममकारशून्याः ॥ १५८ ॥

इसमें भी असमर्थ हो तो चित्रकूट अथवा अन्यत्र एक छोटी सी कुटिया बनाकर श्रीगुरुमहाराज के दिये हुये मन्त्र का जप करते हुये ममकार (मैं मेरा) आदि से शून्य होकर निवास करे ॥ १५८ ॥

भक्त्यादियुक्तस्य तथानहंकृतेर्महात्मनस्तस्य निदेशपालनम् । उपायमेतं चरमं निरन्तरं सुवैष्णवोऽयं विदधात्वतन्द्रितः ॥ १५९ ॥

उत्तम वैष्णव निरालस्यता पूर्वक भक्ति आदि से युक्त होकर अहंकार रहित उन महात्मा श्रीगुरु देव की आज्ञा पालनरूप अन्तिम उपाय को निरन्तर सेवन करता रहे ॥ १५९ ॥

तदर्थपुष्पप्रचयेन संततं तथैव तन्मन्दिरमार्जनादिना । तदीयनामाभ्यसनेन तन्मनाः क्षिपेत्स कालं नितरां निरालसः ॥ १६० ॥

सर्वदा आलस्य रहित होकर भगवान् श्रीराम की पूजा के अर्थ पुष्प संग्रह, मंदिर मार्जन आदि करते हुये तन्मय होकर नाम रटन के द्वारा कालक्षेप करे ॥ १६० ॥

तीर्थेषु वासेन महात्मनां च समागमेनाथ तदर्चनेन । जिज्ञासया तद्यशसः श्रवेण तच्छ्रावणेन स्मरणेन तस्य ॥

तीर्थ स्थानोंके निवास, महात्माओं के संग एवं भगवान् की पूजा को करते यश सुनते और अन्योंको सुनाते हुए भगवान् की जिज्ञासासे भगवान् का ही स्मरण करते हुए— ॥ १६१ ॥

रामाय साङ्गाय सपार्षदाय सीतासमेताय सहानुजाय । आम्नायवेद्याय विधाय शश्वत् कैंकर्यमीर्ष्यारहितःसुचित्तः ॥

ईर्ष्या द्वेषादि से पृथक् रहकर, सावधान चित्त से अंगों पार्षदों सीताजी और भ्राताओं सहित वेद से जानने योग्य भगवान् श्रीरामजी के कैंकर्य में लगे रह कर सर्वदा काल क्षेप करे ॥ १६२ ॥

(अथ नवमप्रश्नस्योत्तरम्)

(परतत्त्वनिरूपणम्)

तथाविधैस्तैः परमार्थभूतं सुवैष्णवैः प्राप्यमथोच्यते तत् । जितेन्द्रियैरात्मरतैर्बुधाग्र्यैर्महत्तमैः स्वाभिमतार्थदोहम् ॥

अब समदमादि साधनोपेत आत्मपरायण पूर्वोक्त प्रकार से उपासना में निरत श्री वैष्णवों के अभिलषित परम प्राप्य परमार्थ तत्त्व का निरूपण किया जाता है ॥ १६३ ॥

श्रीमान् दिव्यगुणाब्धिरौपनिषदो हेतुः शरण्यः प्रभुर्देवेशो जगतामनादिनिधनो ब्रह्मादिदेवार्चितः । ताराकानलचन्द्रमोबहुमहः सौदामनीभासकोऽजय्यो वीरसपत्नशस्त्रनिचयैर्जेता च तेषां मुहुः ॥१६४॥

नित्यो ब्रह्मविधायकश्च पुरुषस्तद्वेदबोधा बुधा, नित्यानां शरणं तपःप्रभृतिभिः सद्योगिनां दुर्लभः । एकश्चेतनचेतनो भृतजगद्ध्येयः स्वतन्त्रो वशी, स प्राप्योऽस्ति मुमुक्षुभिःसुगुरुभिः सत्सङ्गिभिस्तत्परः ॥

सद्गुरुनिष्ठ सत्संग परायण मुमुक्षुओं के प्राप्य, वेदान्त वेद्य, दिव्य गुणाकर, जगज्जन्मादि हेतु, ब्रह्मादि देवों से पूजित, शरणागत रक्षक, चन्द्र सूर्यादि प्रकाशों के प्रकाशक, सद्योगियों के तपादि से भी अप्राप्य, ब्रह्मादिकों के स्रष्टा, चेतना चेतन जगत के नियामक, वेद-वेद्य, ब्रह्म, आत्म, नर, पुरुष, महापुरुषादि पद वेदनीय, त्रिपाद्विभूति नायक सीताकान्त श्रीराम ही हैं ॥१६४॥१६५॥

तथाविधं प्राप्यमथो सुवैष्णवः सुचिन्तयन्नित्यमनुक्षणं प्रिय ! । सदा सदाचाररतं गुरुं वरं ज्ञातुं भजेताखिलसंशयच्छिदम् ॥ १६६ ॥

श्री वैष्णव इस तरह निरन्तर विचार करता हुआ उपर्युक्त प्राप्य भगवान्को जाननेके लिये समस्त संशयों को छेदन करनेवाले सर्वदा सदाचार निरत श्रेष्ठ गुरुका आश्रयण करे ॥१६६॥

(अर्चिरादिमार्ग निरूपणम्)

सत्सङ्गतः सन् हि गतस्पृहो मुहुः श्रीशं प्रपद्याथ गुरोर्मुखादसौ । कर्माखिलं संपरिभुज्य चात्मवान् प्रारब्ध-मेवं महतान्यकर्मकः ॥१६७॥

न्यासात्स्वतन्त्रेश्वरजातसदयानिलूनमायान्वय एव देशिकः । हार्दोक्तिमानुग्रहलब्धमध्यसन्नाडीशुभद्वारवहिर्वि-निर्गतः ॥१६८॥

मार्गं ततः सोर्चिरुपैति मुक्तकस्तथार्चिषोऽह्नो दिनतः सुरार्चितः । आपूर्यमाणं विविधैस्तु वासरैः पक्षं प्रभूतोत्तम-शर्मविज्वरः ॥१६९॥

वह आत्मवान् मुमुक्षु पुरुष सत्संगके प्रभावसे सभी सांसारिक पदार्थोंसे निःस्पृह होकर श्री गुरु महाराजके द्वारा सीताकान्त भगवान् श्रीरामजी की शरणागतिको प्राप्त हो, समस्त प्रारब्ध कर्मोंका उपभोग, प्रपत्तिसे संचित कर्मोंका नाश, एवं समस्त क्रीयमाण कर्मोंको सुहृद असुहृदमें विभाजन करके सर्वस्वतन्त्र भगवान् की परम अनुकम्पासे माया से छुटकारा पाकर भगवान्के हार्द और उत्तम अनुग्रह को प्राप्त कर सुषुम्ना नाडीके द्वारसे निकल कर अर्चिरादिमार्गको प्राप्त होता है । अह-र्मार्गसे देवपूजित होकर अनेक दिवसोंसे पूर्यमाण पक्षको प्राप्त होता है । वहांसे अनेक उत्तम उत्तम सुखोंकी स्पृहासे पृथक् होकर— ॥१६७,१६८,१६९॥

पक्षादुदङ्मासमथोषडात्मकं तस्माच्च संवत्सरमब्दतोऽरविम् चन्द्रं ततश्चन्द्रमसोऽथ विद्युतं स तत्र तत्राखिलदेवपूजित परं पदं सैवमुपेत्यनित्यममानवो ब्रह्मपथेन तेन । सायुज्यमेव प्रतिलभ्य तत्र प्राप्यस्य सन्नन्दति तेन साकम्

पक्षसे छैमासवाले उत्तरायणको वहांसे संवत्सर, सूर्य, चन्द्र, विद्युत् लोकोंमें सर्व देवोंसे पूजित होकर वह महाभाग उस अर्चिरादि ब्रह्ममार्ग से भगवान्के सनातन सर्वोत्कृष्ट साकेतलोकको प्राप्त करके, सायुज्यको प्राप्त होकर, वहां भगवान्के साथ सर्वथा आनन्दमें विहार करता है ॥१७०॥१७१॥

सीमान्तसिन्ध्वाप्लुत एव धन्यो गत्वा परब्रह्मसुवीक्षितोऽथ प्राप्यं महानन्दमहाब्धिमग्नो नावर्तते जातु ततः पुनः सः ॥

इस चतुष्पाद्विभूति की सीमाके अन्तमें महानदी विरजामें स्नान करके प्राप्य (भगवान् श्रीराम) को प्राप्त हो वह धन्य धन्य पुरुष भगवान्के कृपाकटाक्षसे कटाक्षित हो महान आनन्दके महासागरमें निमग्न होकर पुनः कभी भी वहांसे नहीं लौटता ॥१७२॥

सदानुसन्ध्येयमिमं त्रिकालं मुमुक्षुभिस्तं परमार्थमित्थम् ज्ञात्वा न चैवास्ति सुवेदनीयं जिज्ञासुभिस्तैरवशिष्यमाणम् ।

सायं, प्रातः और मध्याह्न तीनों कालोंमें सर्वदा इस परमार्थ वस्तु (अर्चिरादि मार्ग) का चिन्तन करना चाहिये । इसके जानने के पीछे वैष्णव जिज्ञासुओंको जाननेके लिये कुछ भी शेष नहीं रहता है ॥१७३॥

गुरुद्रुहे नो न शठाय नूनं न नास्तिकायोपदिशेत्कदाचित् । नावैष्णवायापि रहस्य मेतन्न दीनचित्ताय सुगोपनीयम् १७४

इस अत्यन्त गोपनीय रहस्यका गुरुद्रोहीको, शठको, नास्तिकको अवैष्णवको और महाकृपणको निश्चयही कभी भी उपदेश नहीं करना चाहिये ॥१७४॥

जितेन्द्रियः प्रपन्नस्तं बुध आत्मरतिर्हरिम् ।
प्राप्नुयात्परमं स्थानं योऽनुतिष्ठेदिदं मतम् ॥१७५॥

जितेन्द्रिय हो आत्मरतिको प्राप्त करके जो विद्वान भगवान् श्रीरामजीकी शरणागतिका अवलम्बन करते हुये इस मन्तव्यका अनुष्ठान करेंगे वह परमस्थान (नित्य-दिव्य साकेत लोक) को प्राप्त करेंगे १७५

(अथ अष्टमप्रश्नस्योत्तरम्)

(श्रीवैष्णवनिवासस्थाननिरूपणम्) अर्थ सरल है।

अथ मोक्षप्रदं शास्त्रसम्मतं वत्स तेऽधुना ।
वैष्णवानां च सर्वेषां वासस्थानं निरूप्यते ॥१७६॥
वासुदेवं हि वैकुण्ठे तथामोदे सुकर्षणम् ।
प्रद्युम्नं च प्रमोदे संमोदेऽर्चेदनिरुद्धकम् ॥१७७॥
विष्णुः सत्यलोके च पद्माक्षः सूर्यमण्डले ।
क्षीराब्धौ शेषशायी च श्वेते पूज्यश्च तारकः ॥१७८॥
नारायणं वदर्यां च नैमिषे श्रीहरिं तथा ।
शान्तो दान्तो निरीहः सन्वैष्णवः पूजयेत्सदा ॥१७९॥
शालग्राममघोघदिव्यफलदं देवं हरिक्षेत्रकेऽ-
योध्यायां रघुपुङ्गवं गुणनिधिं श्रीरामचन्द्रं प्रभुम् ।
सत्स्थाने मथुराभिधाश्रमवरे श्रीबालकृष्णं परम् ।
मायायां मधुसूदनं हरिजनो नित्यं मुदा पूजयेत् ॥१८०॥
काश्यां भोगिशयं सनातनमथावन्त्यामवन्तीपतिम्,
श्रीमद्द्वारवतीतिनाम्नि शुभदे श्रीयादवेन्द्रं मुदा ।
अर्चेच्छ्रीव्रजनामके सुरनुतं गोपीजनानां प्रियं,
ब्रह्मेशादिकिरीटसेवितपदाम्भोजं भुजङ्गाश्रयम् ॥१८१॥

वृन्दावने नन्दसुतं गोविन्दं कालियह्रदे ।
गोवर्धने गोपवेषं भवघ्ने पद्मलोचनम् ॥१८२॥
गोमते पर्वते शार्ङ्गिं हरिद्वारे जगत्पतिम् ।
प्रयागे माधवं चार्चेद्गयायां तु गदाधरम् ॥१८३॥
गङ्गासागरसङ्गमेऽतिशुभदे विष्णुं तथा राघवं,
शाश्वद्भूरि गुणालये मुनिवृते श्रीचित्रकूटे विभुम् ।
नन्दिग्राम उदारकीर्तिनिकरं श्रीराक्षसघ्नं प्रभुं,
प्रार्चेच्छ्रीमति विश्वरूपिणमथो क्षेत्रे प्रभासेऽमले ॥१८४॥
श्रीकूर्माचल उत्तमे च सदयं कूर्मं सुरेशेडितं,
नीलाद्रौ पुरुषोत्तमं किल महासिंहं च सिंहाचले ।
श्रीमन्तं तुलसीवने तु गदिनं सर्वार्थदं तत्प्रिये,
क्षेत्रे श्रीकृतशौचके तु सततं पापापहं पूजयेत् ॥१८५॥
श्रीविठलं तं किल पाण्डुरङ्गेऽर्चेद्वेङ्कटाद्रौ कमलासहायम् ।
नारायणं श्रीमति यादवाद्रौ नृकेसरीशं घटिकाचले तु ॥१८६॥
वरदं वारणाद्रौ च काञ्च्यामम्बुजलोचनम् ।
पूजयेत्सततं श्रद्धायुक्तः श्रीवैष्णवो जनः ॥१८७॥
तोताद्रौ तुङ्गशयनं पूजयेद्वैष्णवोत्तमः ।
अन्येष्वपि च तीर्थेषु निवसेत्पूजयन्हरिम् ॥१८८॥

इत्यानन्दभाष्यकार अनन्त श्रीजगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्य यति सार्वभौमप्रणीतः श्रीवैष्णवमताब्जभास्करः समाप्तः ।

(यति सार्वभौम श्रीआचार्यपादेन स्वरचित श्रीमद्भगवद्गीता आनन्द भाष्यके मङ्गलाचरणमें इसप्रकारसे पूर्वाचार्योंकी वन्दना की है)

श्रीरामं जनकात्मजामनिलजं वेधो वशिष्ठावृषी
योगीशं च पराशरं श्रुतिविदं व्यासं जिताक्षं शुकम् ।
श्रीमन्तं पुरुषोत्तमं गुणनिधिं गंगाधराद्यान् यतीन्
श्रीमद् राघवदेशिकं च वरदं स्वाचार्यवर्यं श्रये ॥१॥

❀ श्रीमदाचार्यवर्यपर्यन्तपूर्णपरम्परावन्दनम् ❀

श्रीरामं वसुधात्मजामनिलजं वेधोवशिष्ठौ तथा
तातं व्यासमुनेः शुकेन सहितं व्यासञ्च बोधायनम् ।
श्रीगङ्गाधरदेशिकं वरसदाचार्यं च रामेश्वरं
द्वारं देवयुतं श्रुतार्यसहितं श्यामं चिदानन्दकम् ॥१॥
पूर्णानन्दयुतं श्रियार्यसहितं हर्यार्यवेदान्तिनं
त्र्यन्तार्थविदं त्रिदण्डिषु मणिं श्रीराघवानन्दकम् ।
आनन्दाख्यसुभाष्यरत्नरचकं रामं महायोगिनं
रामानन्दमुनिं यतिक्षितिपतिं वन्दामहे शाश्वतम् ॥२॥

(हिन्दी) श्रीराम सीता हनुमान ब्रह्मा वशिष्ठ
पाराशर व्यास शुक बोधायनाख्य-पुरुषोत्तम ।
गंगाधर सदाचार्य रामेश्वर द्वारानन्द
देवानन्द श्यामानन्द श्रुतानन्द पूज्योत्तम ॥
चिदानन्द पूर्णानन्द श्रियानन्द हर्यानन्द
राघवानन्द श्रीरामानन्द भाष्यकारोत्तम ।
इन पूर्वाचार्यनको सप्रेम प्रणाम
जिन थाप्यो है श्रीसंप्रदाय कल्पद्रुम सर्वोत्तम ॥१॥

पूर्वाचार्यों के सहित जगदुद्धारक जगद्गुरु आनन्द भाष्यकार आचार्यपाद यति सम्राट हिन्दू धर्म रक्षक अनन्त श्रीरामानन्दाचार्य जी का चरित्र उपरोक्त षटपदी संख्या ३५ में जो श्रीनाभा स्वामीजी ने वर्णन किया उसका समयानुसार वर्णन यहाँ तक हुआ, अब प्रधान शिष्यों के साथ जो षट्पदी संख्या ३६ में वर्णन किया गया है उसको प्रेमी पाठक आगे अवलोकन करें ।

(प्रधान द्वादश शिष्यों के सहित भगवान श्रीरामानन्दाचार्य यश वर्णन)

मू० छ०—अनन्तानन्द कवीर योग सुख नरहरि सुरसुर । पीपा गालव भाव धना रैदास सेनवर । औरौ शिष्य प्रशिष्य एकते एक उजागर । विश्व-मंगलाधार सर्वसुख दशधाआगर ॥ बहुत काल वपु धारके, प्रणत जनन को पार दियो । रामानँद रघुनाथ ज्यों, द्वितिय सेतु जग तरण कियो ॥३६॥

इस षट्पदी की भी श्रीप्रियादासजी ने कोई टीका नहीं की, परंतु आचार्यपाद यति सार्वभौम श्रीरामानन्दाचार्यजी के इन १२ प्रधान शिष्यों के विषद चरित्र प्राचीन महाकवि श्रीक्षितीशजी, उनके पुत्र और पुत्र के मित्र (जिनका नाम नहीं प्राप्त होता) तीनों ने मिलकर देशवाडी प्राकृत भाषा में लिखे हैं जो श्रीअयोध्याजीके प्रमुख साहित्य-कार एवं पत्रकार स्वामी श्रीबिन्दुजी और श्रीबालकरामजी विनायक के द्वारा हिन्दी में अनूदित होकर "महाभागवत चरित" नाम से २ भागों में मानस संघ रामवन (सतना) से प्रकाशित हुए हैं, वे प्रेमियों के

अवलोकन के योग्य हैं। उन्हीं के और प्रसंगपारिजात अगस्त्य-संहितादि के आधार पर यहां अत्यन्त संक्षेप में इन महाभागवतों के चरित्र दिये जा रहे हैं। इनमें से श्रीकबीरजी श्रीसुखानन्दाचार्यजी श्रीनरहर्यानंदाचार्यजी श्रीसुरसुरानन्दाचार्यजी श्रीपीपाजी श्रीधनाजी श्रीसेनजी और श्रीरैदासजी की कथा आगे छप्पै ५९ से ६७ तक में आवेगी और श्रीअनन्तानन्दाचार्यजी श्रीयोगानन्दाचार्यजी श्रीगालवानन्दाचार्यजी एवं श्रीभावानंदाचार्यजी की यहाँ लिखी जा रही है।

(जगद्गुरु अनन्त श्री स्वामी अनन्ताचार्यजी की कथा)

सरवार प्रदेश (श्रीअयोध्याजी के समीप, सरयू पार) में रामरेखा के तट पर महेशपुर निवासी सनाढ्य द्विजवर श्रीविश्वनाथमणि त्रिपाठी निवास करते थे जो प्रायः सभी पर्वों उत्सवों पर और यों भी बराबर श्रीअयोध्याजी की यात्रा किया करते थे, इसी से उनको लोग अवधू पंडित के नाम से कहने लगे थे, अतः उनका नाम अवधू पंडित ही प्रसद्धि हो गया था।

एक बार इन अवधू पंडित ने रामरेखा और श्रीसरयूजी के संगमस्थल पर घोर तप करके श्रीसरस्वतीजी से वरदान प्राप्त किया, जिसके फलस्वरूप सरस्वतीजी साँउ ग्राम के पं० विशालदेव शुक्ल के यहां अवतरित हो इनसे विवाही जाकर एक पुत्र प्रसव कर अन्तर्धान हो गई और वनदेवियों द्वारा बालक का पालन पोषण हुआ जो छन्नू नाम से पुकारा जाने लगा। कुछ ही काल में श्रीअवधू पंडित जी परलोक सिधार गये और ग्वाल जाति के बीच वन में रहता हुआ बालक छन्नू अपने आप को ग्वाल गोपाल ही समझने लगा तथा गोवत्सचारण करने लगा।

एक दिन छन्नू की गाय बछड़े चराते हुए जंगल में एक अलौकिक रूप लावण्य वान् परम मनोहर स्वर से वंशी बजाते हुए गोपाल 'सँवरू' से भेट हो गई, जिसके सौंदर्य और वेणुवादन से छन्नू

मोहित हो गया। दोनों में सुदृढ़ मैत्री हो गई। सायंकाल जब अपने अपने घर लौटने का प्रसंग आया तो छन्नू वियोगानल से व्याकुल हो गया, परंतु आखिर घर तो लौटना ही पड़ा। इस प्रकार साथ साथ गोचारण कर कुछ दिन दोनों मित्रों ने अपूर्व सुख का उपभोग किया। एक दिन छन्नू सायंकाल विदा लेते हुए मित्र के साथ, अपने घर मुझे भी ले चलो-कह कर मचल पड़ा और सँवरू के आदेश के अनुसार आँख मूदकर मित्र के घर (गोवर्धन) पर पहुँच गया, वहाँ अष्ट सखियों द्वारा बड़ा पूजा सत्कार प्राप्त किया, फिर भागवत की कथा सुनते हुए ब्रह्मा के मोह की कथा में वह मूर्छित हो गया और मूर्छा खुलने पर सब दृश्य अदृश्य हो गया एवं छन्नू ने अपने आपको वहीं अपने घर के पास जंगल में पड़ा पाया।

इधर पं० श्यामकिशोरजी नामक एक विद्वद्वरिष्ठ द्विजवर को ध्यान के समय भगवदाज्ञा हुई कि उस ब्रह्मांश से उत्पन्न बालक को लाकर पितृवत् पालन पोषण करो, पढ़ाओ लिखाओ और विद्वान बनाओ। पंडितजी ध्यान संकेतानुसार खोजते ढूंढते यहां पहुँचे और अपने मित्र सँवरू के विरह में व्याकुल बेहाल पड़े सँवरू सँवरू पुकारते बालक को दुलार पुचकार कर मित्र से मिलाने का आश्वासन दे घर ले आये। कालान्तर में गोपाल बालक छन्नू पं० छन्नूलालजी के नाम से पुकारे जाने लगे। इसी बीच में तुगलंदाज तुर्क के सेनापति के उत्पीड़न से गांव भाग छूटा, पं० श्यामकिशोरजी भी अपने धर्मपुत्र छन्नू पंडित सहित भागकर श्रीअवध होते हुए काशी पहुंच गये और श्रीविश्वनाथजी के समीप ही ब्रह्मपुरी नामक मुहल्ले में रहने लगे। पीछे पं० श्यामकिशोरजी शरीर छोड़ भगवद्धाम सिधार गये तब पं० छन्नूलालजी काशी में अद्वितीय वेदज्ञ समझे जाने लगे।

एक बार श्रीमहाशिवरात्री के जागरण में जागते हुए पं० छन्नूजी ने आचार्यपाद आनन्दभाष्यकार भगवान श्रीरामानन्दाचार्यजी

की शंख ध्वनि सुनी, उसका कुछ ऐसा प्रभाव हुआ कि पंडितजी उसी विरहकातर दशा को प्राप्त हो गये जो पहिले बाल्यकाल में मित्र सँवरु के वियोग में हुई थी।

उस मोहिनी वेणुनाद के सदृश इस महामोहक शंख ध्वनि के उद्गम स्थान का पता लगाते पंडित छन्नू लालजी पंच गंगा घाट पर श्री मठ में पहुँचे। वहां घन्टों नहीं प्रहरों दर्शन की प्रतीक्षा करते उसी विरह व्याकुल अवस्था में पड़े रहे और जब पुनः शंख ध्वनि हुई तो सुनकर उठे तथा सामने ही श्रीमदाचार्यपाद के दर्शन करके वही सुख प्राप्त किया जो मित्र सँवरु के दर्शन से होता था। अब पंडितजी घर द्वार धन संपत्ति सबको भुलाकर मनही मन यहीं रहने का निश्चय कर चुके थे, इतने ही में श्रीमदाचार्य चरण की आज्ञा हुई कि अच्छा यहां आश्रम में झाड़ू लगाया करो। पंडितजी को न किसी धनविद्याका अभिमान उस नीच टहल से रोक सका और न जातिपाँति या लोक सम्मान का भूत ही बाधा डाल सका। पंडितजी एक दास की भाँति वहां आश्रम में झाड़ू की सेवा में तल्लीन रहते हुए निवास करने लगे। पूरे एक वर्ष इस प्रकार परीक्षा ली जाने पर श्रीमदाचार्यपाद यतिराज-राज ने उन्हें पंच संस्कार पूर्वक श्रीवैष्णवी दीक्षा में दीक्षित कर श्री अनन्तानन्दाचार्य नाम प्रदान किया। श्रीगुरु रूप में साक्षात् भगवान राम ही को प्राप्त कर, आपके आनन्द की सीमा नहीं रही और अब आप केवल झाड़ू ही नहीं प्रत्युत आश्रम में श्रीभगवद्भागवत आराधन (पूजा रसोई), आगन्तुकों का आदर सत्कार, जिज्ञासुओं का समाधान और अर्थार्थियों को मनोभिलषित प्रदान आदि सभी काम का भार वहन करने लगे।

आकाशमार्ग से आनेवाले सिद्धों का आकाश ही में स्वागत सत्कार, बिल्लीयों का रूप धारण कर वसु पुत्रियों का आना और उनको आपके द्वारा अभिलषित प्रसाद प्रदान होना, कश्मीरी मीमांसक

महोदय का समाधान, आशौच के कारण ग्वाला के यहां से दूध न आने से चिंतित होने पर बालमित्र संवरु का दूध दे जाना, श्रीकबीरजी को शिशु अवस्था में पहुँचाने के लिये श्रीमदाचार्यचरण की आज्ञा से जड़ी लेने जंगल में गये तब किरात रूप में श्रीस्वामिकार्तिकजी से संवाद आदि स्वामी श्रीअनन्तानन्दाचार्यजी के अलौकिक चरित्रों का एवं अनेकानेक उपदेश सत्संगों का वर्णन विस्तार से इन ग्रंथों में हुआ है जिस सबका समावेश यहां स्थानाभाव से असंभव है। विज्ञ पाठकों को उन सबका आनन्द उक्त ग्रंथों को पढ़कर अवश्य लेना चाहिये।

(आचार्यपाद अनन्त श्रीस्वामी श्रीयोगानन्दाचार्यजी की कथा)

किसी कविकी उक्ति है :—

योग सुपथ उद्धार हित, योगानन्द कपिल भये॥
श्रीगुरु पदरज सेइ सकल शास्त्रन्ह मथिलीन्हे।
विजय नगर महँ जाय विरोधिन्ह विजय सो कीन्हे।
श्रीरंगम् महँ जाय वादकरि बरबर जीते।
चित्रकूट ब्रज अवध परम सुख बहुदिन बीते॥
गुर्जर धरा प्रचारकरि, कलिहि धर्मसह जिन जये।
योग सुपथ उद्धारहित, योगानन्द कपिल भये॥

सिद्धपुर क्षेत्र (गुर्जर देश) निवासी वैदिक तपस्वी श्रीमणि शंकरजी शर्मा को भगवान भास्कर ने वृद्ध ब्राह्मण के रूप से एक फल प्रदान कर पति पत्नी को आधा आधा खालने की आज्ञा दी और वैसा ही करने के पश्चात दसमास में उनको वैशाख कृष्ण ७ बुधवार संवत १४५७ को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। मूल नक्षत्र में जन्म होने से १ वर्ष तक पिता को बालक का मुख न देखने का शास्त्र विधान पिताजी की तीर्थ यात्रा के कारण अनायास ही सध गया।

बालक को दीपक की ज्योति से असाधारण प्रेम था, रात हो या दिन, दीपक बुझाते ही रोने लगता और जलते हुए दीपक को टकटकी लगाये देखता रहता। इससे सब आश्चर्यान्वित भी थे और चिंतित भी। ज्ञानवयोवृद्ध श्री ध्यानदेवजी को समीप के बास-वासा गांव से बुलाकर सब हाल बताया तो उनने कहा ये सामान्य बालक नहीं कोई, अवतारी पुरुष है। तुम लोग चिन्ता छोड़ दो और उन्हींने नामकरण करके बालक का नाम यशोदत्त रक्खा।

४ वर्ष का होनेपर बालक दीपक देखना छोड़कर अध खुली आखों से रहने लगा, जैसे तो तंद्रा (झपकी) लगी रहने का कोई रोग हो गया हो, परंतु अन्य कोई भी रोग के लक्षण या पीडा नहीं थी। बहुत कुछ झाड़ फूक दवा दारू की गई परन्तु यह झपकी न हटी।

एकदिन ग्रामके बाहर अमराई में एक संत मंडली (जमात) आकर टिकी, ग्रामके सभी स्त्री पुरुष अपने अपने घरों से कुछ न कुछ सेवा भोगकी सामग्री ले वहां स्वागतार्थ गये। बालक यशोदत्तको साथ लेकर माता पिता भी वहां गये। जब भगवानको भोग लगाकर सन्त सब प्रसाद पाने बैठे तब यशोदत्तने श्रीमहन्तजीके समीप जाकर हाथ बढा सीथ प्रसाद की याचनाकी, उस समय वह पूरे नेत्र खोलकर सन्तोंकी ओर देख रहा था और उसी समय से वह नेत्रोंकी अर्ध मुद्रितावस्था चली गयी।

९ वर्ष के हुए तब यज्ञोपवीत संस्कार होकर श्रीनाथजी कर्मकांडी की पाठशाला में अध्ययन आरम्भ हुआ और फिर कर्मकांडीजी के आदेशानुसार काशी आकर श्रीनारायण भट्टजी शास्त्री से न्याय एवं साहित्य पढने लगे। यहाँ पडोस में एक वृद्ध कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे उनने अपनी अन्तिम अवस्था में आपसे प्रार्थना की कि मेरी पुत्री को आप ग्रहण करने की कृपा करके मरण काल की इस महा चिन्ता से मुझे मुक्त कर दीजिये। आपने दया परवश हो स्वीकृति प्रदान करदी।

गांव में पिताजी को सूचना दी अतः पिताजी सपरिवार काशी पहुँच आनन्दोल्लास पूर्वक पुत्र का विवाह किया। कुछ ही दिन में श्वसुर स्वर्ग सिधार गये और आपको वहीं रहने को बाध्य होना पडा। सपत्नीक रहकर भी आप अध्ययन में तल्लीन रहे तथा कुछ दिन में महा विद्वानों में स्थान प्राप्त कर लिया। फिर योग साधना से प्रेम हो गया और उसमें भी आपने कुछ ही काल में परम योग्यता प्राप्त कर ली, समाधि लगाने लगे और तीन लम्बी समाधियां सफलतापूर्वक लगाई. जिनमें प्रथम १३ मास में, दूसरी ८ मास में और तीसरी १७॥ मास में उतारी गई।

आपका गृहस्थ जीवन भी पूर्ण सुखी था। पतिप्राणा पत्नी सदा आपको योग साधनादि में अपनी सेवा सुश्रुशादि से सहायता पहुँचाया करती और सदा आज्ञाकारिणी ही नहीं प्रत्युत मानसानुसारिणी रहती थी। एक बार आपकी धर्मपत्नी बहुत बिमार पड़ गई, किसी औषधि या उपचार से कोई लाभ नहीं हुआ, तब आपने अपने योग बल से उसकी प्राण रक्षा की परन्तु काल की गति तो विचित्र है एक ऐसी घटना घटी कि उसका शरीर छूट ही गया। वह घटना यह है।

एक दिन आप गंगा पार जा रहे थे उस समय जाते जाते न जाने क्यों आपके मुख से हास्य ही हास्य में निकल गया कि हम गंगा पार जाते हैं अब लौटेंगे नहीं। सायंकाल हुआ, रात्री हो गई, पर आप न लौटे, क्योंकि वहाँ किसी संत से सत्संग छिड गया था। इधर पत्नी ने विरह कातर हो सोचा, "कह जो गये थे हम न लौटेंगे" अतः अब न लौटेंगे। और शरीर परित्याग कर दिया। आकर देखा तो बडे दुखी हुए, अन्तेष्ठी की, श्राद्ध किया और उसमें सर्वस्व दान कर श्रीशिवा शिव के आदेशानुसार नंगे पैरों ही श्री मठ पहुँचे। परदे के बाहर से ही सब वृत्तान्त निवेदन हुआ तो भीतर से श्रीमदा-

चार्य पाद की आज्ञा हुई कि सौघड़ी (४० घंटे) एक पाँव से खड़े रहो, पैर न काँपे, तो दीक्षा होगी। आप खड़े हो गये और १॥ दिन रात खड़े रहे अन्त में पैर डिगमगाना ही चाहते थे कि श्रीअनन्तानन्दाचार्यजी ने संभाल लिये। परदा हटा, नैयायिकजी श्रीमदाचार्य के चरण कमलों में साष्टांग पड़ गये, त्राहिमां त्राहिमां कहने लगे। श्रीआचार्य पाद ने उठाकर पास बैठाया। श्रीवैष्णवी दीक्षा प्रदान कर आज्ञा दी कि जिनने गिरने से बचाया है उनसे शिक्षा ग्रहण करो, सेवा करो और आज्ञानुवर्तन करो।

श्रीमदाचार्य पादने श्रीअनन्तानन्दाचार्यजी से कहा अपने शिष्य को अमृत रस पिलाओ जो आद्याचार्य श्रीआंजनेयजी से प्राप्त हुआ है। श्रीअनन्ताचार्यजी ने वह अमृत रस भी पिलाया और प्रस्थान त्रयी का आनन्द भाष्यामृत भी पिलाया। स्वयं यतिराज राजने २४ तत्वों का तात्विक ज्ञान प्रदान किया, जिससे अनीश्वर सांख्य और सेश्वर सांख्य का रहस्य भी समझ गये और यह भी समझ गये कि सांख्यवादी ईश्वरको जगत का कारण क्यों नहीं मानते।

श्रीआचार्यपाद की द्वितीय गांगरोनढ आदि की पश्चिम यात्रा के समय आप साथ थे और भगवत सेवाका कार्य किया करते थे। प्रभुका विमान (सिंहासन) मस्तक पर विराजमान कर यात्रा में श्रीआचार्यपादकी पालकी के आगे आगे उलटे पैरों (पालकी की ओर मुख किये) चलते थे उस समय भगवान भास्कर के साथ बालखिल्य से प्रतीत होते थे।

श्रीपीपाजी के राज्यपाट छोड़कर विरक्त हो श्रीआचार्यचरण के साथ हो लेने पर उनकी पतिप्राणा पत्नी श्रीसीतासहचरी की पति की आज्ञानुसार कंबल फाड़कर बनाई गई कफनीको सुन्दर साड़ी बना देना। श्रीजगदीश पुरी में चन्दन तालाब में जीर्णोद्धार के पश्चात् जलश्रोत का लाना। श्रीवेंकटाचल में श्रीरामानुजीय वैष्णवोंको अपने यौगिक

चमत्कार से चकित कर शैव वैष्णव विरोध एवं उत्तर दक्षिण के भेद भावको शमन करना, वेदभाष्यकार स्वामी श्रीविद्यारण्यजी के साथ विजय नगर जाकर वहाँ के शैव वैष्णव विरोध को शान्त करना, लिंगायत संप्रदाय के चरकाचार्यजी को शास्त्रार्थ में परास्त कर शिष्य बनाना, श्री श्रीनिवासाचार्यजी को हित उपदेश करना, नीउपाद नामक ग्राम में कुछ दिन निवास कर वहाँ के योग साधक एवं आर्त अर्थार्थी भक्तों की मनोकामनायें पूर्ण करना, आकाशमार्ग से आनेवाले सिद्धोंको कृतार्थ करना, एक चित्रकार भक्तको नाहरू रोग से मुक्त करना, श्रीरंगम में श्रीवरवर मुनि को श्रीराम मन्त्रके महत्वका उपदेश करना, भगवान शेषजी का प्रकट होकर सांकेतिक उपदेश और उसका आपके द्वारा तात्पर्य प्रकाश होना, फिर दक्षिण देश से कुरुक्षेत्र पधारना, वहाँ ग्रहण योग में भारतवर्ष के अनन्त संतों का समागम, पूर्व परिक्षित मियाँ चिश्ती का समागम, वहाँ से श्रीवृन्दावन में कुछ दिन निवास और ग्वालिनके रूप में श्रीराधारानी प्रदत्त दुग्धपान तथा अलमस्त-अवस्था में ब्रजभूमिका भ्रमण, ब्रज से चलकर श्रीचित्रकूट पधारना, वहाँ जगज्जननी श्रीविदेहजाजू द्वारा पयप्रदान, तत्पश्चात् श्रीसीता अनुज समेत प्रभु श्रीरामजीका दर्शन, हास्य विनोद एवं दिव्यफल प्रदान, वहाँ से श्रीअवध आगमन एवं दिव्य श्रीअयोध्यापुरी में देवगण एवं ऋषि मुनियों से सेवित अनन्त दास सखा एवं भ्रातावृन्दसे परिवृत श्रीयुगल सरकार के दर्शन आदि आपकी अमित अलौकिक लीलायें प्रसंग पारिजात, भक्तमाल, एवं महाभागवत चरित आदि अनेकानेक ग्रंथों में प्रसिद्ध हैं। अन्तिम दिनों में आपने पूर्व समुद्र के तट (गंगा सिन्धु संगम स्थल) पर पहुँच कर श्रीकपिल मुनिके दर्शन प्राप्त किये और वहाँ श्रीकपिलाश्रम पर निवास किया, वहीं परमाचार्य वर्य यतिराजराज अनन्त श्रीरामानन्दाचार्यजी ने प्रकट हो दर्शन दिये और ज्ञान कराया कि तुम श्रीरामभक्ति के प्रचारार्थ इन्हीं श्रीकपिलदेव

जी के अंश से प्रकट हुए हो, अब तुम्हारा कार्य काल समाप्त हो गया, अतः इन्हीं में विलीन हो जाओ, श्रीमदाचार्यपादकी आज्ञानुसार आप श्री कपिलाश्रम पर भगवान कपिलदेवजी में विलीन हो गये।

अनन्त श्रीस्वामी योगानन्दचार्यजी द्वारा प्रणीत अनेक ग्रंथ संस्कृत एवं हिन्दी भाषा के सुने जाते हैं परंतु उनमें से केवल यह एक वैराग्य पचीसी प्राप्त होती है सो पाठकों के हितार्थ यहां दी जा रही है।

—※—

अथ वैराग्य पचीसी

श्री आचारज जगतगुरु, वन्दौंरामानन्द ॥
वन्दौं रामानन्द राम सब जगत विहारी।
भाष्यकर भगवान विश्वतारक अवतारी ॥
नश्वर सब संसार सार साँचे सीतावर।
'योगानन्द' विचारि भजो पदकञ्ज निरन्तर ॥
रवि ससि जिनकर तेज लखि, भयो दीप ज्यौं मंद।
श्री आचारज जगतगुरु, वन्दौं रामानन्द ॥ १ ॥

भोगत कोटिन कलप लौं, नाहिन नशै मनोज ॥
नाहिन नशै मनोज महादुखदायक सोई।
ज्ञानिन को नित शत्रु देत आतम सुख खोई ॥
लोभ क्रोध लै संग मोह के जाल फँसावत।
'योगानँद' सो बचै जाहिगुरुदेव बचावत ॥
तजिये कंचन कामिनी, भजिये चरण सरोज।
भोगत कोटिन कलप लौं नाहिन नशै मनोज ॥ २ ॥

जैसे गज गजनी निरखि, आय पर्‌यो अँधकूप ॥
आय पर्‌यो अँधकूप रूप आपन नहिं जानै।
नहीं सच्चिदानन्द-कन्द रामहिं पहिचानै ॥
देह आतमा मानि खेह निशि वासर खाई।
'योगानन्द' विचारि देखु दुख की अधिकाई ॥
विज्ञानी अज्ञान परि, भूल्यो आपन रूप।
जैसे गज गजिनी निरखि, आय पर्‌यो अँधकूप ॥ ३ ॥

त्यों मन बीच विचार कर, विषयन में सुखनाहिं ॥
विषयन में सुखनाहिं यथा पाथर में पंकज।
पानी मथिय हजार बार नहिं पाइय घृत रज ॥
भूसी कूटे अन्न मिलै नहिं ऊसर बोये।
'योगानंद' नभ गहत वृथा फल बिन दिन खोये ॥
कंचन फूल सुगंध नहिँ, तेल न बालू माहिं।
त्यों मन बीच विचार कर, विषयन में सुख नाहिं ॥ ४ ॥

काल व्याल के गाल में, सब समात छल छंद ॥
सब समात छल छंद प्रलय की आंधी आये।
मनुजन की को कहै कोटि विधि इन्द्र नशाये ॥
जब उपजै अस बुद्धि शुद्धि तब मनकी होई।
'योगानन्द' नदी प्रवाह उलटावै सोई ॥
यौवन धन गज अश्व रथ, हेम भवन आनन्द।
काल व्याल के गाल में, सब समात छल छन्दय ॥११॥

प्रात भये आवत दिवस, ऐसेइ जीवन जात ॥
ऐसेइ जीवन जात कमाई करत पापकी ।
पुनि पुनि भोगतनरक विपतिसहि त्रिविध तापकी ॥
जुवा भयो मद मत्त फिरै हरि नाम न भावै ।
'योगानन्द' गवाँय जन्म पाछे पछितावै ॥
साँझ भई पुनि रात पुनि, रात गये पुनि प्रात ।
प्रात भये आवत दिवस, ऐसेइ जीवन जात ॥ ६ ॥

भूँजै ज्ञान विचार सब, पेट जानिये भार ॥
पेट जानिये भार पेट सों सबही हारे ।
जो जीतै यह पेट, जाय सो हरि के द्वारे ॥
भूख भूख चिल्लाय भ्रमत कूकर ज्यों डोलै ।
'योगानँद' सो साधु कहा भवग्रंथी खोलै ॥
जरत रहत ज्वाला प्रबल, झोंकिय अन्न अहार ।
भूँजै ज्ञान विचार सब, पेट जानिये भार ॥ ७ ॥

मूढ़ वृथा सोचत मरै, जाके नहिं विश्वास ॥
जाके नहिं विश्वास पाप करि पेटहिं भरई ।
चाहत भव निधि तरन करम कूकर सम करई ॥
दृढ़ करि धारै ध्यान तजै तृष्णा अरु आशा ।
'योगानन्द' समाधि मध्य सो लखै प्रकाशा ॥
तजि पट विधना गढ़ै, तिनहिं भरै अनयास ।
भोगत का। सोचत मरै, जाकै नहिं विश्वास ॥ ८ ॥

सर्प डसै केहरि ग्रसै, ताहि भलो करि मानि ॥
ताहि भलो करि मानि दुष्ट को संग न कीजै ।
खल की मीठी बात जहर ज्यों जानि न पीजै ॥
घात करै मन लिये ज्ञान अरु ध्यान न भावै ।
'योगानन्द' कुसंग साधु को व्याध बनावै ॥
दुर्जन की संगति तजौ, दुष्ट संग अति हानि ।
सर्प डसै केहरि ग्रसै ताहि भलो करि मानि ॥ ९ ॥

चंचल वंचक जानिये, मनहिं भूत विकराल ॥
मनहिं भूत विकराल जानि थिर करहु योगसों ।
धारि राम छवि ध्यान, खैंचिचित विषय भोगसों ॥
मानै झूठहिं साँच तासु मन नाम कहावै ।
'योगानन्द' सोई सन्त सकल संकल्प मिटावै ।
कबहुँ जाय आकाश में, कबहुँ जाय पाताल ।
चंचल वंचक जानिये, मनहिं भूत विकराल ॥१०॥

कोऊ घूँटत धूम मति, देह दई झुरसाय ॥
देह दई झुरसाय काम बड़ बाघ न भाग्यो ।
विकल होत तिय निरखि ज्ञान को रंग न लाग्यो ॥
अन्तर अति अभिमान बात बातन महँ गारी ।
'योगानन्द' विचारि भक्ति नव भाँति न धारी ॥
कोऊ झूलत अधोमुख, कोउ करि ऊपर पाय ।
कोऊ घूंटत धूम मति, देह दई झुरसाय ॥११॥

करनी कतहुँ न देखिये, कथनी आसन मारि ॥
कथनी आसन मारि अगुण उपदेश सुनावै।
साकत जैनी शैव अघोरी भ्रम फैलावै ॥
आचारिन आचार विवश हरिभक्ति भुलाइ।
'योगानन्द' विचारि कहत कलि की कुटिलाई ॥
कलियुग मत बाढे बहुत, दीन्हीभक्ति बिसारि।
करनी कतहुँ न देखियै, कथनी आसन मारि ॥१२॥

तुम जनि भूलौ भक्तिरस, रामानन्दी सन्त ॥
रामानन्दी सन्त परम निर्मल पथ पाई।
पिवहु निरन्तर नाम सुधा रघुपति गुणगाई ॥
औरन की लखि भूल तुमहु जनि भूलो भैया।
'योगानन्द' विचारि देखु जग भूल भुलैया ॥
यासों प्रगटे जगतगुरु, कीन्ह दम्भकर अन्त।
तुम जनि भूलौ भक्ति रस, रामानन्दी सन्त ॥१३॥

मंथन करि पय तक्र तजि, लह नवनीत अहीर ॥
लह नवनीत अहीर लहै जिमि मधु मधुमाखी।
तैसेई गहिये सार सकल ग्रन्थन रस चाखी ॥
साधन सों धन मिलै लगै जब राम नाम मन।
'योगानन्द' निहारि नयन सच्चिदानन्दघन ॥
हंस सार ग्राही गहत, क्षीर तजत सब नीर।
मंथन करि पय तक्र तजि, लह नव नीत अहीर ॥१४॥

प्रीति कीजिये राम सों जिमि पतिवरता नारि ॥
जिमि सतिवरता नारि न कछु मनमें अभिलाषै।
तैसेइ भक्त अनन्य टेक चातक ज्यों राखै ॥
राम रूप रस त्यागि विषय रस स्वाद न चाखै।
'योगानन्द' सुजान आन को नाम न भाखै ॥
नेकहु मे व्रत नासई, आनकि ओर निहारि।
प्रीति कीजिये राम सों, जिमि पतिवरता नारि ॥१५॥

विरह ज्वाल जा उर जरै, सोई शीतल होय ॥
सोई शीतल होय पिया बिन कछु नहिं भावै।
कल न परै दिन रैन नैन घन ज्यों बरसावै ॥
दशरथ राजकुमार ताहि हँसि कंठ लगावत।
'योगानँद' जो विरह अनल में अंग जरावत ॥
नैनन नींद न आवई, रहै रैनि दिन रोय।
विरह ज्वाल जा उर जरै, सोई शीतल होय ॥१६॥

गूँगो संभाषण करै, अरथ विचारौ मीत ॥
अरथ विचारौ मीत बात गढि गढि जनि छोलौ।
नाम नाद ह्वै लीन नयन भीतर के खोलौ ॥
रज कण मध्य सुमेरु बुन्द में सिन्धु समाई।
'योगानन्द' चरित्र लखौ करनी करि भाई ॥
अँधरो देखै लोक सब, बहिरो सुनै सुगीत।
गूँगो संभाषण करै, अरथ विचारौ मीत ॥१७॥

चल चल ऊरध पंथलखु, दिव्यधाम साकेत ॥
दिव्यधाम साकेत जहाँ सियरमण विराजत।
जहँ मारुतसुत आदि पारषद सेवक भ्राजत ॥
प्रलय काल नहिं नाश सदा आनन्द अखंडित।
'योगानन्द' विचारि चलौ ऊरध पथ पंडित ॥
मूढ न भटकै नरक में, कर अपने चित चेत।
चल चल ऊरध पंथ लखु, दिव्यधाम साकेत ॥१८॥

तौ लौं संत महँत नहिं राम भक्ति रस नाहिँ ॥
राम भक्ति रस नाहिं ज्ञान सागर गर जैसो।
योगी सिद्ध महर्षि मदन भय सब कहँ तैसो ॥
जानि देह सों भिन्न आतमा ह्वै रहु न्यारा।
'योगानन्द' विचारि विषय बिष विषम विकारा ॥
विषय स्वाद की वासना जौ लौं है उर माहिँ।
तौ लौं संत महंत नहिँ राम भक्ति रस नाहिँ ॥१९॥

रघुपतिध्यान तुरीय सुख,ताकी गति अति झीनि ॥
ताकी गति अति झीनि बिना साधन को जानै।
बिन तुरीय अनुभवे राम छवि नहिं उर आनै ॥
भक्ति न निर्मल होय मलिनता मिटै न मनकी।
'योगानन्द' विचारि यथा रविपर गति घनकी ॥
जागृति स्वप्न सुषुप्ति ये, जीव अवस्था तीनि।
रघुपतिध्यान तुरीय सुख, ताकी गति अति झीनि ॥२०॥

रघुनन्दनकी झलक लखि, भूलिजात सब योग ॥
भूलिजात सब योग लगै जब राम नयन शर।
पुण्य पाप सब जरै बढै उर विरह निरन्तर ॥
कोटि वर्ष तप करै विरह छिनको बढि तासों।
'योगाँनद' विन मीत हृदय की कहिये कासों ॥
प्रेम रंग जेहि अँग लगै, ताहि सुहात न भोग।
रघुनन्दकी झलक लखि, भूलजात सब योग ॥२१॥

राममन्त्र निशि दिन जपहु,करि निर्जन वनवास ॥
करि निर्जन वनवास जपहु षट लक्ष पडच्चर।
लागै प्रीति प्रचण्ड देहिँ दर्शन सिय रघुबर ॥
श्रीगुरु कृपा प्रताप जनम अरु मरण नशाई।
'योगाँनद' करु सफल जात यह जीवन भाई ॥
धारि माल तुलसी तिलक, होहु राम के दास।
राममन्त्र निशिदिन जपहु, करि निर्जन वनवास ॥२२॥

निमल गति ताकी सकल; उमगै प्रेम प्रभाव ॥
उमगै प्रेम प्रभाव सुगन्ध न दुर दुरायै।
नहिँ ताकै जगओर दिव्य लौ रहै लगाये ॥
सरिस मान अपमान सरल चित द्वन्द न ताके।
'योगानँद' सोइ मुक्त बसै उर रघुवर जाके ॥
जाके हिय रघुवर बसहिं, दुरै न तासु सुभाव।
निर्मल गति ताकी सकल, उमगै प्रेम प्रभाव ॥२३॥

आवत है बलि देन रिपु भाग भाग रे भाग ॥
भाग भाग रे भाग त्याग माया आसक्ती ।
करि संतत सत्संग अंग रँगावो भक्ती ॥
फूलै हृदय सरोज भानु निरखे उर माहीं ।
'योगानँद' हरि मिलैं गर्भ, पुनि भूलै नाहीं ॥
कोटि कल्प बीते कलपि, जाग जाग अब जाग ।
आवत है बलि देन रिपु, भाग भाग रे भाग ॥२४॥
जिनके कोटिन शिष्य मम वर एकादश भ्रात ॥
वर एकादश भ्रात कबीरादिक जग जानै ।
जिन कर तेज प्रताप निरखि विधिहू भय मानै ॥
श्रीगुरु आयसु पाय रची वैराग पचीसी ।
'योगानँद' जो पढ़इ लहइ गति शुक मुनि कीसी ॥
श्री श्रीरामानन्द प्रभु जगतगुरू विख्यात ।
जिनके कोटिन शिष्य मम, वर एकादश भ्रात ॥२५॥

इति श्रीयोगनन्दचार्य स्वामीजीकृत वैष्णव पचीसी समाप्त

(जगद्गुरु अनन्त श्रीस्वामी गालवानन्दाचार्यजी की कथा)

रामानन्दाचार्य चरण सेवन चित लायो ।
योगशक्ति हरिभक्ति पाय कश्मीर सिधायो ॥
विष्णुरात नृप सदसि यथा भागवत सुनायो ।
तिमि कश्मीर नरेशहिं श्रीहरि भक्ति दृढायो ॥
गालव श्रीशुकदेवमुनि, विजय कीन्ह सब पुहुमि थल ।
ज्यों द्वापर त्यों कलिहुँ पुनि, कीन्हो भक्ति प्रचार भल ॥

श्री व्यासनन्दन मुनि वर्य श्री शुकदेवजी के अवतार स्वामी श्री गालवानन्दाचार्यजी का जन्म सिन्धु एवं पार्वतीय नदियों के संगम स्थल के पवाया नामक ग्राम (प्राचीन पद्मावती नगरी) में द्विजवर श्री साम्बमूर्तिजी की धर्म पत्नी श्री भामादेवीजी के गर्भ से चैत्रकृष्ण ११ चंद्रवार वृषलग्न में हुआ था और उर्ध्वपुड्र तिलक तथा सुन्दर श्याम केश कलाप से अलंकृत ही आप माता के गर्भ से प्रकट हुए थे ।

मुंडन संस्कार के समय ग्राम के नर नारियों ने बालक के उस अलौकिक सौंदर्य शाली केशकलाप को काट देनेका विरोध किया, अतः मुंडनको यज्ञोपवीत संस्कारके समयके लिये टाल दिया गया । नवें वर्ष के आरम्भ में यज्ञोपवीत के समयपर एक दिव्य सन्त पधारे, जिनकी आज्ञा से मुंडन भी हुआ और मुंडन के पश्चात स्नान के समय ही पुनः वह केशकेलाप लहलहा आये जिनको देखकर माता पिता व सब समुपस्थित जन चकित रह गये । आगन्तुक दिव्य महात्मा अन्तर्धान हो गये ।

उपवीत के अनन्तर वेदाध्ययन आरंभ हुआ, पिताजी पढा पढाकर हार गये परंतु कुमार ने एक अक्षर भी ग्रहण नहीं किया और निरन्तर प्रणव एवं गायत्री मंत्र के जप में संलग्न हो गये । लगातार तीन वर्ष पर्यंत आप जपानुष्ठान ही में तल्लीन रहे, इसके पश्चात जपानुष्ठान को समाप्तकर आपने काशी जाने की इच्छा प्रकट की और विजयदशमी के पश्चात पिता माताही नहीं ग्राम के सभी नर नारियों का काशी यात्रा का संकल्प हो गया । सभी के साथ आप काशी आगये ।

एक दिन कोई ऐसे विदेशी पंडित आये जिनकी भाषा में कोई नहीं समझता था, न वे किसी की भाषा में समझ पाते थे । उन्होंने आकर कुमार से संस्कृत में कुछ वाद विवाद आरंभ कर दिया, आप

धारा प्रवाह संस्कृत में उत्तर देने लगे, घंटों तक शास्त्र-विचार हुआ, आगंतुक पंडित आपके समाधान से कृतार्थ हो लौट गये, तब पिताजी ने आश्चर्य-चकित हो आपसे पूछा—भैया ! लाख प्रयत्न करने पर भी तुमने पढा तो एक अक्षर भी नहीं, फिर इस शास्त्रार्थ में यह संहिता उपनिषद् और शास्त्र पुराणादि के प्रमाण और यह धारा प्रवाह संस्कृत भाषण तुम्हारे मुख से प्रस्फुटित हो गये, ये कहां से आये ? आपने उत्तर दिया—पिताजी ! आपके पुण्य प्रताप और भगवान की निर्हेतु की अनुकंपा से ३ वर्ष जो मेरे द्वारा प्रणव एवं वेदमाता का आराधन हो गया उसी का यह सब आनुसंगिक फल है। उसका मुख्य फल तो श्री भगवत्पाद की शरणागति है सो वह भी प्रभु कृपा करके अब अवश्य प्रदान करेंगे ऐसी आशा है।

इस उत्तर से पिताजी को ऐसा अपार हर्ष हुआ कि हर्षोद्रेक से तुरंत ही उनने इस नश्वर शरीर का परित्याग कर श्रीराम धाम को गमन किया। माताजी ने पतिदेव का अनुगमन किया जैसे तो उनका प्राण पति के प्राणों के साथ ही बँधा था। कुमार ने श्राद्ध कर्मसे निवृत्त हो गांव वालों से विदा ली और गंगातट पर ही रहने लगे।

एकदिन आप श्रीसुरसरी तट घाटों पर विचर रहे थे कि एक सुन्दरी ने एक थाल में नानाप्रकार के पकान लाकर आपके सामने धर कर कहा इनको पा लीजीये। आपने अस्वीकार करके कहा भूख ही नहीं है। वह चली गई और कुछ काल पीछे दूसरे घाट पर दूध लेकर आई और पी लेने को कहा। आपने अबकी बार उसको गंगाजी समझकर प्रणाम किया और दुग्ध पान कर लिया। आगे आप जब पंचगंगा घाट पहुँचे तो वही सुन्दरी गंगा में स्नान करते दिखाई दी और आपको आकर स्नान कर लेने को कहने लगी। आप ने गंगा में प्रवेश किया त्यों ही सुन्दरी ने हाथ पकड़ लिया और इच्छा भवन में ले गई। यह सुन्दरी रंभा थी, इसने अपना परिचय दिया और पूर्व

जन्ममें भी विहार के लिये प्रार्थना करने की याद दिलाई। आप बहुत घबड़ा गये, मनही मन भगवान से रक्षार्थ प्रार्थना करने लगे, तब तुरंतही वहां आचार्यपाद यतिराजराज श्रीरामानन्दाचार्यजी प्रकट हो गये। रंभाने नत मस्तक हो परीक्षा में आपका उत्तीर्ण होना निवेदन किया। श्रीआचार्यपादने आपका हाथ पकड़ा, गंगा से निकालकर घाट के ऊपर ले आये और अदृश्य हो गये। आप ऊपर चढकर श्रीमठ पहुँच गये जहाँ पहुँचते-पहुंचते सब व्यग्रता और अशांति विलुप्त हो गई। परदा हटा, शंखध्वनि हुई, जिससे आपके सब दुःख द्वन्द नष्ट हो गये। आपने चरण शरण में लेने की प्रार्थना की और श्री आचार्यपादने आपको पंच संस्कार पूर्वक श्रीवैष्णवी दीक्षा प्रदानकर गालवानन्दाचार्य नामकरण किया। गुरु दक्षिणाके लिये प्रार्थी होने पर श्रीआचार्यपादने आज्ञादी कि काश्मीर जाकर वहांकी धर्म ग्लानि को दूर करो, यही गुरु दक्षिणा है। तुम्हारा मार्ग प्रशस्त करने का हमने प्रबन्ध कर दिया है तुमको अवश्यमेव सफलता प्राप्त होगी।

श्रीमदाचार्यचरणकी आज्ञानुसार आप रवाना हुए और हरिद्वार पहुंचकर सन्यासीसन्त श्रीचिद्घनाश्रमजीके आश्रममें टिके। स्वामीजीने आपका अपूर्व स्वागत सत्कार किया और मार्ग प्रदर्शन के लिये अपने एक पहाड़ी शिष्यको साथ दे दिया। आप कश्मीर पहुंचे। उस समय वहां सिकन्दर नामक यवन राज्य करता था और शिवदेव नामक उसका महामंत्री था जो बडा ही नीच था। धर्म प्राण जनता पर नाना प्रकार के अत्याचार होते थे। तिलक कण्ठी यज्ञोपवीत आदि धारण करना अपराध घोषित कर दिये गये थे, मठ मंदिर नष्ट भ्रष्ट हो चुके थे, अतः धर्मप्राण जनता और खास करके ब्राह्मण तो विष खाकर मर गये थे अथवा भाग गये थे। श्रीनगर में इन सब बातों का अनुभव कर आप मार्तंड नामक स्थान पर पहुँचे और वहीं रहकर श्री मदाचार्यचरण की आज्ञा पालनार्थ सोचने लगे। आप जब चिंतन

मग्न हुए तो श्रीमदाचार्य चरणने प्रकट होकर कहा—आज तुमको एक इस कार्यके योग्य वक्ति मिलेगा उसको सिकन्दरकी बेगमके गर्भ में प्रवेश करा देना, वह जन्म लेकर जब गद्दीपर बैठेगा तो सब अत्याचार अनाचार बन्द हो जायँगे। इस प्रकार विना किसी हिंसा प्रतिहिंसा के कार्य हो जायगा।

समय पाकर परमहंस श्रीरामदेवजी नामक सन्यासी आपसे मिले, उनने श्री आचार्यपाद के आदेश और करणीय कार्यका जिकर करते हुए अपना परिचय दिया कि मैं महाराजा परीक्षित का पौत्र जन्मेजय के भाई हिरण्यदेवका पुत्र रामदेव हूँ, कलि संवत १३२ से २०१ तक मैंने कश्मीर पर धर्म राज्य किया है। यह मार्तंड मंदिर और २५० खंभों की अंगनाई मैंने ही बनवाई थी। पुत्र व्यासदेवको राज्यदेकर मैंने सन्यास ले लिया। इच्छामरण की सिद्धि प्राप्त होने से यहीं पर अन्तरिक्षमें रहता हुआ भगवद्भजन करता हूँ। इन अत्याचारों से प्रजाको त्रस्तदेख मैं भी बड़ा दुखी हूँ। इसके निवारण के उपायमें मुझे जो भी आज्ञा होगी उसके पालनकी प्राण प्रणसे चेष्टा करूँगा।

श्रीगालवानन्दाचार्यजी ने उनसे कहा कि सर्व प्रथम तो आप यह करें कि इन दुष्टों के अत्याचार से जो भी कुछ हमारे धार्मिक ग्रंथ रत्न बच पाये हैं उनको अनन्तनागकी गिरिकन्दराओं में सुरक्षित कर दें और फिर यहां की रानी के गर्भ में प्रवेशकर युवराजके रूपमें जन्म लेकर इन अनर्थों को दूर करें। सन्यासीजी ने कहा युवराज रूपमें होने पर मेरा ज्ञान नष्ट न हो जाय, इसका भार आपके ऊपर है। आपके एवमस्तु कहने पर उनने आज्ञा शिरोधार्य करली और राजकुमार जैनुल आवदीन नामसे जन्म ग्रहण कर लिया।

सिकन्दर मर गया परन्तु राजकुमार के अवयस्क (नाबालिग) होने से अलीशाह बादशाह हुआ। थोड़े दिन में यह भी मर गया और युवराज जैनुल आवदीन गद्दी नशीन हुआ। इसने अपने राज्यकाल में

सब अत्याचार दूर कर दिये, गोवध अपराध घोषित हो गया, निर्वासित ब्राह्मणों को पुनः राज्य में बसाया गया एवं बलात्कार से बनाये गये मुसलमानों ने पुनः हिंदू धर्म में प्रवेश किया। हिंदू मुसलमान भाई भाई की तरह रहने लगे। इसने एक बार सारे भारत के साधुसन्त फकीर यती सती पंडित विद्वानों को आमंत्रित करके एक महा सम्मेलन किया। आचार्य श्रीगालवानन्दाचार्यजी भी पधारे और बादशाह जैनुल आवदीन जब सब सन्तों विद्वानोंका अतुल धन रत्नों से सम्मान करता हुआ श्रीचरणों तक पहुँचा और नेत्र से नेत्र मिले तो तुरंत साष्टांग कर चरण पकड़ कर विह्वल हो गया और आपका कर ग्रहण कर जनाने की ओर एकान्तमें लेचला। उसने उसीदिन फकीरी लेली और मार्तंड मन्दिर पर आगया। श्रीआचार्यपादकी कृपासे उसका पूर्व योग शरीर सुरक्षित ही था, उसने शाही शरीर छोड़ अपना पूर्वका योग शरीर धारण कर लिया और आचार्यपाद श्रीगालवानन्दाचार्यजी और स्वामी श्रीरामदेवजी दोनों एक साथ अन्तरिक्ष में लीन हो गये।

(आचार्यपाद अनन्त श्री भावानन्दाचार्य जी की कथा)

परम तीव्र वैराग्य त्यागि तिय यति तनु लीन्हो।
पुनि गुरु आयसु मानि जाय गृहधर्म सु कीन्हो।
त्रय कुमार हरिभक्त मुक्ति कन्या इक जाई।
पुनि गुरुपद महँ आय योग हरि भक्ति कमाई॥
अनुभानन्दहिं शिष्यकरि, कीन्ह तिन्हें वैष्णवाधिपति।
रामानन्दाचार्य पद, अनुगामी मिथिलाधिपति॥

स्वामी श्री भावानन्दाचार्यजी मिथिलाधिपति महाराज श्रीजनकजी के अवतार हैं। आपके पूर्वज श्रीमिथिला के परम रामभक्त विद्वद्वरिष्ठ पं० श्री हरिनाथजी, पंढरपुर (महाराष्ट्र प्रदेश) के आलन्दी नामक ग्राममें जाकरबस गयेथे और वहीं एक द्विज कन्या से विवाह

कर श्री रघुनाथ मिश्र नामक पुत्र प्राप्त किया था, इन्हीं श्रीरघुनाथ मिश्र जी के भगवान श्री विट्ठलनाथ जी के मंदिर में पुत्रेष्टि अनुष्ठान करने से प्राप्त पुत्र रूपमें श्री विट्ठल पन्त नाम से महाराजा श्री जनक जी ने वैशाख कृष्ण ६ चन्द्रवार मूलनक्षत्र परिघ योगमें अवतार लिया था।

विट्ठल पंतजी की धर्म पत्नी पति व्रता थी। वह पति सेवा से अधिक किसी भी जप तप को महत्व नहीं देती थी और पंतजी परम भगवन्निष्ठ महा पुरुष थे अतः गृहस्थ जीवन परम सुख मय था। एक दिन अंजनी गुफाके एक योगी सन्त ने आकर सती के पातीव्रतको प्रत्यक्षकर दिया। एक कर्कोटक वंशीय नाग दम्पति ने आकर एकदिन इनसे वह पुराना घर खाली करवालिया और जिस नये घरमें जाकर ये रहे उसको अपार धन संपत्तिसे भर दिया। पंतजी के न स्वीकार करने पर भी नागदेवताने अनुनय विनय कर भगवत भागवत अतिथि और दरिद्रनारायण की सेवा का उपदेश करके पंतजीकी स्वीकृति प्राप्त कर ली और तब से पंतजी का घर भागवत अतिथि और दीन दुखियों की भीड से भरा रहने लगा। सती का सारासमय इनको अन्न वस्त्र दान दक्षिणादि देनेके व्यवहार में ही बीतता था।

एक दिन एक परम तेजस्वी निराहारी सन्त पधारे, उनका पाद्यार्घ्य से पूजन सत्कार कर आपने भोजन के लिये प्रार्थनाकी तब सन्त ने कहा—मैं तो पवित्र वायु ही का आहार करता हूँ सो आपके घर में बिनाही प्रयत्न के पर्याप्त प्राप्त है। यह सुनकर पंतजी को आश्चर्य भी हुआ और ऐसे सन्त के दर्शनसे परम आनन्दभी मिला। तीसरे दिन महात्माजी ने कहा मैं तीन दिन से अधिक एक स्थान पर नहीं ठहरता अतः अब काशी पुरी को जा रहा हूँ, वहाँ परब्रह्म परमात्मा श्रीरामने यतिराज के वेष में अवतार लिया है, उन्हीं के दर्शन सत्संग का आनन्द लेना है। यह सुन पंतजी भी काशी के लिये तैयार हो गये, पत्नी की अनुमति भी मिल गई, अतः पत्नी को अतिथि सेवा

के लिये छोड आपने सन्तजी के साथ काशी के लिये प्रस्थान किया। मार्ग में आपने एक विचित्र चरित्र देखा—सन्तजी के दायें बायें २ परम सुन्दर श्याम और राजकुमार साथ चलते हुए देख पडे, कई दिन तक यह लीला देखते रहे, एकदिन आपने सन्तजी से कहा आपतो महर्षि विश्वामित्रजी प्रतीत होते हैं, सन्तजी ने कहा आप भी तो महाराजा जनक हैं। इतना सुनते ही पंतजी मूर्छित हो गिर पडे, और वे सन्तजी राजकुमारों सहित अन्तर्धान हो गये। आपकी जब मूर्छा खुली तो देखा कि काशी पुरी के समीप एक वटवृक्ष के नीचे पडे हैं। आपको विरह व्यथाने इतना सताया और मूर्छावस्था में कई दिन निराहार व्यतीत होने से इतने कमजोर हो गये कि मुख से–हे प्यारे! हे चक्रवर्ति कुमार! हे वत्स! हे लाल! के उच्चारण होने के अतिरिक्त उठने चलने की शक्ति ही नहीं रह गई। तब वहां उसी वृक्ष के नीचे दो बालक आये जिनने आपको उठाया; प्रसाद पवाया, काशीपुरी में पंचगंगा घाट तक पहुँचाया और वहीं विलुप्त हो गये। कुमारों के न देख पडने पर आप फिर विरहकातर हो गये, तभी श्रीमठ से शंख ध्वनि गूंज उठी आप दौडकर वहां पहुँचे तो तुरंत ही श्रीमदाचार्यपाद यतिराजराज का दर्शन हो गया, आप साष्टांग पड गये और त्राहिमां त्राहिमां कहने लगे। यतिराजराज की कृपा हो गई, पंच संस्कार पूर्वक वैष्णवी दीक्षा और भावानन्दाचार्य नाम प्राप्त हुआ तथा मनसे जन्म जन्मांतर के विरक्त अब शरीर (वेष) से भी विरक्त हो आचार्य चरणकी सेवा में रहने लगे।

कुछ काल के पश्चात गांगरौनगढ नरेश श्रीपीपाजी की साग्रह प्रार्थना पर श्रीमदाचार्य चरण की यात्रा हुई। आप भी उस यात्रा में श्रीचरणों के साथ थे। यात्रा में श्रीमदाचार्यपाद पंढरपुर भी पधारे और आलन्दी ग्राम में एक दिन विश्राम हुआ। आलन्दी में ग्राम के नर नारियों के साथ आपकी सती साध्वी धर्मपत्नी ने भी आकर

श्रीमदाचार्य चरण में प्रणाम किया और श्रीयतिराज ने "पुत्रवतीभव" आशीर्वाद दे दिया। सतीने विनीत भाव से सब हाल निवेदन किया तब यतिराजराजने आपको पास बुलाया और दिव्य सन्तान का रहस्य बताकर घर जाकर सन्तानोत्पत्ति करने की आज्ञा प्रदान की। जमात आगे बढ़ गई। आपको वहीं रह जाना पड़ा। समय पाकर तीन पुत्र और एक कन्या उत्पन्न हुई जिनमें श्रीज्ञानदेवजी ऐसे प्रतापी हुए कि जिनके द्वारा सारा महाराष्ट्र भगवद्भक्ति भागीरथीसे आप्लावित हो गया।

इस प्रकारसे आपने श्रीगुरु आज्ञाका पालन किया। इसके पश्चात आपकी पत्नी श्रीसाकेत धाम सिधार गई तब आप काशी आगये और पुनः आचार्य चरण की सेवा प्राप्त कर परमानन्द में निमग्न रहने लगे।

एक दिन मुनिवर्य श्रीशुकदेवजी ने दर्शन दिये और परस्पर वन्दन स्तुति आदि के पश्चात श्रीशुक मुनिने पूर्व उपदेश के लिये कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा—पहिले आपको जो दूलह रूप में प्राप्त हुए थे वे ही परब्रह्म अब गुरु रूप में प्राप्त हो गये हैं, आपको धन्य है। अब मैं भी कुछ ही दिन में यहाँ आकर श्रीआचार्यचरण की शरण प्राप्त करूंगा और आप सबकी सेवा का लाभ उठाऊंगा।

श्रीआचार्यपाद जब श्रीसाकेत पधारने लगे तो आपको दक्षिण देश में श्रीवैष्णवधर्म के प्रचारार्थ भेज दिया, जो फिर आचार्यपादके वार्षिक भंडारे पर काशी आये और प्रयागराज के कुम्भ के चढ़ाव पर पधार कर वहीं नश्वर शरीर का परित्याग कर श्रीसाकेत पधार गये।

अन्य महाभागवतोंके चरित्र आगे भक्तमाल (छप्पै ५९ से ६७) में जहाँ उनका वर्णन आया है वहाँ देखें।

(आचार्य वर्य श्री अनन्तानन्दाचार्यजी के प्रधान शिष्य गण)

मू०छ०—योगानन्द गयेश कर्मचँद अल्ह पयहारी। रामदास श्रीरंग अवधि गुण महिमा भारी। पुनि श्री नरहरि उदित मुदित मेहा मंगल तन। रघुवर यदुवर गाय विमल कीरति संच्यो धन॥ [1]हरि-भक्ति सिन्धु बेला रचे, [2]पाणिपद्म [3]जा शिर दये। अनन्तानन्द पद परसि के लोक पाल से ते भये ॥३७॥

(श्रीरंगजी की कथा)

घौसा एक ग्राम तहाँ रंग लाल नाम हुतो
वणिक [4]सरावगी की कथा लै बखानिये।
रहतो गुलाम गयो यमराज धाम तहाँ
भयो बडो दूत, आय कही सुन वानिये॥
आये [5]बनिजारें लेन देख तू दिखावें तोहि
बैल शृङ्ग मध्य बैठि मारें तो [7]पिछानिये।
बिना हरि भक्ति होत सब ही की यही गति
सुनि भयो भक्त श्री [8]अनन्त पद ध्यानिये ॥११७॥

१ ग्रंथ का नाम है जो उपलब्ध नहीं है। २ हस्तकमल। ३ जिसके। ४ श्रावक=जैन। ५ बनजारेको। ७ तब पिछान लेना=सची बात जान लेना। ८ श्री अनन्तानन्दाचार्यजी।

सुतको दिखाई देत भूत नित सूख्यो जात
पूछे कही बात जाय वाकी ठौर सोयो है।
आयो निशि, मारिबे को, धायो यह रोष भर्यो
देवो गति मोको प्रेत बोलिके सुनायो है॥
जातिको सुनार परनारि लगि प्रेत भयो
लयो तेरो शरणो में ढूँढि जग पायो है।
दियो चरणामृत लै कियो दिव्य रूप वाको
अतिही अनूप सुनि भक्ति भाव गायो है ॥११८॥

(आचार्यपाद पयोहारी श्रीकृष्णदासजी की कथा)

मू० छ० जाके शिर कर धरयो तासु कर-तर नहिं [1]अड्डयो। अर्प्यो पद [2]निर्वाण शोक निर्भय करि [3]छड्डयो। तेज पुञ्ज बल भजन महामुनि [4]ऊरध रेता। सेवत चरण सरोज राय राणा भुवि जेता॥ [5]दाहिमा-वंश दिनकर उदित, सन्त कमल हिय सुख दियो। [6]निर्वेद अवधि कलि कृष्ण-दास, अन परिहरि पय पान कियो॥३८॥

जाके शिर कर धरयो फेर तातर न [7]ओड्यो हाथ
दीनो बडो वर राजा [8]कुल्लूको जु साखिये।

१ अड़ाया=छुया। २ मोक्ष। ३ छोड़ा। ४ बालब्रह्मचारी। ५ महर्षि दधीचि के वंशज ब्राह्मण। ६ वैराग्यकी सीमा। ७ फैलाया। ८ काश्मीर।

परवत कन्दरामें दर्शन दियो ताहिं
दियो भाव साधु हरि सेवा अभिलाषिये॥
गिरी जो जलेबी थालमेंते सो उठाई बाल
भयो हिय [1]शाल [2]बिन अरपित [3]चाखिये।
लेकर खडग ताहि मारन विचार कियो
जियो सन्त ओट फेर मोल दैके राखिये ॥११९॥
नृपसुत भक्त बडो अवलों विराजमान
साधु सनमान में न दूसरो बखानिये।
सन्त बधू गर्भ देखि उभै पनवारे दिये
कह्यो [4]अर्भ इष्ट मेरो ऐसी उर आनिये॥
कोऊ वेषधारी सो ब्योहारी [5]पग दासिन को
कही कृपा करो कहा जानैं अन्य प्राणीये।
ऐपै [6]तजि देवो कृपा देखि जग बुरो कहै
[7]जोत बहु दई कही राम मति सानिये ॥१२०॥

(पयोहारी श्रीकृष्णदासजी महाराज के प्रधान शिष्योंका वर्णन)

मू० छ० कील्ह अगर केवल चरण व्रत हठी नरायण। सूरज पुरुषा पृथू त्रिपुर हरिभक्ति परायण॥ पद्मनाभ गोपाल टेक टीला गदाधारी। देव हेम कल्याण गंग

१ दुःख। २ विना भोगलगे। ३ खायगा। ४ गर्भगत बालक। ५ जूतियोंका। ६ जूती बेचना छोड़ दो। ७ कृषि योग्य भूमि।

गंगा सम नारी ॥ विष्णुदास कान्हर रँगा चाँदन शिवरी गोविन्द पर । पयहारी परसादते शिष्य सबै भये पारकर ॥३९॥

इस छप्पय पर भी श्री प्रियादासजीने कुछ नहीं लिखा है । इनमेंसे अनेकानेक महानुभाव जगत प्रसिद्ध महाप्रतापी हुए हैं । इस षटपदीमें जगद्गुरु श्री टीलाचार्यजी का भी नाम स्मरण हुआ है अतः उनके विषय में जो किंवदन्तियोंमें प्रसिद्ध हैं एवं उनके जो लघुनिवन्ध प्राप्त होते हैं उनमें से कुछ यहां दिये जा रहे हैं ।

जगद्गुरु स्वामी श्रीसाकेतनिवासाचार्यजी (श्रीटीला स्वामीजी) की कथा

कहा जाता है कि आपका नाम श्रीटीला स्वामीजी एक विशेष अलौकिक घटना के कारण पड़ गया, अन्यथा आपका वास्तव में नाम श्रीसाकेतनिवासाचार्यजी है ।

यह विशेष घटना यह घटी थी कि आप मध्यान्होत्तर स्नान कर, समीप के एक बालू के टीला पर विराजमान होकर भजन किया करते थे। और आपके उपदेश सत्संगसे लाभ उठानेके इच्छुक भी यहाँ आजुटते थे । एकदिन एक कोई विजातीय योगी महात्मा अपनी सिद्धि का प्रदर्शन करनेके लिये एक बाघ पर सवार हो आपके पास आये और दो कोस पर से ही एक सर्प राजके द्वारा अपने आनेकी सूचना भेजी । सर्पराज ने आकर जब मानव वाणी में आपसे निवेदन किया तो सत्संगी प्रेमी जनों को आश्चर्य आह्लाद और भय तीनो एक साथ हुए । आपने सन्देश सुन आज्ञा की—कि सन्तों के आने पर कुछ दूर सामने जाकर सत्कार करना मानव कर्तव्य है, अतः हम भी आपके साथ चल रहे हैं । ऐसा कह आपने उस टीलेको अपने कर कमलसे

थप थपाया और कहा लो बचा अब तुमही ले चलो, सन्त के पास । बस टीला सब समाज को लिये हुए खिसका और बात की बातमें उक्त सन्त के पास पहुँच गया । उन सन्तजीका सिद्धाईका भूत भाग गया और चरणों में पड़कर शिष्य हो गये ।

अब हम यहां आपकी रचना समूह में से केवल २ संस्कृत निवन्ध दे रहे हैं ।

—❀—

श्रीटीलाद्वारपीठ संस्थापक सुरद्रुमकार आचार्यपाद जगद्गुरु
श्रीसाकेतनिवासाचार्य उपनाम श्रीटीलाचार्यजी कृत

प्रबोधकलानिधिः

जानकीनायकारध्यां नत्वाऽऽचार्यपरम्पराम् ।
कुर्वे सिद्धान्तबोधाय सत्प्रबोधकलानिधिम् ॥

रामो ब्रह्म परात्परं सकलकृद् रामं विना नो गती
रामेणैव विनाश्यते मृतिभयं रामाय नित्यं नमः ।
रामादेव च विश्वमेतदुदितं रामस्य वश्यं तथा
रामे तिष्ठति लास्यते च वदत 'त्वं राम संरक्ष नः' ॥१॥

रामं कीर्त्तय कीर्त्तनीयरसने कर्णद्वयाकर्णय
श्रीमद्रामकथां करौ च कुरुतं रामार्चनं मुक्तिदम् ।
रामं पश्य विलोचनद्वय चिरं चेतः स्मर त्वं सदा
जिघ्र घ्राण च रामपादतुलसीं रामं नम त्वं शिरः ॥२॥

तत्त्वं नैव परेशदिव्यगुणकाच्छ्रीरामचन्द्रात् परं
मुक्त्यै नास्ति गतिस्तथा रघुपतेर्भक्तेः प्रपत्तेः परा ।

निर्दोषञ्च मतं परं न हि विशिष्टाद्वैततो वैदिकं
श्रीरामात्र हि कीर्त्तनीयमपरं मुक्तिप्रदं प्राणिनाम् ॥३॥
ब्रह्मेन्द्रस्त्रिपुरान्तकश्च दहनो ब्राह्मी गणेशोऽन्तकः
सूर्यो देवचमूपतिश्च वरुणो वाय्वादिदेवास्तथा ।
रक्षोयक्षगणोऽथ सिद्धदनुजा नागा दिशां पन्नगा
श्रीमद्रामपदारविन्दविमुखत्राणे समर्था न हि ॥४॥
सद्धर्मः श्रुतिधर्मशास्त्रविहितो ग्राह्यः शुचिर्वैष्णवः
सीताराघवविग्रहौ जनयुतौ पूज्यौ शुभैर्वैष्णवैः ।
वेदान्तप्रतिपादितं सुखकरं सद्युक्तिभिर्भूषितं
रामानन्दयतीश्वरस्य रुचिरं मान्यं मतं सन्मतम् ॥५॥
इष्वासेन तथेषुणा रघुपतेर्बाहू वरं चाङ्कितौ
गात्रं द्वादशसूर्ध्वपुण्ड्रलसितं वृन्दा गले शोभिता ।
सीतारामपदाब्जदास्यपरकं यस्याभिधेयं तथा
श्रीमत्तारकदीक्षितः स पुरुषः पूज्यः सतां वैष्णवः ॥६॥
हृद्ये यद्धृदयाम्बुजे हि सदये सीतापती राजते
भूतानां हितचिन्तको गुरुरतो साध्वर्चको धर्मवान् ।
सन्निष्ठो हरिवासरादिनिरतः श्रीरामसङ्कीर्त्तको
रामाराधनतत्परः स पुरुषः पूज्यः सतां वैष्णवः ॥७॥
मुक्तामुक्तविभेदतो द्विविधतां याता विभिन्ना मिथो
बोद्धारः सुखबुद्धिरूपकृतभुङ् नित्या अचिन्त्याणवः ।
दासाकांक्षितवस्तुदक्षितिसुतानाथस्य दासास्तथा
प्रज्ञाप्राणशरीरतः करणतो भिन्नाः समे प्राणिनः ॥८॥

सत्वाद्यायतनं विकारकरणी नित्या तथाऽचेतना
बद्धानां सुखबुद्धिहृद् रघुवराधीना जगत्सर्जने ।
मायाख्या प्रकृतिः सती विकृतिभृद् यस्याः परेशेच्छया
मूलाद्या निगमान्तविन्निगदिता भेदाश्चतुर्विंशतिः ॥९॥
ध्येयो दिव्यतनुस्तथा शुभगुणाम्भोधिर्जगत्कारणं
चिद्द्रव्यादिविभासकः श्रुतिमतो भक्त्यैव मुक्तिप्रदः ।
नित्यो ब्रह्मशिवार्चितश्च चिदचिच्छ्लेषी परेशो विभुः
सर्वज्ञः प्रणतार्तिहृद् रघुवरः श्रीशोऽवतारी स्वराट् ॥१०॥
ईशित्री जगतोऽस्य विश्वजननी लावण्यवारांनिधि--
र्वात्सल्यादिगुणावधिः श्रितजनाभीष्टार्थदा सर्ववित् ।
ध्येया सज्जगदीशितू रघुपतेर्विश्वी प्रिया जानकी
यत्कारुण्यदिदृक्षुणा भगवता सर्वं जगत् सृज्यते ॥११॥
हत्वा ज्ञानधनं विनाश्य समयं दत्त्वा गतिं नारकीं
दुःखानाञ्जनकास्त्यजन्ति विषयाः शब्दादयः प्राकृताः ।
ये तांश्च स्वयमुत्सृजन्ति पुरुषास्ते प्राप्नुवन्ति ध्रुवं
पाथेयं खलु भक्तिधामगमने सीतापतेश्चिन्तनम् ॥१२॥
जप्तश्चाङ्गकृतिः श्रुतिप्रवचनं कान्तारगं रोदनं
पूर्त्तं कर्म न शर्मणे भवति सत्तीर्थं न तीर्थायते ।
सायुज्यप्रसवां शराङ्करचितां यस्य प्रपत्तिं विना
स त्रैलोक्यनियामकः कमलदृक् सीतापतिः पातु नः ॥१३॥
स्वाध्यायः समधीयतामुपकृतिः कार्याऽनुतं नोच्यतां
हिंसा नैव विधीयतामसुमतां शीतादिकं सह्यताम् ।

सत्सङ्गः क्रियतां तथा सुकृतिभिःकाम्या कृतिस्त्यज्यतां
पापेभ्यश्च विरम्यतामसुखहृद् रामः समाश्रीयताम् ॥१४॥
आनन्दो विधितो जनैरधिगतः स्वानन्दवन्मन्यतां
दुःखानाञ्जनकं निजेन विहितं पापं समाबुध्यताम्।
सम्पत्तौ तु कृपाम्बुधे रघुपतेर्हेतुः कृपाऽहेतुकी
सीतारामसमर्पितञ्च सकलं लोके सदा भुज्यताम् ॥१५॥
मुक्तिर्यद्भजनादृते भवति नो यागादिना कर्मणा
यं ज्ञातुञ्च समाश्रयन्ति विबुधा आचार्यपादाम्बुजम्।
विश्वस्याश्रयभूरचिन्त्यमहिमा स्वीये महिम्न स्थितः
पुर्णं ब्रह्म स पातु भक्तसुखदः सर्वेश्वरो राघवः ॥१६॥

टीलाचार्यकृतश्चायं सत्प्रबोधकलानिधिः।
संसारतापहा भूयात् सीतारामप्रसादतः ॥

अथ प्रपत्तिकुसुमाञ्जलिः

रघुपतेऽहमकिंचनतां गतस्तव सुरक्षकतामतिविश्वसन्।
निजभरं निदधाम्यखिलात्मनि त्वयि परेश विभो गुणसागरे
॥ १ ॥
अननुकूलकुभावविवर्जितस्त्वदनुकूलसुभावगतस्तथा ।
अहमनन्यतया क्षितिजापते ! सुशरणं चरणञ्च गतोऽस्मि ते
॥ २ ॥
मम सुरक्षणकर्मणि यो भरः फलमहञ्च न मे भुवनम्भर !
अपि तु भक्तसमर्पितहृत् प्रभो ! तव ततश्च निजं हि समर्पये
॥ ३ ॥

नहि मिलेद् दयनीयजनश्च ते रघुपते मयि चेन्न दया तव।
सुदयनीयजनैकनिधे ततः कुरु दयां मयि नाथ दयाम्बुधे
॥ ४ ॥
त्वमसि नो मदृते दयनीयवानहमपि त्वदृतेऽस्मि न नाथवान्
विधिविनिर्मितमेदवेत्य तत् करुणया करुणाकर पाहि माम्
॥ ५ ॥
सुशरणं चरणं त्वपहाय ते कथमियामहमन्यमकिञ्चनः।
रघुपते ! दृढमायतपोतकं त्यजति किं जलधौ लघुवायसः?
॥ ६ ॥
इह तिरस्कृततां गमितोऽप्यहं रघुपते ! न जहामि पदञ्च ते
निजजनन्यवधूतशिशुर्यथा स्वजननीचरणं विजहाति नो
॥ ७ ॥
वरद दाशरथे वरदापते कुरु कृपामिदमेव च देहि मे।
त्वदरविन्दविलज्जकपादयोर्भवतु जन्मनि जन्मनि मे स्मृतिः
॥ ८ ॥
वसुधया वसुधात्मजया तथा रुचिरया रुचिरं परिसेवित ।
रघुपते ! सुलभो जगतीपते ! भव भवाम्बुनिधौ पतितस्य मे
॥ ९ ॥
समवभाति न ते समतां गतस्त्वदधिकोऽपि हि नाथ न कश्चन
प्रपदनं विदधे पदयोश्च ते निखिलपालक ! पालय मामपि
॥१०॥
कृतभवाभव कारणकारण प्रकृतिरक्षक रत्यविलक्षण ! ।
रघुपते पदयोः पतिते च ते कुरु कृपां कृपणे मयि पामरे
॥११॥

तव विभोश्चरणं शरणं गतो जन इह त्रिगुणः परिभूयते।
अभिहिता रघुनायक भारते प्रकृतितारक तारकता क्व ते
॥१२॥
अधमताव्यथिता पृथिवी पुरा रघुपते त्वयका परिमण्डिता
पुनरिदं हि तथा क्षितिमण्डलं भुवनमण्डलमण्डन मण्डय
॥१३॥
रघुपते त्वयकैव युगे युगे समवतीर्य हि दच्चकुरक्षसाम्।
बलमखण्डयमखण्ड्य! सुखण्डितं विजहि मत्प्रतिघादिक-राक्षसान् ॥१४॥
अदयताञ्च गतेऽभयता कुतो न च भयं सदये त्वयि राघव!
अभयतार्थमतः शरणं विभो त्वदपरं पुरुषं न विभावये
॥१५॥
कृतमतिर्जगतः परिपालने सुकृपणस्य तदा मम रक्षणे।
कृतमतिप्रभृतेः सहकारणैश्च विफलं जगदीश गवेषणम्
॥१६॥

इति श्रीमत्साकेतनिवासाचार्य (श्रीटीलाचार्य) कृत
प्रपत्तिकुसुमाञ्जलिः समाप्ता।

(आचार्यपाद स्वामी श्रीकील्हदेवाचार्यजीकी कथा)

मू० छ० रामचरण चिंतवन रहत निशि-दिन लौ लगी। [1]सर्वभूत शिर नमित शूर भजनानँद भागी। साँख्य योगमत सुदृढ

१ प्राणी मात्र से वन्दनीय।

किये अनुभव [1]हस्तामल। ब्रह्म रंध्र करि गमन गये हरिपद करणी बल्ल॥ सुमेरदेव सुत जगविदित, भू विस्तारयो विमल यश। [2]गांगेय मृत्यु गंज्यो नहीं, त्यों कील्ह करण नहिं काल वश॥४०॥

श्रीसुमेर देव पिता सूबे गुजरात हुते
भयो तनुपात सो विमान चढि चले हैं।
बैठे [3]मधुवनो कील्ह मानसिंह राजा ढिंग
देखे नभजात उठि कही भले भले हैं॥
पूछी नृप कासौं ? कैसेके प्रकाशौं ? राजा
हठ परयो, कही, सुनि अचरज रले हैं।
मानस पठायो सुधि लायो साँची [4]आँच लागी
करी साष्टांग बात मानी भाग फले हैं॥१२१॥
ऐसे प्रभुलीन नहिं कालके अधीन बात
सुनिये नवीन चाहैं राम सेवा कीजिये।
धरीही पिटारी फूल माला हाथ डारयो तहाँ
व्याल कर काट्यो कह्यो फेर काटि लीजिये॥
ऐसे कटवायो बार तीन हुलसायो हियो
कियो न प्रभाव नेक सदा रस पीजिये॥

१ हथेली में धरे आमले के समान। २ भीष्मपितामह।
३ मथुराजी। ४ अविश्वासाग्निकी तपत।

करके समाज साधु मध्य में विराजि प्राण
तजे दशैं द्वार योगी थके मुनि जीजिये ॥१२२॥

(रसिकाधिराज आचार्यपाद स्वामी श्रीअग्रदेवाचार्यजी की कथा)

मू० छ० सदाचार सो, सन्त पूर्व जैसे करि आये। सेवा सुमिरण सावधान राघव चितलाये। प्रसिध बागसों प्रीति स्वकर [1]कृत करत निरन्तर। रसना निर्मल नाम मनहुँ वर्षत [2]धारा धर ॥ कृष्णदास करि कृपा भक्ति रस, मनवच क्रम करि अटल दियो। अग्रदास हरि भजन बिन, काल वृथा नहि बीतियो ॥४१॥

दरशन काज महाराज मानसिंह आयो
छायो बाग माँझ बैठे द्वारे द्वारपाल हैं।
झारके पतोवा गये बाहर लै डारवेको
देखि भीरभार रहे बैठि ये रसाल हैं॥
आय देखि नाभाजूने करी [3]साष्टांग नति
भरी जल आँखें, चले अश्रुवन जाल हैं।
राजा मग जोहि हारयो आयके निहारि नैन
जानी स्वयं स्वामी भये दासनि दयाल हैं ॥१२३॥

१ बागका कार्य। २ बादल। ३ दंडवत प्रणाम।

इस श्रीप्रियादासजी के वर्णनके अतिरिक्त रसिकाचार्यप्रवर श्रीअग्रदेवाचार्यजीके चरित्र विषयक एक ग्रंथ श्रीअयोध्या जानकी घाट निवासी श्री साकेतवासी जयपुरीय महात्मा श्रीलाडिलीलाल शरणजी (श्रीरूपकलाजी) कृत 'श्रीअग्रस्वामीचरित, प्राप्त होता है उसको यहां अविकल उधृत किया जा रहा है। संस्कृत और हिन्दी पद्यमें आपके द्वारा अनेकानेक ग्रंथ रत्नोंकी रचना हुई है जिनमेंसे ध्यान मंजरी, अष्टयाम, कुण्डलिया आदि हिन्दीके और रहस्यत्रय तत्वत्रय अर्थ पंचक श्रीगुरुपरंपरा अष्टयाम् एवं कुछ स्तोत्र संस्कृतके प्रकाशित हुए हैं इनके अतिरिक्त आपका अपार साहित्य विलुप्त है। सुना जाता है कि अग्रसागर नामक एक लक्षपदोंका ग्रंथ था जिसमें से एक सौ पचीस हैं।

श्रीजानकीवल्लभो विजयतेतराम्।
श्रीमते रामानन्दाचार्यायनमः। श्रीमद्सद्गुरुचरणकमलेभ्यो नमः॥

श्री अग्रस्वामी चरित

दो०–श्रीसद्गुरु पदरज कृपा जगमंगल आधार।
उर धरि वरणौं विशदयश, पावन अग्र विहार॥ १ ॥
चारुशील पद-रज-कृपा, अगम सुगम हो जाय।
विमल प्रेम मति गति रसै, रसावेशतन पाय ॥ २ ॥
श्रीशुभ शीला स्वामिनी; पद पंकज शुचि धूर।
परसत विनसत अघ अमित, उर वस युग छविपूर ॥ ३ ॥
सो०-रूपसरस धरि देह, करुणा गुण ललि लाल को।
भवनिधि कठिन अछेह, रची तरणि रसचन्द्रिका ॥ ४ ॥
रूपलता सीया सखी, चन्द्र अली रसखान।
निजचेरी गनि करु कृपा, उरवस जानकि जान ॥ ५ ॥

श्री अगस्त्य मुनि परम विचक्षण। कह्यो ललित यश सुन्यो सुतीक्षण ॥
रामभक्त द्वादश भटभारी। तिनयुत प्रकट भये असुरारी ॥
भूतल प्रकटि भक्ति भलि छाई। तदपि सार रसरूप छिपाई ॥
सुगम सेतु बाँध्यो रामानँद। गे परधाम मोदभरि सानँद ॥

दो०—तिहि विलोकि श्रीजनकजा, मन्द मन्द मुसकाय।
पिय सन बोली नेहयुत, महल टहल नहिं पाय ॥६॥

सरस गिरा सुनि पिय रसलीना। महल टहल कहि तव अधीना ॥
तुम्हरी कृपाकोर बिन सीता। कस पावैं रस रहस्य पुनीता ॥
ताते वेग द्रवहु अब प्यारी। हँसि बोली तब जनकदुलारी।
चारुशील वर रचो उपाई। जाते सुगम महल सिवकाई ॥
चारुशिला कह पिय रुचि जानी। चन्द्रकला सब रस गुण खानी ॥
प्रीति रीति रसखान सुआली। परम चतुर अरु गुण गण शाली ॥
धरैं भूमि आचारज रूपा। जगत प्रचारैं रहस स्वरूपा ॥

दो०—भली कही सर्वेश्वरी, हँस बोले श्रीराम।
चन्द्रकला तुम जाय जग, प्रगटो रहस्य ललाम ॥७॥

चन्द्रकला आयसु शिर लीन्हा। स्वयं सन्त तन अनुपम कीन्हा ॥
वयस किशोर गौर तन नीको। दृग भुज भाल विशाल सुटीको ॥
विप्र रूप बटु अतिहि विचित्रा। रूप शील गुण परम पवित्रा ॥
युगल चरण पंकज धरि शीशा। विनय करी सुनु पिय अवधीशा ॥
जो प्रसन्न होइ आयस दीन्हा। सो सब भाँति दासि शिर लीन्हा ॥
तव पद कृपा सुगम सब मोरे। तदपि नाथ कछु चाहौं औरे ॥
कलिमल ग्रसित जीव अतिपापी। अतिकृतघ्न विषयी मदिरापी ॥
दुष्टाचार कुटिल व्यभिचारी। ते कस नाथ महल अधिकारी ॥

दो०—सजल नयन करुणाभरे, कही युगल सरकार।
तव पद्धति आश्रित रहै, लखैं नतिन अपचार ॥८॥

शत्रुनिकन्दन जग प्रकट, पयहारी अवतार।
तिनते तुम संबन्ध लै, देय करहु विस्तार ॥९॥
उरधरि पद शुचि नायशिर, मुख प्रसन्न मन मोद।
गालव मुनि आश्रम विमल, आये करत विनोद ॥१०॥

फाल्गुन शुक्ला दोज सुहाई। नभ मुनि बाण चन्द्र समआई ॥
श्री गुरु पद पंकज धरि शीशा। दीन होय कहे वचन ऋषीशा ॥
त्राहि त्राहि आरत जन हेतू। बिन कारण दयाल भव सेतू ॥
जय निर्वेद ज्ञान गुण खानी। सीताराम रहस्य मति सानी ॥
दीनबन्धु प्रभु जन प्रतिपालक। कलिमल कठिन दोष के घालक ॥
काम क्रोध सन्ताप नसावन। भक्ति ज्ञान वैराग्य बढ़ावन ॥
शरण शरण प्रभु शरण तिहारी। कृपाकन्द अघ औगुण हारी ॥

दो०—दीन वचन सुनि मुदित ह्वै, बोले दीन दयाल।
सर मज्जन करि आवहु, पावहु भक्ति रसाल ॥११॥

करि मज्जन आये तत्काला। गहि पद उर भरि आनँद माला ॥
प्राची दिशि मुख आसन दीन्हा। उत्तर मुख गुरु कियउ प्रवीणा ॥
मंत्रित जलहि मार्जन कीन्हा। द्वादश तिलक कंठियुग दीन्हा ॥
रामायुध भुज अंकित कियऊ। युगलमंत्र सेवा युग दियऊ ॥
अग्रदास वर नाम धरेऊ। सरस भाव शुचि नात भरेऊ ॥
पुनि बोले गुरु दीन दयाला। है शरणागत षट् विधि हाला ॥
प्रभु अनुकूल कर्म कहँ करई। पुनि प्रतिकूल कर्म परिहरई ॥
सियपिय हैं समर्थ मम रक्षक। प्रभु गुण गण मन मनन सुरक्षक ॥
आत्मसमर्पण करै दीनता। हरि गुरु सन्तन में न भिन्नता ॥

दो०—लेसम्बन्ध अनन्द उर, करि साष्टांग प्रणाम।
सब सन्तन शिरनाय पुनि, भे परिपूरण काम ॥१२॥

पृथ्वीराज समय तिहि आये । समाचार सुनि अति सुख पाये ॥
आज्ञा दीन्ही तब मन्त्री कहँ । होय महोत्सव इहि अवसर मँह ॥
सुनि नृप आयसु मंत्री धाये । बाजा अमित निशान बजाये ॥
सिय पिय सनमुख भयो समाजा । अति आनन्द मगन मुनि राजा ॥
लिये सकल मंगल के सामा । आई दर्शनहित पुर वामा ॥
भयउ कुलाहल चहुँदिशिमाहीं । पंच शब्द सुनि अति सुख पाही ॥

दो०—नृप रानी वालाँ लसैं, सुनि शुभ भरि आनन्द ।
मुक्ता चौक पुराइ चलि, दर्शन हित गति मन्द ॥१३॥
किये अयाची याचकन, गुरु नृप हिय हुलसाय ।
अभिलाषा पूरी सबन, दी अशीस सुख पाय ॥१४॥

कृष्णदास उर भइ अभिलाषा । लगैं भोग पावैं हरिदासा ॥
किये निमंत्रण दशदिशिमाहीं । आये सन्त अमित तिहि ठाहीं ॥
जहँ तहँ सीताराम विराजै । होय नामध्वनि जनु घन गाजैं ॥
करहिं वेदध्वनि पंडित ज्ञानी । कोउ निरूपहिं तत्त्व बखानी ॥
कोई निज पर ज्ञान सुमंडित । कोइ करै अद्वैत विखंडित ॥
कोऊ करहिं विराग निरूपण । कोउ वर्णहिं प्रपत्ति निर्दूषण ॥
कोई भक्ति कहैं मति खानी । रस रूपा के भदे बखानी ॥
नवधा दशधा कह तहँ कोई । परामध्य कोउकी मति भोई ॥
कोउ कर कथा कीरतन कोऊ । कोउ अर्चा पद वन्दन कोऊ ॥
कोउ जप तप व्रत संयम नेमा । कोऊ परे मस्तहोइ प्रेमा ॥
कोउ मानस रति करत इकन्ता । इहि विधिजुरे अमित वर सन्ता ॥

दो०—श्रीपयहारी दैन्य युत, करि प्रणाम रस खान ।
यथा योग्य आसन दिये, सबकर करि सम्मान ॥१५॥
भयो परम आनन्द वर, लखि सुर मुनि सिध नाग ।
सन्त वेष धर सकल तहँ, आये भरि अनुराग ॥१६॥

भयो अनूपम अस आनन्दा । शारद मुद भरि भइ मति मन्दा ॥
मनु उमगी सत्संगति सरिता । राम भक्ति पय निर्मल भरिता ॥
तेहि सब जग कहँ पावन कीन्हा । भक्त सारसन अति सुख दीन्हा ॥
मास दिवस तहँ हरिजन छाये । पुनि निज निज आसनन सिधाये ॥
सन्तन दीन्हे आशीर्वादा । अग्र हृदय हो भक्ति दराजा ॥
अग्रदास वर अनुपम पायो । मन क्रम वच गुरु पद रति लायो ॥
जेष्ठ भ्रात श्री कील्ह देवजू । प्रीति परस्पर शुचि अभेव जू ॥
प्रीति प्रतीति देख भाइन में । सहज प्रसन्न भये गुरु मनमें ॥
हेमानन्द रहे लघु भ्राता । तिन पर प्रीति अधिक सुखदाता ॥
हेमानन्द नेह मति सागर । भरत सनेह देह धरे नागर ॥
तिनको सुयश विमल अघहारी । गाय गाय तरिहैं नर नारी ॥

दो०—श्रीगुरु आयसु पाय पुनि, कील्ह महन्ती कीन ।
अग्रदास निज अनुजसह, अमल भक्ति रसलीन ॥१७॥
श्रीरघुनन्दनलषणजिमि, एक रूप जग जान ।
अग्रहेम दोउभ्राततिमि, रीति रहनि रसखान ॥१८॥

अग्रदेव रसना रस नामा । ध्यान धरहिं अन्तर सियरामा ॥
बन प्रमोद रसखानि भाव भर । कनक भवन सेवा सुखलित कर ॥
भावभरे रस मधुर सुछन्दा । गुप्त केलिवर सिन्धु प्रबन्धा ॥
देवगिरा अरु भाषा माहीं । रचे अनेकन ग्रन्थ सुहाहीं ॥
ध्यानमंजरी अरु पद सागर । परम प्रसिद्ध ग्रंथ भाषाकर ॥
पुनि खल जीव अमित जगतारन । कियो विचार यात्रा चारन ॥
कुटिल कुचाली अति अघराची । अस जीवन हू भक्ति प्रकाशी ॥
वणिक एक मग सेवा कीन्हा । तासु सुवन अहि डसि दुख दीन्हा ॥
चरणामृत श्री सन्तन केरो । दै जिवाय हरि भक्तिहि मेरो ॥
करहु सन्त सेवा मन लाई । यहि सम अपर धर्म नहिं भाई ॥

दो०—मग आवत नाभा मिले, लोचन दियउ प्रवीण।
निज आश्रम ला मंत्र दै, कियउ भक्तिरस पीन ॥१९॥
भक्तमाल अद्‌भुत रची, अति विचित्र रस रूप।
तासु तनक अनुमोदते, मिलें श्री रघुकुल भूप ॥२०॥
अकथ अनूपम नेहनिधि, अमित अखंड प्रचंड।
विधि हरि हर सकुचत कहत, तासु प्रभाव उदंड ॥२१॥
रसिक भक्त सिय पिय मनभाये। सो स्वरूप नाभा दर्शाये ॥
अग्रदास यश विशद विशाला। पावन करन हरन कलि काला ॥
ज्ञान विराग भक्ति विस्तारक। पढ़त सुनत समझत निस्तारक ॥
करत सन्त सेवा रसदाई। अमित सन्त नित रह सुखपाई ॥
जिहि विधि सन्त परम सुख मानैं। तिहि प्रकार सेवा विधि ठानैं ॥
परिचर्या निजकर प्रभु करई। गत अभिमान रुची अनुसरई ॥
अर्चा अरु मानस वसु काला। करहिं लड़ावहिं श्री ललि लाला ॥
निजकर बाग अनूप लगायो। सियमनरंजन नाम धरायो ॥
ता सुबाग मधि विटप रसाला। ता तरु तर मानसि सब काला ॥
मान नृपति दर्शन हित आये। बाग द्वार चर चारु बिठाये ॥
तिहि क्षण निजकर बागहि झारा। पत्र बटोर दूर जा डारा ॥
देखी द्वार भीर नृप जनकी। बैठि विटप तर मानसि मनकी ॥
बैठ नृपति जोहत प्रभु बाटा। लगे वहाँ कछु औरहि ठाठा ॥
भयो विलम्ब स्वामि नहिं आये। श्री नाभा देखन हित धाये ॥
प्रभु लखि परि महि दंड समाना। सुमिरि सुगुणगण दृगभरि आना ॥
पुलकित तन मन भरे अनन्दा। जय जय श्रीगुरु करुणा कन्दा ॥
नृपति विचार कीन मन माहीं। का अभाग्य दर्शन मे नाहीं ॥
बाहर आ लखि अद्‌भुत रचना। महि परि कहि मृदु दीन सुवचना ॥
हे करुणा निधि परम उदारा। ममहित राम कृपा तन धारा ॥
तव पद पंकज निरखि कृपाला। मोह मान मद गे तत्काला ॥

दो०—करि विनती सानन्द नृप, पाय भक्ति वरदान।
श्री स्वामी सियपिय चरण, करत निरन्तर ध्यान ॥२२॥
एक दिवस सत्संगति माहीं। कील्ह अग्र हेमानन्द पाहीं ॥
जेते अनुज श्री स्वामी केरे। अपर सन्त तहँ जुटे घनेरे ॥
तज्ञ विज्ञ योगी वैरागी। आये विमल राम अनुरागी ॥
तत्वनिरूपैं ते तत वेत्ता। माया जीव ब्रह्म है नेता ॥
पांच स्वरूप जीव निर्धारा। पांच उपायरु पाँच विकारा ॥
पांच सहायक ब्रह्म विचारा। श्रुति सिद्धान्त अगम निरवारा ॥
बोले कील्ह मृदुल भर प्रेमा। करैं भजन निज बल दृढनेमा ॥
बोले वचन अग्र रसदाई। हरि बल सकल कर्म बन आई ॥
दो०—भये तत्व सिद्धान्त में, भेद अष्ट दश भिन्न।
रूपराशि श्रीजनकजा, प्रकटी ताही छिन्न ॥२३॥
कील्ह अग्र पदगहि स्तुति कीन्ही। कृपा दृष्टि किय सिय रसभीनी ॥
मृदु वच अग्रहि आयसु दीन्हा। रैवासे रचो कुञ्ज नवीना ॥
अन्तर्धान भई तब सीता। रैवासे गे धर नव रीता ॥
हेमानँद शिष्यन युत जाई। जानकी वल्लभ रीति चलाई ॥
लली लाल सेवा पधराई। अष्टकाल पद्धति सिखलाई ॥
राग भोग सेवा विधि नाना। रसिकन सदाचार परमाना ॥
श्रीविनोद शुचि शिष्य प्रवीणा। थल एकान्त भजन चित दीना ॥
ताहि समय दिल्ली पति आयो। सुनि प्रभाव दर्शन हित धायो ॥
दतुवन करत रसिकवर रूपा। पूछत भयउ यवन वर भूपा ॥
सुने यहां मैं सिद्ध फकीरा। देहु बताय अहो मति धीरा ॥
कहा काम तुमरो उन पाहीं। बैठो मिलैं यही शुचि ठाहीं ॥
दो०—पूंगी फलते दाबि पट, कूप अछादित कीन।
तापर चढि नृप मोदभरि, तहँ नमाज पढ़िलीन ॥२४॥

कही अग्रवर सुनहु नृपतिवर । रह्यो अधार नहीं अद्भुत तर ॥
निराधार बैठे श्रीस्वामी । देख प्रभाव भयो अनुगामी ॥
शीश नाय तब विनती कीनी । कछु सेवा लीजे मति भीनी ॥
है अनन्द रघुवर की दाया । नहिं कछु चाहिय यह जगमाया ॥
धेनु चरनहित पट्टो दिन्हो । सो अहीर पशु पालन लीन्हो ॥
भजन सिद्ध कर आय विनोदी । गहे चरण स्वामी अति मोदी ॥
हरि हरिजन सेवाविधि सारी । सो श्री नाभा कियउ सँभारी ॥
श्री विनोदि कहँ गादी दीन्ही । आप भजन एकान्त प्रवीनी ।

दो०—निज मन्दिर सेवा करी, भे प्रभु अन्तर्धान ।
मर्म न कोऊ जान यह, नाभा मन अनुमान ॥२५॥

अग्रदास शुचि चरित यह, प्रभु प्रेरित कियोगान ।
रूप कला मति लन्द लखि, क्षमिये कृपानिधान ॥२६॥

वार वार याचत यही, रूपकला अति दीन ।
कामक्रोध मत्सर रहित, रह मति पद रति लीन ॥२७॥

नहिं विद्या नहिं चातुरी, सब विधि परम गँवार ।
श्रीसुशील श्रीअग्रप्रभु, लीजे मोहि उबार ॥२८॥

काम क्रोध रति कुटिल लखि, अब न विसारो नाथ ।
शरण सुखद व्रत निरखि प्रभु, गहि राखो मम हाथ ॥२९॥

इति श्रीलाडिली लाल शरण (रूपकला) जी कृत श्रीमदग्रआचार्य चरितम् ।

आचार्य पाद अनन्त श्रीअग्राचार्यके संस्कृत एवं भाषा के निबंध समूहमें से पाठकोंकी जिज्ञासाके सभा यानार्थ "श्रीरामप्रपत्ति" "श्रीरामाष्टक" "श्रीराममंत्रराज परम्परा" यह तीन निबंध यहां दिये जा रहे हैं ।

अथ श्रीरामप्रपत्तिः ॥

स्वामिन् ते शेषभूतोऽहं भोग्यस्ते रक्ष्य एव च ।
अकिंचनोऽनन्योपायस्त्वत्कैंकर्यैकभोग्यकः ॥ १ ॥

अगतिश्चानुकूल्योऽहं प्रातिकूल्येन वर्जितः ।
रक्षिष्यतीति विश्वासी स्वरक्षाप्रार्थनायुतः ॥ २ ॥

कृपणोऽहं दयासिन्धो सर्वं पाप करस्तथा ।
स्वञ्च स्वीयञ्च यत्किञ्चित्त्वयिन्यस्यामि स्वीकुरु ॥ ३ ॥

न्यस्यामि किञ्चनः श्रीमन्नात्मरक्षाभरं त्वयि ।
त्वत्प्राप्तौ मे उपायस्त्वं कृपया भवराघव ॥ ४ ॥

एतच्चराचरं सर्वं यच्च यावच्च श्रूयते ।
सर्वमस्ति त्वदीयं हि श्रुतिभिश्चावगम्यते ॥ ५ ॥

नतादृशं दृढं ज्ञानं मयि स्वामिन् प्रतिष्ठितम् ।
त्वंतु सर्वं विजानासि सर्वं वस्तु ममेति च ॥ ६ ॥

संसार सागरे भूमन् तत्त्वद्वस्तुनिमज्जितम् ।
पश्यसि त्वं समर्थः सन्कारणं किं वद प्रभो ॥ ७ ॥

चेतनाचेतनं सर्वं मदीयं सत्यमस्ति वै ।
जीवोऽप्यसौ मदीयश्चेत्यभिमानान्निमज्जते ॥ ८ ॥

यावत्स्वत्वाभिमानोऽस्य तावत्संसार सागरे ।
निमज्जितोभिमानान्ते ह्युद्धरिष्यामि चेद्वद ॥ ९ ॥

सत्यमहं मदीयञ्च सर्वमन्यत्तवास्तिवै ।
तथाप्येषोभिमानो मे हेतुस्तवनियोजनम् ॥१०॥

अहं मदीयञ्चेत्येषो योऽभिमानोदुरत्ययः ।
त्वयि न्यस्यामि तं स्वामिन्त्वदीयं तंहि स्वीकुरु ॥११॥
निर्हेतु कृपया सर्वं स्वीकृत्य करुणानिधे ।
अहं ममाभिमानं मे निखिलं छिन्धिमूलतः ॥१२॥
यदि नास्त्यानुकुल्यादिर्मयि स्वामिन्यथार्थतः ।
बद्धाञ्जलिपुटं दीनं रक्ष मां शरणागतम् ॥१३॥
यथाहं च मदीयञ्च न मे रायस्य तत्वतः ।
भातिमे हृदये सम्यक् तथा कुरु दयानिधे ॥१४॥
त्वन्मायया मलीमसं हृदयं निर्मलं कुरु ।
येनाऽहं संविजानामि त्वां त्वदीयञ्च तत्वतः ॥१५॥
त्वत्कृपादृष्टिमात्रेण तद्धि सर्वं भविष्यति ।
न वै परिश्रमः कश्चित्तव तत्र दयानिधे ॥१६॥
प्रार्थयामि महादीनो दीनोद्धार कृपानिधे ।
एतद्देहावसानेमां स्वं प्रापय दयाकर ॥१७॥
स्वदत्तज्ञानदीपेन नाशयाज्ञानजं तमः ।
स्व तत्वज्ञान पूर्वं मां स्वार्थं स्वमपय स्वयम् ॥१८॥
यानि संचित पापानि तानि नाशय मे प्रभो ।
अकृत्येषु प्रवृत्तिं मे वारय बुद्धि प्रेरक ॥१९॥
यथा निर्मुच्य पापेभ्यस्त्वत्प्राप्तेर्योग्यता भवेत् ।
मयि स्वामिन् हरे राम तथा त्वं मां स्वयं कुरु ॥२०॥
न मे पापविनिर्मोके नापि त्वत्प्राप्तिसाधने ।
शक्तिस्तत्र समर्थस्त्वं स्वप्राप्तेः साधनं भव ॥२१॥

स्वाग्रे मां पतितं दृष्ट्वा श्रुत्वा च प्रार्थनामिमाम् ।
अङ्गीचकार श्रीरामस्तदप्यस्मीह निर्भरः ॥२२॥

इति श्रीमदग्राचार्य कृतांश्रीरामप्रपत्ति समाप्तम् ।

अथ श्रीरामाष्टकः

संसार सागरान्नाथौ पुत्रमित्र ग्रहाकुलात् ।
गोप्तारौ मे दयासिन्धू प्रपन्नभयभञ्जनौ ॥ १ ॥
योऽहं ममास्ति यत्किञ्चिदिहलोके परत्रच ।
तत्सर्वं भवतोरेव चरणेषु समर्पितम् ॥ २ ॥
अहमस्म्यपराधानामालयस्त्यक्तसाधनः ।
अगतिश्च ततोनाथौ भवन्तावेव मे गतिः ॥ ३ ॥
तवास्मि जानकीकान्त कर्मणा मनसा गिरा ।
रामकान्ते तवैवास्मि युवामेव गती मम ॥ ४ ॥
शरणं वां प्रपन्नोऽस्मि करुणानिकराकरौ ।
प्रसादं कुरुतां दासे मयि दुष्टेऽपराधिनि ॥ ५ ॥
मत्समो नास्तिपापात्मा त्वत्समो नास्तिपापहा ।
इति संचिंत्य देवेश यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ६ ॥
अन्यथा हि गतिर्नास्ति भवन्तौ हि गतिर्मम ।
तस्मात्कारुण्य भावेन कृपां कुरु कृपानिधे ॥ ७ ॥
दासोहं शेषभूतोऽहं तवैव शरणं गतः ।
पराधितोऽहं दीनोहं पाहिमां करुणाकर ॥ ८ ॥

इति श्रीमदग्राचार्यकृतं श्रीरामाष्टकम् ॥

श्री राममन्त्रराज परम्परा

श्रीअग्रदास उवाच ।

शुभासने समासीनमनन्तानन्दमच्युतम् ।
कृष्णदासो नमस्कृत्य पप्रच्छ गुरुसन्ततिम् ॥१॥

श्री कृष्णदास उवाच ।

भगवन्यमिनां श्रेष्ट प्रपन्नोऽस्मि दयां कुरु ।
ज्ञातुमिच्छाम्यहं सर्वां पूर्वेषां सत्परम्पराम् ॥२॥
मन्त्रराजश्च केनादौ प्रोक्तः कस्मै पुरा विभो ।
कथञ्च भुविविख्यातो मन्त्रोऽयं मोक्षदायकः ॥३॥

श्रीअग्रदास उवाच ।

कृष्णदास वचः श्रुत्वाऽनन्तानन्दो दयानिधिः ।
उवाच श्रूयतां सौम्य वक्ष्यामि तद् यथाक्रमम् ॥४॥

श्रीकृष्णदास उवाच ।

परधाम्निस्थितो रामः पुण्डरीकायतेक्षणः ।
सेवया परया जुष्टो जानक्यै तारकं ददौ ॥५॥
श्रियः श्रीरपिलोकानां दुखोद्धरणहेतवे ।
हनूमते ददौ मन्त्रं सदा रामाङ्घ्रि सेविने ॥६॥
ततस्तु ब्रह्मणाप्राप्तो मुह्यमानेन मयया ।
कल्पान्तरे तु रामो वै ब्रह्मणे दत्तवानिमम् ॥७॥
मन्त्रराजजपं कृत्वा धाता निर्मातृतां गतः ।
त्रयीसारमिमं धातुर्वशिष्ठो लब्धवान्परम् ॥८॥
पराशरो वशिष्ठाच्च सर्वसंस्कार संयुतम् ।
मन्त्रराजं परं लब्ध्वा कृतकृत्यो बभूवह ॥९॥

पराशरस्य सत्पुत्रो व्यासः सत्यवतीसुतः ।
पितुः षडक्षरं लब्ध्वा चक्रे वेदोपबृंहणम् ॥१०॥
व्यासोपि बहुशिष्येषु मन्वानः शुभयोग्यताम् ।
परमहंसचर्य्याय शुकदेवाय दत्तवान् ॥११॥
शुकदेवकृपापात्रो ब्रह्मचर्यव्रतेस्थितः ।
नरोत्तमस्तु तच्छिष्यो निर्वाणपदवीं गतः ॥१२॥
सचापि परमाचार्यो गङ्गाधराय सूरये ।
मन्त्राणां परमं तत्वं राममन्त्रं प्रदत्तवान् ॥१३॥
गङ्गाधरात्सदाचार्यस्ततो रामेश्वरो यतिः ।
द्वारानन्दस्ततो लब्ध्वा परब्रह्मरतोऽभवत् ॥१४॥
देवानन्दस्तु तच्छिष्यः श्यामानन्दस्ततोऽग्रहीत् ।
तत्सेवया श्रुतानन्दश्चिदानन्दस्ततोऽभवत् ॥१५॥
पूर्णानन्दस्ततो लब्ध्वा श्रियानन्दाय दत्तवान् ।
हर्यानन्दो महायोगी श्रियानन्दांघ्रि सेवकः ॥१६॥
हर्यानन्दस्य शिष्योहि राघवानन्द इत्यसौ
यस्य वै शिष्यतां प्राप्तो रामानन्दः स्वयं हरिः ॥१७॥
तस्माद् गुरुवराल्लब्ध्वा देवानामापि दुर्लभम् ।
प्रादात्तुभ्यमहंतात गुह्यं तारकसंज्ञकम् ॥१८॥
एवं परम्परा सौम्य प्रोक्ता ते सम्प्रदायिनाम् ।
मन्त्रराजस्य चाख्यातिर्भूयामेवमवातरत् ॥१९॥

श्रीअग्रदास उवाच ।

कृष्णदासस्तु तच्छ्रुत्वा लेभे परमहर्षताम् ।
साष्टाङ्गं प्रणतिं कृत्वा वचनं चेदमब्रवीत् ॥२०॥

श्रीकृष्णदास उवाच ।

पीत्वा श्रीमुखवाक्यजन्यममृतं तापत्रयोद्धारकम् ।
श्रुत्वा वेद निगूढतत्त्वजनिकां वाणीं समुल्लासिनीम् ॥
हित्वा मोचद रामतारकमिमं जाने न सारं परम् ।
नीत्वाकालमहं सुसाधकधिया वक्तुं न शक्नोम्यलम् २१

श्रीअग्रदास उवाच ।

यः पठेच्छ्रद्धया नित्यं पूर्वाचार्यपरम्पराम् ।
मन्त्रराजरतिं प्राप्य सद्यो रामपदं व्रजेत् ॥२२॥

इति श्रीमदग्रस्वामि विरचिता श्रीराममन्त्रराजपरम्परा समाप्ता ।

(स्वामी श्रीशंकराचार्यजी की कथा)

मू० छ०–उच्छृंखल अज्ञान जिते अन ईश्वरवादी । बौद्ध जैन चार्वाक आदि पाखंड विवादी । विमुखन को दै दण्ड ऐंचि सन्मारग आने । सदाचारकी सींव विश्व कीरती बखाने ॥ ईश्वरांश अवतार महि, मर्यादामांडी अघट । कलियुग धर्म पालक प्रगट, आचारज शंकर सुभट ॥

विमुख समूह लंके किये सनमुख राम
अति अभिराम लीला जग विसतारी है ।
'सेवरा प्रबल बास केवराज्यों फैल रहे
गहे नहिं जाहिं वादी शुचि बात धारी है ॥
तजि के शरीर काहू नृप में प्रवेश कियो
दियो करि ग्रन्थ मोहमुद्गर भारी है ।
शिष्यन सों कह्यो कभूं देह में आवेश जानो
तब ही बखानो आय सुनि करूँ न्यारी है ॥१२४॥
जानि के आवेश तन शिष्य ने प्रवेश कियो
'रावले में देखि सो सुश्लोक ल उचारयो है ।
सुनतहि तज्यो तन निजतन आय लियो
कियो सो प्रमाण दास प्रण पूरो पारयो है ॥
सेवरा हराये वादी आये नृप पास उच्च
छतपर बैठे एक माया फन्द डारयो है ।
जल चढ़ि आयो 'नाव भावलें दिखायो कहैं
चढो नहिं बूडो आप कौतुक सो 'धारयो है ॥१२५॥
आचारज कहीं यों चढावो इन सेवरान
राजाने चढाये गिरि टूक उडि गये हैं ।
तबतो प्रसन्न नृप पाँव परयो भरयो हियो
कह्यो सोही करयो धर्म भागवत लये हैं ॥

१. सेवरा=जैन । २. अन्तः पुर । ३. नवका का दृश्य । ४. जानलिया ।

भक्ति ही प्रचारी, पाछे माया वाद डारि दीन्हो
कीन्हो प्रभु कह्यो केते विमुख हू भये हैं।
ऐसे वे गम्भीर सन्त धरी वह रीति जामें
प्रीतिही में साने हरि रूप गुण मये हैं ॥१२६॥

(श्री नाम देवजी की कथा)

मू० छ०—बाल पने [1]विट्ठल जाके करते पय पीयो । मृतक गऊ दइ ज्याय खलन कहँ परिचय दीयो। सेज सलिल ते कढी प्रथम जैसी ही होती। [2]देवल उलटयो देखि सकुचि रहे सब ही [3]सोती॥ [4]पांडुर नाथ किये [5]अनुग ज्यो, [6]छान छवाई घासकी। नामदेव पत निर्वही ज्यों त्रेता [7]नरहरिदास की ॥४३॥

छीपा नामदेव हरि देवजी को भक्त बडो
रही एक बेटी पतिहीन भई जानिये।
द्वादश वरशकीसो भई तब कही पिता
सेवा सावधान मन नीके करि आनिये॥
तेरे जे मनोर्थ ह्वैहैं पूरण करैंगे येहीं

१. भगवान विट्ठल नाथ जी। २. मन्दिर । ३. श्रोत्रीय (द्विज श्रेष्ठ) । ४. भगवान पाडुर नायजी । ५. सेवक । ६. चप्पर । ७. प्रह्लाद जी।

जो पै दत्त चित्त होके मेरी बात कानिये।
करत टहल प्रभु वेगही प्रसन्न भये
कीन्ही काम वासना सो [1]पोखी प्रभु मानिये ॥१२७॥
विधवा के गर्भ रह्यो बात चली ठौर ठौर
दुष्ट शिरमोरनकी भई मनभाई है।
चलत चलत वामदेवजू के कान पडी
कियो निरधार प्रभु आप अपनाई है॥
भयो जो प्रकट बाल नाम नामदेव धरयो
कियो मनभायो सब सम्पति लुटाई है।
जस जस बढयो कछु औरैरंग चढयो भक्ति
भाव अंग मढयो कढयो रूप सुखदाई है ॥१२८॥
खेलत खिलौना प्रीति रीति सब सेवाही की
पट पहिरावे पुनि भोग सो लगावहीं।
घंटा ले बजावे नीके ध्यान मन ल्यावे अति
सुख पावे नैनन में नीर भरि आवहीं॥
बार बार कहै नाम देव वाम देवजूसों
देवो मांहि सेवा करूँ अतिहि सुहावहीं।
जाऊँ एक गाँव फिरि आऊँ दिन तीन माहीं
दूध ले पिवावो मत भूलो प्रभु [2]भावहीं ॥१२९॥
कौन वह वेर जेहि वेर दिन फेर होय
बेर बेर कहै वहै बेर नहीं आई ये?

१ मूर्ख की। २ भाव को।

आई वह बेर लै कराही माँझ [1]हेरि दूध
डारयो दोयसेर मन नीके दे बनाई ये ।
चोपनके ढेर लागे निपट [2]औसेर दृग
आये नीर धेर जनि गिरि घूँट जाइये ।
माता कहै टेरि करी बडी तैं अँबेर अब
करो मत देर अजू चित्त दे औटाइये ॥१३०॥
चल्यो प्रभु पास लै कटोरा छविरास तामें
दूध सो सुवास मध्य मिसरी मिलायके ।
हिये मैं हुलास निज [3]अज्ञताकी [4]त्रास ऐपै
करैं जौपै दास मोहि महा सुख दायके ॥
देख्यो मृदु हास्य कोटि चाँदन को भास कियो
भावको प्रकाश मति अति सरसायके ।
प्यायबे की आस करि ओट कछु भरे श्वास
देख के निराश कही पीवो जू अघाय के ॥१३१॥
ऐसे दिन बीते दोय राखी बात हिये गोय
रहै निशि सोय ऐपै नींद नहिं आवहीं ।
होत ही सँवार फिरि वैसेही सुधारि दूध
हियो करि गाढो जाय कह्यो पीवो भावहीं ॥
बार बार कँहू पीवो आप दूध पीवो नाहिं
आवै भोर नाना गरे छुरी दै दिखावहीं ।

१. देखकर । २. प्रतीक्षा । ३. अनजान पन । ४. डर ।

गहिलियो कर जनि कर ऐसी कही प्रभु
पीवे लगे कही नेक राखो सदा पावहीं ॥१३२॥
आये [1]वाम देव तब पूछैं नामदेवजी सौं
दूधको प्रसंग अति रंग भरि भाष्यो है ।
मोसों न पिछान दिन दाय हानि भई याते
प्राण देन लाग्यो डर मानि तब चाख्यो है ॥
पीयो सुखदीयो तब नेक राखलियो मैं तो
जीयो सुनि बात नाना कह्यो कोऊ [2]साख्यो है ।
धरयो पै न पीयो अरयो प्यायो सुख पायो नाना
यामें लै दिखायो [3]भक्त वश रस राख्यो है ॥१३३॥
नृप सो मलेच्छ बोलि कही मिले साहिब सों
दीजिये मिलाय करामात दिखलाइये ।
होय करामात तो ये काहे कों [4]कसब करैं
[5]भरैं दिन ऐप बाँटि सन्तन सौं खाइये ॥
ताही के प्रताप आप यहाँ लो बुलाये हमैं
दीजिये जिवाय गाय घर चले जाइये ।
दयी लै जिवाय गाय सहज सुभायही मैं
अति सुख पाय पाँय परयो मन भाइये ॥१३४॥
लेओ देश गाँव जाते मेरो कछु नाँव होय
चाहिये न कछु, दई सेज मणिमई है ।

१. वामदेवजी । २. साक्षी भी । ३. भक्त के वशीभूत रहने का भाव रखा है । ४. रोजगार धंधा । ५ परिश्रम करैं ।

धरिलई शीश संग दये दश बीस नर
नाहीं करि आये जलमाहिं डारि दई है ॥
भूप सुनि चौंक परयों, लाओ कही,आये, कहो,
कही नेक आनिके दिखाओ कीजे नई है।
जलते निकासि बहु भाँति गहि डारी तट
लीजिये पिछान देखि सुधि बुधि गई है ॥१३५॥
आय परयो पाँव प्रभु पासते बचाय लीजे
कीजे एक बात कभूँ साधु ना दुखाइये।
लई यह मानि फेर लीजियें न सुधि मेरी
कहि चले गुण गात मन्दिर लौं जाइये ॥
देखी द्वार भीर [1]पग दासिन को [2]कटिबांधि
करसों [3]उछीर करि चाहें पद गाइयें।
देख लीन्हे जिन काहू दीन्ही पांच सात चोट
कीन्ही धका धकी [4]रिस मनमें न आइये ॥१३६॥
बैठे पिछवारे जाय किन्ही जू उचित यहै
दीन्ही जो लगाय चोट मेरे मन भाइये।
कान देके सुनो अब चाहत न और कछू
[5]टेव मोको यही नित्यनेम पद गाइये ॥
सुनतही आप अति करुणा विकल भये
कह्यो फेरौं द्वार, गहि मन्दिर फिराइये।

१. जूतियां। २ कमर में। ३. भीड़ को हटाकर। ४. क्रोध। ५. आदत।

जेते रहे [1]सोती मोती आवसी उतर गई
भई हिये प्रीति गहे पाँव सुखदाइये ॥१३७॥
औचकही घर माँझ साँझ ही अगिनि लागी
बडो अनुरागी रहगई सोऊ डारिये।
कहे अहो नाथ सब कीजिये जू अङ्गीकार
हँसे सुकुमार हरि, मोहीको निहारिये ॥
तुमरो भवन सके कौन और आय यहाँ
भये यों प्रसन्न छान छाई आय सारिये।
पूछें आय लोग कोनै छाई ओ छवायलीजे
दीजे जोई भावे, तन मन प्राण वारिये ॥१३८॥
सुनो और परचे जो आये न कवित्त माँझ
बाँझ भई माता क्यों न जो न मति पागी है।
हुते एक साहू तुला दानको उछाह कियो
दयो पुर सबै रह्यो नामदेव [2]रागी है ॥
लाओ जू बुलाय एक दोय तो फिराय दीन्हे
तीसरे सो आयो, कही कहो बडभागी है।
कीजिये जू कछु अङ्गीकार मेरो भलो होय
भयो भलो तेरो [3]दीनो देन आसा लागी है ॥१३९॥
[4]जाके तुलसी है कहि तुलसी के पत्र माँझ
लिख्यो आधो राम नाम यासों तोल दीजिये।

१ श्रोत्रीय ब्राह्मण अथवा सवति पुत्र (विरोधी)। २ प्रेमी। ३ दिया भी और देने की आशा भी लगी है। ४ जिसके यह तुलसी है उसके क्या कमी है।

कहा परिहास करो डरो ह्वै दयाल देखि
होत कोऊ ख्याल याको पूरो करो रीझिये ॥
लायो एक कांटो लै चढायो पात सोना संग
भयो बडो रंग सम होत नाहीं छीजिये ।
लई सो तराजू जासों तुले नए पाँच सात
जाति पाँतिहू को धन धरयो पैन धीजिये ॥१४०॥
परयो शोच भारी दुख पावे नर नारी
नामदेवजू विचारि कह्यो और काम कीजिये ।
जिते व्रत दान और स्नान किये तीरथ में
करि सो संकल्प यापे जल डारि दीजिये ॥
किये सो उपाय पात पल्ला भूमि चिपिरह्यो
रहे वे खिजाय कह्यो इतनोई लीजिये ।
लके कहा करें पात सरवर हू न करें
भक्ति भाव सों लै भरें मति अति भीजिये ॥१४१॥
[1]किये रूप ब्राह्मणको दूबरो निपट अङ्ग
भयो हिये रंग व्रत परिचै को लीजिए ।
आय एकादशी अन्न माँगत बहुत भूखो
आज तो न देहों [2]भोर चाहे जितो लीजिए ॥
कियो हठ भारी मिलि दोऊ ताको शोर भयो
समझावे नामदेव याको कहा [3]खीजिए ।

१ भगवानने । २ प्रातःकाल=कलह । ३ इसमें नाराज क्यों होते हैं ।

बीती [1]याम चार मरि रह्यो यों पसार पाँव
[2]भाय को न जाने दई हत्या नहीं लीजिए ॥१४२॥
रचिके चिता सो विप्र गोदलैके बैठे जाय
दिये मुसकाय मैं परीक्षा लीन्ही तेरी है ।
देखि सो सचाई सुखदाई मनभाई मेरे
भये अन्तर्धान परि पाँव प्रीति हेरी है ॥
जागरण माँझ हरि भक्तन को प्यास लागी
गये जल लेन प्रेत आयो कीन्ही फेरी है ।
फेटतैं निकासि ताल गायो पद ततकाल
बड़े ही कृपाल रूप धरयो छवि ढेरी है ॥१४३॥

(कवि चक्रवर्ति श्रीजयदेवजी की कथा)

प्रचुर भयो तिहुँलोक गीत गोविन्द उजागर। कोक काव्य नव रसनि सरस सिंगार को सागर। अष्टपदी अभ्यास करै तिहि बुद्धि बढ़ावै। राधारमण प्रसन्न सुनन निश्चय तहँ आवै॥ सन्त सरोरुह खंडको, [3]पद्मावति सुखजनक रवि। जयदेव कवी [4]नृपचक्कवै, [5]खँड मँडलेश्वर आनकवि॥ ४४॥

१ प्रहर । २ नामदेवजीने सोचा यह ब्राह्मण एकादशीके भावको नहीं जानता इसने हत्या दे दी, इसका दुःख नहीं मानना चाहिये । ३ उनकी पत्नी का नाम है । ४ चक्रवर्ति । ५ छोटे राजा ।

किन्दुबिल्व ग्रामतामें भये कविराज राज
भरयो रसराज हियो तन मन चाखिये।
दिन-दिन प्रति रूख-रूख तर जाय रहैं
गहैं एक गूदरी औ कमंडलु राखिये॥
कही देन विप्र सुता जगन्नाथ देवजी को
भयो जब समै चल्यो देन प्रभु भाषिये।
द्विज जयदेव नाम मेरोही स्वरूप ताहि
देवो ततकाल मानि मेरी कही [1]साखिये॥१४४॥
चल्यो द्विज तहाँ जहाँ बैठे कविराज राज
बोल्यो महाराज यह मेरी सुता लीजिये।
कहै कविराज कछु कीजिये विचार आप!
योग्य वर देखि सुकुमारी यह दीजिये॥
द्विज कही जगन्नाथ देवजूकी आज्ञा भई
पालोयाहि टरो मोपै ना तो दोष भीजिये।
उनको हजार सोहैं हमको पहार एक
ताते तुम फिरि जावो कहा कहि [2]खीजिये॥१४५॥
सुतासों कही सो तुम बैठी रहो याही ठौर
आज्ञा [3]शिरमौर मोसों जात नहीं टारी है।
चल्यो अनखाय समझाय हारे बातन सों
मन सों [4]कहत कहा कोजे शोच भारी है॥

१ प्रमाण है। २ रिसावैं। ३ श्रीजगन्नाथ देवजी की। ४ श्री जयदेवजी।

बोले द्विज बालकी सों, अपनो विचार करो
धरो हिय ज्ञान मोपै जाय क्यों सँभारी है।
बोली कर जोरि मेरो जोर ना चलत कछु
चाहो सोही करो [1]देही वारि फेरि डारी है॥१४६॥
जानी जब भई तिया, कियो प्रभु जोर मोपै
अब एक झोंपरी की छाया करि लीजिये।
भई जब छाया श्याम सेवा पधरायलई
नई एक पोथी मैं बनाऊ मन कीजिये॥
भयो जो प्रकट गीत सरस गोविन्दजू को
मानके [2]प्रसंग "शीश मंडन मो" दीजिये।
यह एक पदमुख निकसत शोच परयो
धरयो कैसे जात लाल लिख्यो मति रीझिये॥१४७॥
नीलाचल धाम तामें पंडित नृपति एक
रची [3]यही नामधरि पोथी सुखदाइये।
द्विजन बुलाय कही याहि लै प्रसिद्ध करो
लिखि लिखि पढि देश देशनि चलाइये॥
बोले मुसकाय विप्र लाइये, दिखाई लाय
नई यह कोऊ मति अति भरमाइये।
धरी दोऊ मंदिर में जगन्नाथ देवजू पै
दीन्ही [4]वह डारि [5]याहि हार ज्यों लगाइये॥१४८॥

१ शरीर। २ स्मरगरल खंडनं ममशिरसिमंडनं देहिपद पल्लवमुदारम्। ३ यही (गीतगोविन्द)। ४ राजाकी बनाई। ५ श्रीजयदेवजीकी।

परयो शोच भारी नृप निपट खिसानो तब
गयो उठि सागरमें बूड़ों यही बात है।
अति अपमान कियो जगन्नाथ देवजू ने
सह्यो नहिं जात आँच लागी गात गात है॥
आज्ञा प्रभुदई मत बूडे तू समुद्र माँझ
दूसरो न ग्रंथ ऐसो बृथा तन पात है!
द्वादश सुश्लोक लिखिदीजे सर्ग द्वादशमें
ताहीं साथ चालै जाकी ख्याति पात पात है॥१४९॥
सुता एक मालीकी सो वैंगन की बाडी फल
तोरैं गावै "बनमाली" कथा सर्ग पांच की।
डोलैं जगन्नाथ पाछे काछे अंगमाहीं झँगा
आछे कहि झूमें सुधि करैं [२]बिरहाँ चकी॥
फाटयो झंगा देखि नृप पूछी अहो भयो कहा
जानत न हम अब कहो बात सांचकी।
प्रभुही जनाई मन भाई मोरे यही गाथा
लाये बालकीको पालाकीमें [३]कीन्ही नाचकी॥१५०॥
फेरी नृप डोंडी यह [४]औंडी बात जानी महा
कही राजा रंक पढैं नीकी ठौर जानिके।
अक्षर मधुर और मधुर स्वरन ही सों
गावै तब [५]लाल [६]प्यारी ढिंग हीलै मानिके॥

१ न कुरु नितम्बिनि गमनविलम्बनमनुसरतं हृदयेशम्। धीरे समीरे यमुनातीरे बसतिवने बनमाली। २ विरहानल। ३ नृत्यगान करनेवाली बनादी। ४ गूढ। ५ प्रियाप्रीतमको। ६ पास ही समझ लें।

सुनि यह रीति एक मुगलने धारी, पढै
घोडे चढि चले आगे श्याम रूप [१]ठानिके।
पोथीको प्रताप स्वर्ग गावत है देव बधू
आपही जो रीझि लिख्यो निजकर आनिके॥१५१॥
पोथी की तो बात सब कही मैं सुहात हिये
सुनो और बात जामें अति अधिकाइये।
गाँठमें मुहर मग चलतमें ठग मिले
कह्यो कहां जात? जहां आप चलि जाइये॥
जानलई बात खोलि द्रव्य पकराय दियो
लियो चाहो सोई सोई लेवो मोको भाइये।
दुष्टन समझि कही नीकी इनकेर विद्या
आवै जो नगर देवैं वेगि पकराइये॥१५२॥
एक कहैं डारो मारि भलो है विचार यही
एक कहैं मारो मत धन हाथ आयो है।
जो पै ल पिछान कहो कीजिये निदान कहा
हाथ पाँव काटि बडे घढा पधरायो है॥
आयो तहां राजा एक देखिके [२]विवेक भयो
लियो उजियारो सो प्रसन्न [३]दरसायो है।
बाहिर निकासे मानो चन्द्रमा प्रकाश राशि
पूछ्यो इतिहास कह्यो ऐसो तन पायो है॥१५३॥

१ धारण करके २ ज्ञान। ३ देखपडे।

बड़े ही प्रभाववान सकै को बखान अहो
अहै कोऊ भूरि भाग्य दरशन कीजिये।
पालकी बैठाय लाये किये ठूँठ घाव नीके
जीके भाये भये कही आज्ञा मोहि दीजिये॥
करो हरि साधु सेवा नाना पकवान मेवा
आवै जोई सन्त तिन्हैं देखि रस भीजिये।
आये वेही ठग माला तिलक [1]चिलक किये
[2]किलकि के कही बडे बन्धु लेके धीजिये॥१५४॥
राजाको बुलाय कही हिये हरि भाव भरे
जागे तेरे भाग्य अब सेवा फल लीजिये।
गायो लै महल माँझ टहल लगाये लोग
लागे होन भोग [3]जिय शंका तन [4]छीजिये॥
माँगैं बार बार विदा राजा नहिं जानदेत
अति अकुलाये [5]स्वामी कही धन दीजिये।
दैके बहु धन सो पठाये संग मानुषहू
आवो पहुँचाय तब तुम पर [6]रीझिये॥१५५॥
पूछी नृपनर कोऊ तुमरी न [7]सरवर
जिते आये साधु ऐसी सेवा नहिं भई है।
स्वामीजी सों [8]नातो कहा कहो हम खावैं अहा
राखियो दुराय यह बात अति नई है॥

१ चमकते हुए। २ प्रसन्न होकर। ३ मनमें। ४ दुबले होते थे। ५ श्री जयदेवजी ६ प्रसन्न होंगे। ७ समान। ८ सम्बन्ध।

हुते एक ठौर नृप चाकरीमें तहाँ इन
कियो अपराध मारिडारो आज्ञा दई है।
राखे हम हितू जानि लै निदान हाथ पाँव
ताहि अहसान अब सेवा यह भई है॥१५६॥
कहत ही फाटी भूमि ठग सो समाये तामें
भये जन चकित सो स्वामी जी पै आये हैं।
कही जिती बात भई गात गात काँपे सुनि
हाथ पाँव मीडे भये ज्यों के त्यों सुहाये है॥
अचरज दोऊ नृप पास जा [1]प्रकाशे जन
[2]जिये नृप सुनि आये वाही ठौर धाये हैं।
पूछै नृप बात शीश पाँयन पै राखि तिन्हैं
कहिये [3]उघारि भये मेरे मन भाये हैं॥१५७॥
राजा अति अड गही कही सब बात खोलि
निपट अमोल यह सन्तन को वेष है।
कैसौ अपकार करै तऊ उपकार कर
ढरैं रीति अपनीही सरस सुदेश हैं॥
साधुता न तजैं कभूँ जैसे दुष्ट दुष्टता न
यही जान लीजिए सो रसिक नरेश हैं।
जानि नाम ठाम कह्यो रहो यहाँ बलि जाउँ
भयो मैं सनाथ प्रेम भक्ति मई देश है॥१५८॥

१ प्रकट किये। २ प्रसन्न हुए। ३ खोल कर।

लाए जा लिवाय लोग कविराज राज तिया
किये लै मिलाप आप रानी ढिंग आई है।
मरयो रानी भाई एक भई यों भोजाई सती
कोऊ अंगकाटि कोऊ कूदि परी धाई है ॥
सुनत सो रानी हिय बडोही अचम्भो भयो
इनके न भयो फिर कहि समझाई है।
प्रीतिकी न रीति यह, येतो विपरीत ही है
छूटै तन जब पिय प्राण छुटी जाई है ॥१५६॥
ऐसी एक आप कहि, राजासों यों बात कही
स्वामी लेके जाओ बाग देखूँ नेक प्रीति को।
नृप कहे बुरी सोची देत मेरे गरे छुरी
तिया हट मानि करी वैसे ही प्रतीति को ॥
दासी कही आय स्वामी पाये बाग माहिं गति
सुनि सो विकल होय लोटी भूमि रीति को।
बोली भक्त वधू अजी वे तो हैं निपट नीके
तुम काहे [1]औचक ही पावत हो [2]भीति को॥१६०॥
भई लाज भारी पुनि फेरिके सँवारी बात
केऊ दिन बीते पुनि फेर वही कीन्ही है।
जानी भक्तवधू यह चाहत परीक्षा लेन
कही अजू पाये सुनि देह तजि दीन्ही है ॥

१. एकाएक । २. डर ।

भयो मुख श्वेत रानी राजा आयो जानि यह
रचि चिता जरौं मेरी भई मति हीनी है।
भई सुधि आपको सो आये वेगि दौरि नृप
देख्यो मृत प्राय कह्यो मोत मेरी दीन्ही है ॥१६१॥
बोल्यो नृप अजू मोको जरे ही बनेगी अब
सब उपदेश मैंने धूरि में मिलायो है।
कह्यो बहु भाँति तोप आवत न शान्ति नेक
गाई अष्टपदी स्वर लियो तन ज्यायो है ॥
लाजन को मारयो राजा चाहे अपघात कियो
जीयो नहिं जात भक्ति लेशहू न आयो है।
करि समाधान निजग्राम आये किन्दुविल्व
जैसो कछु सुन्यो यह परचो लै गायो है ॥१६२॥
देवधुनी स्रोत हो अठारह कोस आश्रम ते
सदा असनान करैं धरैं योग्य ताईको।
भयो तन वृद्ध तऊ छाडैं नही नित्य नेम
प्रेम देखि भारी कही गंगा सुखदाईको ॥
आओ मति ध्यान करो, करो जनि हठ ऐसो
मानीनहीं आऊँ मैं ही जानों कैसे आई को।
फूले देखो कंज तब कीजिये प्रतीत मेरी
भई वाही भाँति सेवैं अबलो सुहाई को ॥१६३॥

(श्रीमद्भागवत के टीकाकार श्री श्रीधर स्वामी की कथा)

मू० छ०—तीन कांड एकत्व सानि कोउ अज्ञ बखानत। कर्मठ ज्ञानी ऐंचि अर्थ को अनरथ बानत। परमहंस संहिता विदित टीका विस्तारचो। षट् शास्त्रन अविरुद्ध वेद सम्मत सु विचारचो॥ परमानन्द प्रसादते, माधव स्वकर सुधार दियो। श्रीधर श्रीभागौतमें परम धर्म निर्णय कियो॥४५॥

पंडित समाज वडे वडे भक्तराज जेते
भागवत टीका करि आपस में [1]खीझिये।
भयो सो विचार काशीपुरी अविनाशी माँझ
सभा अनुसार जोई सोई लिखि दीजिये॥
याके तो प्रमाण भगवान विन्दुमाधव हैं
लाय सब पोथी धरि मन्दिर में लीजिये।
धरी सब लाय प्रभु स्वकर बनायदई
कीन्ही सर्व ऊपर लै चले मति भीजिये॥१६४॥

(श्री विल्वमंगल सूरदासजी की कथा)

मू० छ०—करुणामृत सुकवित्त युक्ति [2]अनुच्छिष्ट उचारी। रसिक जनन जीवन

१. झगड़ने लगे। २. जिसको पहिले किसीने नहीं कहा।

सो हृदय हारावलि धारी। हरि पकरायो हाथ बहुरि तब लियो छुडाई। कहा भयो कर छुटे [1]बदौं जब हियतें जाई॥ चिन्तामणि सँग पायके, [2]ब्रजवधू केलि वरणी अनूप। कृष्ण कृपाको [3]पर प्रकट विल मंगल मंगल स्वरूप॥४६॥

कृष्णवेणा तीर एक द्विज मतिधीर रहै
ह्वै गयो [4]अधीर संग चिन्तामणि पायके।
तजी लोक लाज हियें वाही केरो राज भयो
निशिदिन काज वहे रहै घर जाय के॥
पिता के सराध नेक रह्यो मन साधि दिन-
शेष में [5]आवेश चल्यो अति अकुलाय के।
नदी चढि रही भारी तो पै न [6]अँगोरी नाव
भाव भरचो हियो [7]जियौजात नाँघी जायके॥१६५॥
करत विचार वारिधारमें न रहै प्राण
यहाँ हू तो जात [8]धारी मित्र मुख जाइये।
परचो कूदि नीर कछु सुधि न शरीर की है
यही एक पीर कब दरशन पाइये॥

१. जानूँ। २. गोपिकाओंके साथ की कृष्ण लीला। ३. सीमा। ४. व्याकुल। ५. जोशमें। ६. प्रतीक्षा। ७. जानका खतरा। ८. निश्चय किया।

पावत न पार तन हारि भयो बूडबेको
[1]मृतक निहारयो मान्यो नाव मन भाइये ॥
लाग्यो वा किनारे जाय चल्यो पगधाय चाय
आये [2]पट लागे निशि आधी सो विहाइये ॥१६६॥

अजगर एक दैवयोगतैं लटकि रह्यो
मिल्यो सो सहारो चढ्यो छातपर जायके ।
ऊपरो किंवार लागे पर्‌यो कूदि आँगनमें
चौंकि जागी शोर कियो माने चोर भायके ॥

दीपक जराय जब देख्यो विल्वमंगलको
बोली तू अमंगल है कियो कहा आयके ।
जल अन्हवाय सूखे पट पहिराये बोली
कैसे कियो जल पार और द्वार धायके ॥१६७॥

नवका पठाई द्वार लाव लटकाई देखि
मेरे मनभाई मैं तो तबैं लई जानिकै ।
चलो देखैं अहो यह कहाँलो प्रलाप करै
देख्यो विषधर महा खीभी अपमान कै ॥

जैसो मन मेरे हाड चाम सौं लगायो तैसो
श्यामसौं लगावै जग जानै तो [3]सयानकै ।
मैं तो भये [4]भोर भजों युगल किशोर जानै
तेरी तूही चाहे सोही करौ मन मानकै ॥१६८॥

१ शव=मुरदा । २ किवाड । ३ चतुर करके । ४ प्रातः ।

खुल गई आँखें अभिलाषैं रूपमाधुरीको
चाखैं रसरंग औ उमंग रंग न्यारिये ।
बीण लै बजाय गावै विपिन निकुंज क्रीडा
भयो सुखपुंज जापै कोटि विषै वारिये ॥

बीत गई रात प्रात चले आप धायके जू
हिये वही ध्यान दृग नीर भरि ढारिये ।
सोमगिरि नाम अभिराम गुरु कियो आय
सकै को बखान [1]लाल [2]भुवन निहारिये ॥१६९॥

रहे एक वर्ष रस सागर मगन भये
नये नये चौजके सुश्लोक पढि लीजिये ।
चले वृन्दावन मन कहै कब देखौं जाय
आये मग माँझ एक ठौर मति भीजिये ॥

पर्‌यो बडो शोर दृग कोर [3]कै न [4]चाहै काहू
तहाँ सर न्हाति तिया देखि आखैं रीझिये ।
लगे वाके पाछे पाछे [5]काछेकी न सुधि कछु
गई घर आछे द्वार रहे तन छीजिये ॥१७०॥

आयो वाको पति द्वार देखे भागवत ठाढे
बडो भागवत पूछी वासो सौं जनाई है ।
कही जू पधारो पाँव धारो गृह पावन को
पाँयन पखारि [6]शीश ढारौं मनभाई है ॥

१ श्रीकृष्ण मय । २ संसार । ३ करके । ४ देखते । ५ वेप । ६ माथे चढाऊँ ।

चले भौन माँझ मन [1]आरति मिटायबे को
गायबेको जोई रीति सोई कै बताई है।
नारीसों कह्यो सिंगार करि सेवा कीजे लीजे
परम सुहाग यामें बेग प्रभु पाई है ॥१७१॥
चलीसो सिंगार करि थारमें प्रसाद लेके
ऊँची सो अटारी जहाँ बैठे [2]अनुरागी है।
झनक मनक जाय जोरि कर ठाढी रही
गही मति देखि ताहि [3]न्यून वृत्ति भागी है॥
कही [4]युग सुई लावो लाय दई गही हाथ
फोरि डारी आँखें अहो बडी वे अभागी है।
गई पति पास स्वास भरत न बोली आवै
कही दुःख पाय आय पाँय परयो [5]रागी है ॥१७२॥
कियो अपराध हम साधु को दुखायो अहो,
साधु तुम बडे हम नाम साधु धरयो है।
रहो अजू सेवा करौं, करी तुम सेवा ऐसी
जैसी नहीं कोऊ करै मेरो मन हरयो है॥
चले सुख पाय दृग भूतसे छुडाय पैंडो
हिये ही की आँखन सों अवै काम परयो है।
बैठे वन मध्य जाय भूखे जानि आप आय
भोजन कराय कहै चलो दिन ढरयो है ॥१७३॥

१ दुःख। २ प्रेमी। ३ ओछी। ४ दो। ५ वह प्रेमी गृहस्थ।

चले ले गहाय कर छाया घन तरु तर
चाहत छुडायो हाथ छोडें कैसे नीको है।
ज्यों ज्यों बल करें त्यों त्यों तजत न येऊ अरे
लियो है छुडाय गह्यो गाढो रूप ही को है॥
ऐसेई करत वृन्दावन धन आय लियो
पीयो चाहै रस सब जग लागै फीको है।
भई उतकंठा भारी आये श्रीविहारीलाल
मुरली बजायकर कियो भायो जीको है ॥१७४॥
खुल गये नैन ज्यों कमल रवि उदै भये
देखि रूपराशि बाढी कोटि गुणी प्यास है।
मुरली मधुर स्वर राख्यो मद भरि मानों
ढरि आयो काननमें, आननमें आस है॥
मानके प्रताप चिन्तामणि मनमाँझ आई
चिन्तामणि जैति आदि बोले रसरास है।
ग्रंथ करुणामृत विदारण हृदय ग्रन्थि
बाँधे रस ग्रन्थि यश युगल प्रकाश है ॥१७५॥
चिन्तामणि सुन्यो वृन्दावन रूप देख्यो लाल
ह्वै गई निहाल आय नेह नातो जानिकै।
उठि बहुमान कियो दियो दूध भात दौना
दैं पठावैं हरि नित जन निज मानिकै॥
लियो कैसे जाय तुम्हैं भावसों दियो जो प्रभु
लैंहों नाथ हाथ सो जो दैहैं सनमानिकै।

बैठे दोऊ जन कोऊ पावैं नहिं एक कण
रीझे श्यामघन दीन्हो दूसरोऊ आनिके ॥१७६॥

(श्री विष्णु पुरीजीकी कथा)

मू० छ०—भगवद्धर्म प्रधान आनकछु धर्म न देखा। पीतर पटतर विगत [1]निकश ज्यों कुन्दन रेखा। कृष्ण कृपाकी बेलि [2]फलित सत्संग दिखायो। कोटि ग्रन्थको सार त्रयोदश [3]विरचन गायो। महासिन्धु भागौततैं, [4]भक्तिरत्न राजी रची। कलि-जीव जँजाली कारणै, विष्णुपुरी बड [5]निधि [6]सँची ॥४७॥

जगन्नाथपुरी माहिं बैठे महाप्रभुजी वे
चहुँ ओर भक्तभूप भूर अति छाई है।
बोले कोऊ विष्णुपुरी काशी मध्य रहैं जाते
जानियत मोक्ष चाह नीके मन आई है॥
लिखी प्रभु चीठी आप मणिगण माला एक
दीजिये पठाय मोहि लागै जो सुहाई है।
जान लई बात निधि भागवत रत्नदाम
दई है पठाय मुक्ति खोद के बहाई है ॥१७७॥

१ कसौटी परकी लीक। २ फला हुआ फल। ३ धन विशेष।
४ भक्ति रत्न माला। ५ सम्पत्ति। ६ जोड़ा इकट्ठी की।

(श्री ज्ञानदेवजी की कथा)

मू० छ०—नाम त्रिलोचन शिष्य सूर्य शशि सदृश उजागर। गिरा गंग अनुहार काव्य रचना प्रेमाकर। आचारज हरिदास अतुलबल आनँद दायन। तेहिमग वभद्ध विदित पृथू पद्धती परायण। नवधा प्रधान सेवा सुदृढ, मन वच क्रम हरिचरण रति। विष्णुस्वामी सम्प्रदाय दृढ, ज्ञानदेव गम्भीर मति ॥४८॥

विष्णुस्वामी सम्प्रदायी बडे ही गम्भीर मति
नाम ज्ञानदेव ताकी बात सुनि लीजिये।
पिता गृह त्यागि आय ग्रहण सन्यास कियो
दियो कहि झूठ तिया नहिं कृपा कीजिये॥
आई पाछे वधू तब कही पुत्र वती होहु
कही सब कथा सोही संग करि दीजिये।
आये लौटि घर जाति वन्धु सो रिसाने सब
किये पांति बाह्य रहैं दूर नहीं [1]छीजिये ॥१७८॥
भये पुत्र तीन भक्ति माहिं बडे ज्ञानदेव
जाकी कृष्ण देवजी सों हियेकी सचाई है।

१ छूना नहीं चाहिये।

वेदना पढावैं द्विज कहैं सभी [1]ज्ञाति गई
लई करि सभा कहैं कहा मन आई है॥
विनस्यो ब्रह्मत्व ताते श्रुति अधिकार नाहीं
बोल्यो यों निहारि पढैं भैंसा ले दिखाई है।
देखि भक्ति भावको प्रभाव आय गहे पाँव
कियो सो स्वभाव गही वही [2]दीनताई है ॥१७९॥

(श्रीत्रिलोचनजीकी कथा)

भये उभै शिष्य नाम देव औ त्रिलोचनजू
सूर्य शशि नाईं कियो जगमें प्रकाश है।
नामदेव बात सुनि आये सुनो दूसरे की
सुनेई बनत भक्त कथा रस रास है॥
उपज्यो वणिक कुल सेवैं कुल [3]अच्युतसो
[4]ऐपै नहिं बनैं एक तिया मात्र पास है।
[5]टहलुआ न कोई साधु मनकी जो जानिलेय
यही अभिलाष एक [6]दासनको दास है ॥१८०॥
आये प्रभु टहलुआ रूप धारि [7]द्वारोपरि
फटी एक कामरी [8]पन्हैया टूटी पाँय है।
निकसत पूछी अहो कहांते पधारे आप
बाप महतारी कौन देश कौन धाम है॥

१ जाति नष्ट हो गई। २ नम्रता। ३ वैष्णव। ४ परन्तु। ५ सेवा करनेवाला। ६ भगवान के दासों का दास। ७ दरवाजे पर। ८ जूतियां।

बाप महतारी मेरे कोऊ नहीं सांची कहौं
गहौं मैं टहल जोई मितल [1]सुभाय है।
अनमिल बात कौन दीजिये जनाय वह
खाऊँ पाच सात सेर उठत रिसाय है ॥१८१॥
चारिउ वरणकी है रीति सब मेरे हाथ
साथीहू न चहौं सेवा करौं मनलाय के।
भक्तन की सेवा ही तो करत जनम गयो
नयो कछु नाहीं डारे बरस विताय के॥
अन्तर्यामी नाम मेरो चेरो भयो तेरो हौं तो
कही भक्त खाओ भावैं तितोही अघाय के।
कामरी पन्हैया सब नई करदई और
[2]मींडके न्हवायो तन मैलको छुडाय के ॥१८२॥
बोल्यो धर्म पत्नी सों तू रहो याकी दासी होय
जावैं जो उदासी होय ऐसो नहिं पावनो।
खाय सो खवावो सुख पावो नितनये हिये
जियें जगमाहिं जो लौं मिलि गुण गावनो॥
आवत अनेक साधु भावत टहल हिये
लिये चाव दावैं पाँव सबनि लडावनो।
ऐसे ही करत मास तेरह व्यतीत भये
गये उठि आप नेक बात को चलावनो ॥१८३॥

१ स्वभाव। २ मसलकर।

एकदिन गई ही पडोसिन के भक्तवधू
पूछी ताने बात एहो काहे को मलीन है।
बोली मुसकाय वे टहलुआ लिवाय लाये
क्योंहू न अघाय पीस खोट तन छीन है॥
काहू सों न कहौ यह गहो मन माँझ एरी
तेरी सों सुनैंगो जोपे जात रहे [1]भी न है।
सुनिलई यही नेक गये उठि हुती टेक
दुःख ऐसो भयो जैंसे जल बिन मीन है॥१८४॥
बीते दिन तीन अन्न जलसों विहीन भये
ऐसो सो [2]प्रवीण अहो अब कहाँ पाइये।
बडी तू अभागी बात काहे को कहन लागी
रागी साधु सेवाको सो कैसे करि लाइये॥
भई नभ वाणी तुम खाओ पीवो पानी यह
मैं ही मति ठानी तेरी प्रतिरीति भाई ये।
मैंतो हूँ अधीन तेरे घरहीमें रहौं लीन
जो पै कहो दास सेवा करिबेको [3]आईये॥१८५॥
कीन्हे [4]हरिदास मैं तो दासहू न भयो नेक
वडो उपहास मुख कैसे कै दिखाइये।
कहै जन भक्त भक्ति कहा हम करी कहो
अहो अज्ञताई रीति मनमें न आइये॥

१ डरा। २ चतुरा ३ आऊँ। ४ भगवानको।

उनकी तो बात बनि आवत है उनहीसे
गुण ही को लेत दास औगुण छिपाइये।
आये घरमाँझ तऊ मूढ मैं न जान सक्यो
आवैं अब कभूँ जाय पाँय लपटाइये॥१८६॥

(स्वामी श्रीवल्लभाचार्यजी की कथा)

हिये में स्वरूप सेवाकरि अनुराग भरें
ढरें और [1]जीवनके जीवनका दीजिये।
सोई लै प्रकाश घर घर में विलास कियो
अति ही हुलास फल नैननको लीजिये॥
चातुरी अवधि नेक आतुरी न होतकभूँ
चहूदिशि नाना राग भोग सुख कीजिये।
वल्लभ जू नाम लियो पृथू अभिराम रीति
गोकुलमें धाम जानि सुनि मति रीझिये॥१८७॥
गोकुलके देखबेको गयो एक साधु सूधो
देखके मगन भयो रीति कछु न्यारिये।
[2]छोकर के वृक्षपर बटुआ झलाय दयो
कियो जाय दरशन सुख भयो भारिये॥
देखे आय नाहीं प्रभु फेर आप पास आयो
चित्त सो मलीन देखि कही [3]जा निहारिये।
वैसेई स्वरूप बहु आनि बोले सुधि गई
लीजिये पिछानि कह्यों सेवा नित [4]धारिए॥१८८॥

१ जीवोंके जीवन=भगवान। २ छीला। ३ जाकर देख लो।
४ करते हैं।

खुल गई आँखें अभिलाषें पहिचान कीजे
दोजेजी बताय मोहि पाऊँ निजरूप है।
कही जाओ वाही ठौर देखो प्रेम लेखो हिये
लिये भाव सेवा करो मारग अनूप है॥
देखके मगन भयो लाये उरधारि हरि
नैन भरि आये जान्यो भक्तिको स्वरूप है।
निशिदिन लाग्यो पाग्यो जाग्यो भाग पूरण हो
पूरण चमतकार कृपा अनुरूप है ॥१८६॥

(आवेशी भक्तगण वर्णन)

भक्तदास इक भूप, श्रवण सीताहर कीन्हो। मार मार कर खड्ग बाजि सागर में दीन्हो। नरसिंह को अनुकरण होय हिरणाकुश मार्यो। वहै भयो दशरत्थ राम बिछुरत तन डार्यो। कृष्ण दाम बाँधि सुने, तिहिक्षण दीन्हे प्राण। संत साखि जानै सबै, कलियुग प्रेम प्रधान॥

(भक्तदास भूप श्रीकुलशेखरजीकी कथा)

सन्त साखि जानैं कलिकाल में प्रकट प्रेम
बडोई असत जाको भक्ति में अभाव है।
हुते एक भूप राम रूप तत्पर महा
रामही की लीला गुण सुनें करि भाव है॥

विप्र जो सुनावै सीताहरण न गावै हियो
'खरो भरि आवै यह जानत स्वभाव है!
पर्योद्विज दुखी निज सुवन पठाय दियो
जानै ना सुनायो भरमायो कियो घाव है॥१६०॥
मार मार मार करि खडग निकास लियो
दियो घोडो सागर में सो आवेश आयो है।
मारौं याहि काल्ह दुष्ट रावण विहाल करौं
देखौं सीता पाँयन को भाव दृढ छायो है॥
जानकी रमण दोउ दरसन दिये आय
बोले बिन प्राण कियो नीच फल पायो है॥
सुनि सुख भयो शोक गयो अति दारुण सो
रूप की निहारनि ने फेरिके जिवायो है ॥१६१॥

(लीलानुकरणी भक्त एवं रतिमति बाई की कथा)

नीलाचल धाम तहां लीलानुकरण भयो
नरसिंह रूप धारि साँचे मार डार्यो है।
कोउ कहै द्वेश कोऊ कहत आवेश जोपै
करो दशरथ, कियो, भाव पूरो पार्यो है॥
हुती एक बाई कृष्ण रूप में लगाई मति
कथा में न आई, सुत सुनि, कह्यो 'धार्यो है।
बांधे यशुमति सुनि और भई गति करि-
दई साँची रति, तन तज्यो मानो वार्यो है ॥१६२॥

१. सत्य ही। २. याद है।

(भक्त समूह का वर्णन)

हौं का कहौं बनाय बात सबही जग जानै। करते [1]दोनो भयो श्याम सौरभ मन मानै। छप्पन भोगते पूर्व [2]खीच कर्मा की भावै। [3]सिलपिल्ले उद्धरत कुँवरि पहँ हरि चलि आवै॥ भक्तन हित सुत विष दियो, भूपनारि, हरिराख [4]पति। प्रसाद अवज्ञा जानिके, पाणि तज्यो एकै नृपति॥ ५०॥

(श्रीजगदीशपुरी के राजा की कथा)

प्रसाद अवज्ञा जानि तज्यो एक नृप कर
करके विवेक सुनो जैसे बात भई है।
खेलै भूप चौपर सो आयो प्रभु [5]भुक्त शेष
दाहिने में पासे बाँये छुयो मति गई है॥
ले गये फिराय सो प्रसाद महादुःख पाय
उठ्यो नर देव गृह गयो सुनी नई है।
लियो अनसन हाथ तजौं यही छिन तब
साँचो मेरो प्रण विप्र बोलि पूछि लई है॥१६३॥

१. दोना :पुष्प। २. खिचड़ी। ३ अर्थ होता है शिला= पत्थर के बच्चे, परंतु सन्तों ने भगवान का यही नाम बता दिया था। ४ लज्जा। ५ प्रसाद।

काटै हाथ कौन मेरो ? रह्यो गहि मौन यातें,
पूछत सचिव कहा व्यथा सो विचारिये।
आव एक प्रेत मो दिखाई देत नित निशि
डारिके झरोका कर शोर करै भारिये॥
सोवो ढिग आय, रहो आपको छिपाय, जब
डारै पाणि आय तब ही सो काट डारिये।
कही भले, नृप चौकी देत में घुमायो कर
डारयो छेद मंत्री सोई न्यारो करि डारिये॥१६४॥
देखके लजानो कहा कियो मैं अजानो नृप
ही को प्रेत मान्या यह प्रभु सों विगारी है।
कही जगन्नाथ देव लै प्रसाद जाओ वहाँ
लाओ हाथ बोवो बाग सोई उर धारी है॥
चले वहां धाय भूप मिल्यो आगे आय हाथ
निकस्यो प्रसाद छुयो भयो सुख भारी है।
लाय कर बोयो ताके फूल भये दौनाके जो
नित ही चढत अजहूँ लो हरि प्यारी है॥१६५॥

(श्रीकरमाबाई की कथा)

हुती एक बाई ताको करमा सुनाम जानो
बिना रीति भाँति भोग खीचरी लगावहीं।
जगन्नाथदेव आय भोजन करत नीके
जितो लागै भोग तामें यह अति भावहीं॥
गये तहाँ साधु, मानी बडो अपराध करें

भरैं वहु श्वास सदाचार लै सिखावहीं।
भई यों अँवार देखे खोलके किंवार तब
जूठन लगेही मुख धोये बिन आवहीं ॥१९६॥
पूछैं प्रभु भयो कहा कहिये प्रकट खोलि
बूझे हू न परैं हमैं देखि नई रीति है।
करमा सुनाम एक खीचरी खवावै मोहि
मैं सो नित्य पाऊं जाय जानि साँची प्रीति है॥
गये नेरे सन्त रीति भाँति सों सिखाय आये
मत सो अनन्त बिन जाने यों अनीति है।
कही वाही सन्तसों जू साधि आओ वही बात
जायके सिखाई हिये आई बडी भीति है ॥१९७॥

(श्रीसिलपिल्ले भक्ता दो बालिकाओं की कथा)

भगवान 'सिलपिल्ले भक्ता दोय बाई भई
एक नृप सुता एक सुता जमींदार की।
आये गुरु घर देखि सेवा, ढिंग बैठी जाय
कही ललचाय पूजा करें सुकुमार की॥
दियो शिला टूक लेके नाम कहि दियो वही
कीजिये लगाय मन गति भवपार की।
करत करत अनुराग बढ्यो भारी उर
बडी ही विचित्र रीति भक्ति शोभासार की ॥१९८॥

१ शिला के बच्चे=पत्थर के टुकड़े।

(जमींदार कन्या की कथा)

पाछिले कवित्त कही दोउनकी एक रीति
सुनो अब न्यारी न्यारी नीके मन दीजिये।
जमींदार सुता ताके रहे उभै भाई राखे
आपस में बैर गाँव लूट्यो सबै लीजिये॥
तामें गई सेवा इन बडोई कलेश कियो
जीयो नहीं जात खान पान कैसे कीजिये।
रहे समझाय याही कछू न सुहाय तब
कही जाय ल्याओ तेरे दोऊ सम धीजिये ॥१९९॥
गई वाही गाँव जहाँ दूसरो सो भाई रहै
बैठ्यो हो 'अथाई में सो कही वही बात है।
लेओजी पिछान वहाँ बैठे एक ठौर प्रभु
बोलि उठ्यो कोऊ ²बोलिलोजे प्रीतिगात है॥
भई आँख ³राती लागी फाटन सो छाती वह
रोई स्वर आरत सों मानो तन पात है।
हिये आय लागे सब दुःख दूर भागे कोऊ
बडे भाग जागे घर आई न समात है ॥२००॥

(नृप सुता की कथा)

सुनो नृप सुता बात भक्ति गात गात पागी
भागी सो विषय वृत्ति सेवा अनुरागी है।

१. लोगों के जुटकर बैठने का स्थान। २. बुला लीजिये।
३. लाल।

व्याही सो विमुख घर आयो लेन जवै वर
खरी अरबरी सोई चित्त चिन्ता लागी है
करदीन्ही संग भरि आपनेही रंग चली
अलीहू न संग एक वही जासों [1]रागी है।
आयो ढिंग पति बोलि कियोचाहै रति याकी
भई औरै गति मत आओ [2]व्यथा पागी है ॥२०१॥
कोन वह व्यथा ताको कीजिये यतन वेग
बडी उतकंठ नेक बोलि सुख दीजिये।
बोलबो जों चाहो तो बसाओ हरि भक्ति हिये
विना हरि भक्ति मेरो अंग जनि [3]छीजिये ॥
आयो रोष भारी तब मन में विचारी या
पिटारी में जो कछु सोई लेके न्यारो कीजिये।
करी वही बात मूढ जल माँझ डार दई
नई भई ज्वाला जियो जात नहीं खीझिये ॥२०२॥
तज्यो अन्न जल अब चाहत प्रसन्न कियो
होत क्यों प्रसन्न जाको सरबस लियो है।
पहुँचे भवन आय दई सोजनाय बात
गात छीन देख कहै कहा हठकियो है ॥
सास समझावें कछू हाथ सों खवावे याको,
बोली जब वेई आवें तोही जात जीयो है ॥२०३॥

१. प्रीति की है। २. दुःख। ३. छूइये।

आये वाही ठौर [1]भौंर आय तन भूमि गिर्यो
ढर्यो नैन जल होय आरत पुकारी है।
भक्ति वश श्याम जैसे काम वश कामीनर
आय लगे छती सों जू संग सो पिटारी है ॥
देखी पति सासु आदि जगत विवाद मिट्यो
वादिही जनम बीत्यो नेक ना सँभारी है।
भये सब भक्त हरि साधु सेवा माँझ पगे
जगे कोऊ भाग घर वधू सो पधारी है ॥२०४॥

(भक्तदर्शनार्थ पुत्रोंको विष देने वाली दो बाइयोंकी कथा)

भक्तन हेत सुत विषदिवो उभैबाई
तिनहू की बात नीके खोलके बताइये।
भयो एक भूप ताके भक्त सो अनेक आवैं
आये भक्त भूप तासों लगन लगाइये ॥
नितही चलन चाहैं चलनन देत राजा
वितये बासर मास कही भोर जाइये।
गई आसट्ट [2]तन छूटवेकी रीति भई
लई बात पूछि रानी सब दी जनाइये ॥२०५॥
दियो सुत विष रानी जानी नृप जीवें नाहीं।
सन्त हैं स्वतन्त्र सो इनहिं कैसे राखिये।
होन चाहै भोर वधू शोर करि रोय उठी
भोय गई [3]रावलमें सुनि साधु भाषिये ॥

१ चक्कर। २ व्याप्त हो गई। ३ अन्तःपुर=जनाना में।

खोलि डारे बांधे पट भवन प्रवेश कियो
लियो देखि बालकको नील तनु साखिये।
पूछी सन्त रानीसों जू साँची कहो कियो कहा
कही आप जावोचाहैं नैन अभिलाषिये ॥२०६॥
छाती खोलि रोयो कछु बोलहु न आव मुख
सुख भयो भारी भक्ति रीति कछु न्यारी है।
जानी उन बात जात पाँत को विचार कहा
अहो रस सागर सो सदा उर धारी है॥
हरि गुण गाय साखी सन्तन बताय दियो
बालक जिवायो लागी ठौर यह प्यारी है।
संगके पठाय दिये रहे जेते भीजे दिये
मैं तो अब जाऊँ नहीं जो पै मारि डारिये॥२०७॥
सुनो चित लाय बात दूसरी सुहाइ हिये
जीवै जगमाहिं तौंलो सन्त संग कीजिये।
भक्ता नृप सुता एक ब्याही सो अभक्त घर
जाके घर माँझ साधु नाम नहीं लीजिये॥
पल्यो साधु [1]सीथसों शरीर दृग रूप पले
जिह्वा चरणामृत के स्वाद ही सों भीजिये।
रह्यो नहि जाय वे बसाय अकुलात सोची
आवैं पुर सन्त तब सुत विष दीजिए॥२०८॥

१ जूठन।

आए पुर सन्त तब दासीने जनाय कही
सही नहीं गई लेके सुत विष दियो है।
गए वाके प्राण रोय उठी किलकात सब
भूमि गिरे आनि टूक भयो जात हियो है॥
बोली अकुलाय एक जीबेको उपाय जो पै
कियो जाय पिता मेरे केई बार कियो है।
कहै सोई करें दृग भरे, लावो सन्तनको
कैसे होत सन्त पूछी चेरी नाम लियो है॥२०९॥
चले ले लिवाय चेरी बोलबो सिखाय दियो
देखके धरणि परि पाँव गहि लीजिये।
कीन्ही वही रीति दृगधारा मानों प्रीति सन्त
करी यों प्रतीति गृह पावन सो कीजिये॥
चले सुख पाय दासी आगे ही जनाई जाय
आय ठाढी पौरि पाँय गहे मति भीजिये।
कही हरे बात मेरे पितु मातु मानों मैं तो
अंगमें न मात आज प्राण वारि दीजिये॥२१०॥
रीझ गये सन्त प्रीति देखके [1]अनन्त कही
होयगी सो वही जो प्रतिज्ञा तैने करी है।
बालक निहारि जानि विष [2]निरधार कियो
दियो चरणामृत सो प्राण [3]संज्ञा धरी है॥

१ अपरिमित। २ निर्णय। ३ चेष्टा।

देखत विमुख जाय पाँव ततकाल लिये
किये तब शिष्य साधु सेवा मति हरी है।
ऐसे भूपनारी पत राखी सब साखी जन
[1]रहे अभिलाषी जन देखैं यहि घरी है ॥२११॥

(अगाध आशय भक्त समूह का वर्णन)

मू० छं०—रंगनाथको सदन करन बहु बुद्धि विचारी। कपट धर्म रचि जैन द्रव्य-हित देह बिसारी। हंस पकरिबे काज बधिक बनो धरि आये। तिलक दामकी सकुच जानि तिन आप बँधाये॥ सुतबध हरिजन देखिके, दै कन्या आदर दियो। आशय अगाध इन जननको, [2]हरितोषण अतिशय कियो ॥५१॥

(श्री रंग मन्दिर निर्माता भक्त मामा भानजाकी कथा)

आशय [3]अगाध दोऊ भक्त मामा भानजे को
दियो प्रभु [4]तोष ताकी बात चित धारिये।
घरते निकसि चले वनको [5]विवेक रूप
मूरत [6]अनूप बिन मन्दिर निहारिये॥

१ जो अभिलाषा रहै तो इस समय (आज) भी देखा जा सकताहै। २ प्रसन्न। ३ औंडा। ४ प्रसन्नता। ५ ज्ञान स्वरूप। ६ महान सुन्दर।

दक्षिणमें रंगनाथ नाम अभिराम जाको
ताको लै बनावैं धाम काम सब टारिये।
धनके यतन किये भूमि में न पायो कहूँ
[1]चहुँ दिशि हेरि देख्यो भयो सुख भारिये ॥२१२॥
मन्दिर [2]सरावगी को प्रतिमा सो [3]पारस की
[4]आर्ष नहिं करैं [5]दरशन श्रुति गायो है।
पावैं प्रभु सुख हम नरक गये तो कहा
[6]धरक न आई जाय [7]कान लै फुकायो॥
ऐसी करी सेवा जासों हरि मति केवरा ज्यों
[8]सेवरा समाज सब नीके के रिझायो है।
दियो सौंपि भार तब लेबे को विचार करैं
हरैं कौन [9]राह भेद [10]राजन बतायो है ॥२१३॥
मामा रहे भीतर औ ऊपर सो भानजे हैं
कलश [11]भँवर कली हाथ सों फिरायो है।
[12]जेवरा ले फांस दीनी मूरति सो खैंच लीनी
दूजी वार सोऊ आप नीके चढ़ि आयो है॥
कियो हो जो [13]द्वार तामें फूलि तन फँस गयो

१ चारो तरफ फिरने पर एक जगह देखा सो आगे कवित्त में कहा है। २ श्रावक=जैन। ३ पारस नाथ की। ४ अच्छे लोग। ५ दर्शन करना वेद ने नीच कर्म कहा है। ६ धड़क=शंका। ७ शिष्य हो गये। ८ सेवक=जैन। ९ मार्ग। १० कारीगरों ने। ११ फिरने वाला यन्त्र। १२ रस्सी। १३ छेद।

अति सुख पाय तब बोलके सुनायो है।
काटि लेवो शीश ईश भेषकी न निन्दा करैं
भरैं अंकवार मन कीजिये सवायो है ॥२१४॥
काटि लियो शीश ईश इच्छाको विचार कियो
जियो नहीं जात तोऊ चाह मति पागी है।
जो पै तनु त्याग करौं कैसे आश सिंधु तरौं
गयो वाही ठौर देखी [1]नीम खुदै लागी है ॥
भयो शोक भारी हमें ह्वै गई अँवारी काहू
और ने विचारी देखो वोही बडभागी है।
भरि [2]अँकवार मिले मन्दिर सँवारि भिले
[3]खिले सुख पाय नैन जानै सोई रागी है ॥२१५॥

(हंस भक्तों की कथा)

कोढी भयो राजा एक यतन अनेक किये
एक हू न लागै कह्यो हंस मंगवाइये।
बधिक बुलाय कही वेगही उपाय करो
जहाँ तहाँ ढूढ कर यहां लगि लाइये ॥
कसे कर लावें वे तो रहें मानसर माँझ
लाओगे छूटोगे तभी चार जने जाइये।
देखतही उड़जात जातको पिछान लेत
साधु सों न डरें जान वेष सो बनाइये ॥२१६॥

१ बुनियाद। २ भुजाभरके। ३ प्रसन्न हुए।

गये पास हंस सन्त बानो सो प्रशंस देखि
जानके बँधाये राजा पास लेके आये हैं।
मानि [1]मतसार प्रभु वैद्यको स्वरूप धारि
आये सो बजार लोग भूप ढिंग लाये हैं ॥
काहे को मंगाये पक्षी आछी हम करैं देह
छोड दीजे इन्हें, कही [2]नीठ कर पाये हैं।
ओषधि पिसाय सब अंगन लगाय किये
नीके सुख पाय [3]कहि हंसनि छुडाये हैं ॥२१७॥
लेओ भूमि गाँव बलिजाऊँ या दयालुताकी
भाल भाग्य जागे तासों दरशन दीजिये।
पायो हम सब अब करो हरि साधु सेवा
मानुष जनम ताकी सफलता कीजिये ॥
कियो ले निदेश देश भक्ति को विस्तार भयो
हंस हित सार जाति हिये धर लीजिये।
बधिकहू जानी जासों खगन्ह प्रतीति कीन्ही
ऐसो वेष छोडिये न राखो मति भीजिये ॥२१८॥

(सदाव्रती महाजनजी की कथा)

महाजन एक सदाव्रती ताके भक्ति प्रण
मनमें विचार सेवा कीजे चित लायके।

१ सन्तवेष के सम्मान के अर्थ बधिकों को पहचान करके भी पकड़ में आजानि के विचार को सार समझकर। २ कठिनाई करके। ३ कहकर।

आवत अनेक साधु निपट अगाध मति
साध लेत जैसे आवैं बुद्धि सो मिलायके ॥
सन्त सुखमानि रह गयो धरमांझ एक
सुतसों सनेह भयो खेलै संग जायके ।
इच्छा भगवान मुख्य गौण लोभ जानो फल
मारि गाडि घूरी आयो गृह पछिताय के ॥२१६॥
देखै महतारी मग बेटा कहां रह्यो पगि
बीते [1]याम चार तऊ धाम में न आयो है ।
फेरी पुर डोंडी ताके संग आप खुद लौंडी
कहै यों पुकार सुत कौन विरमायो है ॥
बेगिही बताय दीजे आभरण यहै लीजे
कही सो सन्यासी यह मारयो मन लायो है ।
दई ले दिखाय देह बोल्यो याहि गहिलेहु
याही ने हमारो सुत्र हत्यो नीके पायो है ॥२२०॥
बोल्यो अकुलाय मैं तो दीनो है बताय मोहि
देवोजी छुडाय नहीं झूँट कछु भाषिये ।
लेओ मतनाम साधु जो उपाधि मेटयो चाहो
कही जाओ और कहूँ, [2]मानी, छोड [3]नाखिये ।
आयके विचार कियो जान्यो अकुचायो सन्त
बोलि उठी तिया सुता देके नीके राखिये ।

१ प्राप्त । २ बात मानली । ३ छोड दी ।

परयो वधू पाँय तोरी लीजिये बलाय पुत्र-
शोकको मिटाय और खरी अभिलाषिये ॥२२१॥
सन्त बोलि कह्यो सुता कीजिये जू अंगीकार
[1]दुःख ये अपार काहू विमुखको दीजिये ।
बोल्यो अकुलाय मैं तो मारयो सुत हाय मोपै
जियो हू न जाय मेरो नाम मत लीजिये ॥
देखो साधुताई धरी शीशपै बुराई जहाँ
राई हू न दोष कियो मेरु सम रीझिये ।
दई बेटी ब्याहि कही मेरो उर दाह मिटै
कीजिये निवाह जगमाहिं जौंलौं जीजिये ॥२२२॥
आये गुरु घर [2]सुनि जिनको न सरवर
सिद्ध सुखदाई सन्त सेवा जे [3]बताई है ।
पूछयो सुत कहां, अजू पायो, कह्यो कौन भाँति
भाँति का बखानों जग [4]मीच लपटाई है ।
[5]प्रभुने परीक्षा लई वे ही हमें आज्ञा दई
चलिके दिखावो जहां देहको जराई है ।
गये वाही ठौर शिर मौर सन्त ध्यान कियो
जीयो चलि आयो दास कीरति बढाई है ॥२२३॥

१ किसी भगवत-विमुखको लडकी देना महान दुःख है । २ पुत्र मारने और बेटी ब्याह देने की बात सुनकर । ३ जिनने । ४ मृत्यु । ५ गुरुजी ने कहा ।

(भक्त समूह का वर्णन)

मूल छ०–¹दारुमई तरवार ²सारमय रची भुवनकी। देवाहित सित केश प्रतिज्ञा राखी जनकी। कामध्वज के हेत चिता ³कपि काष्ठ जुलाये। जयमलके रणमाहिं अश्व चढि ⁴आपन धाये॥ घृत युत ⁵महिषी चौगुनी, श्रीधर सँग सायक धरण। चारों युग तत्पर रहैं, भक्त गिरा साँची करण॥५२॥

(श्रीभुवनसिंहजी चौहान की कथा)

सुनो कलिकाल बात और है पुराण ख्यात
भुवन चौहान जहाँ राणा की ⁶दुहाई है।
पट्टा युग लाख खात, सेवा अभिलाष साधु,
चले सो शिकार नृप संग भीर छाई है॥
मृगी पाछे परे करे टूक हुती गर्भिणी सो
आय गयी दया कही काहे को ⁷लगाई है।
कहैं मोको भक्त, क्रिया करूं मैं अभक्तन की
दारु-तरवार धारों अब मनभाई है॥२२४॥

१ लकडी की। २ फौलाद की। ३ श्रीहनुमान जी। ४ स्वयं भगवान। ५ भैंसें। ६ राज्य। ७ मारी।

और एक भाई ताने देखी तरवार दारु
सक्यो न सँभारि जाय राणा को सुनाई है।
नृप न प्रतीति करै, करै यह ¹सौंह नाना
²बाना प्रभु देखि तेज बात ना चलाई है॥
ऐसे ही बरस एक कहत व्यतीत भयो
कह्यो मोहि मारो जोपै झूट मैं बनाई है।
करी ³गोठ कुंड जाय पायके प्रसाद बैठे
प्रथम निकासि नृप सबन दिखाई है॥२२५॥
क्रम सों निहारी कहि भुवन विचार कहा
कह्यो चहैं दारु मुख निकस्यो सो सार है।
काढिके दिखाई मानो बिजुरी चमक गई
आई मन माँझ बोल्यो मारो याको भार है॥
भक्त कर जोरिके बचायो अजू मारिये क्यों
कही बात झूंठ नाहीं करी करतार है।
पटो दूनादून पावो आवो मत ⁴मुजरा को
मैं ही घर आऊं होय मेरो ⁵निसतार है॥२२६॥

(उदयपुरस्थ श्रीचतुर्भुजजी के पुजारी श्रीदेवापंडाजी की कथा)

दरसन आये राणा रूप चतुर्भुजजू के
प्रभु को पौढाइ हार शीश लपटाये हैं।

१ शपथ। २ तिलक मालादि बेष का तेज देखकर राणाजी ने। ३ गोष्ठी। ४ अभिवादनार्थ। ५ उद्धार।

बेग सो उतारि कर लैके गरे डारि दियो
देखि धोरो बार [1]पूछी, [2]कही धोरे आये हैं ॥
कहत तो कहि दई मति घबडाई अब
महीपति डारै मार, हरि पद ध्याये हैं ।
अहो हृषीकेश करो मेरे लिये श्वेतकेश
लेशहू न भक्ति, [3]कही किये देखो छाये हैं ॥२२७॥
मानि राजा त्रास [4]दुखराशि सिंधु बाढ्यो हुतो
सुनि प्रभु वाणी मीठी फेरि मानो जियो है ।
देखे श्वेत बार जानी कृपा सो अपार करी
भरी आँखें नीर, मैं न सेवा लेश कियो है ॥
बडे ही दयाल सदाभक्त प्रतिपाल करैं
मैं तो हूँ अभक्त तोपै सकुचात हियो है ।
झूँठे सनबन्ध सों हू नाम लाजै मेरो ही तो
ताते सुख साजें, यह दरसाय दियो है ॥२२८॥
आयो भोर राणा श्वेत बार सो निहारि रह्यो
कह्यो केश काहू के पंडा ने ला लगाये हैं ।
एचि लियो एक प्रभु खेंचिके चढाई नाक
रुधिर की धारा नृप अंग छिरकाये हैं ॥
गिरयो भूमि मूर्च्छित ह्वै तन की न सुधि रही
जाग्यो याम बीते अपराध कोटि [5]गाये हैं ।

[1] राणाजी ने पूछी । [2] पंडाजी ने कही । [3] भगवानने कहा । [4] दुःख समूह का समुद्र । [5] कहने लगा मेरे करोड़ों अपराध हैं ।

[1]यही अब दंड राज बैठे सो न आवैं यहाँ
अजहूँ लौं आन मानि करैं जो सिखाये हैं ॥२२९॥

(श्रीकामध्वजजी की कथा)

भये चार भाई करैं चाकरी वे राजाजू की
तामें एक भक्त करै वन में बसेरो है ।
घरआ प्रसाद पाय फेर उठि जाय तहाँ
भाई कही चलके [2]महीना लीजे तेरो है ॥
जाके हम चाकर हैं रहत [3]हाजर सदा
कह्यो तो जरावै मरे सोही जाको [4]नेरो है ।
छूव्यो वन तन राम आज्ञा हनुमान आये
कियो दाह धुवाँ लागे प्रेत तरयो [5]नेरो है ॥२३०॥

(श्रीजयमलजी राठौड की कथा)

मेरते प्रथम वास जयमल नृप ताको
सेवा अनुराग नेक खटको न भाव ही ।
करैं दश घरी तामें कोऊ जो खबर देत
करैं नाहीं कान वाको वहीं मरवावहीं ॥
हुतो एक भाई वैरी भेद यह पाय गयो
दियो आय घेरो माता जायके सुनावहीं ।
करैं [6]प्रभु भली, प्रभु घोडा असवार होय
मारी फौज, लोग कहैं, सुनि सचु पावहीं ॥२३१॥

[1] भगवानने कहा राज गद्दी पर बैठे सो यहां न आवैं यही दंड है । [2] वेतन । [3] उपस्थित । [4] समीप में रहनेवाला । [5] शब्द । [6] जयमलजी ने कहा भगवान अच्छा करेंगे ।

देख्यो हाँ पै घोडो अहो कौन असवार भयो
गये आगे तब देख्यो वहै बैरी पर्यो है।
बोल्यो उठि सुखपाय साँवरो सिपाही को है ?
इकले ही फौज मारी मेरो मन हर्यो है॥
तुम्हीं को दिखायो तन मेरे तरसत नैन
बैनन सों जानी वही श्याम प्रभु ढर्यो है।
पूछि घर भेज दियो वानै भक्ति प्रण लियो
किये मैं तो दुखी तोऊ भक्त भलो कर्यो है ॥२३२॥

(श्रीग्वाल भक्तजीकी कथा)

भयो एक ग्वाल साधु सेवा सो रसाल करै
परै जोई हाथ लेके सन्तन खवावहीं।
पायो पकवान लेय गयो सो खवायबे को
ताही बीच आये चोर भैंस सो चुरावहीं॥
जानके छिपाई बात मातासों बनाय कही
दई विप्र भूखे घृत संग फेर आवहीं।
दिन द्वै दिवारी रही चोर पहरायो हाँस
आई घर [1]जाम लिये [2]राँभके सुनावहीं ॥२३३॥

(श्री श्रीधर स्वामीजीकी कथा)

भागवत टीका करी श्रीधर सो जान लेहु
गेह में रहत करैं जग व्यवहार हैं।

१ बच्चा=पाडा। २ भैंस के शब्द को रांभना कहते हैं।

चले जात मठ ठग लगे कहैं कौन संग
संग रघुनाथ मेरे जीवन अधार हैं॥
जानी इन कोऊ नहीं मारबेको यत्न कियो
आये चाप बाण धारि वेही सुकुमार हैं।
आय घर चोर पूछै श्याम सुकुमार कहां
आपको बचाये हमें मारे रूप मार हैं ॥२३४॥

(भक्त समूह का वर्णन)

मूल छ०-निष्किंचन इक दास तासुके हरि-जन आये। विदित बटोही रूप भये हरि आप लुटाये॥ साखि देनको श्याम [1]खुरदहा स्वयं पधारे। रामदासके सदन राय रण छोड सिधारे॥ आयुध क्षत तन अनुग के, [2]बलिबन्धन निज वपु धरैं। भक्तन सँग भगवान त्यों ज्यों गो [3]बछ गोहन फिरैं ॥५३॥

(निष्किंचन भक्त श्री हरिपाल जी की कथा)

भक्तन के संग भगवान ऐसें फिरयो करैं
जैसे वत्स संग फिरै [4]नेहवती गाय है।

१ जगन्नाथ पुरीके समीप खुरदहा ग्राम जहां साखी -गोपाल जी हैं। २ बलिको बांधने वाले=भगवान। ३ बछडेके पीछे पीछे। ४ प्रेम करनेवाली=नई ब्याई हुई।

हरिपाल नाम विप्रधाम में जनम लियो
किये अनुराग साधु दई श्री लुटाय है ॥
केतक हजार [1]ल बजार को [2]करज आये
[3]गरज [4]न [5]सरै किये चोरी को उपाय है ।
विमुख को लेत हरि दासको न दुःख देत
आये सन्त द्वार तिया संग बतराय है ॥२३५॥
बैठे कृष्ण रुक्मिणी महल तहां शोच पर्यो
हर्यो मन साधु सेवा [6]साँहू रूप कियो है ॥
पूछी चले कहाँ कही भक्त है हमारो एक
मैंहू आऊँ, आओ, आये तहाँ, पूछ लियो है ॥
अजू मग सुन्यो जात बडो उतपात मच्यो
कोऊ पहुँचाय देवै, लै रुपैय्या दियो है ।
करो समाधान सन्त मैं लिवाय जाऊँ इन्है
जाय वनमाँझ देखि बहु धन जियो है ॥२३६॥
देखे जो निहार माला तिलक न सदाचार
होयँगे भंडार धन जो पै इतो लायो है ।
करिके विचार कह्यो, [7]याहीबार डारदेवो
दियो सब डार, छल्ला [8]छिंगुली में [9]छायो है ॥
अंगुरी मरोरी, कह्यो बडो तू कठोर आहो,
तोको कैसे छोड्डूं, सन्त जेवैं मोको भायो है ।

१ सम्पत्ति । २ ऋण । ३ आवश्यकता । ४ नहीं । ५ पूरी होती । ६ सेठ । ७ इसी समय । ८ कनिष्ठिका=छोटी उंगली । ९ अटक गया ।

प्रकट दिखायो रूप सुन्दर अनूप वह
मेरो भक्त भूप कहि छातीसों लगायो है ॥२३७॥

(श्री साक्षी गोपाल जी की कथा)

गौड देश वासी उभै विप्रन की कथा सुनो
एक [1]बैस बूढो दूजो छोटो वाके संग है ।
और और ठौर फिरि आये वृन्दा वन तब
वृद्ध भयो [2]दुखी कीन्ही टहल अभंग है ॥
[3]रीझि बूढो विप्र कही निज सुता तोको दई
[4]रहो नहीं चाह मेरे, लई [5]बिनै अंग है ।
साखी दै गोपाल कही बात प्रति पाल करौं
ग्राम आये पूछी कहि तिया सों प्रसंग है ॥२३८॥
बोल्यो छोटो विप्र क्षिप्र कीजिये कही जो बात
तिया सुत कहैं नहीं, सुता या के योग है ?
द्विज कहै नाही कैसे करूँ मैं तो देन कही,
कही कहो भूल्यो भयो [6]व्यथा को प्रकोप है ॥
भई सभा भारी पूछै साखी नरनारी सब,
साखी हैं गोपाल बनवारी और कौन है ।
लाओ जू लिवाय जो पै साखी भरें आय बेती
बेटी देहैं ब्याहि हम करो सुख भोग है ॥२३९॥

१ अवस्था में । २ बिमार । ३ प्रसन्न होकर । ४ ठहरो । ५ प्रार्थना करने लगा । ६ बिमारी का दौरा था ।

आयो वृन्दावन श्रीगोपालजी सों बोल्यो चलो
साखी देवो चलि मोतें लई है लिखाय के।
बीते केऊ मास तब बोले श्याम सुन्दर जू
प्रतिमा न चलै, [1]तो पै बोले क्यो जू भाय के॥
लये जब संग युग सेर भोग धरें रंग
आधे आध पावें चलें नूपुर बजायके।
ध्वनि तेरे कान परे पाछे मति दृष्टि करे
करे, रहों वाही ठौर कहों में सुनायके॥२४०॥
गये ढिंग गाँव सोच्यो नेकतो चितउँ उत
चितयो सो ठाढे भये दियो मुसकायके।
लावो जू बुलाय कही, जायकही आये [2]आप
सुनतही चौंकि सब ग्राम आयो धायके।
बोलके सुनाई [3]साखी पूजी हिय अभिलाषी
लाख लाख भाँति रंग भरचो उर भायके।
आयो न [4]स्वरूप फेरि विनै करि राख्यो [5]घेरि
भूप सुख [6]ढेर दियो अबलौ [7]बजायके॥२४१॥

(श्रीराम दासजी की कथा)

द्वारिका की ओर सो डाकोर एक गांव तामें
रहै रामदास भक्त भक्ति जाको प्यारीये।

१ तो प्रेम करके बोले क्यों? २ भगवान गोपालजी ३ साक्षी=गवाही। ४ मूर्ति। ५ घेरकर=प्रार्थना करके। ६ अपार। ७ डंकेकी चोट।

जागरण एकादशी करै रण छोडजू के
भयो वृद्ध तन, आज्ञा दई नहीं [1]धारीये॥
बोले भरि नन तेरो आयबो सह्यो न जाय
चलों घर धाय तेरे लाओ गाडी भारिये।
खिरकी जो मन्दिर के पाछे तहाँ ठाढी करो
भरि [2]अंक वारी मोको गाडी पधराइये॥२४२॥
करी वाही भाँति आयो जागरण गाडी चढि
जानी सब वृद्ध भयो थाकी पाँव गति है।
द्वादशी की आधीरात लैके चल्यो मोद गात
भूषण उतारि धरे जाकी साँची [3]रति है॥
मंदिर उघारि देख्यो परयो है उजार तहाँ
दौरे पाछे, जानी कहैं करैं कौन [4]मति है।
[5]वापी पधराय दूर जाय सुख पाय रहो
[6]गह्यो चले जात आनि मारयो घाव [7]अति है॥२४३॥
देखी चहूँ ओर गाडी पै न कहूँ पाये हरि
पछताओ करि कहैं भक्त चोट लाई है।
बोलि उठ्यो एक इहि ओर यह गयो हुतो
जाय देखैं बावरी को लोहू मई पाई है॥
दास को जो मारी चोट ओढ लई मैं ही अंग
मैं तो नहीं जाऊँ, बीजी मूरति बताई है।

१ मानी। २ बाथमें। ३ प्रीति। ४ बुद्धि=उपाय। ५ बावडी। ६ पकड़ लिया। ७ बड़ी।

मेरी सम सोनो लेहु कही 'जन तोल देहु
बोल्यो मेरे कहाँ, 'बाली तिया पै जताई है ॥२४४॥
लगे जब तोलबे को बाली पीछे डारि दई
नई गति भई पल्ला उठत न बाली को।
तब तो खिसाने सब गये उठि घर निज
कैसे सुख पावैं फिरयौं मन ही मुरारी को ॥
घर ही विराजे आप कह्यो भक्ति को प्रताप
जाप करैं जोपैं फुरै रूप लाल प्यारी को।
बलि बन्ध नाम प्रभु बाँधे बलि भयो तब
आयुध के क्षत हरि धारे दास मारी को ॥२४५॥

(भक्त समूह का वर्णन)

मूल छ०–जसुस्वामी के वृषभ चोरि ब्रजवासी लाये। तैसेई दिये श्याम वर्ष दिन खेत जुताये। नामा ज्यों नँददास मुई इक वच्छि जिवाई। अम्ब अल्ह को 'नये प्रकट जग गाथा गाई॥ 'बार मुखी के मुकुट कों, रंगनाथ निज शिर नये'। 'वत्सहरण पाछे विदित, सुनो सन्त अचरज भये ॥५४॥

१ पुजारी लोग। २ कान की बाली। ३ झुक गये। ४ वेश्या। ५ नवाया=झुकाया। ६ कृष्णावतारमें ब्रह्माजीके द्वारा हुआ वत्सहरण।

(श्री जसुस्वामी जी की कथा)

जसु स्वामी नाम गंगा यमुना के मध्य रहैं
करैं साधु सेवा ताकों खेती उपजावहीं।
चोरी गये बैल ताकी इनकों न सुधि कछु
तैसे श्याम लाय जोते हल मन भावहीं ॥
आये बृजवासी पैठि वृषभ निहारि कही
इन्हैं कौन लाया घर जाय देख आवहीं।
ऐसे बार दोयचार फिरे पै न ठीक होत
पूछी मुनि लाये यहाँ उन्है नहिं पावहीं ॥२४६॥
बडोई प्रभाव देख्यो तैसे प्रभु बैल दिये
भयो हिय भाव जाय पाँयन में परे हैं।
निपट अधीन दीन भाषी अभिलाषी जनि
दया के निधान स्वामी शिष्य तिन्हैं करे हैं।
चोरी त्यागिदयी अति शुद्ध बुद्धि भई नई-
रीति गति लही साधु पन्थ अनुसरे हैं।
अन्न पहुँचावैं दूध दही सों लडावैं
आवैं सन्त गुण गावैं सो अनन्त सुख भरे हैं ॥२४७॥

(श्री नन्ददासजी की कथा)

निकट बरेली गाँव तामें सो 'हवेली रहैं
नन्ददास विप्र भक्त साधु सेवा 'रागी है।
करैं द्विज द्वेष ताते मुई एक बच्छि लाय

१ मकान। २ प्रेमी।

डारि दयी खेत याके गारी बकै लागी है ॥
हत्या को प्रसंग करैं सन्त जाय तासों लरैं
हिन्दू होय मारी गाय बडोही अभागी है।
खेतपर जाय ताहि लई है जिवाय देखि
परे सभी पाँय भक्ति भाय मति पागी है ॥२४८॥

(श्री अल्हजी की कथा)

चले जात अल्ह मग [1]लगै बाग देखि परयो
करि अनुराग हरि सेवा विसतारी है।
पाकि रहे आम माँगे माली पास भोग अर्थ
कहयो तोरि लेओ तवैं झुकिआई डारी है ॥
चल्यो दौरि राजा पास जायके सुनाई बात
गात भई प्रीति [2]आशु ढिंग पाँव धारी है।
आय पाँय लोट गयो मैं तो जू सनाथ भयो
देवो लै प्रसाद भक्ति भाव सों सँवारी है ॥२४९॥

(श्री बार मुखी जी की कथा)

वेश्या को प्रसंग सुनो अति रसरंग भरयो
भरयो घर धन अहो तो पै कौन काम को।
चले मग जात [3]जन ठौर स्वच्छ आई मन
छाई भूमि आसन सो लोभ नहीं दाम को ॥
निकसि झमकि द्वार हंस से निहारे सब
कौन भाग जागे मेरे, भेद नहीं [4]नामको।

१ समय में। २ शीघ्र। ३ सन्त। ४ नाम मात्र कामी।

मुहरनि पात्र भरि लै महन्त आगे धरयो
ढरयो दृग नीर कही भोग करो श्याम को ॥२५०॥
पूछी तुम कौन काके भौन में जनम लियो
भई सुनि मौन महा चिन्ता उर धरी है।
खोलिके निःशंक कहो शंका जनि आनो मन
कही वारमुखी मैंतो आय पाँयपरी है ॥
भरयो है भंडार धन करो अंगीकार अब
करिये विचार जो पै तो पै दासी [1]मरी है।
एक है उपाय [2]हाथ. रंग नाथ देव जू को
कीजिये मुकुट ऐसो जाय मति हरी है ॥२५१॥
[3]विग्रह न छुयैं ताको रंग नाथ कैसे लै हैं
[4]दे हैं हम हाथ, [5]तो तो रहैं यहां, [6]कीजिये।
मुकुट बनायो सब घर को लगाय धन
बनि ठनि चलि बोले हाथ निज लीजिये।
सन्त आज्ञा पायके निःशंक गई मन्दिर में
फिरी यों सशंक देखि तियाधर्म भीजिये।
बोले प्रभु वाको, ल्याय आप पहिराय .जाओ,
दियो पहिराय, शीश नयो मति रीझिये ॥२५२॥

(भक्त दम्पति की कथा)

मूल छ० बीच दिये रघुनाथ भक्त सँग
ठगिया लागे। निर्जन वनमें जाय [7]दुष्ट

१ मर जायगी। २ हाथ में। ३ वेश्याने कहा। ४ सन्त बोले।
५ वेश्याने कहा। ६ सन्त बोले तुम बनवाओ। ७ पुरुषको मारडाला।

कृत कियो अभागे। बीच दियो सो राम कहाँ कहि नारि पुकारी। आये सारँग पाणि शोक सागर तैं तारी॥ दुष्ट किये निर्जीव सब, दास [1]प्राण संज्ञाधरी। कमल नयन सब युगनतैं, कलियुग बहुत कृपा करी॥५५॥

विप्र हरिभक्त करि गौनो चल्यो संगतिया
जाके दूनो रंग ताकी बात लैं जनाइये।
मग ठग मिले द्विज पूछी अहो कहाँ जात
जहाँ तुम जाओं यामें मन न पत्याइये॥
पंथ को छुटाय चाहैं वनमें लिवाय जावो
कहै अति सूधो [2]पैंडो [3]मनमें न आइये।
[4]बोले बीच राम, [5]तोहू हिये नेक धक धकी
[6]कही वही वाम राम नाम कहां पाइये॥२५३॥
चले संग तजि शंक भक्ति रंग भंग जानि
तियापर रीझ भक्ति साँची तूने जानी है।
गये वन मध्य ठग लोभ लागि मार्यो विप्र
क्षिप्र लैके चले वधू अति बिलखानी है॥

१ जी उठे। २ मार्ग। ३ भक्त के मन में जची नहीं। ४ ठग बोले अपने बीचमें रामजी हैं। ५ तब भी इनके मनमें धकधकी रही। ६ स्त्री.ने कहा।

देखैं फिरि फिरि कही कहा देखैं मार्यो तवैं
सो उचारी देखूं वाही बीच जाहि आनी है।
आये राम प्यारे सब दुष्ट मारि डारे साधु-
प्राण सो उचारे [1]हित रीतियों बखानी है॥२५४॥

(वेषनिष्ठ राजाकी कथा)

मूल छं०—तिलक दाम धरि जाय कोऊ तिहि गोविंद जाने। [2]षट दरसनी अभाव सर्वथा घट करि माने। भाँड भक्तके वेष धारि तहँ इकदिन आये। नरपतिके दृढ नेम तिनहुके पाँव धुवाये॥ भाँड वेष गाढो गह्यो, दरस परस उपीज भगति। एक भूप भागवत को, कथा सुनत हरि होय रति॥५६॥

राजा भक्त राज डूम भाट को न काज होय
भोग हरिको जो धन इनको न दीजिये।
आये वेष धारि सो पुजाय नाचे दे के तारि
नृप सो निहारि कही यों निहाल कीजिये॥
भोजन कराय भरि मुहरनि थार लायो
आगे धरि विनैं करी अजू यह लीजिये।

१ प्रेमकी। २ षट् शास्त्री=पंडित।

भाँड गही भक्ति बोले अबै वास भावै नहीं
बाँह गही प्रभु, कैसे रहैं मति भीजिये ॥२५५॥

(एक अन्तर्निष्ठ भक्त राजा की कथा)

मूल छ०—हरि सुमिरण हरि ध्यान आन काहू न जनावे। अलग सो इहि विधि रहैं अंगना मर्म न पावै। निद्रावश सो भूप वदन ते नाम उचारयो। रानी पति पर रीझि बहुत वसु तादिन वारयो॥ परयो सोच कह्यो नारिसों, आज भक्ति मेरी कुजी। अन्तर्निष्ठ नृपाल इक, परम धर्म नाहि न धुजी ॥५७॥

तिया हरि भक्ता कहै पति में न भक्त पायो
रहै मुरझाय मन बढ्यो शोच भारी है।
मरम न जान्यो निशि सोवत पिछान्यो भाव
विरह प्रबल नाम निकस्यो विहारी है॥
सुनत ही रानी प्रेम सागर समानी भोर
सम्पति लुटाई मान्यो नृपति सुखारी है।
देखि उतसाह भूप पूछी निज बात कही
रह्यो तन तहाँ जीव गमन विचरी है ॥२५६॥

१ वासना=इच्छा २ अच्छी नहीं लगती। ३ फिर वासना कैसे रहे। ४ धन। ५ कुंठित हो गई। ६ झंडा लेकर चलनेवाला। ७ सुखदायक।

देखि तनु त्याग पति भई और गति वाकी
ऐसे रतिमान में न भेद नेक पायो है।
भयो दुःख भारी सुधि बुधि सो विसारी तब
कछू ना विचारी भाव राशि हिये छायो है॥
निशि दिन ध्यान तजे प्रबल बिरह प्राण
भक्ति रसखान रूप जात कापे गायो है।
जाको यह प्राप्त होय जानै सोई भाव रस
डारै मति खोय सोई प्रकट दिखायो है ॥२५७॥

(श्री गुरुवचननिष्ठ सन्तकी कथा)

मूल छ०—अनुचर आज्ञा माँगि कह्यो कारज को जैहों। आचारज कहि बात तोहि आये पै कहि हों॥ स्वामी रहे समाय दास पुनि वापस आयो। गुरुके वच विश्वास फेरि शव घरमें लायो॥ सत्य शिष्य प्रण करनको, सुनत सबै सोही कह्यो। गुरु गदित वचन है सत्य अति, दृढ प्रतीति गाढो गह्यो ॥५८॥

बडो गुरु निष्ट साधु कछु घटि करि जानै
स्वामी सन्त पूज्य मानैं, कैसे समझाइये।

१ शिष्य। आचार्य=गुरु। ३ मर। ४ मुरदा शरीर। ४ कहा।

नितही विचारैं, पुनि टारैं, पैं उचारैं नाहीं
चल्यो जब रामतको कही फिरि आइये ॥
स्वामी [1]पाये, शव समसान घाट लाये यह
हठ परि शव सो फिराय घर लाइये।
स्वामी प्राण धारि बात कही साँचो भाव जानि
सन्त राम गुरु ते अधिक मन भाइये ॥२५८॥

(श्री रैदासजी की कथा)

मूल छ०–सदाचार श्रुति शास्त्र वचन अविरुद्ध उचारयो। क्षीर नीर विवरणासो परम हंसन ज्यों धारयो॥ भगवत कृपा प्रताप परम गति इहि तन पाई। राज सिंहासन बैठि ज्ञाति परतीति दिखाई॥ वर्णाश्रम अभिमान तजि, पद रज बन्दत जासु की। सन्देह ग्रन्थि खंडन निपुण, वाणि विमल रैदास की ॥५९॥

स्वामी रामानन्दजू को शिष्यब्रह्मचारी एक
लावै वृत्ति चुटकी की कहै तासो [2]वाणियो।
करो अंगीकार सीधो कही दस बीस बार
बरसै प्रवल धार तामें वापे [3]आनियो॥

१ मर गये। २ वैश्य। ३ लाये।

भोग सो लगावै प्रभु ध्यान नहीं आवैं अरे
कासों आज लायो जाय पूछी नीच मानियो।
बरजि रख्यो हो स्वामी वासों जनि लावो कभूँ
दियो शाप तातैं नीचे कुल में [1]उतारियो॥२५९॥
माता दूध प्यावै याको छूयो हू न भावै नेक
सुधि आवैं पाछिली सो सेवा के प्रताप है।
भइ [2]नभवाणी सुनि [3]स्वामी [4]मन जाणी बड़ो
दंड दियो मानि वेग चलि आये आप हैं॥
दुखी पिता माता स्वामि देखि लपटाये पाँव
कीजिये उपाय कियो शिष्य गये पाप हैं।
स्तन पान किये जीये आये ईश जानि उर
जाने न अजान साथ रहे यही [5]ताप है॥२६०॥
बाढे रमादास हरि दासन सों प्रीतिकरी
पिता न सुहाई दइ ठौर [6]पिछवार ही।
हुतो धन माल तामें दियो न [7]विमात कछु
पिता बसीभूत ताके किये जब [8]न्यारही॥
गाँठैं [9]पगदासी घर बात न प्रकाशी कभूँ
ल्यावै [10]खाल करि जूती सन्त को सँभार हीं॥
डारि लीन्ही [11]छान कियो सेवाकों सुथान रहैं
आप चौडे माहिं पावैं बाँटि साधु [12]धारहीं ॥२६१॥

१ उतार दिया। २ आकाशवाणी। ३ आचार्य महाप्रभु। ४ हृदयमें। ५ जलन। ६ घरके पिछाड़ी। ७ दूसरी माता। ८ अलग। ९ जूती। १० चमड़ा। ११ छप्पर। १२ यही बात धार ली।

सहै अति कष्ट अंग हियं सुख शील रंग
आये प्यारे हरि लियो भक्त वेष धारिकै।
कियो बहुमान खान पान सों प्रसन्न ह्वै के
[1]पारस सो देय कही राखियो सँभारिकै॥
मेरो धन राम मेरो [2]पाथर न सारै काम
दाम में न चाहौं, चाहौं डारौं तन वारिकै।
राँपी लेय सोनो कियो दियो यों बताय पुनि
कही राखो, राखो छान, लीज्यो जू निकारिकै॥२६२॥
आये फेर वाही वेष मास सो तेरह बीते
प्रीति करि बोले कहो पारस की रीति को।
वाही ठौर लीजे मेरो मन न पतीजै अब
चाहो सोही कीजे मैं तो पावत हौं [3]भीतिको।
लके [4]उठिगये नयें कौतुक सो सुनो पावैं
सेवा में मुहर पांच नितही प्रतीतको।
सेवाहू करत डर लाग्यो निशि कह्यो हरि
छोडो हठ आपनी सो राखो मोरी जीतको॥२६३॥
मानि लई बात नई ठौर लैं बनाई चाव
सन्तन बसाय हरि मंदिर चुनायो है।
विविध वितान ताने गनौं जो [5]प्रमाण होय
भोय गई भक्ति पुरी जग यश गायो है॥

१ पारस पत्थर, जिसके स्पर्श से लोहा स्वर्ण हो जाता है।
२ पत्थर। ३ डर। ४ चले गये। ५ गिनती।

दरशन आवैं लोग नाना विधि राग भोग
रोग भयो विप्रन को तन सब छायो है।
बडे वे खिलारी रहे येतो छान डारि, करी
घर पै अटारी फेर द्विजन भ्रमायो है॥२६४॥
प्रीति रसराश सों [1]रैंदास हरि सेवत हैं
घर में [2]दुराय लोक [3]रंजनादि टारी हैं।
प्रेरे हरि हिये, जाय विप्रन पुकार करी,
भरी सभा नृप आगे बकें मुख गारी हैं॥
[4]जनको बुलाय नृप करि न्याय प्रभु सौंपे
फैल्यो जग यश साधु लीला [4]मनहारी है।
जेते प्रतिकूल तिन्हैं मानें अनुकूल ये तो
सन्तन प्रभाव मणि कोठरी की [5]तारी है॥२६५॥
वसत चित्तौर माँझ रानी एक झाली नाम
नाम विन कान सूनो आय शिष्या भई है।
संग हुते विप्र सुनिक्षि[6]प्र तन आग लागी
भागी मति, नृप आगे भीर जब गई है॥
न्यायहित लायके विराजे सिंहासन प्रभु
कही जो बुलाय लेवै इन्हैं सोही [7]जयी है।
पढैं विप्र वेद पै न गये प्रभु तिन पास
[8]गायो पद आय गोद बैठे भक्ति [9]लई है॥२६६॥

१. छुपाकर। २. खुश करना। ३. रैदासजी। ४. मनको हरनेवाली। ५. कुञ्जी। ६. शीघ्र। ७. जीतनेवाला। ८. रैदासजी ने।
९. ग्रहण की है=जाति विद्यामदवालेको प्रभु ग्रहण नहीं करते।

गई घर भाली पुनि बोलिके पठाये अहो
जैसे प्रति पाली तैसे आय प्रति पालिये।
आप सो पधारे उन बहु धन पट वारे
विप्र सुनि पाँव धारे सीधो दे [1]निवारिये॥
करके रसोई विप्र भोजन करन बैठे
द्वै द्वै मध्य एक सो रैदास को निहारिये।
देखि [2]नई आँखे [3]दीन भाषैं शिष्य लाखों भये
[4]स्वर्ण को जनेऊ काढ्यो कीन्ही त्वचा न्यारी ये॥२६७॥

इस श्री प्रियादासजी कथित प्रसंग के अतिरिक्त अन्यान्य श्री अगस्त्य संहितादि ऋषि प्रणीत ग्रंथों एवं प्रसंग पारिजात, महा भागवत चरित आदि प्राचीन ग्रन्थों में प्रसिद्ध है कि श्री रमादासजी या श्री रैदासजी श्रीयम (धर्मराज) के अवतार हैं। यमराजजी को तीन बार पृथ्वी पर जन्म लेने का शाप हुआ था जिसके अनुसार प्रथम श्री विदुरजी के रूप में दूसरे ब्रह्मचारी के रूप में और तीसरे रैदासजी के रूप में अवतरित हुए हैं।

प्रथम श्री विदुरजी का जन्मकर्म भक्तिभाव आदिकी कथा पुराण प्रसिद्ध है। दूसरे ब्रह्मचारी रूप में आपने काशी के समीप अलसा ग्राम में ब्राह्मण कुल में और तीसरे श्रीरमादासजी के रूप में काशी में रघूजी चर्मकारके यहां चैत्र शु० १ शुक्रवार को अवतरित हुए हैं।

श्री रैदासजी की माता एक गंगाजी में बहती आई हुई काशी में रघूजी के द्वारा गंगा से निकाल, घर ला, आवश्यक उपचार कर

१ टाल दिये। २ नम गई=नीची हो गई। ३ गरीब=निरभिमान। ४ श्री रैदासजी ने अपने शरीर की त्वचा को हटाकर सोनेका जनेऊ निकालकर सबको दिखलाया।

प्राणदान दी गई हुई कुमारी है, जिसने पंचायत में अपना परिचय देते हुए कहा है—मैं ब्राह्मणकी कन्या हूँ, पिता मर गये, माता सती हो गई, मैं गंगा में कूद पड़ी, अब मैं उसीकी दासी होकर रहना चाहती हूं जिसने मुझे माता गंगा की गोदी से प्राप्त किया है, जीवन दान दिया है। यदि वह मुझे स्वीकार न करेगा तो मैं पुनः गंगाजी की गोदी में ही चली जाऊँगी। इस कथन के अनुसार रघू ने उसे स्वीकार कर लिया और पंचों ने विवाह करा दिया। शेष कथा प्रायः वही है जो श्री प्रियादासजी की टीका में आ गई है।

(श्रीकबीरजीकी कथा)

मूल ६०—भक्ति विमुख जे धर्म सो सब अधर्म करि गाये। योग यज्ञ व्रत दान भजन बिन तुच्छ दिखाये। [1]हिन्दू तुरक प्रमाण रमैनी शबदी साखी। [2]पक्षपात नहि वचन सबहिके हितकी भाषी॥ आरूढ दशा है [3]जगतपर, मुख देखी नाहीं [4]भनी। कबीर कानि राखी नहीं, वर्णाश्रम [5]षट दर्शनी॥६०॥

अतिहि गंभीर मति सरस कबीर हियो
लियो भक्ति भाव जाति पाँति सब टारिये।

१. रमैनी शब्दी और साखी में कही गई श्रीकबीरजी की वाणी हिन्दू और तुर्क=मुसलमान दोनों के लिये प्रमाण है। २. तरफदारी। ३. लोक से परे=परमार्थ। ४. कही। ५. षट् शास्त्री पंडित।

भई नभ वाणी [1]भाल तिलक बनाय करो
करो गुरु रामानन्द गरे माल धारिये ॥
[2]देखें नहीं मुख मेरो मानिके मलेच्छ मोको
[3]जात है नहान गंगा तन [4]मग [5]डारिये।
रजनी के [6]शेष में आवेश में चलत [7]आप
परे पग, राम कहैं, मंत्र सो विचारिये ॥२६८॥
कीन्ही वही बात माला तिलक बनाय गात
मानि उतपात माता शोर कियो भारी यें।
पहुँची पुकार स्वामी रामानन्द पास आय
कही कोई पूछी [8]आप नाम सो उचारिये ॥
[9]लाओजी पकरि वाको हम कब शिष्य कियो
लाये करि परदा सो पूछी कहि डारिये।
राम नाम मंत्र यही लिख्यो सब तंत्रन में
खोलि [10]पट मिले, साँचो मत, उर धारिये ॥२६९॥
बुनै तानो बानो हिये राम मँडरानो
कैसे कहि के बखानों वह रीति कछु न्यारीये।
उतनोही करें जामें तन निर्वाह होय
[11]भींयगई और बात भक्ति लाग प्यारिये ॥

१. ललाटपर। २. कबीरजीने कहा। ३. फिर आकाशवाणीने कहा। ४. मार्ग में। ५. गिरा दो=लेट जाओ। ६. कुछ रात रहते। ७. श्री आचार्य पाद। ८. आपका नाम लेता है। ९. श्री आचार्यपाद ने कहा। १०. परदा। ११ समाई।

ठाढे मंडी मांझ पट बेचन लै [1]जन कोऊ
आयो मोको देहु मोरी देह है उघारिये।
लागे देन आधो फारि आधे सों न काम होय
दियो सब लेहु जोपै यहै उर धारिये ॥२७०॥
तिया सुत मात देखें मग भूखे, आवें कब,
[2]हाटन में दबि रहे, लावें कहा धामको।
साँचो भक्ति भाव जान्यो निपट सुजान वे तो
कृपाके निधान गेह शोच परयो श्यामकों ॥
तीन यों बिताये दिन [3]बालद लै धाये प्रभु
आय डारि दई घर देन सो आरामको।
माता करै शोर कोई हाकिम मरोरि बाँधे
डारो बिन जाने सुत लेत नहीं दाम कों ॥२७१॥
गये जन दोय चार ढूँढ के लिवाय लाये
आये घर सुनी बात जानी प्रभु पीरको।
रहे सुख पाय कृपाकरी रघुराई दई
छिन में लुटाय सब बोलि भक्त भीरको ॥
दियो छोड [4]तानो बानो सुख सरसानो हिये
कियो रोष धाये सुनि विप्र तजि धीरको।
क्यों रे तू जुलाहे धन पाये न बुलाये हमें
शूद्रन्ह जिमाय दीन्हे कहैं यों कबीर को ॥२७२॥

१ सन्त। २ दुकानों में छुप रहे थे। ३ अन्न से लदे बहुत से बैल। ४ कपडा बुनना।

क्योजी [1]उठि जाऊँ [2]कहा चोरी धन लाऊँ नित
हरि गुणगाऊँ [3]कोऊ राह में न मारी है।
शूद्रनको मान कियो याही में अमान भयो
दियो हमें जाय जो पै तोही तो [4]जिवारी है॥
घर में तो नाहीं [5]मंडी जाऊँ तुम बैठे रहो
[6]नीठके छुडाय पैंडो छुपे व्याधि टारी है।
आये प्रभु आप द्रव्यलाय समाधान कियो
लियो सुख, भक्त होय कीरति उजारी है॥२७३॥
ब्राह्मणको रूपधारि आये प्रभु बैठे जहाँ
काहे को मरत भौन जाओ जू कबीर के।
कोऊ जाय द्वार ताहि देत है अढाई सेर
बेर जनि लाओ चले जाओ यो [7]बहीर के॥
आये घर माँझ देखि निपट मगन भये
नये नये कौतुक ये कैसे रहैं [8]धीरके।
वारमुखी लई संग मानो वाही रंग रँगे
जानो यह बात करी डर अति भीर के॥२७४॥
सन्त देखि डरे सुख भयो है असन्तनको
तब तो विचार मनमाँझ और आयो है।
बैठी नृप सभा तहाँ गये पैं न मान कियो

१ चलाजाऊँ। २ क्या। ३ मैंने कोई रास्ता नहीं लूटा है। ४ जिन्दगी। ५ बजार। ६ मुशकिलसे। ७ रवानाकर दिये। ८ धीरज करके।

कियो एक चौज उठि जल ढरकायो है॥
राजाजिय शोच परयो, कह्यो कहा करयो कही
जगन्नाथ पंडा पग बरत बचायो है।
सुनि अचरज भरि नृपने पठाये नर
लाये सुधि कही अजू [1]साँचही सुनायो है॥२७५॥
कही राजा रानी सों जू बात वह साँची भई
आँच लागी हिये अब कहो कहा कीजिये।
चले ही बनत चले शीश तृण बोझ भारी
गलेसो कुठहरी बाँधि तिया सँग भीजिये॥
निकसे बजार माँझ डारि दई लोक लाज
कियो मैं अकाज छिन छिन तन छीजिये।
दूरते कबीर देखि ह्वै गये अधीर महा
आये उठि आगे कह्यो [2]डारि मति रीझिये॥२७६॥
देख के प्रभाव फिर उपज्यो दुर्भाव द्विज
आयो बादसाह जा को [3]सिकन्दर नाँव है।
विमुख समूह संग माता हू मिलाय लई
जाय के पुकारे सो, दुखायो सब गाँव है॥
लाओरे पकरि वाको देखौं मैं [4]मकर कैसो
अकर मिटाऊँ गाढे जकरि तनाव है।

१ सत्यही कहा। २ बोझ डाल दो, प्रसन्न होजाओ। ३ सिकन्दर का राज्य काल विक्रम सं० १५४५ से १५७४ तक २९ वर्ष रहा। ४ ढोंगी।

आनि ठाढे किये काजी कहत सलाम करो
जानों ना सलाम जा ने राम गाढे पाँव है ॥२७७॥
बांध के जंजीर गंगा नीर माँझ बोरि दिये
जीये तीर ठाढे कहैं यत्रं मंत्र आवहीं।
लकरीन माँझ डारि अगिनि प्रजारि दई
नई मानो भई देह कंचन लजावही ॥
विगत उपाय भये तऊ नहिं नये आप
पुनि मतवारो हाथी आनिके भुकावहीं।
आवत न ढिंग सो चिंघारि मारि भाजि जाय
आप आगे सिंह रूप बैठे सो लखावहीं ॥२७८॥
देखि बादशाह सो प्रभाव गहि पाँव परेचा
देखि करामात माँत भये सब लोग हैं।
प्रभु पै बचाय लीजे हमैं न गजब कीजे
लीजे जोई चाहैं देश गाँव नाना भोग हैं॥
चाहैं एक राम जाको जपैं आठौं याम और
दाम सों न काम जामें भरे कोटि रोग हैं।
आये घर जीति साधु मिले करि प्रीति जिन्हैं
हरिकी प्रतीति वेई गायबेके योग है ॥२७६॥
होयके खिसाने क्षिप्र लिये चार विप्रनने
मूँड मुँडवाय वेष सुन्दर बनाये हैं।
दूर दूर गामन में नामन को पूछ पूछ
नाम ले कवीरजी को झूंठे न्योति आये हैं॥

आये सब साधु सुनि ये तो दूर गये कहूं
चँहु दिश सन्तन पै फिरें हरि धाये हैं।
इनही को रूप धारि न्यारो न्यारी ठौर बैठे
येहू मिलिगये नीके पोषिके रिझाये हैं ॥२८०॥
आई अपसरा छलिबेके लिये वेष किये
हिये देखि गाढे फिरिगई नहीं लागी है।
निजश्याम रूप प्रभु आनिके प्रकट भये
लियो फल नैननको बडो बड भागी है॥
शीश धरे हाथ तन साथ मेरे धाम आओ
गाओ गुण रहो जोलों तोरी मति पागी है।
[1]मगहर जाय भक्ति भावको दिखाय बहु
फूलन मँगाय पौढि मिल्यो हरि रागी है ॥२८१॥

इसके अतिरिक्त अन्य ग्रंथों के अनुसार श्री कबीरजी के जन्म और बाल्य काल की कथा इस प्रकार है।

श्री कबीरजी श्री प्रल्हादजी के अवतार हैं, चैत्र कृष्ण ८ को काशीपुरी में लहरतारा नामक तलाव में एक कमल पत्र पर आपका प्राकट्य हुआ, वहां से श्री नीरू और नीमा नामक जुलाहा दम्पत्ति के द्वारा लाकर पाले गये। महात्मा धर्म दास जी ने कबीर जी का जन्म संवत १४५५ विक्रम लिखा है।

अनन्त श्री यतिराज राज आचार्यपाद श्री रामानन्दाचार्य जी की यात्रा में श्री कबीर दासजी साथ थे और श्रीजगदीशपुरी में चिमटा

१ मगहर नामक गाँव बस्ती और गोरखपुर के बीच में उत्तर प्रदेश में है। यहां कबीर जी की समाधियां बनी हैं।

गाड़कर बढ़ते हुए समुद्र को रोकने का और दक्षिण देश में अनेक स्थानों पर श्री कबीर जीके अनेकानेक चमत्कारों का उल्लेख है शेष कथा श्री प्रिया दासजी की टीका में प्रायः आगई है।

(महाराजा श्रीपीपाजी की कथा)

मूल छ०—प्रथम भवानी भक्त मुक्ति माँगन को धायो। सत्य कही तेहि शक्ति मार्ग हरिशरण बतायो। रामानँद पद पाय भये भक्तीकी सावाँ। गुण असंख्य अनमोल सन्त धरि राखत ग्रीवा। [1]परस प्रणाली सरस अति, सकल विश्व मंगल कियो। पीपा प्रताप जग बासना, नाहर को उपदेशियो ॥६१॥

गाँगरौन गढ बडो पीपा नाम राजा भयो
लयो देवी सेवा प्रण रंग चढयो भारिये।
आये पुर साधु सीधो दियो जोई सोई लियो
कियो मन याकी प्रभु बुद्धि फेर डारिये ॥
सोयो निशि रोयो देखि सपनो वेहाल अति
प्रेत विकराल देह धर के पछारिये।

1 अत्यन्त रसीली प्रणाली (श्रीरामानन्द सम्प्रदाय) का स्पर्श (ग्रहण) करके।

अब न सुहाय कछु वोहू पाँय परि गई
नई रीति भई याहि भक्ति लागी प्यारिये ॥२८२॥
पूछ्यो हरि पायबेको मग तब देवी कह्यो
स्वामी रामानन्द गुरु करि प्रभु पाइये।
लोग जानै वोरो भयो गया वह काशीपुरी
फुरी मति अति आये जहाँ हरि गाइये॥
द्वार में न जान देत आज्ञा ईश नाहीं कही
राजसीन हेत सुनि सब ही लुटाइये।
कह्यो कुवां गिरो चले गिरन प्रसन्न हिये
जिये सुख पायो [1]आय दरश दिखाइये ॥२८३॥
किये शिष्य कृपा करि दई हरि भक्ति हदे
कही अब जाओ गेह साधु सेवा कीजिये।
आये आज्ञा पाय धाम कीन्ही अभिराम रीति
आवैं सन्त सुख मानि घरमधि लीजिये ॥
बितये बरस तब सरस टहल जानि
प्रीति को न पारावार चीठी लिखि दीजिये।
हूजिये कृपाल [2]कही बात प्रतिपाल करो
चले [3]युग बीश जन संग मति रीझिये ॥२८४॥
कबीर रैदास आदि दास सब साथ लिये
आये पुर पास पीपा पालकी लै आयो है।

1 श्रीआचार्यपादने आकर दर्शन दिये। 2 जो कही थी। 3 दो सौ बीस अथवा चालीस।

करी साष्टांग विनै न्यारी न्यारी साधुन सों
धन को लुटाय सो समाज पधरायो है ॥
जैसी कीन्ही सेवा बहु मेवा नाना राग भोग
वाणी के न योग्य भाग्य कासों जात गायो है ।
करी प्रार्थना सो [1]घर रहौ के [2]अतीत करो
करिके प्रतीति गुरु पग लागि धायो है ॥२८५॥
लागी संग रानी दश दोय कही मानें नहीं
कष्ट को बतावै डरपावै मन ल्यावहीं ।
कामरी को फारि मध्य मेखला पहरि लेओ
डारो वस्त्र आभरण जो पै नहीं भावहीं ॥
काहू पै न होय, दई रोय, भोय भक्ति आई
छोटी नाम सीता गरे डारी न लजावहीं ।
येहू दूर डारो करो तन को उघारो, कियो,
दई [3]स्वामी आज्ञा तोहू पीपा हि न भावहीं ॥२८६॥
जो पै यापैं कृपाकरी दीजे काहू संग करि
मोरे नहीं [4]राग पीपा कहै बार बार है ।
सोहँ सो दिवाई निज स्वामी तब कर धरि
चले विप्र एक अरयो छोडैं न विचार है ।
खायो विष, ज्यायो पुनि, [5]बोधिके पठायो घर
आयो यों समाज द्वारावती सुख सार है ।

१ गाँगरोन गढमें । २ बिरक्त । ३ श्रीआचार्यमहाप्रभु । ४ प्रेम ।
५ समझाकर ।

रहे कोउ दिन आज्ञा माँगी इन रहिवेकी
कूदे सिन्धु दर्शन चाह सो अपार है ॥२८७॥
आगे आये लेन हरि दिये हैं पठाय जन
देखी द्वारावती कृष्ण मिले बहु भायके ।
महल महल माँझ चहल पहल लखि
रहे दिन सात सुख कहै कौन गायके ॥
आज्ञा दई जायवेकी जायवो न चाहै ये तो
पीवैं वह रूप कहैं कहा करौं जायके ।
भक्त बूडि गयो, यह बडो हो कलंक होय
मेटो [1]तमअंक प्रभु कही अकुलाय के ॥२८८॥
चले पहुँचायवेको प्रीतिके अधीन [2]आप
बिन जल मीन जैसे ऐसे फिरि आये हैं ।
[3]देखी नई बात गात सूखे पट भींजे हिये
लिये पहिचानि आय पग लपटाये हैं ॥
[4]दई लैके छाप पाप जगत को दूर करो
[5]ढरो कहुँ ओर सीता कहि समझाये है ।
छठे ही मुकाम वनमें पठान भेट भई
लई छीनि तिया [6]कियो चैन प्रभु धाये हैं ॥२८९॥
अभूँ चली जाओ घर कैसे कैसे आवैं डर
बोली हरि जाने पैन भाव [7]अभूँ आयो है ।

१ काला टीका । २ भगवान श्रीकृष्ण । ३ द्वारिकावासियों ने
४ श्रीपीपाजीने द्वारिकावालोंको । ५ चलो । ६ प्रभुने आकर कष्ट मेटा ।
७ अभी भी ।

लेत हो परीक्षा मैं तो जानूं तोरी इच्छा [1]तोपै
सुनि दृढ बात कान अति सुख पायो है ॥
चले मग दूसरे सो तामें एक सिंह रहै
आयो बास लेत शिष्य कियो समझायो है ।
आये और गाँव शेषसाई प्रभु नामरहे
[2]करे बाँस हरे, [3]ढरे चीधर सुहायो है ॥२६०॥
दोऊ तिया पति देखे आये भागवत तोपै
घरकी [4]कुगति [5]रति साँची ले दिखाई है ।
लहँगा उतार बेचि दियो ताको सीधो लियो
करो अन्न पाक, बधू [6]कोठी में दुराई है ॥
करिकै रसोई भोग लगा कह्यो आओ दोऊ
चीधर सो कहै पाछे लेऊँ सीथ भाई है ।
स्वामी कहैं नहीं सीता जाओ तुम लाओ वाहि
सीता गई वाही ठौर नगन लखाई है ॥२६१॥
पूछी कहो बात ये उघारे क्यों हैं गात कही
ऐसे ही [7]विहात साधु सेवा मन भाई है ।
आवैं जवैं सन्त सुख होत है अनन्त तन
ढक्यो कै उघारो कहा चरचा चलाई है ॥

१ तेरेसे । २ सूखे बासोंको हरेकर दिये । ३ कृपाकी । ४ दरिद्र दशा । ५ प्रीति । ६ अन्न रखने के लिये मिट्टी का एक ऐसा बडा सा पात्र बना लिया जाता है जिसमें १०, २० या २५, ५० मन अन्न भरा जा सके; इसको कोठी या कोठला कहते हैं । ७ ऐसेही दिन बीतते हैं ।

जानिगई प्रीति राति देखी एक इनही में
हमको कहत तोपै छटाहू न पाई है ।
दियो पट आधो फारि गहिकै निकारि लई
भई सुख [1]रेल पाछे पीपासों सुनाई है ॥२६२॥
करैं वेश्या कर्म अब धर्म है हमारो यही
कहि जाय बैठी जहाँ नाजन की ढेरी है ।
घिरि आये लोग जिन्हे नैनन को रोग देखि
दूर भयो सोग नेक नीकेहू न हेरी है ॥
कहैं तुम कौन बारमुखी नहीं भौन संग
भरुआ सो मौन, सुनि परी मानो बेरी है ।
करी अन्न राशि आगे मुहरैं रुपैया पागे
पठै दई चीधर के, [2]तबही निवेरी है ॥२६३॥
आज्ञा माँगि टोडे आये कभू भूखे कभू धाये
औचकही [3]दाम पाये गये असनान को ।
मुहरन [4]भाँडो भूमि गड्यो देखि छोड आये
कही निशि तिया कही जाओ [5]सर [6]आनको ॥
चोर आये चोरी करे [7]ढरे सुनि वाही ठौर
देखी सो उघारि साँप [8]छूत हते प्राण को ।
ऐसे घर आन परी सात सत बीस रही
तोले पांच पांच सब एक ही प्रमाण को ॥२६४॥

१ प्रवाह । २ चीधरजीने लेकर उन सबको उसी समय लुटा दिया । ३ द्रव्य । ४ मटका । ५ सरोवर=तलाव । ६ अन्य=दूसरा । ७ गये । ८ छूते ही ।

जोई आवै द्वार ताहि देत हैं अहार और
बोलि के अनन्त सन्त भोजन करायो है।
भये दिन तीन धन ख्याय प्याय पूरो कियो
लियो सुनि नाम सूरसेन नृप आयो है॥
देखके प्रसन्न भयो [1]नयो देवो दीक्षा मोहि
दीक्षा तब होय करो आयसु सुहायो है।
कहो सोही करौं है कृपालु मोपै [2]ढरो, कही
[3]धरो आनि सम्पत्ति औ रानी, [4]जाय लायो है ॥२६५॥
करके परीक्षा दई दीक्षा संग रानी दई
भई हो हमारी करो परदा न सन्त सों।
दियो धन घोरा, कछू राख्यो सो निहोरा [5]भूप
तन मान छोरा, बडो मान्यो जीव जन्त सों॥
सुनि जर बर गये भाई सेन सूरज के
[6]ऊरज प्रताप कहा कहैं [7]सीता कन्त सों।
आयो बनजारो एक लिये चाहैं [8]खेला बहु
दियो बहकाय [9]एही पीपा पै अनन्त सो ॥२६६॥

१ नतिम हुआ=दंडवत प्रणाम किया। २ कृपा करो। ३ श्रीपीपाजीने कहा–अपनी रानी और धन यहाँ लाकर रख दो। ४ राजा सूर से बजाकर ले आया। ५ राजा सूर्य सेन ने शरीरका (राजापने का) घमंड त्याग दिया और प्राणीमात्रको अपनेसे बडा माना। ६ महान। ७ श्री पीपाजी। ८ बैल। ९ इनही लोगोंने।

बनजारो आय [1]दाम खोल बोल्यो खेला दीजे
लीजिये जू आय गाँव चरन पठाये हैं।
गयो उठि पाछे बोलि सन्तन [2]महोछो कियो
आयो वाही समै कही लेहु मनभाये हैं॥
दरसन करि हिय भक्ति भाव भरि आयो
आनिके बसन सब साधु पहिराये हैं।
[3]और दिन न्हान गये घोडा चढि, छोड दियो
लियो बाँधि दुष्टन ने आयो मानि आये हैं ॥२६७॥
गये आप घोडा लेवे पाछे घर सन्त [4]आये
अन्न कछू नहीं [5]कहूँ जायकर लाइये।
विषयी वणिक एक देखि के बुलाय लई
दई सब सौंज कही सही निशि आइये॥
भोजन करत माँझ पीपाजू पधारे पूछी
वारे तन प्राण जब कहिके जनाइये।
करके शृंगार सीता चली झुकि मेह आयो
कांधे पै चढाई आप बनिया [6]रिझाइये ॥२६८॥
हाट पै उतार दई द्वार आप ठाढे रहे
देखे सूखे पग माता कैसे कर आई है।
स्वामी जू लिवाय लाये कहाँ है निहारौं जाय
आय पाँय परयो कह्यो राखो सुखदाई है॥

१ रुपया। २ महोत्सव=भंडारा। ३ कभी दूसरे दिन। ४ घर आ गया होगा ऐसा मानकर। ५ पत्नीने विचारा। ६ प्रसन्न करो।

मानो जनि शंक काज कीजिये निशंक धन
दियो बिन [1]अंक जापै लैं मरैं भाई हैं।
मरयो लाजभार चाहैं गरयो भूमि फारि दृग
बहै नीरधार आई दया दीक्षा पाई है ॥२६६॥
चलत चलत बात नृपति श्रवणपरी
भरी सभा विप्र कहैं बडी विपरीत है।
भूप मन आई यह निपट घटाई होत
भक्ति [2]सरसाई नहिं जानी घटी प्रीत है ॥
चले पीपा बोध देन द्वारे हीते [3]सुधिदई
लई सुनि कही जाके कहो [4]सेवारीत है।
कह्यो मूढ राजा [5]मोजा गाँठैबैठ्यो मोचीघर
सुनि दौरि आयो [6]रहे ठाढे कौन नीति है ॥३००॥
हुती घरमाँझ बाँझ रानी एक रूपवती
माँगी काहि लाओ वेग चल्यो सोच भारी है।
डगमग पाँव धरैं पीपा सिंह रूप धरे
ठाडे, देखि डरैं इत आये आवे [7]ख्वारी है ॥
जावत विलायगयो[8] तियाढिंग सुत भयो
[9]नयो भूमि परि [10]कलाजानी न तिहारी है।

१ लिखा पढी के। २ भक्ति की सरसता को राजाने नहीं जानी। ३ खबर ४ सेवा के विधान में। ५ जूता। ६ भयो यहां क्यों खडे रहे? भीतर क्यो नहीं पधारे? आपके लिये कौन सा नियम है। ७ सिंह अदन्य हो गया। ८ उस बांझ रानी के पास पुत्र हो गया। ९ साष्टांगप्रणाम किया। १० बोलाकि आपकी चतुराई जानी नहीं जाती।

प्रकट्यो स्वरूप निज खीझिके [1]प्रसंग कह्यो
कहाँ वह रंग शिष्य भयो लाज [2]टारी है ॥३०१॥
कियो उपदेश [3]नृप हृदै में प्रवेश कियो
लियो वही प्रण आप आये निज धाम हैं।
बोल्यो एक साधु आय देखो एक निशि तिया,
लेओ, कह्यो भागो संग भागी सीता वाम है ॥
प्रात भये चलै नहीं रैन ही की आज्ञाभई
चल्यो हारि आगे घर घर देखी ग्राम है।
आयो वाही ठौर चलो माता पहुँचाय आऊँ
आय गहे पाँव भाव भयो गयो काम है ॥३०२॥
विषयी कुटिल चार साधु वेष लियो धारि
[4]कीन्ही मनुहार कह्यो तिया निज दीजिये।
करके शृंगार सीता कोठे पर बैठी जाय
जो है मग आतुर ये कही जाय लीजिये ॥
गये जब द्वार उठी नाहरी सो फारिवेको
फारे नहीं वेष जानि [5]आय अति खीझिये।
[6]आपनो विचारो हियो कियो भोग भावनाको,
[7]मानी साँच भये शिष्य प्रभु मति धीजिये ॥३०३॥

१ कवित्त २९८ २९९ में वर्णित प्रसंग। २ रानियों को लाकर खड़ी करने की लोक लाज छोडकर। ३ राजा सूर सेनके। ४ श्री पीपाजीने कहा और कहिये कुछ चाहिये। ५ आकर पीपाजी पर खीजे। ६ श्रीपीपाजी ने कहा अपने हृदयका विचार करो, आपने अपने हृदयकी भावनाका ही भोग किया है। ७ वे सब सत्यमान कर शिष्य हो गये और प्रभु पर विश्वास हो गया।

[१]गूजरीको धन दियो पीयो दही सन्तनने,
[२]ब्राह्मणको भक्त कियो [३]देवी दी निकारि के ।

१ पीपा घर सन्त आये चाहैं दधि पान कियो, आई एक गूजरी सो बेचती तबै दही । याये लै दिखाई येही हिये सरसाई जोही, भक्त मन आवैं सोई बात होत है सही ॥ पूछी भक्तराज कहो दहीको है कहा मोल, आना तीन कहे तब कही दाम है नहीं । जोई भेट आवै आज सोई देहैं सुखसाज, सुनि वाने सोच कछु कही बात है सही॥१॥ पीते रहे भक्त ताही समै एक शिष्य आयो, लायो मोती माला और धन हू अनन्त हैं । सब लेय वाही दियो तेरो दही पियो, तोसों बोध यही करचो जानों साँचे होत संत हैं ॥ सो न लेवै मानैं डर राजासुनै खोसै घर, बरबश दीन्हो जैये सन्त रसवन्त हैं । आज्ञा पाय घर आय सम्पत्ति लुटाई सारी जाय शिष्याभई जग यश सो लसन्त है ॥२॥

२ हुतो एक द्विज भक्त देवीको प्रवीण महा, लियो सब गाँव न्योति पीपाजी न आये हैं । सुनि यह विप्र क्षिप्र चलि पीपा पास आयो, नाय पद शीश वच दीनता सुनाये हैं ॥ बोले भक्त राज काज कहा है हमारो वहां, राम सनबन्ध बिना कहूं नहिं पाये हैं । कीनी तानैं हट तब ताकी दीनता पै रीझि, भवन पधारे वाके भये मन भाये हैं ॥३॥ कही पीपा पकवान भये जेते थोरे थोरे, पहिलेही भोग हित मोको आनि दीजिये । प्रभुको लगाऊँ भोग मैं हूँ तब पाऊँ पाछे, आछे कहि चले विप्र अति मन रीझिये ॥ करी वही रीति प्रीति पागि भोग लगा पायो, बच्यो सो प्रसाद् जन लयो प्रेम भीजिये । ऐसे सो दयाल सन्त जीव प्रतिपाल करैं, तिनही की बातै नित सुनि सुनि जीजिये ॥४॥

३ विप्र जब सोयो रात देवी आय कही बात, तैंने एतो कियो आज ऐपै भूखी हौं मरी । पीपाजी लगायो भोग तभी पारषद् आये, काढि दीन्ही द्वार तैं सो कापतहूं हौं खरी ॥ खुली जब आखैं विप्र

[४]तैली को जिवायो [५]भैंस चोरन पै फेरिलाये

अभिलाखैं कब कहौं, भयो जब प्रात तब आय विनती करी । सुनि भक्तराज सब अपनी व्यवस्था कही, मो हू यानैं ठग्यो यह तो कृपा कीन्ही है हरी ॥५॥ सुनि पीपा वाणी रससानी विप्रजानी तबै, बिना रामभक्ति व्यर्थ आयु क्षीण ह्वै गई । विनै करि शिष्य भयो छायो हिय भाव नयो, मिट्यो हिय शोक भूरि रामभक्ति छै गई ॥ सब परिवार और गाँव सब शिष्य भये रामजी विराजे देवी गाँव छोडके गई । सन्तन के संग रंग चढ़े जैसे कहौं कैसे मानो रस रंग निधि मग्न बुद्धि ह्वै गई ॥६॥

४. मिली एक तेलिन बजार मध्य बेचैं तेल, बोलत सो तेल तेल पीपा कही बात है । ओपै लेय राम नाम तोही तो सफलता है, नरतन पाय नातो वृथा बीति जात है ॥ सुनि यह रोषभरि बोली मैं तो लीन्हो नहीं, लीन्हो नही नाम ये तो भली नहिं बात है । बोली सो रिसाय, जाको पति मरजाय सोइ लेत दुःख पाय जाहि ओर नालुहात है ॥७॥ बोले भक्त साँची कही ताही तैं तो लीन्हों नही देख्यो घर जाय पति मरचो दुखी भई है । तब तो पुकारि स्वर आरत कहन लागी, हाय हाय राम-राम कियो कहा दई है । पीपा आये घर कही बार बार तब, काहि कादे अब लेत नाम करै रीति नई है । पति मारयो तुम, भलो नही कीन्हो कहो अब, कीन्ही कहा चाहत हो मोकी सुधि लई है ॥८॥ बोले भक्त राज सदा अनुरक्त होय कहो, करो जनि टेढ अब जीवै पति मेरो है । कीयो वानै अंगीकार शीश पग धारि लियो, मौत ते उबारयो तेली आय भयो चेरो है ॥ दया करि नाम दियो कियो सकुटुम्बभक्त, परम विरक्त तऊ जान्यो दास मेरो है । होय जो प्रतीति प्रीति रीति सोई जानै यह होय ये चरित्र सुनि जन हरि नेरो है ॥९॥

५. पीपाजी की भैंस रात चोर सो चुराय चले, पछियाले दौरे आप पाछे अति प्रीति सो । बोले महाराज यह आगे कौन काज दूध

[६]गाडी भरि आयो [७]तन पाँच ठौर जारिके

दुहिवे को साज छोडे जात कौन रीतिसों। इन पहिचाने हिये जाने यह भक्त बडे, मनमें खिसाने पग गहे महा भीतिसों। नाम सुनि रीझे भीजे शिष्य भये त्यागि दयो चोरीको कुकर्म भैंस लाय बाधी नीतिसों ॥१॥

६ देखी भीर भार तब सीता सों विचार कियो कहूँ दूजी ठौर बैठि राम राम कीजिये। गये उठि और ठौर तहाँ हू पिछानि लीन्हे हठि लेय गये सन्त मिलि रस पीजिये ॥ बहु सनमान कियो अन्न और द्रव्य दियो, लाये गाडी भरि आप हाँकि चले रीझिये। चोर मग मिले तिन्हें गाडी आप सौंपि दीन्ही, कही अब चैन भयो लेहु सुख भीजिये ॥११॥ चले आप एक ओर चोर लेके गाडी चले भये सब आँधरे औ गिरे खड्ड धाय के। तबै भयो ज्ञान उन्हें, जाने यह सिद्ध कोऊ, पाछे पहुंचाय देत चले मन भाय के ॥ मति शुद्ध होतही सो नीके भये देख परयो, गाडी पाछी लाय पग परे सो रिझायके। नाम जानि चोरी छाँडि कीन्ही और भेट लाय, गाडी भरि आछी गये थान पहुंचायके ॥१२॥

७ पांच ग्राम महोत्सव रहे पाँच सन्तन क पाँचों ही बुलाये बडी बीनती सो धारे हैं। आप बडे सोच परे कहाँ जावैं कहाँ नही, जावैं नहीं कैसे सन्त सभी मोहि प्यारे हैं ॥ तबै घर सन्त आये सेवा विस्माये आप, पांचतन धारि पाँचों ठामहू पधारे हैं। उत्सव समाप्त होत त्यागे तन पाँचों ठौर, शिष्या रोय बाई देखि अति दुःख धारे हैं ॥१३॥ चली टोडे सुधि देन दूजे गाँव आयदेखी यहूं पीपा तनु त्याग्यो चिता त्यार भई है। याही भाँति पाँचों गाम देखि के चकित होत, टोडे आय दर्श पाय आनन्द में रई है ॥ टोडे में विराजमान देखे सन्त सभामध्य तारागण मध्य जैसे चन्द्र छवि लई है। बाइन मुखारविन्द अति अचरज मई सुनि बात सन्त सभा महा सुख लई है ॥१४॥

[८]कागदलै कोरो करयो [९]बनिया को शोक कहरयो
[१०]भरयो घर त्याग्यो [११]डारी हत्या हू उतारिके।

८ आये गृह साधु तिन्है नीके कै अराधे आप, नाना विधि पाक अति मीतिसों जिवाये हैं। चले जब सन्त कह्यो द्वारिका को जावैं हम, खर्च को न पास दाम देहु कुछु भाये हैं ॥ घर में न दाम पीपा गये एक साहू पास, रुक्कोलिखि देय टका चार शत लाये हैं। ऐ हैं अनायास तब देहौं बिनामाँगे तोहि, माँगियो नक भूँ बासों वचन सुनाये है ॥१६॥ वानै मानि बात कही भले, फेर करी और, बहुदिन बीते तब माँगे बहु बार है। येहू गये नटि तब निपट रिसाय पच करि एक ठौर करी तिनपै पुकार है ॥ पंचन बुलाये आये कही पंच रुक्का लिख्यो लीन्हो धन काहे नही देत सो सँवारहै। कही आप लावै रुक्कालेवैं धन याही समै, जोन रुक्कालावै तोन पावै निरधार है ॥१७॥ जबै घर जाय देखे रुक्का सब कोरे भये, भई कहा दई जिय सोचै बार बार है। कैसे अब जाऊँ वहाँ कहा यों सुनाऊ उन्हें, रह्यो घर बैठि परयो भारी लाज भार है ॥ लाये नहिं रुक्का पंच कही पारयो झूठो सोग, याते देहु याको जाति देश ते निकार है। बोले आप सांचो वह, धन लीन्हो हम याको, टरयो यह वचन ते याको ही विकार है ॥१८॥

९. बडो यह अज्ञ धन मानै यह आपनो कै, जेती जग सम्पत्ति सो प्रभु की औ दास की। ताहि निज जानि तिन्है देन अभिमान करं, ताकी अज्ञताई सब शास्त्रन प्रकाशकी। याते हम गये नाटि अभिमान गयो याको, जाय अब देखो रुक्कीसबै निजपास की। देखे घर जाय रुक्के जैसे हुतेतैसे भये, गये दुःख, भेट धरी बहु निज पास की ॥

१०. देख्यो जब पीया घर भर गयो सम्पत्ति सों, भार गनि बोले सीता अब का विचार है। आदर बढानो मंडरानो अन्तराय अब, त्यागो याही त्यागे सुख विरति अपार है ॥ याही भाँति सोचि लुटा गये एक

[१२]राजा को ओसेर भई [१३]साधु को विभव दई

कोस दोऊ देख्यो एक ग्राम जाको बड़ोई बजार है ॥ बैठे एक हाट सोही धका दश-बीश दीन्हें, बैठे नहीं दीन्हें और लीन्हें वस्त्र फार है ॥ २० ॥ बोले तब सीताजूसों हिये बड़ो चैन पाय, आदर को रोग बाढ्यो ताको उपचार भो। लोगन बताये जाओ आगे सदा व्रती रहैं, आगे जाय देख्यो घर नहीं सो उजार हो ॥ जान्यो परिहास कियो वृक्षतले डेरो दियो दियो सीता चौका तहाँ करिके विचार हो। आनन्द मगन पागे नाम गान ही में दोऊ चहू दिशि छाई धुनि आनंद अपार भो ॥२१॥

११. सुनि सो महन्त एक आये हिये रंग छाये, संग शत शिष्य लेय कियो सनमान सो। देख ते मगन भये बैठे पास रंग रये होन लाग्यो सुख हिये राम गुणगान सों ॥ तबै एक आयो विप्र शीश नायो चरणन, कही नाथ हत्या लागी मोहि अनजान सों। तीरथ औ दान मैंने कीन्हें हैं अनेक तोऊ, पीवें नाहीं कोऊ जल नाथ मेरे हाथ सों ॥२२॥ भरे हैं भंडार घर अंगीकार करो नाथ, साज सब लाऊ प्रभु भोग धरो प्रीति सों। सुनि दीन बैन आप रीझे दया भीज्यो हियो, कह्यो लागे भोग पावैं सन्त सब प्रीति सों ॥ लाया द्रव्य भयो पाक लाग्यो प्रभु भोग तबै, कियो नृत्य गान बानै अद्भुत रीति सों। कियो नामगान सब सुनि अभिराम धुनि, आयो दौरि ग्राम सब डरयो तिन भीति सो ॥२३॥ देखे सब आय किये पाक नाना भाँति प्रभु भोग को लगाय जेमैं सन्त सो अपार हैं। पाँति बीच देखि ताहि पूछी सब सन्तन सों कैसे याहि लीन्हो आय नहिं अधिकार है ॥ कही सन्त हत्या गई नई देह भई याकी, भयो यह भागवत दूर हत्या भार है। सुनि सब सुखी होय मान लीन्ही बात शुभ याही भाँति विप्र केरि हत्या दी उतार है ॥२४॥

१२. गये जब पीपा उठि राजा सूरसेन टोडे भई सो

[१४]लई चिट्ठी मानि गये श्रीरंग उदार के ॥३०४॥
[१५]श्री रंग के चेत धरयो [१६]तिय हिय भाव भरयो

ओसेर जन भेजे वाही गाँव है। अन्न धन वस्त्र बहु भेट धरि चरणन विनै कीन्ही आय तिन भरि बहु भाव है ॥ कही आप तुम इत आये हम गये टोडे मिले सूरसेन सों अबहि वाके ठाँव हैं।

१३. ताही समैं साधु एक आय धन मँग्यो सुता व्याह हेत दीनो पीपा सगरो उठाय है ॥२५॥

१४. दौसा एक गाम तामें रहे सो उदार एक बाणियो सरावगी श्री रंग जाको नाम है। पीपा को भतीजा चेला कियो चहै मेला ताने लिखी दश बीश चिट्ठी गये नहीं धाम हैं ॥ ताकी चिट्ठी लेय जन आयो एक याही ठाँव लिखी अतिदीनता सों परम ललाम है। पढ़ि सोई पाती भरि आई छाती दयाभाव मानि चिट्ठी प्रार्थना सो पूर्ण किये काम है ॥२६॥

१५. आप वाके घर आय पौरी मध्य बैठे जाय, कीन्यो करै मानसी सो श्री रंग विचार सों। करिके शृङ्गार फूल माल पहिरायो चहै, अरिगी मुकुट माहिं आवै नहि हार सो ॥ बोले तब आप गुण-तोरि पांडराय दीजे, दीजे गाँठ फेर मन नीके कै सँभार सों। सुनी सुनि आखैं अभिलाषैं वह बोले कौन अचरज भरयो बोल्यो पीपाजी उदार सों ॥२७॥ कही आप कौन मौन गहि भौन बैठे आय, दीजिये बताय हमें कहा प्रभुनाम हैं। सुनि आप दीन्ही शिक्षा, कह्यो तुम कौन ऐसे, सन्तन सों पूछबो न नीति अभिराम है ॥ गयो लाज भरि उर करत विचार ऐसे सिद्ध निरधार कोउ आये मेरे धाम है। फेर हठ कीन्हो तब दियो सो बताय नाम, गयो लोटि पायन में पूजे मनकाम है ॥२८॥ बोल्यो पुनि दीनतासों मेरी ये मनोर्थ राखो, आवैं जब आप तब लाऊँ आगे जाय के। कह्यो अब कीजे सोही जोहो मन भाई तोहि, बाग कोस एक तहाँ बैठे आप आयके ॥ लायो रंग तहाँ हीते

"ब्राह्मण को शोक हरयो राजा पै पुजाय के।

सवारी सजाय नीके, आये मास एक रंग गेह में अघाय के। टोडा सब भक्त भयो राम भक्ति रंग छयो जो आनन्द भयो वाही सकै कौन गायके ॥२९॥

१६ टोडा माहि कुंड एक तहाँ बैठे हुते दोऊ, आई नारी दोय कंडा बीनती सुहाई है। देखि दुःख भरी बडी कृपा करि पीपाजी ने, अतिहि हुलास तिन्हें निकट बुलाई है॥ तबहि श्रीरंग मन आई अनुचित भई, चले उठि देखें कैसे नारि ये पराई हैं। कही आप स्वारथ सों बोलिबो है अनुचित, परमार्थ हेतु नहि अनुचित भाई है ॥३०॥ आई जब पास आप बोले ऐसो तन पाय, भजै रघुराई तोही लागै यह नीको है। चिन्तामणि छाँडि फूटी कौडी हेत खेद करौ, धरो हिय राम काम पूजै सब जीको है॥ ऐसे उपदेश करे तिय हिय भाव भरे, करे मन रामओर जीवन जोजीको है। लियो उपदेश कियो मन भायो ताही समै, ह्वै गई विरक्त जग सुख लाग्यो फीको है ॥३१॥

१७ रंगजी सों विदा लैके चले टोडे तबै देख्यो, मारग में विप्र एक आरत पुकारै है। पूछी आप तासों तब बानी कही बात यही सुता भई ब्याह योग्य सोही चिन्ता मारे है॥ गयो यजमान घर वाने कछु दियो नाहीं, कौडी नहीं पास सुनि दुखी हो विचारै है। हुतो द्रव्य पास सो तो दियो वाहि ताही समै, लाय घर कीन्हो ताको औरौ उपचारे है ॥३२॥ लेके आये धाम ताको वेष कीन्हो अभिराम, भद्र करवाय ताहि अचला धरायो है। द्वादश तिलक करे मुद्रा तन छापी नीके, गादी पर तकिया लगायके बिठायो है॥ बैठे आगे तरे आप आयो जब राजा कही, मेरे गुरुतुल्य तेरो भाग्य उघरायो है। सुनि राजा राजी होय कीन्हीबहु भेट पुनि गयो तब आप ताके पद शिर नायो है ॥३३॥ हाथ जोरि बोले पीपा क्षमा करि दीजे विप्र, दाढी मूछ मुंडवाय दुःख मैं जो दीन्हो है। लीजिये रखायफिर कीजिये

"चँदवा बुझाय दियो, "विप्रको लै बैल दियो।
दियो पुनि तेलीहूको भयो सुखी पायके।

विवाह सुता, वेष को प्रभाव देखि द्विज सुख लीन्हो है॥ कियो नहीं वेष दूर हिये धरे छवि पूर; विपै शिर डारी धूर भाव भक्ति भीनो है। करके सुता को ब्याह आय शिष्य होय गयो, भयो भव पार और कुल हू को कीन्हो है ॥३४॥

१८ टोडे माहिं जागरण हुतो हरिवासर को तहाँ सन्त जन गावैं पद भक्तिभाव के। कीन्हो तहाँ कौतुक सो सभामध्य ठाडे भये, मींजे दोऊ होय निज ऊपर उठाय के॥ नृप मन शंका भई कीन्ही कहा बात इन, पूछी इन्हें कही तब बात समझाय के। द्वारिका में कीरतन होत में मसाल लागी, चँदवा जल न लाग्यो दियो सो बुझाय के ॥३५॥ अति अचरज भरि राजा ने पठाये जन देखी जाय चंदवा में थेकरी सो लागी है। रहे सब जागरण माहिं तिन्हें पूछी कही, हाँ हाँ पीपाजी ने ही बुझाई आग लागी है॥ देखि सुनि जन आय कही साँची बात जानि, भई श्रद्धा अतुलित मति प्रेम पागी है। सन्तन की महिमा हि जान सकै ऐसा कोऊ, जगत में नाहीं कहैं सब अनुरागी है ॥३६॥

१९ न्हात रहे कुंड तबै आय एक विप्र कही, मेरो एक बैल मरयो अब कहा कीजिये ; सूखो परयो खेत सब खेती जरी जल बिन, करके दया सो मोहि बैल लेके दीजिये॥ तबै एक तेलीवाल लायो बैल प्यावे जल, छीनि ताते कही आप द्विज देव लीजिये। रोवत सो आय कही सुनि पिता दुखी होय, राजा पै पुकारयो मेरो बैल दिवा दीजिये ॥३७॥ राजा कही तहाँ जाय करो विनै सन्तन सों, तेली आय गिडगिडाय कही दया लागी है। आप कही घर जाय देख बैल बँध्यो तेरे, नाहक हमसों लरे कहा मति भागी है॥ जाय घर देख्यो तेली बैल बंध्यो निज खूंटे, विप्रहू के घर बैल देखि

[२५]बडोई अकाल पर्यो, जीव दुःख दूर कर्यो
गड्यो धन पायो घर दियो सो लुटाय के।
[२६]अति विसतार भयो आयो ये विचार मन
ताते संक्षेप कह्यो भूलै नहीं गाय के ॥३०५॥

बुद्धि जागी है। फेरि दौर आय भयो शिष्य जग जीत गयो, फलि बात गाँव सब कहै बड भागी है ॥३८॥

२० पर्यो सो अकाल देश सोचैं अकुलाय पीपा, जीव प्रतिपाल होय किये का उपाय के। घर ही में गड्यो एक म्होरन को पात्र मिल्यो, मन में मगन होय दियो सो लुटाय के॥ आवत जे सन्त तिन्हैं देत हैं अनन्त सुख, भूखन को भोजन सो देत हैं अघाय के। सुने मुख सन्तन सो मति अनुसार कहे, चरित अपार पीपा कहै कौन गाय के ॥३९॥

२१ कीन्ही भक्तमाल नाभास्वामीजू दयाल ताकी, कीन्ही टीका हुलसाय सन्त प्रियादास है। जयसिंह सवाई अति भक्तिमान नृप आगे, जयपुर आय कियो कथा को विकास है॥ तामें पीपा कथा टीका अन्त सूची रूप होय, कवित्त श्रवण किये अति सुखरास है। तिनको विस्तार कवि वेणीकृष्ण कियो यह, होय सुनि अज्ञन के हियेहू प्रकाश है ॥४०॥

अन्तिम इन दो कवित्तों में संकेत रूप में कथित चरित्रों को जयपुर नरेश महाराजा जयसिंहजीके दरबारी कविराज श्रीवेणीकृष्णजी ने उपरोक्त ४० कवित्तोंमें विस्तारसे वर्णन किये है इनको अनन्त श्रीगुरुदेव भक्तमाल की कथा में कहा करते थे।

इसके अतिरिक्त सन्त श्री अनन्तदासजी रचित हिन्दी पद्य (दोहा चौपाई) में श्रीपीपाजी की परचई नामक ग्रन्थ भी उपलब्ध है, जिसको जोधपुरस्थ त्रियोलिया के समीप के पीपा पंथी दरजी

श्रीगिरिधारीजीने श्रीपीपाजीके पदोंके लघु संकलनके साथ प्रकाशित किया है। इसके मुख पृष्ठ पर चार आना में उन्हीं से प्राप्य होना उल्लिखित है। यह श्री अनन्तदासजी श्री नाभा स्वामीजी के छोटे गुरु भ्राता श्री विनोदजी के शिष्य थे अतः यह परिचई भक्तमाल से कुछ ही समय पीछे और श्री प्रियादासजी की टीका से प्रायः १०० वर्ष पूर्व की रचना है। जान पड़ता है श्री प्रियादासजी ने इसी परिचई से कथा भाग लेकर संक्षिप्त कर अपनी टीका में दिया है। सुना जाता है श्री अनन्तदासजी ने आचार्यपाद अनन्त श्री रामानन्दाचार्यजी के श्री कबीरजी श्री रैदासजी आदि अन्यान्य शिष्यों की भी परिचइयां लिखी हैं जिनमें से कुछ प्रति लिपियां काशी नागरी प्रचारिणी सभा में उपस्थित हैं। श्री अगस्त्य संहितादी ग्रंथों के अनुसार श्री पीपाजी महाराज श्री मनुजी के अवतार हैं और चैत्र शुक्ल १५ बुधवार को अवतरित हुए हैं।

(श्रीधनाभक्तजीकी कथा)

मूल छं०—घर आये हरिदास तिनहि [१]गोधूम [२]खवाये। तात मात डर खेत [२]थोथ [३]लांगलहि चलाये। आस पास [४]कृषिकार खेत की करत बडाई। भक्त भजे की रीति प्रकट [५]परतीति दिखाई॥ अचरज मानत जगत में, कहुँ [६]निपज्यो कछु बिन बयो। धन्य धनाके भजनको, विनहिं बीज [७]अंकुर भयो ॥६२॥

१ गेहूँ। २ खाली। ३ हल। ४ किसान। ५ विश्वास। ६ पैदा हुआ है। ७ उग आया।

खेत की तों बात कही प्रकट[1] कवित्त माँझ
सुनो एक और भई प्रथम जो रीति है।
आये साधु विप्रधाम सेवा अभिराम कर
बठे ढिंग आय कही मोहू दीजे प्रीति है॥
पाथर ले दियो अति सावधान कियो यह
छाती लाय जीयो सेवैं जैसी नेह नीति है।
रोटी धरि आगे आँख मूँद लई परदा के
छूई नहीं नेक देखि भई बड़ी भीति है॥३०६॥
बार बार पाँय परे अरे भूख प्यास तजि
धरे हिये साँचो भाव पायी प्रभु प्यारीये।
छाक नित आवै नीके भोग को लगावै जोई
छोड़ें सोई खावै प्रीति रीति कछु न्यारिये॥
जाको कोई खाय ताकी टहल बजाय करै
लावत चराय गाय हरि उर धारिये।
आये फिरि विप्र नेह खोजे हू न पाये कहूँ
सरसाये बातें ले दिखायो श्याम चारिये॥३०७॥
द्विज लखि गायन में चावन समात नाहीं
भावनकी चोट लागी दृग नीर भरी है।

१ प्रकार। २ भगवानकी। ३ मेरा प्रेम है कि सेवा करूं। ४ प्रेमकी। ५ डर। ६ प्रभुने खायी। ७ कलेऊ। ८ प्रेमके कारण। ९ धना जी नही मिले। १० गाय चराते हुए। ११ आनन्द। १२ भक्ति।

जायके भवन सीतारमण प्रसन्न करैं
बडे भाय मानि प्रीति देखि जसी करी है॥
धना को दयाल ह्वैके आज्ञा प्रभु दयी करो
स्वामी रामानन्द गुरु भक्ति मति हरी है।
भये शिष्य जाय आप छातीसों लगाय लिये
किये गृह काम सबैं सुनो जैसी धरी है॥३०८॥

श्री धन्ना जी के रूप में (श्रीपन्नाजी जाट की धर्म पत्नी रेवा के गर्भ से वैशाख कृष्ण ८ शनिवार को) राजा बलि जी अवतरित हुए थे। कविवर श्री छितीश तनय सखा जी रचित महाभागवत चरित में उपरोक्त श्री प्रियादास जी द्वारा टीका में वर्णित दो चरित्रों के अतिरिक्त एक बार सन्तों के आने पर माता के पिछाडी से सब दूध सन्तों को पिला देने और फिर दूध के सब बरतन भरे ही प्राप्त होने के तथा इसी प्रकार एक बार सब घर भर की रोटियां सन्तों को पवा देने पर पुनः ज्यों की त्यों रोटियां प्राप्त होने आदि के कुछ चरित्र अधिक मिलते हैं।

(श्रीसेनभक्तजीकी कथा)

मूल ७०–प्रभुहि दास के काज रूप नापित को कीन्हो। क्षिप्र छुरहरी गही पाणि दपर्ण पुनि लीन्हो। तादृष ह्वै तिहिकाल भूप के तेल लगायो। उलटि

१ श्री सीताकान्त भगवान रामको। २ श्रीआचार्य महाप्रभु ने। ३ भगवान ने ही। ४ लिये। ५ नाऊ। ६ उस्तुरा आदि की पेटी। ७ सेन जी के वैसे हो।

'राव भयो शिष्य प्रकट परची जब पायो ॥ श्याम रहत सम्मुख सदा, ज्यों बच्छा हित धेन के ! विदित बात जग जानिये, हरि भये सहायक सेन के ॥६३॥

बान्धव गढ वास सो साधु सेवा आस लागी
पागी मति अति प्रभु परचो दिखायो है।
करि नित्य नेम चल्यो भूपके लगान तेल
भयो मग मेल सन्त, फिरि घर आयो है ॥
टहल बनाय करी नृप को न शंक धरी
उत श्याम जायकर 'भूपति 'रिझायो है।
पाछे सेन गयो 'पन्थ पूछयो हिये रंग छयो
भयो अचरज राजा वचन सुनायो है ॥३०६॥
'फिरि कैसे आये सुनि वचन लजायो कही
सदन पधारे सन्त भई यों अँवार है।
आवत न पायो वाही सेवा उरझायो, 'राजा
दौरि शिर नायो देखि महिमा अपार है ॥
भीज गयो हियो दास भाव दृढ लियो पियो
भक्तिरस शिष्य ह्वैके जान्यो याही सार है।

१ राजा। २ राजाकी। ३ प्रसन्न किया। ४ मार्ग में लोगों से पूछने पर अपने ही द्वारा राजाके तेल लगाया गया सुन प्रभु कृपा समझ सेनजी के हृदय में प्रेम रंग छगया। ५ लौटकर। ६ राजा ने।

अबलौं हू प्रीति सुत नाती वाही रीति चलैं
होय जो प्रतीति प्रभु पावै 'निरधार है ॥३१०॥

श्रीभिष्मपितामहजीने ही श्रीसेनजीके रूपमें बांधवगढ निवासी नापित श्रीउग्रसेनजीकी धर्मपत्नी सुशीलाजीके गर्भसे वैशाख कृष्ण १२ रविवारको अवतार लिया था।

बांधवगढ नरेश श्रीसेनकी क्षौर आदि सेवा कुशलता पर मुग्ध थे और यात्रामें भी साथ ले जाते थे।

एकबार बांधवेशकी काशी यात्रामें राज्य सेवासे निवृत्त हो आप पंचगंगा घाटपर श्रीगंगा किनारे चले गये, वहाँ एक भद्र पुरुषने इनसे कहा हम सन्यासी होना चाहते हैं हमको भद्र करदो। इनने उनको भद्र कर दिया परंतु चोटी रहने दी। अद्वैती सन्यासियोंकी प्रथानुसार उनने चुटिया भी हटा देनेको कहा तो आपने कहा—चुटिया हिन्दुत्वकी निशानी है, मैं अपने हाथसे आपकी चोटी नहीं हटाऊंगा। वाद बढ़ गया और अपने-अपने पक्षका समर्थन करते हुए दोनों यतिसार्वभौम जगद्गुरु श्रीरामानन्दाचार्यजीके पास पहुँचे। श्रीमदाचार्यपादने दोनोंका समाधान कर दिया। सेनजी श्रीमदाचार्य चरण-दर्शनसे बड़े प्रभावित हुए और श्रीचरण शरण ग्रहण करली। श्रीमदाचार्य चरणने दीक्षा प्रदान कर सन्त सेवाकी शिक्षा प्रदान की और बांधवेशके साथ ही घर चले जानेकी आज्ञा दी। घर पर जाकर जो चरित्र हुए वे श्रीप्रियादासजी ने संक्षेपमें कहे हैं।

आचार्यपाद (श्रीसुखानन्दाचार्य स्वामीजीकी कथा)

मूल ७०—सुख सागर की छाप राग गौरी 'रुचि 'न्यारी। पद रचना गुरुमंत्र मनहुँ

१ निर्धारित=निश्चित। २ रागका एक विशेष प्रभेद।

[1]आगम अनुहारी ॥ निशिदिन प्रेम प्रवाह द्रवत भूधर ज्यों निर्झर। हरि गुण कथा अगाध भाल जनु लसत [2]कलाधर॥ [3]सन्त कंज पोषण विमल, अति पियूष सरसी सरस। भक्ति दान भय हरण भुज, सुखानन्द पारस [4]परस ॥६४॥

भगवान शंकरजीके अवतार जगद्गुरु स्वामी श्रीसुखानन्दाचार्यजी ने उज्जयनीके समीप किरीटपुर निवासी पं० श्रीत्रिपुरारि भट्टजीकी धर्म पत्नी श्रीगोदावरी बाईके गर्भसे श्रीजानकी नवमी (वैशाख शु० ९) के दिन अवतार लिया।

आपका जन्म नाम चन्द्रहरि था आपका चरित्र टीकाकार श्री प्रियादासजी कुछ भी न लिख सके, अतः महाभागवत चरितके आधार पर संक्षेपमें लिखा जाता है। आप जन्मसे ही अर्ध विकसित नेत्र रहा करते थे, पूरे नेत्र खोलकर कभी नहीं देखते थे। माता पितादिने इसको रोग समझ अनेक औषधोपचार, झाड़-फूक, जादू टोना किये कराये परंतु वह कोई रोग हो तो मिटै, एक दिन एक सिद्धने कहा यह रोग नही इनका योग है, इसकी चितामत करो।

एक दिन अपने घरके बगीचेमें माता इनको लेकर सो गई तो आप लुढ़ककर एक पौधेकी आडमें पहुँच गये। माता जगी तो ढूढने लगी। और भी जोई आया सबने ढूंढा परन्तु बालक न मिला। पिता जी जब ढूंढने लगे तो देख पड गये और साथ ही यह दृश्य भी देख पडा कि एक विषधर सर्प फन फैलाये आपके ऊपर छाया कर रहा

१ शास्त्रानुकूल। २ चन्द्रमा। ३ सन्त जन रूपी कमल वनका पालन करनेमें आप अमृतकी तलाई के समान थे। ४ स्पर्श=संपर्क।

है। यह देख बड़ी चिंता हुई। फिर सर्प चला गया और माता आपको ले आई। उत्सव मनाये गये।

घर के समीप एक श्रीभगवन्मन्दिर था जहां माता आरती में प्रायः नित्य जाती थो और आपको भी ले जाती थी। कुछ चलने लगे तो कभी माता के न जाने पर आप इकेले चले जाते। एक दिन सोये से जगकर आप आरती में दौड़ गये। मार्ग में गिर गये तो एक परम सुन्दर कुमार ने आपको उठाकर चरणामृत प्रसाद दिला, घर पहुंचा दिया और वहीं अदृश्य हो गया। सबको आश्चर्य और परम सुख प्राप्त हुआ।

समय पर उपनयन होकर वेद पाठ आरंभ हुआ तो आप अध्यापकजी से बोले मुझे केवल एक अक्षर पढना है जो पवर्ग में रहता है और अपवर्ग देता है, यह सार गर्भित वचन सुन अध्यापकजी ने पिताजी से कहा कि यह बालक सामान्य बालक नही कोई अवतारी पुरुष है, आप इसके तरफ की सब चिंता छोड़ दें। इन्ही दिनों में एक दैवज्ञ किरीटपुर में आये और आपके दर्शन कर आनन्दित हो पिताजी से कहने लगे आपका बालक लोकोत्तर की विभूति है परंतु एक ध्यान रखना कि इसको १८ वर्ष तक जलमें या दर्पण में मुख न देखने देना और नदी तालाब कुण्ड बावडी आदि में स्नान न कराना। तब से घर में से सब लोग भी यदि क्षिप्रास्नान को जाते तो आपको घरपर ही रहना होता।

पं० त्रिपुरारि भट्टजी के पिता कभी विवाद में पं० रंगराज दीक्षितजी से परास्त हो गये थे जिसका परास्तकर त्रिपुरारिजी को प्रतिवर्ष देना पड़ता था। एक दिन पं० रंगराज का दूत कर वसूल करने आया तब घरपर केवल आपही थे और सब क्षिप्रास्नानार्थ गये थे। आपने दूत से सब वृत्तान्त जानकर कहा पं० रंगराजजी से कहना अब परास्तकर नहीं दिया जायगा, मैं आज से चौथे दिन आकर

पंडितजी को परास्त करूंगा। दूत के मुख से एक बालक की यह साहसोक्ति सुन पंडितजी प्रसन्न हुए और समय की प्रतीक्षा करने लगे, निश्चित समयपर पहुँच कर आपने शास्त्रार्थ कर पितृ ऋण से पिताजी को मुक्त किया और पं० रंगराजजी से कहा अब आपको परास्त कर नही देना लेना होगा इस निन्द्य प्रथा को विदा कर दीजिये। इस प्रस्ताव से समुपस्थित पंडित समाज बहुत प्रसन्न हुआ और इस हेय प्रथा का अंत हो गया।

घर में सब लोग बालक की अलौकिक लीलाओं से चकित हो आनन्द विभोर उत्साह मग्न रहे थे और आप जय पराजय दोनों को प्रभु चिंतन में बाधक मानकर अन्यमनस्क से अपनी सयन कोठरी में प्रवेश कर कुन्दी बंदकर प्रभु चिंतन में लीन हो गये, दिन बीत गया, रात हो गई, उत्सव में आगन्तुक सब लोगों के भोजनादि संनिवृत्त होकर घर के लोग भोजन करने लगे तो कुमार की खोज हुई ! सयन भवन में जाकर पल्ला खटखटाया तो उत्तर मिला 'मैं अभी भोजन नहीं करूंगा आप लोग करें, मुझे सोने दें। संयोगवस आज दिन में आपने जलपात्र में अपना मुख भी देख लिया था और तभी से आपकी यह जगत से उदासीन दशा हो चली थी। रात कटी, सवेरा हुआ तो सब लोगों ने देखाकि कोठरी खुली पड़ी है और कुमार वहाँ नहीं है। कुमार दिन भर चलकर संध्या को एक अमराई में विश्राम कर रहे थे, तभी ढूढने वाले लोग वहां पहुँचाये। सब रो रहे थे। माता का रोना तो वर्णनातीत था। यह देख आप भी माता की गोदी में अपना मुख छुपाकर रोने लगे और सबको मिलकर आप से रोना बंद करने की प्रार्थना करनी पड़ी। सब लोग घर लौट चलने को कहने लगे। पिता माता ने कहा तुम जो भी कहोगे सोही हम करेंगे। आपने कहा बस मैं यही एक बात कहता हूँ कि आप सब लौट जाओ और मैं काशी जाकर किसी महापुरुष के चरण में रहकर उस एकाक्षरी विद्याका

अध्ययन करूँगा, आप लोग इसमें विघ्न न बनें, इसीमें आप हम सबका और लोकका कल्याण है। पिताजीने एक विश्वासी पंचोलीजीको दूर दूर रह कर आवश्यकता पड़ने पर सहायक होनेके लिये साथ कर दिया और सब लौटगये।

मध्यान्ह में विश्रामार्थ एक तड़ागपर रुके, वहां एक रमणी एक थाल में भोजन सामग्री लेकर आई और आपसे ग्रहण करने का आग्रह करने लगी। आपने उसमें से थोड़ा सा पा लिया जिसका यह विचित्र प्रभाव हुआ कि आप में कुमारावस्था से युवावस्था वर्तमान होने लगी। यह देख आप घबड़ाये और इस घबड़ाहट के समय से लाभ उठा पंचोलीजीने अपने झोले में से निकालकर श्रीभगवानका चरणामृत प्रसाद दिया जिससे उस अन्नका प्रभाव नष्ट हो गया। पंचोलीजी के उपकार के लिये आपने धन्यवाद दिया और अब साथ मिलकर ही दोनों चलने लगे। इसी रात आपने स्वप्न देखा कि एक पर्वत शिखर पर स्थित मुनि महाराजके पास पहुँचे हैं और वे मुनीजी आज्ञा कर रहे हैं कि काशीमें पंच गंगा घाट पर अवश्य स्नान करना, जागकर स्वप्न वृत्त पंचोलीजी से कहा तो पंचोलीजीने कहा वहीं पर तो आचार्य पाद आनन्दभाष्यकार यतिराज राज श्रीरामानन्दाचार्यजी का श्रीमठ है। मैं जानता हूँ वहां ले चलूँगा।

मार्ग में विश्राम करते और ग्रामवासियों को एवं सन्त महात्माओं को दर्शन सत्संग से कृतार्थ करते फाफामऊ पहुँचे जहां एक सर्पराजसे भेट हुई। आप आसनपर बैठे भजन कर रहे थे। पासही पंचोली जी थे। पंचोलीजी सर्प से डरे परन्तु आप जैसे के तैसे बैठे रहे, सर्प प्रायः दिनभर आपकी परिक्रमा करके सायंकाल चलागया।

प्रातः काल श्रीगंगा स्नान हुआ। गंगाजलमें मुख देखकर आप ध्यान मग्नसे हो गये और सहसा आपके मुखसे निकला 'अरे यह सब तो नाशवान है, इसके परे ही अमर सत्य है, वही अपना रूप है'

यहीं पर काशीके सन्यासी श्रीरामभारतीजी से भेट हुई वे आपके तेजः पुंज मुख मंडलके दर्शनसे परम प्रसन्न हुए और उसी रातमें एकाक्षरी विद्या प्रदान की। वहाँसे तीनो साथ चलकर काशीजी आये। मार्गमें भारतीजीने अष्टांग योगकी क्रियायें और जन्म संबन्धी निर्भ्रान्त ज्ञानकी गाथा बताई। कुछ दिन इनके आश्रम पर रहे, फिर पंचोलीजीके साथ पंचगंगा घाट पर आये। स्नान किया और नाव परसे सब घाटोंका दर्शन किया। अस्सी घाट पर सिद्ध समुदायसे समागम हुआ जिनके सहयोगसे नीचीबाग मुहल्लेके एक विघ्न भयसे तिरस्कृत मकानमें निवास हुआ। आपके नाना नानी आकर मिले। अब पंचोलीजी घर लौट गये। समाचार पाकर माता पिता और सभी ग्राम वासियोंको हर्ष शोक दोनों हुए। माताजी अपने पीहर (काशी) अगाई और अपनी मा के साथ आकर दर्शन कर गई। वह फाफामऊ वाला नाग कभी कभी रातमें यहाँ दिखाई पड जाता था।

एकदिन महर्षि ऋचीकजीने प्रातः काल दर्शन देकर कहा 'यह नाग तुम्हारा काल है, इससे बचनेका यही एक मार्ग है कि अपने गुरु रामभारतीजीसे परामर्श कर अनन्त श्रीआचार्यपाद स्वामी श्रीरामानन्दाचार्यजीकी शरण ग्रहण करो। आपने यह सब वृत्त श्रीराम भारतीजीसे कहा, भारतीजीने ध्यान करके देखा और कहा कल्ह हम दोनों चलेंगे और चरणोंमें उपस्थित हो धन्य धन्य होंगे। प्रातः काल श्रीमठ पहुँचकर ये दोनों साष्टांग करके बैठे ही थे कि वह सर्प भी वहां पहुँच गया। परदा हटा श्रीचरणोंके दर्शन हुए, सर्पने उद्धारकी भिक्षा मांगी सो उसको प्राप्त हुई। भारतीजीने कुमारको शरणमें लेकर दोनोंको कृतार्थ करनेकी प्रार्थना की। प्रार्थना स्वीकार हुई कुमार चन्द्रहरिको पंच संस्कार पूर्वक वैष्णवी दीक्षा प्रदानकी गई और सुखानन्दाचार्य नामकरण हुआ। भारतीजीको दिव्य ज्ञानकी प्राप्ति हुई, दोनों अब श्रीमठमें ही रह गये।

एकदिन श्रीसुखानन्दाचार्यजीकी माता और नानी श्रीमठपर आई, पहले तो पुत्र शोकाकुल हो कुछ प्रलाप करने लगी परन्तु फिर दिव्य शंख ध्वनी के द्वारा अज्ञानान्धकार नष्ट होजानेपर अनन्त श्रीआचार्यपादकी स्तुतिकर लौट गई।

इसके पश्चात श्रीमदाचार्य चरणकी आज्ञा हुई कि अब तुम दोनों चित्रकूट जाकर भजन करो। आज्ञानुसार दोनो रवाना होकर मार्गमें अनेकानेक बडभागी देव मुनि मनुष्योंको अपने दर्शन सत्संगसे कृतार्थ करते हुए चित्रकूट पहुँच श्रीराम शय्या स्थान पर बहुत दिन रहकर भजन किया एवं आगंतुक मुनिराज, तपस्वी बाबा, जालपा माता, बगदादके औलिया जमील साहब, दाक्षीणात्य श्रीवेदान्ताचार्यजी, यक्ष दम्पत्ति, निर्मली बाबा आदि आदि अनेकानेक महाभागोंको कृतार्थ किया, श्रीचित्रकूटकी परम दिव्य लीलाओंका अनुभव एवं आस्वादन किया और यहीं श्रीहनुमन्त लालजीकी ज्योतिमें विलीन हो गये। आपके गुणोंका वर्णन श्री नाभा स्वामीजीने छप्पैमें किया है आपकी पद रचना, गायन माधुरी, गौरी रागसे प्रेम, प्रेमामृत श्राव, भगवत् कथा में अगाधता, पूर्णचंद्रके समान विशाल भालकी दिव्य छाटा, भवभयहरण भक्ति प्रदानकरण भुजायें, तथा अपने थोडा भी संपर्क स्पर्श करने वालोंको पारसकी नाई दिव्य स्वर्ण बना देनेका स्वभाव विश्व विदित है।

(आचार्यपाद स्वामी श्रीसुरसुरानन्दाचार्यजीकी कथा)

मूल छ०—एक बार मग चलत आपने बरा[1] वाक्य छलपाये। देखा देखी शिष्य हु सो पाछे ते खाये॥ तिन पर स्वामी

१ बड़ा=पकोड़ा।

[1]खिझै वमन कर विन विश्वासी । तिन तैसी प्रत्यक्ष भूमिपर कीनी [2]राशी ॥ [3]सुरसरी सुवर पुनि [4]उद्गले पुष्परेणु तुलसी हरी । महिमा महाप्रसादकी सुर-सुरानंद साँची करी ॥६५॥

अति उदार दम्पत्ति त्यागि गृह बनको गमने । अचरज भो तहँ एक संत सुनि जनि [5]हो विमने ॥ बैठे हुते इकांत आय असुरन दुख दीयो । सुमिरे सरँग पाणि रूप [6]नाहर को कीयो ॥ सुर-सुरानंदकी घरनि को सत राख्यो सो खल [7]ज्ह्यो । [8]महासती सत ऊपमा, त्यों सत सुरसुरी को रह्यो ॥६६॥

स्वामी श्रीसुरसुरानन्दाचार्यजीके विषयमें भी श्रीप्रियादासजी कुछ न लिख सके अतः महाभागवत चरितके आधार पर ही संक्षेपमें लिखा जा रहा है ।

स्वामी श्रीसुरसुरानन्दाचार्यजीको अगस्त्य संहितादिमें देवर्षि श्री नारदजीका अवतार कहा गया है । आपका अवतार लखनऊके समीप, परखम नामक ग्राम निवासी पं० श्रीसुरेश्वर शर्माजीकी पत्नी श्रीसरला

१ वनराज हुए । २ ढेरी । ३ आपकी पत्नीका नाम है । ४ उगली । ५ दुखी । ६ प्रभुने सिंहका रूप बनाया । ७ मारा । ८ द्रौपदी ।

देवीजीकी कोखसे वैशाख कृष्ण ९, गुरुवारको हुआ था । आपका बालपनका नाम 'भायणकुमार पड़ा था ।

समय पर मुंडन कर्णवेध यज्ञोपवीतादि संस्कार होकर आप गायत्री मंत्रके पुरश्चरणमें लीन हो गये और अनेक वर्षों तक मंत्रानुष्ठान के पश्चात पूर्णाहुती कर काशीको रवाना हुए ।

आपके प्रायः सभी संस्कारोंके समय एक अज्ञात ब्राह्मण आते थे जो अपना नाम नारायण बताते तथा अपनेको कुमारके मामा कहते थे । इनको आते जाते कोई नहीं देखता केवल उत्सवसे सम्मिलित ही देखे जाते । कुमारको ये नारद कहा करते थे । काशी जाते समय ये भी आये थे और न जाने कुमार भायणके कानमें क्या कुछ कहकर चले गये थे ।

इनके घरके पड़ोसमें एक मातृ-पितृ हीन दरिद्र ब्राह्मण कन्या रहती थी जो आपके तपोनुष्ठानको देख मनही मन अपना तन मन न्योछावर किया करती थी । कुमारकी काशी जानेकी बात सुन ये भी इकेली ही काशीको रवाना हो गई और बहुत पहलेही वहाँ पहुँच गई । क्योंकि आपतो मार्गमें लोगोंको अपने दर्शन सत्संगसे आनन्द देते रुकते ठहरते कई दिनमें पहुँचे थे ।

पंचगंगा घाटपर स्नानकर आप जैसे ही श्रीमठ पहुँचे कि सत्संग बेला प्राप्त हो गई, अनायास ही अनन्त श्रीआचार्य चरणके दर्शन मिल गये, परिचय पूछा जाने पर पिताजीका नाम ठाम बताया और पूछा प्रभो जिनने प्रेरणाकर मुझे यहाँ भेजा वे नारायण नामक द्विज वर कौन हैं, जो मुझे नारद कहते थे और अत्यन्त कृपा किया करते थे ? श्रीमुखसे आज्ञा हुई कि तुम धैर्य धारण करो तुमको अपने आप इन सब रहस्योंका ज्ञान हो जायगा ।

दूसरे दिन सत्संग बेलामें जब सब लोग श्रीमठ पर जमा हो गये तब शंख ध्वनि हुई, जिसको सुनकर भायणजी तन्द्रादेवीकी गोदमें

पहुँच गये और अव्यक्त वाणी सुनने लगे, जैसे तो इन्हींको सम्बोधन करके कहा जा रहा है कि तुमने विवाहकी इच्छा की थी, उसमें विघ्न होनेसे तुमने शाप दे डाला था जिसको अंगीकार कर हमने जब नर लीलाकी तो तुमने आकर उपालंभ दिया उसी कर्म विपाकसे अब तुम्हारा जन्म हुआ है, इस समय तुम्हारी वे सब इच्छायें पूर्णकी जायगी। तुम सदासे हमारी शरणमें हो अतः डरो मत शीघ्र और सरलतापूर्वक सब कर्म भोग हो जायगा। यह वाणी सुन आप जैसेही होशमें आये कि उस सुरसुरी नामक द्विज कुमारीको श्रीमदाचार्य चरण में प्रणाम करते और 'सौभाग्यवती भव' आशीर्वाद मिलते देखा। कुमारीने प्रार्थना की कि प्रभो मैं तो परमार्थ भिक्षाके लिए उपस्थित हुई थी तब आज्ञा हुई कि सब होगा परंतु पतिके साथ।

कुमार भायण और कुमारी सुरसुरी दोनोंको श्रीमदाचार्यपादने पंच संस्कार पूर्वक वैष्णवी दीक्षा प्रदान कर कुमारको सुरसुरानन्द नाम प्रदान किया और कुमारीका पूर्व नाम ही रहा। दीक्षान्तमें दिव्य शंख ध्वनि हुई जिसके श्रवणसे इन दोनोंके अन्तर्पट खुल गये और अपने अपने पूर्व जन्मके सब चरित्र साकार होकर देख पडे। श्रीयतिराज राजने दोनोंको विवाहित हो एक साथ भजन करनेकी आज्ञादी और कहा छै महिने वासनारहित होकर एकाग्रचित्तसे भजन करना, इस बीचमें तुम्हारी अनेक परीक्षायें हो सकती हैं। श्रीअनन्तानन्दाचार्य स्वामीने एक श्रीभगवत्प्रसादी माला लाकर कुमारीके हाथमें दी और कुमारके गले में डाल देनेकी आज्ञा दी। कुमारीने कृत कृत्य हो वैसा ही किया।

गुरोराज्ञागरीयसी, श्रीमदाचार्यपादकी आज्ञाको शिरोधार्यकर दोनों स्वदेश आ गये, माता पिता और ग्रामीणोंके हर्षका पारावार न रहा, धूम धामसे विवाह हो गया और तुरन्त ही दम्पत्तिने वनको प्रस्थान कर दिया। पूर्वकी पराजयसे रिसाये कामदेवने अवसर पाकर मार्गमें

अपना ठाठ बाट लगाया। एक सुन्दर उद्यानमें परम मनोहर कुटी जो मुनि आश्रमोंकी सी होते हुए भी परम सुन्दर और सब भोग सामग्रीयों से सुसज्जित थी तथा जिसमें श्रीसुरसुरीजीके ही रूप रंग अवस्था और स्वभाव जैसी १६ सहचरियाँ थीं, उपस्थित कर दीं, परन्तु कामदेवकी एक न चली और यह नैष्ठिक ब्रह्मचारी दम्पत्ति ज्यों के त्यों निर्लेप निकल आये। इसके बाद वही चरित्र हैं जो श्रीभक्तमाल मूलमें आये हैं। कुछ कालके पश्चात् श्रीसुरसुरीजी परलोक पधार गई। आप श्रीमठमें आकर अनन्त श्रीयतिराज राजके चरणोंमें गिरे। और यही रहने लगे। एकबार आपने श्रीमदाचार्य चरणके सम्मुख १० प्रश्न किये जिनके उत्तर ग्रंथ रूपमें श्रीवैष्णवमताब्जभास्करके नामसे प्रसिद्ध हैं। श्रीअनन्तानन्दाचार्य स्वामीसे आपने श्रीमदाचार्यपाद प्रणीत प्रस्थानत्रयी भाष्य आदि ग्रंथोंका अध्ययन किया और फिर यवनोंके अत्याचारोंसे श्रीरंगम आदि के दाक्षिणात्य मन्दिरोंकी रक्षा की। पुनः आज्ञा होनेपर योगबलसे श्रीरंगम, तिरुपति बालाजी, शेषाचल आदिमें पहुँचकर मंदिर मर्यादाकी रक्षा की। मलिक काफूरको स्वप्नमें पैग-म्बरके दर्शन उपदेश प्राप्त कराकर कृतार्थ किया। पद्मनाभमें पाषाण गृहसे १०८ उपनिषदें निकलवाकर पद्मनाभ कांची और रंगममें पहुंचाई एवं लौट कर श्रीचरणोंमें उपस्थित हुए तथा अन्त समयमें श्रीअयोध्यापुरीमें धर्म प्रचार करते हुए लीला संवरण की।

(आचार्यपाद श्रीनरहर्यानन्दाचार्यस्वामीजीकी कथा)

मूल छ०—¹झर घर ²लकरी नाहिं शक्ति को सदन उजारै। शक्ति ³भक्त सों बोलि प्रतिदिनहि ³बरही डारै। लगो

१ वर्षाकी झडीमें। २ श्रीनरहरियानन्दजीसे कहकर। ३ लकडियोंका बोझा।

परोसिन हाँस भवानी [1]भ्वैं सो मारै।
[2]बदले की बेगार मूंड वाके सो डारै॥
[3]भरत प्रसंग ज्यों कालिका, [4]लडू देखि
तनमें तई। त्यों नरहरियानन्दको, कर
दाता दुर्गा भई॥६७॥

आचार्यपाद जगद्गुरु स्वामी श्रीनरहर्यानन्दाचार्यजीका चरित्र महाभागवत चरितमें विस्तारसे कहा गया है, उसीका संक्षिप्तरूप यहां दिया जाता है।

आप श्रीसनतकुमारके अवतार हैं और वृन्दावनके समीपके रहने वाले पं० महेश्वर मिश्रजीके यहाँ वरदान प्रदाता भवानीसे वैशाख शुक्ल ३ शुक्रवारको प्रकट हुए हैं। भगवती आपको प्रकटकर श्रीवृन्दावनकी केलि कुंजोंमें लुप्त हो गई। देवगणने आपका पालन किया एवं विन्ध्य क्षेत्रसे देवताओंके साथ आप उपनीत हो समित्पाणि विश्वनाथ पुरी वाराणसी श्रीमठमें श्रीअनन्तानन्दाचार्यजीके आसनके सम्मुख उपस्थित होकर दीक्षार्थ प्रार्थी हुए। साथके मानवरूप धारी देवगणने प्रार्थनाकी–प्रभो यह बालक आपका ही है, इसको अपनाया जाय। कुमारकी प्रार्थना और साथियोंके वचनोंको सुन समझकर आचार्यपाद श्रीअनन्तानन्दाचार्यजीने कहा मैं अनन्त श्रीआचार्य चरणमें आपलोगों का सब वृत्त निवेदन कर देता हूँ आपलोग बैठिये। इसी बीच दिव्य शंख निनाद हुआ जिसके द्वारा कुमार दिव्य दीक्षासे दीक्षित हो समाधिस्थ हो गये और वाह्य जगतसे बेहोश हो गये। जब होश हुआ तो सामने ही अनन्त श्रीयतिराज राजके दर्शन हुए और स्वामी

१ जमीन पीटने लगी। २ देवीने अपनी बेगार उसके मत्थे डाल दी। ३ श्रीमद्भागवतमें और ४ भक्तमाल मूल ९८ एवं टीका ४०४ में कथा है।

श्रीअनन्तानन्दाचार्यजीको आज्ञा हुई कि बालककी दिव्य दीक्षा हो चुकी है अब तुम पंच संस्कार पूर्वक श्रीवैष्णवी दीक्षा से दीक्षित करो। श्रीमदाचार्याज्ञा का पालन हुआ। आप दीक्षित हो वहीं रहने लगे और अल्प काल में हीं आपने वेदवेदांग दर्शन शास्त्र एवं भक्ति रहस्यों का अध्ययन करलिया।

कार्तिक मास में आकाश दीपक जलाते हुए एक कोकणदेश की ब्राह्मणी का लड़का ऊँचेबाँस से गंगाजी में गिर रहा था। ब्राह्मणी की चीख पुकार सुन आपकी दृष्टि उधर गई तों आपने अपने योग बल से उस को वहीं रोक दिया और फिर एक डलिया के द्वारा उतरवा लिया। यह समाचार सुनकर श्रीयतिराजराजने आपसे कहा--इस प्रकार से परोपकार कार्य तो अवश्य करणीय हैं परंतु सावधानी पूर्वक (उनमें कर्तृत्वाभिमान न हो)

एक दिन आप प्रभु रूपामृत का आस्वादन करते हुए बडे अंधेरे ही श्रीगंगा स्नान को चले गये। वहां एक सेठकी कन्या बैठी थी, संयोग वश आपका पैर फिसल कर गंगा जी में गिरने लगे तो लड़की ने उठकर सहारा दिया, आप तो नहीं गिरे परंतु वह लड़की फिसली और श्रीगंगाजी में गिर ही गई। आपने सूक्ष्म शरीर से गंगा में प्रवेश करके उसको बचाया। कलान्तर में जब उस कन्या के विवाह की बात चली तो उसने कहा जिस सन्त कुमार ने मेरे प्राण बचाये थे उसके ऊपर उसी समय मैं अपना तन मन न्योछावर कर चुकी हूँ। वे सन्त हैं, वे विवाह करलें यह असंभव है, अतः मैं आजीवन कुमारी रहकर भजन करूगी। उसने ऐसा ही किया।

एक बार श्रीमदाचार्यपाद की आज्ञा पा आप चित्रकूट चले, मार्ग में अलोपीदेवीके पास पहुँचते पहुँचते चातुर्मास आरंभ हो गया, प्रेमियों के द्वारा वहीं कुटी बनी और उसीमें चातुर्मास निवास हुआ। भक्तमाल में जो "भ्रर घर लकरी नाहिं" वाली कथा आई है वह इसी स्थल की है।

यहाँ चातुर्मासान्त में जब आपकी कथा विसर्जन हुई तो सभी नर नारियों ने आरती की। एक अलौकिक देवी ने भी आकर आरती की। उसके स्पर्श से वह थाल स्वर्ण का हो गया जिससे आरती की गई थी। आपके सामने जब चरचा आई तो आपने कहा वह थाल त्रिवेणी में फेंक दिया जाना चाहिये। एक व्यक्ति वह थाल अपने घर ले गया उससे कहा गया तो न माना तब उसके घर पर वह देवी प्रकट हो गई और अपना थाल लेकर त्रिवेणी में प्रविष्ट हो गई।

एक बार दिवाली के दिन कुछ जुआरियों को चमत्कार दिखाकर आपने उस कृत्य से छुड़ाया। उनने प्रतिज्ञा करली कि अब कभी जूआ नहीं खेलैंगे।

चित्रकूट पधार कर आपने जो दिव्य चरित्र किये--जैसे अलौकिक वृद्ध महात्मा एवं अनेकानेक योगी और योगिनियों का समागम, महर्षि अत्रि और माता अनुसूयाजी का दर्शन, दत्तात्रेयजी और भगवान शंकरजी का दर्शन, लखण जानकी सहित श्रीसरकार के दर्शन, श्रीशिवजी के द्वारा श्रीवाल्मीकि अवतार एवं मानस रामचरित का उपदेश, तदनुसार आपका हरिपुर गमन, बालक राम बोला (श्रीगोस्वामी तुलसीदासजी) की प्राप्ती, उपनयन शिक्षा दीक्षा वाराह क्षेत्र श्री अयोध्यापुरी आदि की यात्रा, कथा उपदेश, फिर काशी आकर अपने गृहस्थ श्रीगुरु भ्राता पं० श्रीशेष सनातनकी के यहां अध्ययनार्थ बालक को रख श्रीचित्रकूत्र पधार आना और वहीं पर अपनी लीला का संवरण करना विस्तार से वर्णित है, जिसका समावेश स्थानाभाव से यहा असंभव हैं और बहुत सी कथायें आगे श्रीगोस्वामीजी की कथा आदि में आभीरही हैं, उनकी पुनरावृत्ति अनावश्यक समझ यहां विस्तार न करके इस लेखको यहीं समाप्त किया जा रहा है।

(श्रीकबीरजी के कृपापात्र श्रीपद्मनाभजी की कथा)

मूल छ०—नाम महा निधि मंत्र नाम ही सेवा पूजा। जप तप तीरथ नाम नाम बिन और न दूजा॥ नाम प्रीति अरु बैर नाम कहे नामी बोलै। नाम अजामिल साखि नाम बन्धन ते खोलै॥ नाम अधिक रघुनाथते, राम निकट हनुमत कह्यो। कबीर कृपाते परम [1]तत, पद्मनाभ परचो लह्यो॥६८॥

काशी वासी साह भयो कोढी सो निबाहैं कैसे
परिगये कृमि चल्यो बूड़वेको भीर है।
निकसे पदम आय पूछी ढिंग जाय [2]गहि
कही देह खोलो [3]गुण, न्हाय गंगा नीर है॥
राम नाम कहे बार तीनमें नवीन होत
भयोई नवीन कियो भक्ति मति धीर है।
गये गुरु पास तुम महिमा न जानी अहो
[5]नामाभास काम करै, कही यों कबीर हो॥३११॥

(श्री तत्वाजी एवं जीवाजी की कथा)

मूल छ०—भक्ति सुधा जल [6]समुद भये

१ तत्व। २ भीड़। ३ पकडकर। ४ रस्सी। ५ नाम की छायामात्र। ६ समुद्र।

[1]बेलावलि गाढी। [2]पूरबजा की रीति प्रीति उतरोत्तर बाढी। रघुकुल सदृश स्वभाव [3]शिष्ट गुण सदा धर्म रत। शूर सुधीर उदार दया पर दक्ष [4]अनन व्रत। [5]पद्म खंड भक्तन पधति, प्रफुलित कर [6]सविता उदित। तत्वा जीवा दक्षिण दिशि, [7]वंशोद्धर राजत विदित ॥६९॥

तत्वा जीवा भाई उभै विप्र साधु सेवा प्रण
मन धरी बात ताते शिष्य नहीं भये हैं।
गाड्यो एक ठूँठ द्वार होय हरी [8]डार अहो
सन्त चरणामृत को लेके डारैं [9]नये हैं॥
जब सो हरित देखैं ताको गुरु करि लेखैं
गये श्री कबीर पूजी आश पाँव लये हैं।
नीठ नीठ नाम धाम दियो परिचय कोई
काम जो पै होय आओ काशी, कहि गये हैं ॥३१२॥
काना कानी भई द्विज कही जाति पाँति गई
न्यारे करि दये कोऊ बेटी नहीं लेत हैं।

१ मर्यादा। २ पूर्व दिशामें पड़ने वाली मध्यान्होत्तरकी छाया। ३ श्रेष्ठ। ४ अनन्य। ५ भक्तोंकी रीति रूपी कमल बन। ६ सूर्य। ७ वंश का उद्धार करनेवाले अथवा दक्षिण भारतके वंशोद्धर नामक ग्राममें। ८ टहनी। ९ यह नई बात है।

चले एक काशी जहाँ बसत कबीर धीर
जाय कही पीर जब पूछयो कौन [1]हेत है॥
तुम दोऊ भाई करो आपमें सगाई, होय
भक्ति सरसाई न घटाई चित चेत हैं।
आय वहै करी, परी ज्ञाति खरभरी, कहैं
कहा उर धरि कछु मति ह्व [2]अचेत हैं ॥३१३॥
करैं यही बात हमें और ना सुहात अब,
सभी हा हा खात कहैं छाँडि हठ दीजिये।
पूछवेको फेर गये, करो व्याह जो पै [3]नये,
दण्ड करि नाना भाँति भक्ति दृढ कीजिये॥
तब दई सुता लई [4]पाँतिन्ह प्रसन्न ह्वै के
प्रीति ह.र भक्तन सों सदा रस पीजिये।
विमुख समूह देख सम्मुख बड़ाई करैं
धरैं हिय माँझ कहैं नाम पर रीझिये ॥३१४॥

(श्रीमाधवदासजी की कथा)

मूलछ०—पहिले वेद [5]विभागि कथे पुराण अष्टादश। भारत भागवतादि मथे उद्धारयो हरि यश। अब शोधे सब ग्रन्थ अर्थ भाषा विस्तारे। लीला जय जय

१ प्रयोजन। २ बहकी हुई है क्या? ३ झुक गये हैं। ४ जाति वालोंने। ५ विभाग करके।

जयति गाय भव पार उतारे ॥ जगदीश इष्ट वैराग्य निधि, करुणारस भीज्यो हियो । [1]बहुरि व्यास मनो प्रकट ह्वै, जगको हित माधो कियो ॥७०॥

माधोदास द्विज निजतिया तनु त्याग दियो
लई इन जानि जग ऐसोइ [2]ब्योहार है ।
सुतके बढन [3]योग लियो नित चाहत हो
भई यह औरै लै दिखाई करतार है ॥
ताते तजि दियो गेह [4]वेही सब पालैं देह
करै अभिमान सोई जानिये गँवार है ।
आये [5]नीलगिरिधाम रहे परि सिन्धु तीर
अति मति धीर भूख प्यास ना विचार है ॥३१५॥

भये दिन तीन वेतो भूखके अधीन नाहीं
रहे हरि लीन प्रभु शोच परयो भारीये ।
दयो शैन भोग थार लक्ष्मी जू पधारी लैके
हाटक की थारी झन झन पाँव धारिये ॥
बैठे हे कुटी में पीठ दिये रूप रंग रंगे
बिजरी सी कौंध गई नीके न निहारिये ।
देखि सो प्रसाद मन बड़ो अह्लाद भयो
लयो भाग्यमानि पात्र धरयोई विचारिये ॥३१६॥

१ फिरसे । २ व्यवहार । ३ सहयोग । ४ भगवानही । ५ श्रीजगदीशपुरी ।

मंदिर किंवार खुले थार नहीं शोच परयो
करयो सो यतन ढूँढयो वाही ठौर पायो है ।
लाये बाँधि मारी बेंत धारी जगन्नाथ राय
भेद तब खुल्यो पीठ चिन्ह दरसायो है ॥
कही मैं ही दियो तब लियो वानै दोष कहा
मानि अपराध पाँव गहिकै क्षमायो है ।
भई यों प्रसिद्ध बात यश न समात कहूँ
सुनिकै लजात साधु शील यह गायो है ॥३१७॥

देखत स्वरूप सुधि तन की बिसरि जात
रहजात मन्दिर में जानैं नहीं कोई है ।
लाग्यो शीत गात सुनो बात प्रभु काँप उठे
दई [1]सकलात अति प्रीति हिय [2]भोई है ॥
लागे जब वेगि वेगि जाय परे सिन्धु तीर
चाहे जब नीर लियो [3]ठाढ़े देह धोई है ।
[4]करिके विचार ओ निहारि कही जाने में तो
देत हो अपार दुःख ईशता लै खोई है ॥३१८॥

१. मोटी रजाई=सौड । २. व्याप गई है । ३. प्रभु खड़े थे उनने शरीर धो दिया । ४. माधो दासजी ने विचार किया और प्रभु को देखकर कहा मैंने आपको जान लिया आप दासों को अपार दुःख देकर अपनी ईश्वरता छोड़ कर सेवा करते हो ।

[1]कहा करौं अहो मोपै रह्यो नहिं जात नेक
[2]मेटो व्यथा गात [3]मोको व्यथा बहु भारी है।
रहै भोग शेष और तनमें प्रवेश होय
ताते नहीं दूर करौं ईशता लै टारी है॥
वहू बात साँची याकी गाँस एक और सुनो
साधु को न हँसै कोउ ये हू मैं विचारी है।
देखत ही देखत मैं पीडा सो विलाय गई
नई नई कथा कहि भक्ति विसतारी है॥३१६॥
कीरति अभंग देखि भिक्षाको आरंभ कियो
दियो काहू बाई खीझि [4]पोतो सो चलाय के।
देखो गुण लियो नीके जलसों प्रक्षाल कर
करी दिव्य वाती दई दिये में वराय के॥
मंदिर उजारो भयो हियेको अँधेरो गयो
गयो फेर देखबेको परी पाँव आय के।
ऐसे हैं दयालु दुःख देतहू निहाल करैं
करैं नीके सेवा ताकों सकै कौन गाय के॥३२०॥
पंडित प्रबल एक भूमिजय करि आय
वचन सुनायो शास्त्रार्थ मोसों कीजिये।
दई लिखि हार काशी जायके निहारयो पत्र

१ भगवान ने कहा "क्या करूँ मुझसे दासों का दुःख देखकर रहा नहीं जाता।" २ माधोदासजी ने कहा "बिमारी ही मेट दो।" ३ प्रभुबोले इस में मुझे बडा दुःख यह है कि— ४ चूल्हा पोतने का कपडा।

[1]ख्वार अति भयो लिखी जीत वामें [2]खीझिये॥
फेर मिलों माधोजी सों वैसे ही हरावों और
[3]खर सो मगाय कहों चढो तब [4]धीजिये।
आयो आप स्नान गये आय [5]प्रभु वाद किये
लै चढायो खर [6]सोई पुरी सब रीझिये॥३२१॥
ब्रज ही की लीला सब गावैं नीलाचल माँझ
चाह भई जाय ब्रज नैनन निहारिये।
चले वृन्दावन मग लगै एक गाँव जहाँ
बाई भक्ता भोजन को लाई [7]चाह भारिये॥
बैठे ये प्रसाद लेन बाई दृग भरे अहो
कहो कहा बात दुःख हियेको उघारिये।
साँवरो कुमर यह कौन को चुराय लाये
माय कैसे जीहैं सुनि मति सो विसारिये॥३२२॥
चले और गाँव जहाँ महाजन भक्त रहै
गहे मग माँझ आय विनती सो करी है।
गये वाके घर वह गयो काहू और घर
भाव भरी तिया आय पाँयंन में परी है॥
ऊपर महन्त करैं पाक कही सन्त आये
कह्यो वे [8]समाई नहीं, आई [9]अरबरी है॥

१ हैरान। २ क्रोध किया। ३ गधा। ४ विश्वास हो। ५ भगवान ने शास्त्रार्थ किया। ६ उसीको। ७ उत्साह। ८ गुंजाइश। ९ घबडाई हुई।

कीजिये रसोई सिद्ध होय सोई लावो, दूध
नीके कै पिवायो नाम कहि भये [1]बरी है ॥३२३॥

गये आप पाछे भक्त आयो सो सुनायो नाम
सुनि [2]अभिराम दौरे संग सो महन्त है।
लिये जाय पाँय लपटाय सुख पाय मिले
भिले घर माँझ तिया धन्य तो सो कन्त है ॥

[3]सन्तपति बोले मैं अनन्त अपराध किये
[4]कही सेवो जीवन मैं [5]सीथ मानि [6]जन्त है।
[7]आवत मिलाप होय, राखो [8]यह बात गोय
आये वृन्दावन जहाँ सदा ही वसन्त है ॥३२४॥

देख देख वृन्दावन मन में मगन भये
गये श्री बिहारीजू के चना तहाँ पाये हैं।
कहि रह्यो द्वार पाल [9]नेक में प्रसाद लीजे
यमुना रसाल तट भोग सो [10]लगाये हैं ॥
नाना विधि पाक धरैं [11]स्वामी आप ध्यान करैं
बोले हरि भावैं नाहीं [12]वेही लै खवाये हैं।
पूछ्यो सो जनायो ढूंढि लायो आगे [13]गायो सब
तुमतो उदास लाला रस समझाये है ॥३२५॥

१ चले गये। २ आनन्दप्रद। ३ महन्तजी। ४ श्रीमाधोदासजी ने कहा। ५ संतोंकी जूठन। ६ यत्न। ७ लौटनेमें मिलैगे। ८ सीथ प्रसाद सेवनका उपदेश। ९ थोड़ी देरमें लालजीका प्रसाद मिलैगा। १० चने। ११ गुसाईंजी। १२ माधोदासजीने। १३ सब कह दिया।

गये ब्रज देखबेको भाँडीर में खेम रहे
खात रात [1]दुरा खीर कृमिले दिखाये हैं।
लीला सुनिबेको हरियाने ग्राम रहे जाय
गोबर हू पाथि पुनि नीलाचल धाये हैं ॥

घरहू को आये सुत सुखी सुन्यो मात वाणी
मारग में स्वप्न देके [2]वणिक मिलाये हैं।
याही भाँति नाना विधि चरित अपार जानो
जिते कछु जाने तिते गायके सुनाये हैं ॥३२६॥

(श्रीरघुनाथ गुसाईं जी की कथा)

मूल छ०-शीत लगत [3]सकलात विदित पुरुषोत्तम दीनो। शौच गये हरिसंग [4]क्रिया सेवक की कीनो। जगन्नाथ पद प्रीति निरन्तर करत खवासी। भगवत धर्म प्रधान मुदित नीलाचल वासी ॥ उत्कल प्रदेश जगदीशपुर, वैनतेय सब कोउ कहैं। रघुनाथ गुसाईं गरुड ज्यों, सिंहपौरि ठाढे रहैं ॥७१॥

अति अनुराग घर संपत्ति सों रह्यो पाग
ताहू करि त्याग नीलाचल कियो वास है।

१. छुपा २. उसी वैश्यसे। ३. मोटीरजाई। ४. कार्य।

धन सो पठावैं पिता सोंहू नहीं भावैं कछु
[1]देखवो सुहावै महा प्रभूजू के पास है ॥
मन्दिर के द्वार रूप सुन्दर निहारयो करैं
लाग्यो शीत गात सकलात दई दास है ।
शौच संग जायवे की रीति को प्रमाण वही
जैसे पूर्व कह्यो माधोदास सुखरास है ॥३२७॥
महाप्रभु कृष्ण चैतन्यजी की आज्ञा पाय
आये वृन्दावन राधा कुण्ड कियो वास है ।
रहनि कहनि रूप चहनि न कहि सकों
थके सुनि तन भाव रूप करि लियो है ॥
मानसी में पायो दूध भात [2]सरसात हिये
लियो रस नाड़ी देखि वैद्य कहि दियो है ।
कहाँ लों प्रताप कहौं आप ही समझ लेहु
देहु वही रीति जासों जाय आगे जियो है ॥३२८॥

(श्रीनित्यानन्द एवं श्रीचैतन्यदेव (गौरांग महाप्रभु) की कथा)

मूल छ०—गौड देश पाखण्ड मेटि कियो भजन परायण। करुणा सिंधु कृतज्ञ भये अगतिन गति दायन। दशधारस आक्रांति महत जन चरण उपासै। नाम लेय निष्पाप दुरित तिहि नरके नाशै ॥

१. दर्शन ही । २. प्रसन्न होकर ।

अवतार विदित पूरब मही, उभय महत देही धरी । नित्यानँद चैतन्य की, भक्ति दशों दिशि विस्तरी ॥७२॥

(स्वामी श्रीनित्यानन्दजीकी कथा)

आप बलदेव सदा वारुणी सो मत्त रहैं
चहैं मन मानों [1]प्रेम मत्तताई चाखिये ।
सोई नित्यानन्द प्रभु महन्त की देह धरी
भरी सब आनि पुनि तऊ अभिलाषिये ॥
भयो बोझ भारी क्योहू जात ना सँभारी जब
ठौर ठौर [2]पारषद माँझ धरि राखिये ।
कहत कहत और सुनत सुनत जाके
भये मतवारे बहु ग्रंथ दत साखिये ॥३२९॥

(गौरांग महाप्रभु श्रीकृष्णचैतन्यजीकी कथा)

गोपिनके अनुराग आगे आप हारे श्याम
जान्यो यह [3]लाल [4]रंग कैसे आवे तन में ।
ये तो सब गौर रंग नख शिख बनी ठनी
खुल्यो यों सुरंग अंग अंग रंगे बन में ॥
श्यामताई माझ सों ललाई हू समावे जासे
तासे मेरे जान फिर आई यह मन में ॥

१ प्रेमोन्मत्तता । २ समीपवर्ती । ३ भगवान । ४ प्रेम रंग ।

यशुमति सुत श्याम शची सुत गौर भये
नये नये नेह चोज नाचे भक्त गण में ॥३३०॥
आवे कभूँ प्रेम [1]हेमपिंडवत देह होत
कभूँ सन्धि सन्धि छूटि अंग बढि जात हैं।
और एक न्यारी रीति अश्रु पिचकारी मानो
उभे लाल प्यारी भवसागर समात हैं॥
ईशता बखान कहा करौं जू प्रमाण याको
जगन्नाथ क्षेत्र सब लख्यो साक्षात हैं।
चतुर्भुज षडभुज रूपले दिखाय दियो
कियो जो अनूप हित बात पातपात हैं॥३३१॥
कृष्ण चैतन्य नाम जगत प्रकट भयो
अति अभिराम लै महन्त देही करी है।
जितौ गौडदेश भक्ति लेश हू न जानें कोऊ
सोऊ प्रेम सागर में बोर्यो कहि हरि है॥
भये शिरमौर एक एक जग तारिबे को
धारिबे को भक्ति साखी पोथिन में धरी है।
कोटि कोटि अजामील दारि डारें ऐसे दुष्ट
तिनहुँ मगन किये भूमि भक्ति भरी है॥३३२॥

श्रीगौरांग चरित्र के संस्कृत और बंगला भाषा में अनेक ग्रंथ हैं हिन्दीमें भी ब्रह्मचारी श्रीप्रभुदत्तजी द्वारा लिखित महाविशाल ग्रंथ गीता प्रेस गोरखपुर से प्राप्त हैं वे सब प्रेमियोंको परम द्रष्टव्य है।

[1] सोने के डले जैसी।

(महाकवि श्रीसूरदासजीकी कथा)

मूल छ०—उक्ति चौज अनुप्रास वर्ण अस्थिति अतिभारी। वचन प्रीति निर्वाहि अर्थ अद्भुत तुकधारी। प्रति विंवित दिवि दृष्टि हृदय हरि लीला भासी। जन्म कर्म गुण रूप सबहि रसना परकासी॥ विमल बुद्धि हो तासुकी, जो यह गुण श्रवणनि धरै। सूर कवित सुनि कौन कवि, जो नहिं शिर चालन करै॥७३॥

श्री वल्लभ संप्रदाय की ८४ वैष्णवन की वारता नामक ग्रंथ के आधार पर श्री सूरदास जी की संक्षिप्त कथा दी जा रही है।

श्री सूरदास जी के माता पिता कुल जन्म स्थान आदि का पता नहीं लगता। आप आचार्य महाप्रभु श्री वल्लभाचार्य जी के शिष्य थे। स्वामी श्री वल्लभाचार्य जी अडेल नामक स्थान से जब व्रज भूमि आये तब मार्ग में गऊ घाट पर विश्राम हुआ। श्री सूरदासजी गऊ घाट पर ही रहते थे, सूर (अन्धे) ही थे, पद रचना और गायन में प्रसिद्धी प्राप्त कर चुके थे। श्री वल्लभाचार्य स्वामी जी को श्री सूरदास जी के प्रेमियों से मालूम हुआ तब आपने बुलाने का विचार किया, इधर सूरदास जी को भी श्री वल्लभाचार्य जी के प्रभाव और पधारने के समाचार मिले तो मध्यान्होत्तर में आचार्य चरण में समुपस्थि हुए और आज्ञा पाकर दीन भाव के स्वरचित पद

गाकर सुनाये। प्रसन्न हो श्री आचार्य महाप्रभु जी ने सूरदास जी के वैष्णव संस्कार कर स्वरचित श्रीमद्भागवत की व्याख्या सहित दशमस्कन्ध की अनुक्रमणिका समझाकर श्री भगवल्लीला गान करने की आज्ञा दी, तदनुसार आपने श्री कृष्ण लीला गान की। श्रीआचार्य-महा प्रभु ने अत्यन्त प्रसन्न हो श्री सूरदास जी को अपने साथ ही ले लिया और श्री सूरदास जी अब गोवर्धन गोकुल आदि में श्री आचार्य-चरणों के साथ रहने लगे और अन्त समय में परासोली आकर श्री नाथजी की ध्वजा के समीप शरीर परित्याग कर परधाम पधारे।

श्रीसूरदासजीकी कुछ अन्य साहित्यिक रचनाएँ भी हैं और प्रायः समस्त श्रीमद्भागवत का विषय आपने सवालाख पदों में वर्णन किया है जिस ग्रन्थ का नाम सूरसागर है। इसके जो पद प्राप्त हैं वे अनेकानेक प्रकाशकों द्वारा प्रकाशित हो चुके हैं और सर्वत्र प्राप्त हैं बाकी के पद अप्राप्य है।

श्रीसूरदासजी श्रीनाथद्वार से अन्यत्र होते तब भी कीर्तन के समय पर मन्दिर में कीर्तन करते हुए श्रीवल्लभाचार्यजी को दृष्टिगोचर होते थे। जब सूरदासजीका अन्तिम समय आया तो कीर्तन करते नहीं देख पड़े तब श्रीवल्लभाचार्यजी ने यह जानकर कि सूरदासका शरीर अब छूटना ही चाहता है, समुपस्थित प्रेमियों को परासोली जाकर सूरदासजी के दर्शन करने की आज्ञा दी और शीघ्र ही स्वयं भी पधारे। परासोली पहुँच आपने सूरदासजी को दर्शन देकर कृतार्थ किया और उनकी मनोभावना विषयक प्रश्न किये जिनके समुचित उत्तर सूरदासजी ने उस समय भी पदों के रूप में ही निवेदन किये और आचार्य अनुग्रह को पाकर नित्य लीलामें पधार गये।

(श्रीपरमानन्ददासजीकी कथा)

मूल ७०—पौगँड बाल किशोर गोप लीला सब गाई। अचरज का यह बात

हुतो पहिलो जु सखाई। नैनन नीर प्रवाह रहत रोमांच रैन दिन। गद्गद् गिरा उदार श्याम शोभा भीज्यो तन॥ सारंग छाप ताकी भई, श्रवण सुनत आवेश प्रद। ब्रज वधू रीति कलियुग विषै-परमानँद भयो प्रेमहद ॥७४॥

श्रीपरमानन्ददासजी आनन्द कंद भगवान श्रीकृष्णचन्द्रजी के नित्य सखा हैं, जीवो के उद्धारार्थ ही अवतरित हुए हैं। मूल में श्रीनाभास्वामीजी ने भी आपको नित्य सखा कहा है। आपका जन्म कन्नौज नगर में कान्यकुब्ज द्विज कुल में हुआ है आप परमोत्तम कवि और गायक थे।

श्रीपरमानन्ददासजी कन्नौज से प्रयाग गये उस समय स्वामी श्रीवल्लभाचार्यजी अडेल ग्राम में विराजते थे। परमानन्ददासजी के हरिगुण गान की प्रशंसा से आकर्षित हो आचार्य महाप्रभुके जल-घड़िया श्रीकपूर छत्रीजी ने एक रात्री में प्रयाग जाकर कीर्तन श्रवण किया और .श्रीजलघडियाजी की गोदी में विराजमान श्रीठाकुरजी ने भी कीर्तन सुना।

जलघड़ियाजी के लौट जाने पर श्रीपरमानन्ददासजी को स्वप्न में जल घड़ियाजी की गोदी .में विराजमान होकर पद सुनते हुए श्रीनवनीतप्रियाजी का दर्शन और आदेश प्राप्त हुआ। जागनेपर श्रीपरमानन्दजी को श्रीनवनीतप्रियाजीके दर्शनों की उग्र उत्कंठा हुई और दर्शन की प्राप्ति को वे श्रीजलघड़ियाजी की कृपा साध्य समझ अडेल ग्राम में आकर इनसे मिले। परमानन्दजी ने जाकर जब

श्रीवल्लभाचार्य स्वामीजी के दर्शन किये तो इनको आचार्य रूप में साक्षात् भगवान श्रीकृष्णके दर्शन हुए। आचार्याज्ञा पा आपने विरह के पद गाकर सुनाये तब आज्ञा मिली कि बाललीला कहो। परमानन्दजीने विनय की प्रभो! मैं प्रभु की लीलाओं को समझता नहीं हूँ। श्रीआचार्यपाद ने स्नान करके आनेकी आज्ञा दी। परमानन्दजी जब स्नान करके आये तो आपने श्रीभगवच्छरणागति (मंत्रोपदेश और ब्रह्म संबंध पुष्टि) प्रदान की। श्रीमद्भागवत की अनुक्रमणिका का उपदेश किया जिससे आपको संयोग लीला की स्फूर्ति हो गई तब आपने भी सवालक्षपद रचना की जिसका नाम परमानन्द सागर प्रसिद्ध है। आप भी श्रीआचार्य महाप्रभु के साथ व्रज में आ गये।

एक वार श्रीआचार्यपाद को आपके द्वारा "हरि तेरी लीला की सुधि आवै" पद श्रवण कर तीन दिन तक मूर्छावस्था रही तब से श्रीपरमानन्ददासजी ने आचार्य सन्निधि में ऐसे विरहके पद नहीं गाये और प्यारे की ललित लीलाओं का गान करते रहे।

(श्रीकेशव काश्मीरीजी कथा)

मूल छ०—कश्मीरीकी छाप पाप तापन जन मण्डन। दृढ हरि भक्ति कुठार अधमंन विटप विहंडन। मथुरा मध्य मलेच्छ वाद करि बरवट जीते। काजी अजित अनेक देखि परचे भयभीते॥ विदित बात संसार सब, सन्त साखि नाहिन दुरी। केशव भट नर मुकुट मणि, जिनकी महिमा विस्तरी॥७५॥

कीन्ही दिगविजै सब पंडित हराय दिये
लिये बडे बडे जीति भीति उपजाई है।
फिरत [1]चंडोल चढे गज बाजि लोल संग
प्रतिभा की नदी आय [2]नदिया बहाई है॥
डरे द्विज भारी महा प्रभुजू विचारी तब
लीला विसतारी गंगा तीर सुखदाई है।
बैठे ढिंग आय बोले नम्रता जनाय रह्यो
जग यश छाय नेकु सुनों मनभाई है॥३३३॥
लरकन संग पढो बात बडी बडी गढो
तोपै [3]रढो कहो जोई कहैं जापै [4]रीझिये।
गंगा को स्वरूप कहो चाहो द्रुत आगे सोई
नये शतश्लोक किये सुनि मति भीजिये॥
तामें एक कंठ करि पढके सुनायो अहो
बडी अभिलाषा याकी व्याख्या करि दीजिये।
अचरज भारी भयो कैसे तुम सीख लयो
तुमहीं प्रभाव दियो [5]सोई यहै कीजिये॥३३४॥
दूषण औ भूषणहू कीजिये बखान याके
सुनि दुःख मानि कही दोष कहाँ पाइये।
कवित्त प्रबन्ध मध्य रहै खोटी गंध अहो
आज्ञा मोको देहु कह्यो कहिके सुनाइये॥

१ पालकी। २ नवद्वीप। ३ हट करते हो। ४ प्रसन्न हों। ५ उन्होंने यह भी किया है।

व्याख्या करि दई नई औगुण ओ गुण मई
आए निज धाम भोर मिले समझाइये।
सरस्वती ध्यान कियो आई ततकाल बोले
बालपै हरायो सब जगत जिताइये ॥३३५॥

बोली सरस्वती मेरे ईश भगवान वे तो
[1]मान मेरो कहा सनमुख बतराइए।
भयो दरशन तुम्हें मन परसन होत
सुनि सुख श्रोत वाणी आए प्रभु पाइए॥

विनै बहु करि कृपा करि आप बोले अजू
भक्ति फल लीजे काहू भूलि ना हराइए।
हिए धरि लई भीड भाड छांड दई पुनि
नई दुष्टताई सुनि दुष्ट मरवाइए॥३३६॥

आए काशमीर सुनि बसत त्रिश्राम तीर
तुरक समूह द्वार यंत्र एक धारिए।
सहज सुभाय कोऊ निकसत आय ताको
पकरत जाय ताके सुन्नत निहारिए॥

संग लै हजार शिष्य भरे भक्ति रंग महा
अरे वाही ठौर बोले नीच पट टारिए।
क्रोध भरि [2]झारे आप सूबा पै पुकारे वे तो
देखि सब हारे मारे जल बोरि डारिए॥३३७॥

१ शक्ति। २ फटकारे=धमकाये।

(श्री श्रीभट्टजीकी कथा)

मूल छ०—मधुर भाव रस मिलित ललित लीला सु वलित छवि। निरखत हर्षत हृदय प्रेम वर्षत सु कलित कवि॥ भव निस्तारन हेत देत दृढ भक्ति सवन नित। जासु सुयश शशि उदय हरत अति तम भ्रम श्रम चित॥ आनन्दकद श्रीनन्द सुत, श्रीवृषभानु सुता भजन। श्रीभट्ट सुभट प्रकट्यो अघट, रस रसिकन मन मोद घन॥७६॥

(श्रीहरिव्यासदेवजीकी कथा)

मूल छ०—खेचर नरकी शिष्य निपट अचरज यह आवै। विदित बात संसार सन्त मुख कीरति गावै॥ वैरागिन के वृन्द रहत सँग श्याम सनेही। नव योगेश्वर मध्य मनों शोभत वैदेही॥ श्री भट्ट चरण रज स्पर्शते, सकल सृष्टि जिनकी नई। हरिदास तेज हरि भजन के, देवी को दीक्षा दई॥७७॥

ग्राम चटथावल बाग देखि अनुराग भो
लियो नित्यनेमकरि चहै पाक कीजिये।
देवीको अस्थान काहू बकरा ले मारयो आय
देखत गलानि भई पानी नहीं पीजिये ॥
भूखे निशिभई भक्ति तेज नमि गई देवी
नई देह लई, आई लखिमति भीजिये।
[1]करोजू रसोई, कौन करे[2] कछु औरें भोई
दीजे जू [3]प्रसाद मोको शिष्या करि लीजिये ॥३३८॥
करी देवी शिष्या पुनि नगरको [4]खटकी [5]सो
पटकी लै खाट ताकी बडो सरदार है।
चढि छाती बोली मैं तो भई हरिव्यास दासी
जो न दास होय तो मैं अभी डारौं मार है ॥
आये सब भृत्य भये मानो नये तन लये
गये दुःख पाप ताप किये भव पार है।
केऊ दिन रहे नाना भोग सुख लये एक
श्रद्धा कै स्वपच आयो पायो [6]भक्तिसार है ॥३३९॥

(श्रीदिवाकरजी की कथा)

मूल छ०—उपदेशे नृपसिंह रहत नित

१ देवी ने कहा रसोई करो। २ आप ने कहा रसोई कौन करे यहाँ तो और ही बात समाई है ३ देवीने कहा रसोई कर भोग लगा मुझे भी भगवानका प्रसाद दीजिये और अपनी शिष्या बना लीजिये। ४ दौड गई। ५ देवी। ६ भक्तिका सार=भगवान का नाम।

आज्ञाकारी। [1]पक्व वृक्ष ज्यों नमित
सन्त पोषक उपकारी ॥ [2]वाणी भोला
राम सुहृद सबहिन पर छाया। भक्त
चरण रज याचि विषद रघुवर गुण
गाया ॥ [3]करमचन्द कश्यप सदन, बहुरि
आय मनो वपुधरयो। अज्ञान ध्वान्त
अन्तहि करण, द्वितिज दिवाकर
अवतरयो ॥७८॥

(गोस्वामी श्रीविट्ठलनाथजीकी कथा)

मूल छ०—राग भोग नित विविध रहत
परिचर्या तत्पर। शय्या भूषण बसन
रचत रचना अपने कर ॥ वह गोकुल
वह नन्द सदन दीक्षित को सोहै।
प्रकट विभव जहँ [4]घोष देखि सुरपति
मन मोहै ॥ वल्लभ सुत बल भजन के,
कलियुग में द्वापर कियो। विट्ठलनाथ

१ पके हुए फलो से लदे वृक्षकी तरह से झुके हुए। २ कविता में भोला राम नाम रखते थे। ३ पिताजी का नाम है। ४ गौशाला।

[1]ब्रजराजज्यों, लाल लडायके सुख लियो ॥७९॥

(श्रीत्रिपुरदासजी जायस्थकी कथा)

कायथ त्रिपुरदास भक्ति सुखराशि भर्यो
करयो ऐसो प्रण शीत दगला पठाइये।
निपट अमोल पट हिये [2]हित जटि आवै
ताते अति भावै नाथ अँग पहिराइये॥
आयो कोऊ काल [3]नरपतिने [4]बिहाल कियो
भयो ईश ख्याल नेक घरमें न पाइये।
वही ऋतु आये सुधि आई आँख पानी भरे
आई एक [5]द्वात दीठ याही बेच लाइये॥३४०॥
बेचके बजार यों रुपैया एक पायो ताको
लायो मोटोथान मात्र रंग लाल गाइये।
भीज्यो अनुराग हियो नैन जलधार भीजे
भीज्यो दीनता [6]सो धरि राख्यो [7]और आइये॥
कोऊ प्रभु जन आये सहज दिखाय दयी
भाई मन दियो लै भंडारी पकराइये।
काहू दास दासी के न कामको पै जाहु लैके
विनती हमारी जू गुसाँई न सुनाइये॥३४१॥

१ नन्दरायजी की तरह से। २ हृदयके प्रेम से जडकर। ३ राजाने ४ परेशान। ५ दवात=मसिपात्र। ६ वह छींटियों का थान। ७ दूसरे वैष्णव।

दियो लै भंडारीकर राखे धरि पट वापै
निपट सनेही नाथ बोले अकुलायके।
भये हैं [1]जडाने कोई बेगही उपाय करो
विविध उढाये अंग वसन सुहायके॥
आज्ञा पुनि दई सो अंगीठी बारि दई फेर
[2]वही भई सुनि रहे अतिही लजायके।
सेवक बुलाय कही कौन की जराय आई
सब सो सुनाई एक वही ली बचाय के॥३४२॥
सुन्यो न त्रिपुरदास बोल्यो धन नाश भयो
मोटो एक थान आयो राख्यो है बिछायके।
लावो वेग याही क्षण मन भी प्रवीण जानी
लाये दुःख मानि ब्योंत लई सो सिमायके॥
अंग पहिराई सुखदाई कापै जात गाई
कही तब बात जाडो गयो भरमायके।
[3]नेह सरसाई ले दिखाई उर आई सबै
ऐसी [4]रसिकाई हृदे राखिये बसायके॥३४३॥

(गोस्वामी विट्ठलनाथजीके ७ पुत्रोंकी कथा)

मूल छ०—श्री गिरिधरजू सरस शील गोविन्द जु साथहि। बालकृष्ण यश वीर धीर श्रीगोकुल नाथहि। श्रीरघुनाथ

१ ठंडसे परेशान २ वही आज्ञा। ३ प्रेम का रस। ४ रसज्ञता।

जु महाराज श्रीयदुनाथहिं भजि। श्री घनश्यामजु पगे प्रभू अनुरागी सुधि सजि॥ ये सात प्रकट [1]विभु भजन जग तारन [2]तस यश गाइये॥ श्रीविठ्ठलेश सुत सुहृद श्रीगोबर्धनधर ध्याइये॥८०॥

(श्रीकृष्णदासजीकी कथा)

मूल छ०—श्रीवल्लभ गुरुदत्त भजन सागर गुण आगर। कवित नोंख निर्दोष नाथ सेवा में नागर॥ वाणी वन्दित विबुध सुयश गोपाल अलंकृत। ब्रजरज अति आराध्य सोई धारी सर्वसचित।। सांनिध्य सदा हरिदास वर, गौर श्याम दृढ व्रत लियो। गिरिधरण रीझि कृष्णदास को, नाम माहिं साझो दियो॥८१॥

प्रेम रस राशि कृष्ण दासजू प्रकाश कियो
लियो [3]नाथ मानि सो प्रमाण जग गाइये।
दिल्लीके बजार माँहि जलेबा निहारी नैन
भोग सो लगाई [4]लागी विद्यमान पाइये॥

१ अवतार। २ वैसे ही=अवतारों के ही समान। ३ भगवान श्री नाथजी। ४ भोग लगी हुई मंदिर में उपस्थित मिली।

राग सुनि [1]वेश्याको भये सो अनुराग वश
कही शशीमुखी लालजीको जा सुनाइये।
देखि रिझवार रीझी, निकट बुलाय लई
लई संग चले, तजि लाज औ बडाइये॥३४४॥
नीके अन्हवाय पट आभरण पहिराय
सोंधौ हू लगाय हरि मन्दिर में लाये हैं।
देखि भई मतवारी कीन्ही सो अलाप चारी
कह्यो लाल देखे, कही देखे मोहि भाये हैं॥
नृत्य गान तान भाव भरि मुस्कान दृग
रूप लपटान नाथ निपट रिझाये हैं।
ह्वै के तदाकार तन छूट्यो अंगीकार करी
धरी उर प्रीति मन सबके भिजाये हैं॥३४५॥
आये सूरदास पास कही बडे [2]नागर हो
कोई पद गाओ मेरी छाया ना मिलाइये।
गाये पाँच सात सुनि जानि मुसकात कही
भलेजू प्रभात आय फेरिके सुनाइये॥
परयो शोच भारी गिरिधारी उरधारी बात
सुन्दर बनाय सेज धरयो सो लखाइये।
आय के सुनायो सुख पायो सो बतायो
तिन पक्षपात मान्यो रंग छायो प्रभू गाइये॥३४६॥
कूआमें खिसकि देह छूट गई, नई भई

१ वेश्या। २ चतुर।

कछु [1]सो आशंका और जनमन आई है।
रसिकन मन दुःख जानि [2]सो सुजान नाथ
दियो दरसाय तन ग्वाल सुखदाई है॥
गोवर्धन [3]तीर कही आगे बलबीर गये
श्रीगुसाई धीर सों प्रणाम यों जनाई है।
धनहू बतायो खोदि पायो विसवास आयो
हिये सुख छायो शंक पंक लै बहाई है॥३४७॥

(श्रीभीष्म भट्ट सुत वर्धमान मंगलजीकी कथा)

मूल छं०—श्रीभागवत बखानि अमृतमय नदी बहाई। अमल करी सब अवनि ताप हारक सुखदाई। भक्तन सों अनुराग दीन पर परमदया कर। भजन यशोदानन्द सन्त संघट के अगार॥ भीष्मभट्ट अंगज उदार, कलियुग दाता सुगति के। वर्धमान गंगल गंभीर, [4]उभय [5]थम्भ हरि भगति के॥८२॥

(श्रीक्षेम गुसाईंजीकी कथा)

मूल छं० रघुनन्दन को दास प्रकट भूमंडल जानै। सरबस सीताराम और कछु

१ अकाल मृत्युको। २ भगवान। ३ पास। ४ दोनों। ५ स्तम्भ।

डर नहिं आनै॥ धनुष बाण सों प्रीति स्वामिके आयुध प्यारे। निकट निरं, तर रहत होत कबहूँ नहिं न्यारे॥ शूर धीर हनुमत सदृश, परम उपासक प्रेमभर। रामदास परतापते, क्षेमगुसाईं क्षेम कर॥८३॥

(श्रीविट्ठलदासजी चौबेकी कथा)

मूल छं०—तिलक दामसों प्रीति गुणहि गुण अन्तर धारयो। भक्तन को उत्कर्ष जनम भर [1]रसन उचारयो॥ सरल हृदय संतोष जहाँ तहँ पर उपकारी। उत्सव में सुतदान कर्म कियो दुष्कर भारी॥ हरि गोविंद जय जय गोविंद, गिरा सदा आनंददा। विट्ठलदास माथुर मुकुट, भयो अमानी मानदा॥८४॥

भाई उभै माथुर सो रानाके पुरोहित रहे
लरि मरे आपसमें जियो एक [2]जाम है।
ताको सुत विट्ठल सो दास सुख राशि हिये
लाये वैस थोरो भयो बडो सेवै श्याम है॥

१. रसना=वाणीसे। २ पुत्र।

बोल्यो नृप सभा मध्य आवत न विप्र सुत
क्षिप्र लैके आओ, [1]कह्यो, [2]कही पूजे काम है।
फेरिके बुलायो करो जागरण याही ठौर
काहू समझायो नाचे गावे प्रेमधाम है॥३४८॥
गये सब साधु मिलि विनै रंग रँगे सब
राना उठि आदर दे नीके पधराये हैं।
किये जा विछोना तीन [3]छातनके ऊपर लै
नाच गान आयो प्रेम गिरे नीचे आये हैं॥
राजा मुख भयो श्वेत दुष्टन को गारी देत
सन्त भरि अंक तिन्हें घर मध्य लाये हैं।
भूप बहु भेट करी देह वाही भाँति परी
पाछे सुधि आई दिन तीसरे जगाये हैं॥३४९॥
उठे तब माता ने जनाय सब बात कही
सही नहीं जात [4]निशि निकसे विचारिके।
आये यों [5]छटीकरा में गरुड गोविन्द सेवा
करत रहत हिये मगन निहारि के।
राजा के जो लोग सो तो ढूंढकर रहे बैठि
तिया माता आई करै रुदन पुकारिके।
किये ले उपाय रही किती हाहा खाय आप
रहे मँडराय तब [6]वसी मन हारि के॥३५०॥

१ विट्ठलदासजीसे कहा। २ उनने कहा मेरी कामना पूर्ण हो गई मुझे राजासे कुछ नहीं चाहिए। ३ मंजिल। ४ रातमें घर छोड़ निकल पड़े। ५ व्रजका एक ग्राम। ६ वहीं बस गई।

देख्यो जब कष्ट तन प्रभु जू सपन दियो
जाओ मधुपुरी ऐसे तीन बार भाषिये।
आये यहाँ जाति पाँति छायो कछु औरै रंग
देख्यो एक [1]खाती साधु संग अभिलाषिये।
तिया रही गर्भवती सती मती शोच रत
खोदत भू पाई प्रतिमा औ धन राखिये।
खाती सों बुलाय कही काढि यहि लेओ तुम
उन पाँय परि कह्यो रूप सुख चाखिये॥३५१॥
करै सेवा पूजा और काम नहीं दूजा जब
फैलगई भक्ति भये शिष्य बहु भायके।
बडोही समाज होत मानो सिंधु सोत आयो
विविध बधायो गुणीजन उठे गायके॥
आई एक नटी गुण रूप धन जटी अहो
गावे तान कटी चट पटी सो लगाय के।
दिये पट भूषण ले भूख न मिटत [2]देन
चहुँ दिशि हेरि पुत्र दियो अकुलाय के॥३५२॥
रंगीराय नाम ताकी शिष्या एक राना सुता
भयो दुःख भारी नेक जलहू न पीजिये।
कहिके पठाई वासों चाहे सोही लीजे धन
मेरे प्रभु रूप मेरे नैनन को दीजिये।
द्रव्य तो न चाहों रीझि चाहों तन मन दियो

१ बढ़ई। २ देनेकी।

फेर के समाज कियो विनती सो कीजिये।
जिते गुणीजन तिन्हें दीन्हे अनगिन दाम
पाछे नृत्य कियो आप देत सो न लीजिये ॥३५३॥
लाई एक डोला में बैठाय रंगी रायजी को
सुन्दर शृंगारि कही बारी तेरी आई है।
कियो नृत्य भारी जो विभूति सोनो वारी सब
भरि अँकवारि भेट कियो द्वार लाइये ॥
मोहन निछावर में भयो मोहि लेहु मति
लियो उठि शिष्य तन तज्यो कहा पाइये।
कह्यो जू चरित्र बडे रसिक विचित्रन कों
जो पै लाल मित्र किये चाहो हिये लाइये ॥३५४॥

(श्री हठीले हरिराम जीकी कथा)

मूल छ०—उग्रसुतेज उदार सुघर सुघराई सीवा। प्रेम पुंज रस राशि सदा गद्गद स्वर ग्रीवा। भक्तन को अपराध करै ताको फल गायो। हिरण कशिपु प्रहलाद प्रकट दृष्टांत दिखायो॥ सस्फुट वक्ता जगतमें, राजसभा निधरक हियो। हरिराम हटीले भजन बल, राणाको उत्तर दियो ॥८५॥

राणा सों सनेह सदा चोपर सो खेल्यो करें
सन्यासी एक भूमि सन्त कर छिनाई है।
जायके पुकारयो साधु [1]भिरकि बिडारयो, परयो
विमुखके वश बात साँच ले झुटाई है॥
आये हरि रामजी पै सबरी सुनाई रीति
प्रीति करि बोले चले आगे, आओ भाई है।
गये बैठि, आयो जन, मन में न लायो नृप,
तब समझायो झारयो, फेर भू दिवाई है ॥३५५॥

(श्री कमलाकर भट्टजी की कथा)

मूल छ०—पंडित कला प्रवीण अधिक आदर दें आरज। संप्रदाय शिर छत्र द्वितिय मानों माध्वाचारज। जेते हरि अवतार सबै पूरण करि जानै। [2]परिपाटी [3]ध्वजविजय सदृश भागवत बखाने॥ श्रुति पुराण सम्मत सुस्मृति, तापित मुद्राधरि भुजा। कमलाकर भट जगतमें, तत्ववाद रोपी [4]धुजा ॥८६॥

(श्री नारायण भट्टजी की कथा)

मूल छ०—मथुरा मण्डल गोप्यस्थल

१ धमका दिया। २ रीति। ३ विजय ध्वज = जीत का झंडा फहराते हुए। ४ ध्वजा=झंडा।

[1]बाराह बखाने। किय नारायण प्रकट प्रसिध पृथ्वी सो जाने। भक्ति सुधाको सिन्धु सदा सत्संग समाजन। परम रसज्ञ अनन्य कृष्ण लीलाको भाजन॥ ज्ञान स्मारत पक्षको, खंडन कोउ नाहीं [2]वियो। ब्रज भूमि उपासक भट्ट सो, [3]रचिपचि हरि एके कियो॥८७॥

भट्ट श्री नरायण जी भये ब्रज पारायण
जाही ग्राम जावैं तहाँ व्रत करि ध्यावैं हैं।
बोलिके दिखावैं यहाँ अमुक स्वरुप हैं जी
लीला कुंड जाय श्याम प्रकट दिखावैं हैं॥
ठौर ठौर रास के विलास सो प्रकट किये
जिये यों रसिक जन कोटि सुख पावैं हैं।
मथुरा में कही चलो वेणी पूछे वेणी, कहाँ
ऊँचे गाँव आये खोदे सोत सो लखावैं हैं॥३५६॥

(श्रीवल्लभजीकी कथा)

मूल छ०—नृत्य गान गुण निपुण रासमैं रस बरसावत। अब लीला ललितादि बलित दम्पतिहि रिझावत। अति उदार

१ बाराह पुराण में। २ दूसरा। ३ परिश्रम पूर्वक।

निस्तार सुयश ब्रज मंडल राजत। महा महोत्सव करत बहुत सबही सुख साजत॥ श्रीनारायण भट्ट प्रभु, परम प्रीति रस वश किये। [1]श्रीव्रजवल्लभ वल्लभहिं, दुर्लभ सुख नयनन दिये॥८८॥

(श्री रूप सनातन गोस्वामी जी की कथा)

मूल छ०—गौड देश बंगाल हुते [1]अति बड [2]अधिकारी। हय गय भवन भँडार विभव [3]भूभुज अनुहारी। यह सुख अनित विचारि वास वृन्दावन कीन्हो। यथालाभ सन्तोष कुंज [4]करवा मन दीन्हो॥ ब्रज रहस्य राधार मण, भक्ति [5]तोष उद्धार कियो। संसार स्वाद सुख [6]वांतज्यो, रूप सनातन तजि दियो॥८९॥

कहत वैराग्य गये पागि नाभा स्वामी जू वे
गई यों निवरि [7]तुक पांच लागी [8]आँच है।
रही एक तामें धरयो कोटिक कवित्त अर्थ

१ भगवान ने। २ बहुत बडे। ३ राज्याधिकारी। ४ राजाओं के समान। ५ शिकोरा= मृत्तिका पात्र। ६ खजाना। ७ वमन। ८ चरण। ९ पश्चाताप।

याही ठौर ले दिखाई कविता की साँच है ॥
राधा कृष्ण रसकी [1]आचारजता कही यामें
[2]सोई जीवलाल भट्ट छप्यै वाणी [3]नाँचि है।
बडे अनुरागी वेतो करिये बडाई कहा
अहो जिन कृपा दृष्टि [4]पोथी प्रेमी बाँचि हैं ॥३५७॥
वृन्दावन ब्रजभूमि जानत न कोऊ [5]प्राय
दई दरसाय जैसी शुकमुनि गाई है।
रीतिहू उपासना की भागवत अनुसार
लियो रससार सो रसिक सुखदाई है॥
आज्ञा प्रभु पाय पुनि गोपेश्वर [6]लगे आय
किये ग्रंथ भाव भक्ति भांति दरसाई है।
एक एक बात में समात मन बुद्धि जब
पुलकित गात दृग झरी [7]लग जाई है ॥३५८॥
रहे नन्द गाँव रूप आये श्री सनातनजू
महा सुखरूप, भोग [8]खीर सो लगाई है।
नेक मन आई, सुखदाई प्रिया लाडलीजू
मानों कोई [9]बालकी सो सोंज सब लाई है।
करके रसोई सोई लै प्रसाद पायो भायो
अमल सो आयो चढि पूछी सो जनाई है॥

१ आचार्यत्व । २ इसी प्रकार । ३ नृत्य करैगी । ४ भक्तमाल । ५ प्राय:=अकसर । ६ समीप=पास । ७ लग जाती है। ८ तस्मई । ९ लड़की ।

फेर जनि ऐसी करो यही दृढ हिये धरो
ढरी निजचाल कहि आँखें भरि आई है ॥३५९॥
रूप गुण गान होत कान सुनि सभा सब
अति अकुलानी प्राण मूर्छा सी आई है।
बड़े आप धीर रहे ठाढे न शरीर सुधि
बुद्धि में न आवें ऐसी बात सो दिखाई है॥
श्रीगुसाई कर्णपूर पाछे आये देखे आछे
नेक ढिंग भये श्वास लाग्यो तब पाई है।
मानों आँचलागी आगि ऐसो तन चिन्ह भयो
नई यह प्रेम रीति कापै जात गाई है ॥३६०॥
श्रीगोविन्द चन्द्र आय निशि में स्वपन दियो
दियो कहि भेद सब जासों पहिचानिये।
रहों में [1]खरिक माँझ पोषै निशि भोर साँझ
सींचि दूध धार गाय जाय देखि जानिये॥
प्रकट लै कियो रूप अतिही अनूप छवि
कवि कैसे कहै थकि रहे लखि मानिये।
कहाँ लो बखानों भरै सागर न [2]गागर में
नागर रसिक हिये निशिदिन आनिये ॥३६१॥
रहे श्रीसनातनजू नन्दगाँव पावन पै
आवै दिन तीन तें सो दूध लैंके [4]प्यारिये।

१. गायों के रहनेका घेरा । २. बड़े में । ४. श्रीराधारानी ही ।

साँवरे किशोर आये, पूछी किहि ओर रहो,
कहे चार भाई पिता [1]रीतिहू उचारिये ॥
गये ग्राम बूझि घर हरि पैन पाये कहूँ
चहूँ दिशि हेरि हेरि नैंनभरि [2]ढारिये।
अबके जो आवैं फेर जान नहीं पावैं शीश
लाल पाग भावैं निशिदिन उरधारिये ॥३६२॥

कही व्याली रूप वेणी निरखि स्वरूप नैन
जानी श्रीसनातनजू काव्य अनुसारिये।
राधासर तीर द्रुमडार गहि झूलैं फूलैं
देखि सोई लफलफात गति मति वारिये ॥
आये यों अनुज पास, फिरैं आस पास, देखि
भयो [3]अतित्रास गहे पाँव उर धारिये।
चरित अपार उभै भाई हित सार पगे
जगे जगमाहिं मति मन में उचारिये ॥२६३॥

(आचार्यपाद श्रीहितहरिवंश गोस्वामीजीकी कथा)

मूल छ०–राधाचरण प्रधान हृदय अति सुदृढ उपासी। कुंज केलि दम्पत्ति तहाँकी करत खवासी। सर्वस महाप्रसाद प्रसिधताके अधिकारी। विधि निषेध

१. ग्राम का नाम और पहुँचने की रीति=मार्ग। २. आंसू बहाये। ३. दुःख।

नहिं दास [1]अननि उत्कट व्रतधारी ॥ [2]व्यास सुवन पथ अनुसरैं, सोई भले पहिचानि है। हरिवंश गुसाईं भजनकी रीति सकृत कोउ जानि हैं ॥९०॥

हितजू की रीति कोऊ लाखन में एक जानैं
राधा ही प्रधान मानैं पाछे कृष्ण ध्याइये।
निपट विकट भाव होत न स्वभाव ऐसो
उनही की कृपा दृष्टि नेक क्योंहूँ पाइये ॥
विधि औ निषेध छेद डारे, प्रण प्यारे हिये
जिये निज दास ह्वैके निशि दिन गाइये।
सुखद चरित्र सब रसिक विचित्र नीके
जानत प्रसिद्ध कहा कहिके सुनाइये ॥३६४॥
आये गृह त्यागि राग बढ्यो प्रिया प्रीतम सों
विप्र बड भागी हरि ज्ञान दियो जानिये।
तेरी उभै सुता व्याहि देवो लेओ नाम मेरो
इनको जो वंश सो प्रशंस जग मानिये ॥
ताही द्वार सेवा विस्तार निज भक्तन की
अगतिन गति सो प्रसिद्ध पहिचानिये।
मानि प्रिय बात [3]गहगह्यो सुख लह्यो सब
कह्यो कैसे जात यह मन में न आनिये ॥३६५॥

१ अनन्य। २ आपके पिताजीका नाम है। ३ महान।

राधिकावल्लभ लाल आज्ञा सो रसाल दई
सेवामें प्रकाश औ विलास कुंज धामको।
सोई विसतारि सुखसार दृग रूप पीयो
दियो रसिकन जिन लियो पक्ष [1]वामको॥
निशिदिन गान रस माधुरिको पान उर—
अन्तर सुहात एक काम श्यामा श्यामको।
गुण सो अनूप कहि कैसे कै स्वरूप लहै
लहै मन मोद जैसो और नहीं नामको॥३६६॥

आगे आपका संक्षिप्त चरित्र श्रीराधावल्लभीय भक्तमाल के आधार पर दिया जा रहा है :—

श्रीनन्दलालाकी वंशीके अवतार श्रीहितहरिवंश महाप्रभुजी कुरु क्षेत्र मंडलके बड गाँवमें काश्यप गोत्रीय यजुर्वेदीय माध्यन्दिनी शाखानुयायी गौड ब्राह्मण श्रीराममिश्रजी व्यासकी धर्म पत्नी श्रीतारा रानीके गर्भसे अवतरित हुए। इसमें ये आर्ष प्रमाण प्रसिद्ध हैं :—

द्वापरान्ते कलेरादौ पाखण्डवादखण्डनः।
हरिवंशेति विख्यातोऽनन्यधर्मप्रचारकः॥ (आगमे)
अहमेव भविष्यामि वंशीरूपेण चार्जुन।
हरिवंशेति विख्यातो प्रेम भक्ति रस प्रदः॥(भार्गवपुराणान्तरे)
हरिवंशेति विख्यातो लोके प्रादुर्भविष्यति।
समुद्धाराय जन्तूनां मत्प्रियापक्षपातिनाम्॥ (आगमे)

बाल्यावस्थामें भक्तभावन भगवान आनन्दकन्द श्रीकृष्णचंद्रजीने दर्शन देकर इनको अपनी माला पहिरादी और श्यामविन्दु युक्त तिलक लगा दिया। उसी समय आपने प्रभुकी स्तुतिकी वही सुधा निधि नामक २७० श्लोकोंका ग्रंथ प्रसिद्ध है।

1 श्रीराधारानीका।

एकबार आपको स्वप्नमें ब्रजमंडलके दर्शन हुए तभीसे ब्रज-यात्राकी चटपटी लग गई और ननिहाल जानेका बहाना कर घरसे रवाना हो गये। प्रथम श्रीनन्दग्राम पहुँचे वहाँ भगवान शंकरने दर्शन देकर कहा कि आपका अवतार ब्रज मंडलको प्रकट करनेके लिये हुआ है, अतः ब्रज भूमिका भ्रमण करके समस्त स्थलोंको प्रकट करें। आप श्रीबरसाना गोवर्धन आदि होते हुए श्रीवृन्दावन आ गये। यहाँ श्रीश्यामसुन्दरकी आज्ञा हुई कि कुछ काल जागतिक सुखोंका उपभोग करके फिर पीछे यहीं आकर निवास करना। आप घर आ गये और श्रीरुक्मिणी देवीके साथ पाणिग्रहण हुआ। एकबार सोतेमें श्रीराधाराणीने दर्शन देकर कहा कि आपके दरवाजे पर जो पीपलका वृक्ष है, उसकी सबसे ऊपर वाली डालीमें एक लाल कोंपल सबसे अलग है, उसीमें मंत्रराजके दर्शन होंगे, उस मंत्रको धारण करो एवं आपके पिताजीके बागके कूपमें हमारी द्विभुज मूर्ति है उसे निकालकर सेवा पधरालो। आपने ऐसाही किया। विक्रम संवत १५४४ से १५४८ तक में आपको चार सन्तान हुई जिनके विवाह करके श्रीराधारानीकी आज्ञासे आपने परिवारके सहित अपने घर ग्रामको छोड श्रीवृन्दावनको पयान किया।

मार्गमें चलते समय फिर श्रीराधारानीकी आज्ञा हुई कि "चटथावल ग्राममें हमारे परमभक्त एक ब्राह्मण रहते हैं, उनके दो कन्यायें हैं एवं हमारे स्वयंव्यक्त श्रीविग्रह हैं जो पूर्वमें शिवजी सनत्कुमार और माण्डव्य ऋषिसे सेवित थे। राजाचन्द्रधरने शिवाराधन करके प्राप्त किये थे और तबसे भूमंडलपर विराजमान हैं। श्रीशिवजीने ही राजाको इनका नाम श्रीराधावल्लभजी बताया था। ये द्विजदेव अपनी दोनों कन्यायें आपको प्रदान करेंगे, उनको ग्रहण कर लेना। घबडाना नहीं वे दोनों आपके भजन भावमें बाधक न होकर पूर्ण सहायक होंगी और इनके दहेजमें हमारे स्वयं व्यक्त विग्रहभी अनायास प्राप्त हो जायेंगे

जिनको श्रीवृन्दावनमें पधराकर सेवा पूजामें निमग्न रहना। आपने इष्ट आज्ञानुसार सब कार्य किया और श्रीवृन्दावन आकर श्रीसेवाकुंज को प्रकट किया, जहां श्रीराधारानीके सहित भगवान श्रीगोविन्दजी विराजते हैं। फिर विहार घाट प्रकटाया (जहां पटना (विहार) निवासी श्रीमोतीरामजीने घाट बनवाया) फिर श्रीगोविन्द घाट प्रकट किया जहांपर श्रीप्रिया प्रियतमके रास विलासके लिये रास मंडल बनवाया। इसी स्थलपर एकदिन आप श्रीव्यासजी और श्रीहरिदासजीके सहित विराजमान थे उसी समय श्रीप्रिया प्रियतमके रास विलासकी अधीश्वरी सखी श्रीललिताजीने प्रकट होकर आपके हाथमें मुकुट और चन्द्रिका दिये, आपने इसका भेद समझकर श्रीललिताग्राम निवासी द्विज वर श्री घमंडीलालजीको बुलाकर रासलीलाकी शिक्षा दी, शृंगार सामग्रीका निर्माण कराकर प्रदानकी एवं द्विज कुमारोंको एकत्रितकर तीनों मूर्ति स्वयं संगीतादि कार्यमें अग्रगण्य बन इस जगतीतलपर रासविलासको प्रकट किया।

आपकी ख्याति दिन दूनी रात चौगुनी दशो दिशाओंमें व्याप्त हो गई। राजा रईस और सेठ साहूकार आ आकर भेंट पूजा चढाते और आप श्रीभगवत भागवत सेवामें उसका विनियोग करते, इसका वर्णन तो स्वयं श्रीनाभा स्वामी ने मूल में जिस सुन्दरता से किया है उससे अधिक और कोई क्या करेंगे।

स्वामी श्रीसीताराम शरण भगवान प्रसादजीने (श्रीरूपकलाजी) भक्तमाल टीका में आपका जन्म संवत १५५९ विक्रमीय लिखा है वह सर्वथा असंगत है, सांप्रदायिक इतिहास जब यह बताता है कि १५४० से १५४४ विक्रम संवतके बीचमें आपके चार सन्तानें हो गई थीं तब इस प्रमाण के सामने १५५९ वि० का जन्म किसी प्रकार से भी संगत नहीं हो सकता। उक्त टीका में और भी अनेक महात्माओं के सन् संवत इसी प्रकार भ्रामक उल्लिखित हैं जो मालुम होता है पाश्चात्य अन्वेषकोंके निराधार आधार पर लिखे गये हैं।

(स्वामी श्रीहरिदासजीकी कथा)

मूल छं०—युगल नामसों प्रेम जपत नित कुंजविहारी। अवलोकत रहैं केलि सखीसुखके अधिकारी। गान कला गन्धर्व श्याम श्यामाको तोषैं। उत्तम भोग लगाय मोर मरकट नित पोषैं॥ नृपति द्वार ठाडे रहैं, दर्शन आशा जासुकी। [1]आसधीर उद्योतकर, रसिक छाप हरिदास को ॥९१॥

स्वामी हरिदास रसराशि को बखान सकै
रसिकता छाप जोई [2]जाप मध्य पाइये।
लायो कोऊ चोवा वाको अति मन [3]भोवा वामें
डारयो ले [4]पुलिन याके हिये [5]खोआ आइये॥
जानी सो सुजान कही लै दिखाओ लाल प्यारी
नेक सो उघारयो पट सुगन्धी [6]बुडाइये।
[7]पारस पाषाण वत जल डरवाय दियो
कियो पुनि शिष्य ऐसे नाना गुण गाइये ॥३६७॥

१ पिता जी का नाम है। २ जप के बीच में भगवान से। ३ समाया हुआ। ४ श्री यमुना तट रेती में। ५ खो दिया। ६ निमग्न हो गये। ७ पारस को पाषाण की तरह।

(स्वामी श्रीव्यासदेवजीकी कथा)

मूल छ०—काहूके आराध्य मच्छ कच्छ नरहरि शूकर। वामन परसाधरण सेतु-बन्धन जु शैलकर। एकन को यह रीति नेम नवधा सों लावैं। शुक्ल [1]सुभोखन सुवन [2]अच्युत गोत्री जुल डावैं। [3]नव-गुण तोरि नूपुर गुह्यो, महत सभामधि-रासके। उत्कर्ष तिलक अरुदामको, भक्त इष्ट अति व्यासके ॥९२॥

आये गृह त्यागि वृन्दावन अनुराग करि
गयो हियो पागि [4]होय न्यारो तापै खीझिये।
राजालेन आयो तो पैं जायबो न भायो
श्रीकिशोर उरझायो मन सेवा मति भीजिये ॥
[5]चीरा [6]जरकशी शीश चीकनो खिसक जाय
लेहुजी बँधाय नहिं आप बाँध लीजिये ॥
गये उठि कुंज सुधि आई सुखपुंज आय
देख्यो बँध्यो मंजु कही कैसे मोपै रीझिये ॥३६८॥
सन्त सुखदेन बैठे संगही प्रसाद लेन

१ पिता जी का नाम है। २ वैष्णव सन्त। ३ जनेऊ। ४ वृन्दावन से अलग हो। ५ पेचा=पगडी। ६ जरतारीका।

परसति तिया सब भाँतिन प्रवीण है।
दूध बरताय ले मलाई छिटकाई आय
खीझ उठे आप पति पोषत [1]नवीन है॥
सेवा सों छुडाय दई अति [2]अनमनी भई
भूखे दिन बीते तीन भयो तन [3]छीन है।
सब समझावें तब दंडको मनावें अंग
आभरण बेचि साधु जेवें आज्ञा दीन है ॥३६९॥
सुताको विवाह भयो बडो उत्साह कियो
नाना पकवान सब नीके बनि आये हैं।
भक्तन की सुधि करि खरी अरबरी मति
भावना करत भोग सुखद लगाये हैं।
आयगये साधु सो बुलाय कही पावो जाय
पोटनि बँधाय [4]चाव कुंजनि पठाये हैं।
वंशी पहिराई द्विजभक्ति ले दृढाई, सन्त
सम्पुटमें चिरिया दे हित सों बसाये हैं ॥३७०॥
शरद उजारी रास रच्यो पिय प्यारी तामें
रंग बढयो भारी कैसे कहिके सुनाइये।
प्रिया अति गति लई बिजुरीसी कौंध गई
भई चक चौंध छवि मंडलमें छाइये॥

१ पाग=पगरी। २ युवा। ३ उदास। ४ कृष=दुर्बल ५ उत्साह से।

नूपुर सो टूट छूट पर्यो [1]अरबरयो मन
तोरिके जनेऊ गुह्यो वाही भाँति भाइये।
सकल समाजमें यों कह्यो आज काम आयो
ढोह्यो है जनम ताकी बात जिय आइये ॥३७१॥

गायो भक्त इष्ट अति सुनिके महन्त एक
लेनको परीक्षा आये संग सन्त भीर है।
भूख सो जनावै वाणी प्यासको सुनावै सुनि
कहि भोग आवै इन मानी नहीं धीर है॥
तब न प्रमाण करी शीघ्रही प्रसाद दियो
ग्रास दोंय चार लेय उठे भई पीर है।
पातर समेट लई शीथ करि मोकों दई
खाओ तुम ओर, पाँवों, हग भरे नीर है ॥३७२॥

भये सुत तीन बाँटो निपट नवीन कियो
एक ओर सेवा एक ओर धन धर्यो है।
तीसरी जु ठौर श्याम बन्दनी औ छाप धरी
करी ऐसी रीति देखि बडो शोच पर्यो है॥
एकने रुपैया लिये एकने किशोर जू को
श्रीकिशोरदास भाल तिलक लै कर्यो है।
छापे दिये, स्वामी हरिदास निशिरास कीन्हो
वही रास ललितादि गायो मन हर्यो है ॥३७३॥

१ व्याकुल हो गया।

(श्रीजीव गोस्वामीजीकी कथा)

मूल छ०–[1]बेला भजन सुपक्व [2]कषाय न कबहू लागी। ब्रुन्दावन दृढ वास युगल चरणन अनुरागी॥ पोथी लेखन [3]पान अघट अक्षर चित दीन्हो। सद्ग्रन्थन को सार सबै हस्तामल कीन्हो॥ सन्देह ग्रन्थि छेदन समर्थ, राम उपासक परमधीर। रूप रसातन भक्तिजल, जीव गुसाईं सार गँभीर ॥९३॥

किये नाना ग्रंथ हृदय ग्रंथि जो छेद डारैं
डारैं धन यमुना जो आवै चहुँ ओर तें।
कही दास साधु सेवा कीजे, कहें [4]पात्रता न,
करो, नीके करी, बोल्यो कोप कटु जोर तें॥
तब समझायो सन्त गौरव बढ़ायो यह
सबको सिखायो मीठो बोलै निशि भोरतैं।
चरित अपार भाव भक्ति को न पारावार
किये जो विराग सार कहै कौन [5]छोर तें ॥३७४॥

(श्रीवृन्दावनमाधुरी आस्वादक भक्त समूहका वर्णन)

मूल छ०–सर्वस राधा रमण भट्ट गोपाल

१. सीमा=पाज। २. काई=मैल। ३. पत्रा। ४. योग्यता। ५. एक शिरे से।

उजागर। हृषीकेष भगवान विपुल
विठ्ठल रस सागर॥ थानेश्वर जगनाथ
लोकबड मुनि मधु श्रीरँग। कृष्णदास
युग पंडित पुनि अधिकारी हरि अँग॥
घँमडी युगलकिशोर भृत, भूगर्भ गुसाईं
व्रत लियो। वृन्दावन की माधुरो, इन
मिलि आस्वादन कियो॥९४॥

(गोस्वामी श्रीगोपाल भट्टजी की कथा)

श्रीगोपाल भट्टजू के हृदय वे रसाल बसे
लसैं जो रसाल राधारमण स्वरूप हैं।
नाना भोग राग करें अति अनुराग योग
जगे जगमाहिं हित कौतुक अनूप हैं॥
वृन्दावन माधुरी अगाध को सवाद लियो
जिये जिन पायो सीथ भये रस रूप है।
गुण ही को लेत जीव अवगुण त्यागि देत
करुणानिकेत धर्मसेतु भक्त भूप हैं॥३७५॥

(श्रीअलिभगवानजी की कथा)

अलि भगवान मन राम सेवा सावधान
वृन्दावन आये कछु औरें रीति भई है।
देखि रास मंडल में विहरत रसराशि
बाढ़ी छवि प्यास दृग, सुधि बुधि गई है॥

नाम धरि रास औ बिहारी सेवा प्यारी लागी
पगी हिय माँझ, गुरु सुनी बात नई है।
विपिन पधारे आप जाय पग धारे शीश
ईश मेरे तुम सुख पायो कहि दई है॥३७६॥

(श्री विठ्ठल विपुलजी की कथा)

स्वामी हरि दासजीके दास नाम विठ्ठल है
गुरु के वियोग दाह उपज्यो अपार है।
रास के समाज में विराजि सब भक्त राज
बोलि के पठाये आये आज्ञा बडो भार है॥
युगल स्वरूप अवलोकि नाना नृत्य भेद
गान तान कान सुनि रही न सँभार है।
मिल गये वाही ठौर पायो भाव तन और
कहे रस सागर जो ताको यों विचार है॥३७७॥

(श्री जगन्नाथ थानेश्वरीजीकी कथा)

महाप्रभु पारषद थानेश्वरी जगन्नाथ
नाथ को प्रकाश घर दिन तीन देख्यो है।
भये शिष्य जानि आप नाम 'कृष्णदास धर्यो
कृष्ण जू कहत सब आदर विशिष्यो है॥
सेवा मन मोहन जू कूपमें 'जताय दई'
बाहर निकासि करी लाय उर लेख्यो है।
सुत रघुनाथजीको स्वप्नमाहिं श्लोकदान
वयके निदान पुत्र दियों प्रेम पेख्यो है॥३७८॥

(गोस्वामी श्रीलोकनाथजीकी कथा)

श्रीमहाप्रभु कृष्ण चैतन्य जू के पारषद
लोकनाथ नाम अभिराम सब रीति है।
राधाकृष्णलीला सो नवीनमें रँगीन मन
जलमीन जैसे तैसे निशि दिन प्रीति है॥
भागवत गान रसखान सो तो प्राण तुल्य
अति सुख मानि कहैं गावैं सोही मीत है।
रसिक प्रवीण भगचलत चरणलागि
कृपा कै जताय दई जैसी नेह नीति है॥३७९॥

(श्रीमधु गुसाईंजीकी कथा)

श्रीमधु गुसांई आप वृन्दावन चाह बढी
देखें इन नैनन सों कैसे धों स्वरूप है।
ढूढत फिरत वन वन कुंज लता द्रुम
मिटी भूख प्यास नहीं जानै छांह धूप है॥
यमुना चढत कष्ट करत कनारे जहाँ
वंशीवट तट दीठ परे वे अनूप हैं।
अंक भरि लिये दौरि आजहू लों शिर मोर
चाहै भाग भाल साथ गोपीनाथ रूप है॥३८०॥

(अधिकारी श्रीकृष्णदासजी ब्रह्मचारी की कथा)

गोस्वामी सनातनजू मदन मोहन रूप
माथे पधराय कही सेवा नीके कीजिये।
जानो कृष्णदास ब्रह्मचारी अधिकारी भयो
भट्ट श्रीनारायणजू शिष्य कियो रीझिये॥

करके शृंगार चारु आपही निहारि रहे
गहे नहीं चेत भाव महा मति भीजिये।
कहाँ लौ बखान करों रागभोग रीति भाँति
अबलों विराजमान देखि देखि जीजिये॥३८१॥

(पंडित श्रीकृष्णदासजीकी कथा)

श्रीगोविन्दचन्द्र रूपराशि रसराशि दास
कृष्णदास पंडित ये दूसरे यों जानिये।
सेवा अनुराग अंग अंग मति पागि रही
पागी मति होय जोपै तोपै यह मानिये॥
प्रीति हरिदासनसों विविध प्रसाद देत
हिये लायलेत देखि पद्धति प्रमाणिये।
सहज ही रीतिमें प्रतीति सो विनीत करैं
ढरैं वाही ओर मन अनुभव आनिये॥३८२॥

(श्रीभूगर्भ गुसाईंजी की कथा)

गुसाईं भूगर्भ वृन्दावन दृढ वास कियो
लियो सुख कुञ्ज बैठि गोविन्द अनूप है।
बडेही विरक्त अनुरक्त रूप माधुरी में
ताहीको सवाद लेत मिलि भक्त भूप हैं॥
मानसी विचार हिय हार सो निहारि रहे
गही मन वृत्ति वेई युगल स्वरूप हैं।
बुद्धि के प्रमाण अनुमानि मैं बखान करयो
भरयो बहु रंग जाहि जानैं रस रूप हैं॥३८३॥

(श्रीरसिक मुरारीजीकी कथा)

मूल छ०–तन मन धन परिवार सहित सेवत सन्तन कहँ। दिव्य भोग आरती अधिक हरिहूते हिय महँ॥ श्रीवृन्दावन-चन्द्र श्याम श्यामा रँग भीने। मगन प्रेम पीयूष पयधि परचे बहु दीने॥ हरि प्रिय श्यामानन्द वर, भजन भूमि उद्धार किय। रसिक मुरारि उदार अति, मत्त गजहिं उपदेश दिय॥९५॥

रसिक मुरारी साधु सेवा विसतार कियो
पावै कौन पार रीति भाँति कछु न्यारियै।
सन्त चरणामृत के माँट घर भरे रहैं
ताही को प्रणाम पूजा करैं उर धारियै॥
आवैं हरिदास तिन्हैं देत सुख राशि जीभ
एक ना उचारि सकैं थकी सो विचारियै।
करै गुरु उत्सव ले दिनमान सबै कोऊ
द्वादश दिवस जमघट लगैं प्यारियै॥३८४॥
सन्त चरणमृतको ल्याओ जाय नीकी भाँति
जीकी भाँति जानबेको दास ले पठायो है।
आयके बखान कियो लियो सब साधुनको
पान करि बोले सो सवाद नहीं आयो है॥

जिते सभाजन कही चाखो देवो मन कोऊ
महिमा न जानैं [1]कन [2]जानी छोडि आयो है।
पूछी कह्यो कोढी एक रह्यो,आनो,लायो दियो,
पियो सुख पाय नैन नीर ढरकायो है॥३८५॥
नृपति समाज में विराजमान [3]भक्तराज
कहैं वे विवेक कोउ कहनि प्रभाव है।
तहाँ करें एक साधु भोजन करत रौर
देवो दूजो सोटा संग कैसे आवे भाव है॥
पातर उठाय [3]श्रीगुसाईं पर डार दई
दई गारी सुनि आप बोले लाग्यो [4]दाव है।
सीथ सों विमुख मैं तो आनि मुख माँझ दियौ,
कियो दास दूर सन्त सेवा में न चाव है॥३८६॥
बागमें समाज सन्त चले आप देखवे को
देखत दुरायो जन हुक्का सोच परयो है।
बडो अपराध मानि साधु सनमान चाह
घूमि तन वैठि कही देखो कहूँ धरयो है॥
जायके सुनाई दास काहू के तमाखू पास
सुनिके हुलास बढ्यो आगे आनि करयो है।
झूठे ही उसास भरि साँचे प्रेम पाय लियो
कियो मन भायो ऐसे शंका दुःख हरयो है॥३८७॥
उपजत अन्न गाँव आवै साधु सेवा ठांव

१ जरासी। २ मैंने जानली। ३ श्रीरसिक मुरारीजी। ४ भाग्योदय।

नयो नृप दुष्ट आयो काँव काँव कियो है।
गाँव सो [1]जपत करयो, करयो लैं विचार आप
श्यामानन्द जू को आप पत्र लिखि दियो हौं ॥
जाहि भाँति होओ ताहि भाँति उठि आओ यहां
आये हाथ झूठे अचवन हूं न लियो है।
पाछे साष्टांग करि लैं निवेदन करी सोई
भोजनमें कह्यो चलिआयो भींज्यो हियो है ॥३८८॥
आज्ञा पाय अंचे आये दिये सो पठाय तहां
दुष्ट शिर मोर जहाँ तहाँ आप आये हैं।
मिले सो मुसद्दी शिष्य आयके सुनाई बात
जाओ उठि प्रात यह नीच जस गाये हैं ॥
हम ही पठें हैं काम करि समझै हैं सब
मनमें न आनी जानी नेह डरपाये हैं।
कही चिंता जनि करो कहां आगमन मम
पूछी भूप आप दिन तीन कहां लाये हैं ॥३८९॥
कही आये गुरुवर भूप कही लाओ यहाँ
देखों करामात बात यही आ सुनाई है।
कह्यो आप अभूँ जाओ, चलो उन मान देखें
चले सुख मानि आयो हाथी घूम छाई है ॥
छोडिके कहार भाजि गये न निहार सके
आप रस सार वाणी [2]भोले जैसी [3]गाई है।

१ जप्त कर लिया=छीन लिया। २ भोले मनुष्य कीसी। ३ कही।

बोलो हरे कृष्ण कृष्ण छांडो गजतन तम
सुनि सनिगयो भाव देह [1]सो नवाई है ॥३९०॥
बहै दृग नीर देखि है गयो अधीर गज
कृपाकरि दयी धीर दियो भक्ति भाव है।
कानमें सुनायो नाम, नाम दे गोपालदास
माला पहिराई गरे प्रकट्यो प्रभाव है ॥
दुष्ट शिर मौर भूप लखि वाही ठौर आयो
पाँव लपटायो भयो हिये अति चाव है।
निपट अधीन गाँव केतक नवीन दिये
लिये कर जोरि मेरो फल्यो भाग्य दाव है ॥३९१॥
भयो गजराज भक्तराज साध सेवा साज
सन्तन समाज देखि करत प्रणाम है।
आनि डारैं गूण बनजारन की बारद सौं
आवै सो पुकारन को जहां गुरु धाम हैं ॥
आवै महोत्सव महँ पावत प्रसाद सीथ
बोले आप हाथी सों यों निन्द्य यह काम है।
छोड दई रीति तब भक्तन सों प्रीतिबढी
संगही समूह फिरैं फैल गयो नाम है ॥३९२॥
सन्त सत पांच सात संग जित जात तित
लोग बहु धावैं लावैं सीधे बहु भीर है।
चहूँ दिशि परयो हल्ला सूवा सुनि चाह भई

१ हाथीने।

हाथ पै न आवै कही आनै कोऊ धीर है ॥
साधु वेष जाय गहि लियो पकरायो आप
मनमें प्रसाद नेम पीवे नहीं नीर है।
बीते दिन तीन चार जलले पिवावें धार
गंगाजी निहारि मध्य तज्यो यों शरीर है ॥३६३॥

(संसार निस्तारावलंबन भक्त समूह का वर्णन)

मूल छ०—सोझा सींव अधार धीर हरि-नाभ त्रिलोचन। आसाधर द्योराज नीर सधना दुख मोचन ॥ काशीश्वर अवधूत कृष्णा किंकर कटहरिया। शोभू ऊदाराम नाम डूँगर व्रत धरिया ॥ पद्म पदारथ रामदास, विमलानँद अमृत श्रये। भव प्रवाह निस्तार हित, अवलम्बन ये जन भये ॥९६॥

(श्री सधना कसाईजी की कथा)

सधना कसाई ताकी नीकी कस आई जैसे
बारहबानी सोनेकी कसोटी कस आई है।
जीव को न बधकरै तो पै कुलाचार ढरै
बेचै मास ल्याय प्रीति हरि सों लगाई है ॥

१ रेखा।

गंडकी को सुत बिनजाने तासों तोल्यो करै
भरै दृग, साधु आनि पूजे, तौ न भाई है।
कही निशि सपने में वाही ठौर मोको देवो
सुनों गुण गान रीझ्यो हियेकी सचाई है ॥३६४॥
लेके आयो साधु मैंतो बडो अपराध कियो
कियो अभिषेक सेवा करी पै न भाई है।
ये तो प्रभु रीझै तो पै जोई चाहो सोई करो,
गरो भरि आयो सुनि मति बिसराई है ॥
वेही हरि उरधारि डारि दियो कुलाचार
चले जगन्नाथ देव चाह उपजाई है।
मिल्यो एक संग संग, जात सकुचात तब
आप दूर रहे जान काहूने न पाई है ॥३६५॥
आयो एक गाँव भिक्षा लेन एक ठाँव गयो
नया रूप देख एक तिया रीझ परी है।
बैठो याही ठौर करो भोजन निहारि कह्यो
रह्यो निशि सोयो आई सोई मति हरी है ॥
लेओ मोको संग, गरो काटो तो न होय रंग
बूझी नहीं, काटी पति ग्रीवा पै न डरी है।
कही अब पागो मोसों नातो,कौन मोसों तोसों
शोर करि उठी इन्ह मारयो, भीर करी है ॥३६६॥
हाकम पकरि पूछी कह्यो हँसि मारयो मैं ही
परयो सोच भारी कही हाथ काट डारिये।

काट्यो कर चले हरि रंगमाँझ झिले मानी
जानी कछु चूक मेरी यही उर धारिये ॥
जगन्नाथ देव आगे पालकी पठाई लेन
सधना सों भक्त कहाँ ? चढै ना विचारिये ।
चढे आये प्रभु पास सपनो सो मिट्यो त्रास
वाले हैं कसोटी हूपै भक्ति विसतारिये ॥३९७॥

(श्री काशीश्वर गुसाई जी की कथा)

श्री गुसाईं काशीश्वर 'आगे अव धूतवर
करि प्रीति नीलाचल रहे लाग्यो नीको है ।
महाप्रभु कृष्णचैतन्य जू की आज्ञा पाय
आये बृन्दावन देखि भायो भयो ही को है ॥
सेवा अधिकार पायो रसिक गोविन्द चन्द्र
चाहत मुखारविन्द जीवन जो जीको है ।
नितही लडावै भाव सागर दवावै कौन
पारावार पावै सुने लागै जग फीको है ॥३९८॥

(भक्त समूह वर्णन)

मूल छ०—यती रामरावछ श्याम खोजी सँत सीहा । दूलहा पद्म मनोरथ राँका उद्योगू जप जीहा ॥ जाडा चाचा गुरू सवाई चान्दा नापा । पुरुषोत्त सो साँच

१ पहिले ।

चतुर जिन मेट्यो आपा ॥ मति सुन्दर 'धीधाँग श्रम, संसार नाच नाहिन नचे । करुणा छाया भक्ति फल, कलियुग ये पादप रचे ॥९७॥

(श्री खोजी जी की कथा)

खोजी जी के गुरू हरि भावना प्रवीण महा
देह अन्त समै बाँधी घंटी सो प्रमाणिये ।
पावैं प्रभु जब तब बाज उठे यह जानो
पाये पैन बाजी बडी चिन्ता मन आनिये ॥
तन त्याग समै नही हुते खोजी पाछे आये
वाही ठौर पौढि देख्यो आम पाक्यो मानिये ।
तोरि ताके टूक किये छोटो एक जन्तु मध्य
गयो सो विलाय बाज उठी जग जानिये ॥३९९॥
शिष्य की तो योग्यताई नीके बन आई अजू
गुरु हू प्रबल ऐ पै नेक घटि क्यों भई ।
सुनो याकी बात मन अन्त वत गति कही
सोही ले दिखाई सन्त कथा अति रस मई ।
वेतो प्रभु पाय चुके प्रथम प्रसिद्ध पाछे
आछ्यो फल देखि हरि योग्य उपजी नई ।

१ मृदंग के ताल पर परिश्रम करके नाचने वाले भठकी तरह से ससार का नाच जिनने नहीं नाचा ।

इच्छा सो सफल श्याम भक्त वश करी लह्यो
वेही यह जानि सव व्यथा उर की गई ॥४००॥

(श्री राँका बाँका जी की कथा)

राँका पति बाँका तिया बसै सो पंढरपुर
उर में न चाह कछू रीति कछु न्यारीये ।
लकरी सो बीनि बेचि जीविका निवाह करैं
भरैं हरि रूप हिये ताही सों जिवारीये ॥
विनती करत नामदेव [1]कृष्ण देवजी सों
कीजे दुःख दूर, [2]कही, मेरी मति हारिये ।
चलो ले दिखाऊँ तव तोरे मन भाँऊ रहे
वन छिपि दोऊ, [3]थैली मगमाहीं डारीये ॥४०१॥
आये दोऊ पत्नी पति पाछे वधू आगे स्वामी
औचकही मग माँझ सम्पति निहारी है ।
जानि यों युवति जात कहूँ मन चलि जाय
याते नमि [4]सभ्रम्म सों [5]धूर वापै डारी है ॥
पूछी अजू कहा कियो भूमि में [6]निहुरि आप
कही वही बात बोली [7]धन ये विचारी है ।
कही मैं तो राँका ऐ पै [8]बाँका आज जानी तोहि
सुनि प्रभु बोले बात साँची ही हमारी है ॥४०२॥

१ भगवान । २ भगवानने कहा कि राँका बाँका का दुःख दूर करनेके उपायमें तो मेरी बुद्धिभी थक गई है । ३ स्वर्ण मुद्राओंकी थैली । ४ शीघ्रता से । ५ रेत=मिट्टी । ६ झुककर । ७ धन को आपने धन विचारा तो सही । ८ सुहृद ।

नाम देव हारे हरि देव कही और बात
जो पै दुःख पात चलो लकरी [1]सकेरिये ।
आय दोऊ बीनि करी देखी एक ओर ढेरी
दूर वाके पावै तऊ हाथ नहीं छेरिये ।
तवतो प्रकटि श्याम आप लाये निधि घर
देखि मूँड फोरयो कह्यो याहि प्रभु फेरिये ।
विनती करत करजोरि अंग पट धारो
भारी [2]बोझ परयो लियो चीर मात्र हेरिये ॥४०३॥

(कलिकाल में कामधेनु स्वरूप भक्त समूहका वर्णन)

मूल छ०—लक्ष्मण लफरा लड्डू जी अरु सन्त जोधपुर त्यागी । सूरज कुम्भन दास विमानी क्षेम विरागो ॥ भावन विरही भरत नफर हरिकेश लटेरा । हरिदास अयोध्या चक्रपाणि सरयू तट डेरा ॥ त्रिलोक पुखरदो विज्जुली, उद्धव वनचर वंश के । परमार्थ परायण भक्त ये, कामधेनु कलियुग भये ॥९८॥

(श्रीलड्डूजी की कथा)

लड्डू नाम भक्त जाय निकसे विमुख देश
लेशहू न जानें सन्त भाव पाप [3]पागे हैं ॥

१ एकत्रित करैं । २ आज्ञाका दवाव । ३ लिपटे हैं ।

देवी को प्रसन्न करैं मनुष्य को मारि धरैं
लै गये पकरि तहाँ मारिबेको लागे हैं॥
प्रतिमाको फारि विकरालरूप धारि [1]आई
लेके तलवार काटे मूँड भीजे [2]बागे हैं।
[3]आगे नृत्य करै दृग भरे साधु पाँव धरै
ऐसे रखवारे जान जन अनुरागे हैं॥४०४॥

(श्रीसन्तदासजी की कथा)

सदा साधु सेवा अनुराग रंग पागि रह्यो
गह्यो नेम भिक्षा वृत्ति गाँव गाँव जायके।
आये घर सन्त पूछी तियासों यों सन्त कहाँ
सन्त चूल्हे माहिं परो कही अलसाय के॥
वाणी सुनि जानि चले मग सुखदानी मिले
कहो कित हुते! सो बखानी उर आयके।
बोली वह साँच वाही [4]आँचहीको ध्यान मेरे
आने गृह फेरि किये मगन जिमाय के॥४०५॥

(श्रीत्रिलोकीजी की कथा)

पूरबमें [5]ओक हो तिलोक सो सुनार जाति
पायो भक्तिसार साधु सेवा उर धारिये।
भूपके सुताको व्याह जोरा एक जेहरीको
गढबेको दियो कह्यो नीके कै सँवारिये॥

१ देवी। २ कपड़े। ३ श्रीलड्डूजी के आगे। ४ उसकी जलन का ही। ५ घर।

आवत अनन्त सन्त अवसर पावै कहाँ
रहे दिन दोय भोय रोष यों सँभारिये।
आओ लेके, लाये जन, छाँडिये [1]मकर कही,
नेक रह्यो काम, नहीं आवै मारि डारिये॥४०६॥
आय गयो दिन छूयो कर हू न इन, नृप
करैं प्राण बिन बनमाँझ छुप्यो जायके।
आये [2]चर चार पाँच जानी प्रभु [3]आँच गाढी
लियो [4]सो दिखाया साँच चले [5]भक्त भाय के॥
भूपको सलाम कियो [4]जेहरीको जोरा दियो
लियो कर देखि दृग छाँडै न अघाय के।
भई रिझवारी सब चूक मेटि डारी धन
पायो ले [6]मुरारी ऐसे बैठे [7]घर आयके॥४०७॥
भोरही महोछो कियो जोई माँग्यो सो ही दियो
नाना पकवान रसखान स्वाद लागे हैं।
सन्तको स्वरूप धरि लै प्रसाद मोद भरि
गये तहाँ पावोजू तिलोक गृह पागे हैं॥
कौन सो तिलोक अरे दूसरो तिलोकी मैं न
बैन सुनि चैन भयो आये निशि [8]रागे हैं।
चहल पहल धन भर्यो घर देखि डर्यो
प्रभु पद कंज जानी मेरे भाग जागे हैं॥४०८॥

१ पाखण्ड। २ दूत। ३ आपत्ति। ४ जेहरी (चरणभूषण) का जोड़ा। ५ भक्त (त्रिलोक) का भाव=वेष करके। ६ भगवान। ७ त्रिलोक के घर आकर। ८ प्रेमी=त्रिलोकजी।

(चिन्तामणि के समान २१ भक्तोंके नाम स्मरण)

मूल छ०—भीमा सोम नाथ पुनि सोमा विकु विशाख लम ध्याना । महँदी मुकुँद गणेश त्रिविक्रम रघु राघव जग जाना ॥ वाल्मीकि वृधव्यास जगन झाँझू विट्ठल आचारज । लाला भू हरिदास बाहुबल पुनि हरि राघव आरज ॥ लाखा छीथर उद्धव कपूर, घाटम घूरी किय प्रकाश । अभिलाष अधिक पूरण करण, ये चिन्तामणि चतुरदास ॥९९॥

(दिग्ग सम २७ भक्तों का वर्णन)

मूल छ०—नरहरि देवा मुकुँद महीपति सन्तराम तम्बोरी । खेम नंद श्रीरंग विष्णु विन्दा बाजूसुत जोरी ॥ छितम द्वारिकादास मधू माँडन रूपा दामोदर । भल नरहरि भगवान बाल कान्हार केशव सोहैं घर ॥ प्रागदास लोहँग गुपाल, नागू सुत गृह भक्त भोर । भक्त पाल दिग्गज भगत, ये थानायित शूर धीर ॥

(भजन परायण १५ भक्तों का यशगान)

केशव पुनि हरिनाथ भीम खेता गोविंद ब्रह्मचारी । बालकृष्ण बडभरत अच्युत अप्पय ब्रद्री व्रतधारी । पंडा गोपीनाथ मुकुन्दा श्री गजपती महायश । गुणनिधि यश गोपाल दये भक्तन को सरवस ॥ श्री अंग सदा सन्निध रहैं, पुण्यपुंज भल भाग्य भर । उडीसा बद्री द्वारिका, सेवक सब हरि भजन पर ॥१०१

(श्रीगजपतिजी की कथा)

श्रीप्रताप रुद्र गजपति जो बखान कियो
लियो भक्तिभाव महाप्रभू[1] पै न देखहीं ।
कियेहू उपाय कोटि और लै सन्यास लियो
हियो अकुलायो अहो कहूँ मोको पेखहीं ॥
जगन्नाथ रथ आगे नृत्य करैं मत्त भये
नीलाचल नृप पांय परयो भाग लेखहीं ।
छाती सो लगायो प्रेम सागर बुडायो भयो
अति मन भायो दुःख देत ये निमेष हीं ॥४०९॥

(कविराज भक्तगण)

मू० छ०—विद्यापति ब्रह्मदास बहोरन

1 श्रीगौरंगा महाप्रभु ।

चतुर बिहारी। गोविंद गंगा रामलाल बरसनिया मंगलकारी। परशुराम प्रिय-दयाल धक्क भाई खाटूके। नंद सुवनकी छाप कवित केशव के नीके॥ आस करण पूरण नृपति, जयदयाल गुणगण अपार। हरि सुयश प्रचुरकर जगतमें, ये कविजन अतिशय उदार॥१०२॥

(कविवर श्रीगोविन्दजी की कथा)

'गोवर्धननाथ संग खेलै सदा झेलै रंग
अंग सख्य भाव हिये गोविन्द सुनाम है।
'स्वामी करी ख्यात ताकी बात सुनि लीजे नीके
सुने सरसात नैन रीति अभिराम है॥
खेलत हो लाल संग गयो उठि दाव लेके
मारी ताकि 'गिल्ली देखि मन्दिर में श्याम हैं।
मानि अपराध साधु धकादे निकरि दियो
मत सो अगाध कैसे जानें ये जो नाम हैं॥४१०॥
बैठ्यो कुण्डतीर जाय निकसैगो आय वन
दयी है लगाय ताको फल भुगताइये।

१ श्रीवल्लभ सम्प्रदायके ठाकुर श्रीगोवर्धननाथजी। २ भगवान्।
३ लकड़ी का टुकड़ा जिसको गेंद की तरहसे फेंककर खेलते हैं।

लाल हिय सोच परयो कैसे 'भरयो जाय यह
अरयो मग माँझ भोग धरयो पै न खाइये॥
कही श्रीगुसाईं जू सों मोको ये न भाई कछू
चाहो जो खवायो तो पै वाको जाय लाइये।
वाको हुतो दाव मो पै सोतो भाव जान्यो नाहीं
कही मोसों वाने जो 'कुमार' परी वाहिये॥४११॥
वन वन खेले बिन बनत न मोको नेक
भनत सो गारी अन गिनत लगावैगो।
सुधि बुधि मोरी गई भई अति चिन्ता मोहि
ल्याइये जू ढूंढि वाहि चैन तब आवेगो॥
भोग जो लगाये में तो तनक न पाये रिस
वाकी जब जाय तबै मोको कछु भावेगो।
चले उठि धाये नीठ नीठकै मनाय लाये
मन्दिर में खाये मिलि कही गरे लावैगो॥४१२॥
गये हे बाहर भूमि तहाँ कृष्ण आये झूमि
करी बडी धूम आक डोंडिन सो मारिके।
इनहू निहारि उठि मारिदई वाही सों जू
कौतुक अपार सख्य भाव रस सारिके॥
माता मग जोय बडी देर भये आई वहाँ
कहाँ वार लाई ओट पाई उर धारिके।
आयो सो विचार सदाचार अनुसार कियो

१ इसका दाव कैसे=भुगताया जाया। २ बड़ी गहरी मार।

लियो प्रेम गाढो कभूँ करत सँभारि के ॥४१३॥
आवत हो भोग महा सुन्दर सो मन्दिरमें
रह्यो मग बैठि कह्यो आगे मोहि दीजिये।
भयो कोप भारी थार डारि जा पुकार करी
सही न अनीति जात सेवा यह लीजिये ॥
बोलिके सुनाई अहो कहा मन भाई आज
खोलिके बताई अजू बात कान दीजिये।
पहले वे खाय वनमाहिं उठि जाय पाछे
पाऊँ कहां धाय सुनि मति रस भीजिये ॥४१४॥

(श्रीमथुरामंडलके भक्तगण)

मूल छ०—श्रीरघु गोपीनाथ रामचँद दासू स्वामी। गुंजामाली चितु उत्तम विट्ठल मरहट निष्कामी। यदुनंदन रघुनाथ रमानँद गोविंद मुरली सोती। हरिदास मिश्र भगवान मुकुँद माधव केशव दंडोती। चतुभुज चरिता विष्णुदा, वेणी पद मो शिरधरो। मथुरामंडल बसत जे, दयादृष्टि मो पै करो ॥१०३॥

कही नाभा स्वामी आप गायो मैं प्रताप सन्त
बसे व्रजमाहिं सो तो महिमा अपार है।

भये गुंजामाली गुंजाहारधारी नाम परयो
लाहौर में करै वास आगे सुनो सार है॥
सुत बधू विधवा सों बोलिके सुनाई लेहु
धन पति गृह श्रीगोपाल भरतार है।
देवो प्रभु सेवा माँगै नारा बार बार यह
डारे सब वार यापै गनै जग छार है ॥४१५॥
दई सेवा वाहि और घर धन तिया दयो
लियो व्रजवास ताकी प्रीति सुनि लीजिये।
ठाकुर विराजे तहाँ खेलैं सुत औरन के
डारे ईंट रोडा परयो प्रभु पर खीझिये ॥
दिये सो बिडारि धरयो भोग पैन खात हरि
पूछी कही वेही आवैं तबही तो जीजिये।
कह्यो रिस भरि धूर नीकी भोर डारैं भरि
खाओ हम हा हा करें लाये पाये रीझिये ॥४१६॥

(युवती भक्त वृन्द)

मूल छ०—सीता झाली सुमति उमा शोभा प्रभुता भटियानी। गंगा गौरी कुँअरि गुपाली उबिठा गणेशदे रानी। कला लखा कृतगढो मानमति सुचि सुन्दरि शतभामा। यमुना केली रमा मृगा देवा भक्तन विश्रामा ॥ युग लखेरा

कमला देवकी, हीराँ चेरी पोषे भगत।
कलियुग युवती भक्त ये, महिमा सब
जानै जगत ॥१०४॥

(श्रीगणेशदेई रानी की कथा)

मधुकरशाह भूप भयो देश ओरछेको
रानी श्रीगणेशदेई काम बाँको कियो है।
आवैं बहु सन्त सेवा करत अनन्त भाँति
रह्यो एक साधु खान पान सुख लियो है॥
निपट इकेली देख बोल्यो धन थैली कहां
होय तो बताऊ सब तुम जानो हियो है।
मारी जाँघ छुरी लखि लोहू बेगि भागिगयों
भयो सोच जानि जनि राजा वन्दि दियो है ॥४१७॥
बांधि नीकी भाँति पोढ रही कही काहू सों न
आयो ढिंग राजा मत आछो तिया धर्म है।
बीते दिन तीन जानी वेदना नवीन कछु
कहिये प्रवीण मोसों खोलि सब मर्म है॥
टारी बार दोय चार नृपको विचार परयो
समाधान कियो जनि लावो जिय भर्म है।
फिरि आस पास भूमि परि तन राशि करी
"ब्रिको प्रताप आछी तिया पति शर्म है ॥४१८॥

(भक्त समूह वर्णन)

मूल छ०—नर वाहन वाहन वरीश जापू
जयमल बीदावत। जयन्त धारा रूपा
गोविन्द अनभइ तैसोइ ऊदा रावत।
गम्भीरे जनार्दन अरु श्री अर्जुन जीता।
दामोदर साँपिले गदाधर ईश्वर हेम
विनीता॥ मयानंद महिमा अनंत, गुढिले
तुलसी दास। हरिके सम्मत जे भगत,
तिनदासन को दास ॥१०५॥

(श्रीनरवाहनजीकी कथा)

रहैं भै गाँव नाम नरवाहन साध सेवा
लूटि लई नाव ताको वन्दी खानो दियो है।
लौंडी आवैं देन कछु खायवेको आई दया
अति अकुलाय सो उपाय यह कियो है॥
बोली राधावल्लभ श्री हरिवंश नाम लेओ
पूछे शिष्य कहो आप पूछी कदि दियो है।
दई मँगवाय वस्तु राखियो दुराय बात
आय दास भयो कही रीझि पद दियो है ॥४१९॥

(भक्त समूहका वर्णन)

मूल छ०—यहै वचन परमाण दास गाँवरि
जटियाने भाऊ। बूँदी बनिया राम मंडोते

मोहन बारी दाऊ। मारौठी जगदीश दास
लक्ष्मण चटुथा बल भारी। सुनपथ में
भगवान बसै सलखान गुपाल उधारी॥
जोबनेर गोपाल के, भक्त इष्टता निर्वही।
श्री मुख पूजा सन्त की, आपनिते अधिकी
कही॥१०६॥

(जोबनेर के श्रीगोपालजी की कथा)

जोबनेर बास सो गोपाल भक्त इष्टताके
किया निर्वाह बात मोको लागी प्यारी ये।
आयो हो विरक्त कोउ कुल में प्रसंग गिनि
आयो सो परीक्षा लेन द्वार पै विचारिये।
आय पर्यो पाँय पाँव धारो निज मन्दिर में
सुन्दरी न देखों मुख प्रण कैसे टारिये।
चलो प्रण टारो जनि रहेगी किनारो करि
चले तब छिपी नेक देखी याके मारिये॥४२०॥
एक पै तमाचो दियो दूसरे ने रोष कियो
देवो या कपोल पै हू वाणी कही प्यारी है।
सुनि भरि आँसू आये गले लपटाय लाये
कही कैसे जाय यह रीति कछु न्यारी है॥
भक्त इष्ट सुन्यो मेरे बड़ो अचरज भयो
लई मैं परीक्षा भई शिक्षा मोको भारी है।

बोल्यो अकुलाय अजू कहाँ यह भाव तोपै
साधु सुख पाय कहै याहीते जिवारी है॥४२१॥

(वानर वंशीय सन्त श्रीलाखाजी की कथा)

मूल छ०—मरुधर खंड निवास भूप सब
आज्ञाकारी। राम नाम विश्वास भक्त
पदरज व्रत धारी। जगन्नाथ के द्वार दंडो-
तन प्रभु पै धायो। दई दासको दादि हुंडी
करि फेरी पठायो। ओघ सुरधुनी संग
ज्यों, जात बदल कुत्सित नरो। परमहंस
वंशीन में, भयो विभागी बानरो॥१०७॥

लाखा नाम भक्त जाकों बानरो बखानि कह्यो
कहै जग [1]डोम तासों मेरो शिरमोर है।
करै साधु सेवा बहु पाक डारि मेवा सन्त
जेंवत अनन्त सुख पावै कौर कौर है॥
ऐसे में अकाल पर्यो आगे धरि माल जाल
कैसे प्रतिपाल करैं ताको और ठौर है।

---

[1] राजस्थान में डोम नामकी एक गायक जाति है जो ढालुका कथिक आदि नामों से भी प्रसिद्ध हैं। ये लोग अपने को श्रीहनुमान वंशीय कहते हैं और नृत्य गान कला में अत्यन्त प्रवीण होते हैं। बहुत लोगों का मत है कि श्रीनाभा स्वामीजी भी इसी कुल में उत्पन्न हुए थे।

प्रभु जू सपन दियो कियो मैं जतन एक
गाड़ी भरी गेहूँ भैंस आवै करो गोर है ॥४२२॥
गेहूँ कोठी डारि मुंह मूंदि नीचे देवो खोलि
निकसै अतोल पीसि रोटी लै बनाइये।
दूध जितो होय सो जमाय के विलोय लीजे
दीजयो चुपरि संग छाछले जिमाइये।
खुलि गई आँखिं भाषैं तियासोंजू आज्ञा भई
भई मन भाई अजू हरिगुण भाषिये।
भोर भये गाड़ी भैंस आई वही रीति करी
करी साधु सेवा नाना भाँति न रिझाइये ॥४२३॥
आई कौन रीति ताकी प्रीतिहू बखान कीजे
लीजे उर धारि सार भक्ति निरधार हो।
रह्यो ढिग गांव तहां सभा एक ठांव भई
टूट गयो भाई सो उगाही को, विचार हो॥
बोलि कह्यो कोऊ यो व्योहार को तो भार चुक्यो
लीजिये सँभार लाखा सन्त भव पार हो।
लाज दबि तिन दियो गेहूँ लै पचास मन
दई निज भैंस जो सबका सरदार हो ॥४२४॥
मारवाड़ देश तें चल्यो सो साष्टांग करतो
हिये जगन्नाथ देव याही प्रण जाइये।
नेह भरि भारी देह वारफेर डारी कैसे
करै तनधारी नेक श्रम मुरझाइये॥

पहुंच्यो निकट जाय पालकी पठाई आप
कहैं लाखा भक्त कौन वेगि सो बताइये।
काहू कहि दियो जाय कर गहि लियो अजू
चलो प्रभुपास याही छिन ही बुलाइये ॥४२५॥
कैसे चढौं पालकी में प्रण प्रतिपाल कीजे
दीजे मोको दान याही भाँति जा निहारिये।
बोले प्रभु कही भाय माला जो बनाय लाये
आय पहिरावैं मोको सुनि उरधारिये॥
चढे यही जानि जीमें चाहैं चढ़ बढ़ कियो
पढ़ि पढ़ि पोथी प्रेम मोपै विसतारिये।
जायके निहारे तन मन प्राण वारे प्यारे
जगन्नाथ जू के नेक ढिंगते न टारिये ॥४२६॥
बेटी एक क्वारी व्याह हेत न विचार मन
धन हरि साधुन को कैसे कै लगाइये।
कीजे वाको काज कही जगन्नाथ देवजू ने
द्रव्य मोपै लीजे ऊन नेकहू न लाइये।
विदा पै न भये चले दृग भरि लये, गये
आगे नृपभक्त मग चौकी अटकाइये।
दियो है स्वपन प्रभु हट जनि करो अजू
हुंडी लिखि दइ लई विनय कै जताइये ॥४२७॥
हुँडी सो हजारकी सो लैके गृह द्वार आये
तामें ते लगाय सोक बेटी व्याह कियो है।

और सब सन्तन बुलाय के खवाय दिये
लिये पग, दास्य सुखराशि, पन लियो है ॥
ऐसे ही बहुत वार वाही के निमित्य लै लै
सन्त भुगताय चुके हरषित हियो है।
चरित अपार कछु मति अनुसार कहे
पायो जाने स्वाद सोतो पाय निधि जीयो है ॥४२८॥

(श्रीनरसिंह (नरसी) महताजीकी कथा)

मूल छं०—महा स्मार्त सब लोग भक्ति लवलेश न जानै। माला मुद्रा लखै तासुकी निन्दा ठानै। एसे कुल उत्पन्न भयो भागवत शिरोमणि। ऊपर ते सर कियो [1]खंड दूषण खोयो जिन॥ बहुत ठौर परचे दिये, रस रीति प्रीति हिरदे धरी। जगत विदित नरसी भगत, [2]गुर्जरधर पावन करी ॥१०८॥

जूनागढ़ वास पिता माता तन नाश भयो
रह्यो एक भाई औ भौजाई रिस भरी है।
डोलत फिरत आय बोलत पियाओ [3]नीर
भाभी सो न जानी पीर बोली जरी बरी है॥

१ प्रदेश। २ गुजरात की भूमि। ३ जल।

आवत कमाय जल प्याये बिन सरै कैसे
पीओ यों जवाब दियो, देह थर थरी है॥
निकसे विचारि कहूँ दीजे तन डारि जाय
शिव पै पुकार करैं यही चित्त धरी है ॥४२६॥
बीते दिन सात [1]शिव धामते न जात कहूँ
पर काहू [2]तुच्छ द्वार सोहू सुधि लेत है।
इतनी विचारि भूखप्यास दई टारि लियो
प्रकट स्वरूप धारि भयो हिये हेत है॥
बोले वर माँगो [3]अजी माँगि मैं न जानत हौं
तुम्हैं जोई प्यारो सोई देवो चित चेत है।
[4]परयो शोच भारी मेरी प्राणप्यारी नारी तासों
कहत डरत, वेद कहै नेति नेति है ॥४३०॥
दियो मैं वृकासुर को वर उर भयो डर
जैसे डर कोटि कोटि यापै वारि डारे हैं।
बालक न होय यह मालक है लोकन को
मन सो विचारि कहा दीजे प्राण प्यारे हैं॥
जोपै नहीं देऊँ मेरो बोलबो ही मोघ होय
दियो निज हेत तन अली रूप धारे हैं।

१ शिवमन्दिरसे। २ छोटे आदमीके दरवाजे। ३ नरसीजीने कहा। ४ शिवजी सोंचमें पड़गये कि मुझको प्रिय तो भगवान हैं जिनकोमें अपनी प्राण प्रिया पत्नी से भी नहीं कहता और वेद भी जिनको नेति नेति कहते है।

लाये वृन्दावन राशमंडल जटित मणि
प्रिया अगणित बीच [1]लालजू निहारे हैं ॥४३१॥
हीरन [2]खचित रास मंडल नचत दोऊ
रचत अपार नृत्य गान तान प्यारिये।
रूप उजियारी चन्द्र चाँदनी न सम ताकी
देत करतारी लाल गति लेत न्यारिये॥
ग्रीवाकी डुरनि कर आँगुरी मुरनि मुख
मधुर सुरनि सुनि श्रवण तयारीये।
बजत मृदंग मुहचंग संग अंग अंग
उठत तरंग रंग छवि जी की ज्यारीये ॥४३२॥
दई ले मसाल हाथ निरखि निहाल भई
लाल डीठि परी कोऊ नई यह आई है।
शिव सहचरी रंगभरी अटकरी बात
मृदु मुसकात नैन कोर सों जनाई है॥
चाहें याहि टारयो यह चाहै प्राण वारयो तव
श्याम ढिंग आय कही नीके समझाई है।
जाओ यह ध्यान करो करो सुधि आऊँ तहाँ
आये निज ठौर चटपटी सी लगाई है ॥४३३॥
कीन्ही [3]ठौर न्यारी विप्रसुता भई [4]नारी एक
सुत [5]उभै [6]वारी जग भक्ति विसतारी है।

१ श्रीकृष्ण भगवान। २ जडा हुआ। ३ स्थान=घर। ४ पत्नी। ५ दो। ६ पुत्री।

आवैं बहु सन्त सुखदेत हैं अनन्त गुण
गावत रिझावत है सेवा विधि [1]धारी है॥
जेती द्विज जात दुःख भयो अतिगात मान्यो
बडो उतपात दोष करें न विचारी है।
येतो रूप सागरमें नागर मगन महा
सकै कहा करि चहुँ ओर गिरिधारी है ॥४३४॥
तीरथ करत साधु आये पुर पूछे कोऊ
हुंडी करि देवै हमें द्वारिका सिधारिये।
वे जे रहे विप्र द्वेसी कही तिन बात ऐसी
नरसी [2]विदित साह आगे दाम डारिये॥
चरण पकरि गिरिजाओ यों लिखाओ अहो
कहो बार बार सुनि विनती न टारिये।
दियो लै बताय घर जाय वही रीति करी
भरी [3]अँकवार मेरो भाग कहा वारिये ॥४३५॥
सात सौ रुपैया गनि ढेरी कर दई आगे
लागि पग देवो लिखि कही बार बार है,
जानी बहकाये प्रभु दामदे पठाये लिखी
किये मनभाये साह साँवल उदार है॥
याही हाथ दीजिये लै कीजिये निःशंक काज
गये यदुराज [4]राजधानी सो वजार है।
ढूंढि फिरि हारे भूख प्यास मींडि डारे पुर
तजि भये न्यारे दुःख सागर अपार है ॥४३६॥

१ धारण की है। २ प्रसिद्ध। ३ गले लगाकर। ४ द्वारिका।

साहको स्वरूप धरि आये कांधे थैली धरि
कौन पास हुंडी दाम लीजिये गिनायके।
बोलि उठे ढूंढि हारे भले जू निहारे आज
कही लाज हमैं देत मैं हूँ पाये आय के॥
मेरो है [1]इकोसो वास जानै हरिदास कोऊ
लेवो सुख रास करो चीठी दीजे जायके।
धरे हैं रुपैया ढेर लिख्यो करो बेर बेर
फेर आय पाती दई लई गरे लायके॥४३७॥
देखि आये साह दौरि मिले उतसाह अंग
वेऊ रंग बोरे सन्त संगको प्रभाव है।
हुंडी लिखि दई दाम लिये सो खवाय दिये
किये प्रभु पूरे काम सन्तन सों भाव है॥
सुता ससुरार भई [2]छूछक विचार सास
देत बहु गारी जाके निपट अभाव है।
पिता सों पठाई कहि छाती ले जराई इन
जो पै कछु दियो जाय आओ यहि दाव है॥४३८॥
चले गाडी टूटी सी ले बूढे उभै बैल जोरि
पहुँचे नगर [3]छोर द्विजकही जायके।
सुनतहि आई देखि मुँह [4]पिचकाय कही
दाम नहीं नेक तुम कियो कहा आयके॥
चिंता जनि करो जाय सास ढिग ढरो लिखि

१ एकान्तमें। २ पुत्र जन्मोत्सव। ३ किनारे। ४ विगाडकर।

कागद में धरो अति उत्तम अथाय के।
कही समझाय सुनि निपट रिसाय उठी
कियो परिहास लिख्यो गाँव खुनसायके॥४३९॥
कागद ले आई देखि दूसरे फिराई पुनि
भूलि पै न जाई जान पाथर लिखाये हैं।
रहबेको दई ठौर फूटी ढही पौरि जाकी
बैठे शिरमौर आय यहु सुख पाये हैं।
जलदे पठायो भली भाँति ते औटायो भई
वरषा सिरायो यों समोयके न्हाये हैं।
कोठरी सँवारि आगे परदा सो दियो डारि
ले बजाये ताल वेस अगणित आये हैं॥४४०॥
गाँव पहिरायो छवि छायो यशगायो अहो
हाटक रजत उभ [1]पाथर हू आये हैं।
रहि गई एक भूले लिखत अनेक जहाँ
लेहों ताही पास जापै सब मिलि पाये हैं॥
विनती करत बेटी दीजिये जू लाज रहै
दिये मँगवाय हरि फेरिकै बुलाये हैं।
अंग ना समात सुता तातको निरखि रंग
संग चलीआई पति आदि विसराये हैं॥४४१॥
सुता रही दोय भोय भक्ति रही घरही में
एक पति त्यागि एक पति ही न कियो है।

१ पत्थर।

पुरमे फिरत उभै [1]गायिका सुचावन सों
धन सों न भेट काहू नाम कहि दियो है ॥
आय लगी गायबे सो कही समझाय अहो
पायबे को नाहीं कछू पावै दुःखहियो है ।
चाहो हरि भक्ति तो मुण्डायके लडाय लीजे
किये वार दूर रही प्रेमरस पियो है ॥४४२॥
मिलि उभै सुता रंग भिली संग गायन मे
चावन सों नृत्यकरे भावन वतायके ।
सालंग हो नाम मामा मंडलीक मंत्री रह्यो
कह्यो विपरीत वडी राजासों सुनायके ॥
बडे बडे [2]दंडी और पंडित समाज कियो
करो बाकी [3]भंडी देश दीजिये छुडायके ।
आये चार चोपदार चलो जू विचार कीजे
भयो दरवार हमैं दिये हैं पठायके ॥४४३॥
[4]चारौं तुम [5]जाओ टरि भयो हमैं राजडर
[6]सकें कहाकर अजू चलें संग संग ही ।
नाचत वजावत ये चली ढिंग गावत सो
भावन मगन भई भीजीभई रंग ही ॥
आये याही भाँति सभा प्रभाहत भई तोऊ
बोले कहा रीति यह युवती प्रसंग ही ।

१ गानेवाली=वेश्या । २ सन्यासी । ३ बेइज्जती । ४ दो पुत्री और दो गायिका । ५ अलग चली जाओ । ६ उनने कहा ।

कह्यो भक्ति गन्ध दूर पढे पोथी परी धूर
श्रीशुक सराही तिया [1]माथुरन भंग ही ॥४४४॥
बोलि उठयो विप्र एक छूछक प्रसंग देख्यो
कह्यो रसरंग भरयो ढरयो नृप पाँव में ।
कही जू विराजो गाजो नित सुख साजो जाय
करो हरिराय वश भीजे रहो भावमें ॥
धारो उर और शिरमोर प्रभु मन्दिरमें
सुन्दर केदारो राग गावैं भरे [2]चावमें ।
श्याम कंठमाल छूटि आवत रसाल हिये
देखि दुःख पावै परे विमुख स्वभाव में ॥४४५॥
नृपति सिखायो जाय वृथा यश छायो काचे
सूत में पुवायो हार टूटें ख्यात करी है ।
माता हरि भक्ता भूप कही जनि करो कान
तऊ बाण राजसकी माया मति हरी है ॥
गयो ढिंग मन्दिर के सुन्दर मंगाय पाट
तागो वटवाय गुहि माल करि धरी है ।
प्रभु पहिराय कही गाओ अब जानि परैं
भरे सुर राग और गायो पै न परी है ॥४४६॥
विमुख प्रसन्न भये तब तो उराहने दे
नये नये चोज हरि सनमुख भाषिये ।
जाने ग्वाल बाल एक माल गहि रहे हिये

१ यज्ञकर्ता चतुर्वेदी । २ आदत ।

जीय लाग्यो याही रूप कहो लाख लाखिये ॥
नारायण बडे महा मेरे भाग्य आप लिखे
करे कौन दूर छविपूर अभिलाषिये।
मेरो कहा जाय आय [1]परसै कलंक तुम्हे
राखिये निशंक हार भक्त मारनाखिये ॥४४७॥
गिरवी धरचो हो राग केदारो सो साह घर
धारि रूप नरसी को जाय सो छुड़ायो है।
कागद लै डारयो गोद मोदभरि गाय उठे
आय झन्न झन्न श्याम हार पहिरायो है॥
भयो जैजैकार नृप पाँय लपटाय गयो
गह्यो हिये भाव सो प्रभाव दरसायो है।
विमुख खिसाने भये गये उठि [2]नये नहिं
विना हरि कृपा भक्ति पन्थ [3]कानै पायो है ॥४४८॥
बन्धक धरचो हो राग सोई साहू ब्याही दोय
छोटी कहै बार बार दरस कराइये।
नरसी कही ही [4]भले सोई प्रभु कीन्ही साँची
जाय दरवाजे सो पुकारयो नाम आइये॥
सोवत रह्यो सो साहू कही छोटी तिया सों जू
दाम लेय देश्रो लखे सोई आई धाइये।
लिये दाम कियो काम कागद गहाय दियो
दियौ कछु खाइवेकों सोहू हरि पाइये ॥४४९॥

१ लगेगा। २ झुके। ३ किसने। ४ अच्छा।

करन [1]सगाई आयो विप्र वर भायो नहीं
घर घर फिरयो सोई नरसी बतायो है।
आय सुख पाय पूछ्यो सुत सो दिखाय दियो
कियो लै तिलक मन देखत चुरायो है॥
[2]अजू हम लायक न [3]तुम सब लायक हो
सायक सो छुटयो जाय नाम लैं सुनायो है।
[4]सुनतही माथो धुनि कहै तालकूटा वह
बाल बोरि आयो जाओ फेरि दुःख छायो है॥४५०॥
काटिके अंगूठा डारो तब सो उचारो बात
मनमें विचार कियो तिलक बनाय के।
जाने सुता भाग ऐसे रहे सोच पागि सब
आगे जब व्याहिवे को धनदें अघाय के॥
लगनहू लिखि दियो लियो द्विज आपि दियो
डारि राख्यो कहूँ गावे ताल ये बजायके।
रहे दिन चार पै विचार नहीं नेक मन
आये कृष्ण रुक्मिणी जू झूमि मिले धाय के॥४५१॥
ठौर ठौर पकवान होत तिया गान करें
घुरत निसान कान सुनिये न बात है।
चित्र मुख किये लै विचित्र पटरानी आप
[5]बोरी रंग बोरी पै चढायो सुत रात है॥

१ कन्याका सम्बन्ध। २ नरसीजी ने कहा। ३ ब्राह्मणने कहा। ४ कन्याके माता-पिता। ५ बोडी।

करी सो ज्योंनार तामें [1]मानस अपार आये
द्विजन विचारि [2]पोटें बांधी पैन मात है।
मणिमय साजबाज गज रथ ऊँट कोर
झमकें किशोर आज सजी यों बरात है ॥४५२॥
नरसीसों कहैं गहैं हाथ तुम साथ चलो
अन्तरिक्ष होंहुँ चलूँ, एती बात मानिये।
कही अजी जानो तुम मैं तो हिये आनौं यहै
लहै सुख मन मेरो फेंट ताल आनिये॥
आपही विचारि सब भार सो उठाय लियो
दियो डेरा पुरी समधीकी पहचानिये।
मानस पठायों दिन आयो पै न आये अहो
देखे छवि छाये नर पूछे सो बखानिये ॥४५३॥
[3]नर सी बरात मत जानो यह नरसी की
नरसी न पावै ऐसी समझ अपार है।
आयके सुनाई सुधि बुधि बिसराई काहे
करत हँसाई बात भाषी निराधार है॥
गयो जो सगाई करि फूलत सो आयो विप्र
निज अंग मावै कैसे रंग बिसतार है।
[4]कही मात्र घास धनराशि सों न पूजै कहूँ
[5]चहुँ दिशि पूर रही देखो भक्तिसार है ॥४५४॥

१ मनुष्य । २ गठरियां। ३ मनुष्यों जैसी । ४ पशुओं के लिये तृणके लिये कहा सो भी कन्या पक्ष वालोंकी सारी सम्पत्तिसे नहीं पूरा पड़ा। ५ बारात चारों दिशाओंमें फेलरही थी।

चले अचरज मानि देखि अभिमान गयो
लयो पाछो ब्राह्मणको हमें राखि लीजिये।
जाय गहि पाँय कहो भाय भरि दया करो
गये दृग भरे पाँव परे कृपा कीजिये॥
मिले भरि अंकले दिखायो सो मयंक मुख
हूजिये निःशंक इन्हें भार सुता दीजिये।
ब्याह करि आये भक्ति भाव लपटाये सब
गाये गुण जाने जेते सुनि सुनि जीजिये ॥४५५॥

(श्रीयशोधरजी की कथा)

मूल छ०– सुत कलत्र संवन्धि सबै गोविन्द परायण। सेवत हरि, हरिदास द्रवत मुख [1]राम रसायण। सीता पति के सुयश [2]प्रथम हरिगमन बखान्यो। [3]द्वै सुत दीजे मोहि कवित सबही जग जान्यो॥ गिरा गदित लीला मधुर, सन्तन आनँद दायिनी। दिवदास वंश यशधर सदन, भई भक्ति अनपायिनी ॥१०९॥

१ राम नाम रूपी एवं राम यश रूपी महौषधि। २ श्रीविश्वामित्रजी के यज्ञकी रक्षार्थ प्रथम गये। ३ कविता का प्रथम चरण है।

(श्रीनन्ददासजीकी कथा)

मूल छ०—लीला पद रस रीति ग्रन्थ रचनामें [1]नागर। सरस [2]उक्ति युत युक्ति भक्ति रसगान [3]उजागर। [4]प्रचुर जलधि लों सुयश रामपुर ग्राम निवासी। [5]सुकुल शुक्ल संवलित भक्त पदरेणु उपासी॥ चन्द्रहास अंगज सुहृद, परम प्रेम पथ महँ पगे। नन्ददास आनन्द निधि, रसिक सु प्रभुहित रँगमगे॥११०॥

(श्रीजनगोपालजीकी कथा)

मूल छ०— भक्ति तेज अति भाल सन्त मंडल को [6]मंडन। बुधि प्रवेश भागवत ग्रंथ संशय को खंडन। नरहड ग्राम निवास देश [7]बागड निस्तारचो। नवधा भजन प्रबोध [8]अननि दासन व्रत धारचो॥ भक्त [9]कृपावांछी सदा, पदरज राधालाल की। संसार सकल व्यापक भई, [10]कजरी

१. चतुर। २. वर्णन। ३. प्रसिद्ध। ४. महान=फैला हुआ। ५. शुक्लआस्पद विभूषित सुन्दर वंश ६. सुशोभित करनेवाले। ७. बीकानेर राज्य की मरुभूमि को बागड प्रदेश कहा जाता है। ८. अनन्य। ९. चाहा। १०. गायन विशेष।

जन गोपाल की॥१११॥

(श्रीमाधवजीकी कथा)

मूल छ०—प्रसिद्ध प्रेम की रास [1]गढागढ परच्यो दीयो। ऊंचे ते भयो पात श्याम साँचो प्रण कीयो। सुत नाती पुनि सदृश चलत वाही परिपाटी। भक्तन सों अति प्रेम नेम नहिं कोउ [2]अंगघाटी॥ नृत्य करत नहिं तन सँभार, सम सर [3]जनकनकी सकाति। माधव दृढ महि ऊपरै, प्रचुर करी [4]लोटन भगति॥११२॥

गढागढ पुर नाम माधो बढी प्रेम भूमि
लोटैं जब नृत्य करें भूलैसुधि अंग की।
भूपति विमुख झूँठ जानिके परीक्षा लई
आनि तीन [5]छात पर देखी गति [6]रंगकी॥
नूपुर सो बांधि नाच साँच सो दिखाय दियो
गिरचो सो [7]कराहमध्य जीयो मति पंगु की।
बडो [8]त्रास भयो नृप [9]दास विश्वास बाढ्यो

१. ग्रामका नाम है। २. कुछ भी कभी। ३ पितृ परम्पराकी शक्तिसे। ४ पृथिवी पर लोट पलोट करते हुए नृत्य गान करना। ५ मञ्जिल। ६ नृत्य गान की। ७ प्रतप्त घृत कराह=कढ़ाही में। ८ मरजानेका डर। ९ भक्तोंका।

वाढ्यो उरभाव रीति न्यारी या प्रसंग की ॥४५६॥

(श्रीअंगदजी की कथा)

मूल छ०–[1]नग अमोल इक ताहि सवहि भूपति मिलि [2]याचैं। साम दाम बहु करैं दास नाहिन मति [3]काँचैं। एक समय संकट में लै [4]पानीमँह डारचो ॥ प्रभो ! तिहारी वस्तु वदन ते वचन उचारचो ॥ पाँच दोय शत कोसते, हरि हीरा लै उरधरचो। अंगदको अभिलाष शुभ, पुरुषोत्तम पूरण करचो ॥११३॥

रायसेन गढ बास नृप सो सिलाहदीजू
ताको यह काका रह्यो अंगद विमुख है।
नारीं ताकी प्यारी प्रभु साधु सेवाधारी उर
आये गुरु घर कहैं कृष्णकथा सुख है ॥
बैठे मौन कौने देखि कैसे मौन रह्यो जात
बोल्यो तिया जात कहा करो नर रुख है।
सुनि उठि गये गुरु अन्न जल त्याग्यो तानैं
लिये पाँव जाय विषै वश भयो दुःख है ॥४५७॥

१ रत्न=हीरा। २ मांगते थे। ३ कचाते नहीं थे। ४ तलाव में।

मुख न दिखावै याहि देख्यो ही सुहावै कही
भावै सोही करो नेक वदन दिखाइये।
मैं हूँ जल त्यागि दियो अन्नजात कापै लियो
जीवों तबही मैं जब तूहूँ कछु खाइये।
बोली मोसों बोलो जनि छाँडों तन याही छिन
प्रण साँचो होतो जब सुनत समाइये।
कहो अब करों [1]सोई, मेरी मति गई खोइ
भई उर दया बात कही समझाइये ॥४५८॥
[2]वेही गुरु करो जाय पाँयनमें परो, गयो
चावनि लिवाय लायो भयो शिष्य दीन है।
धारी उरमाल [3]भाल तिलक बनाय कियो
लियो [4]शीथ प्रीति ऐसी उपजी नवीन है॥
चढी फौज संग बैरी चढयो पुरमांहि बढयो
[5]कढयो टोपी लेके हीरा शत एक पीन है।
डारे सब बेच [6]पाग पेच मध्य राख्यो एक
भाष्यो यों अमोल करो जगन्नाथ लीन है ॥४५९॥
काना कानी भई नृप बात सुनि लई कही
हीरा वह देय तोपै और माफ किये हैं।
आय समझावै बहु युक्ति सो बनाय लोग

१ वही=सन्त सेवा। २ उनको ही गुरु बनाओ। ३ ललाटपर। ४ शीथ=उच्छिष्ट प्रसाद। ५ वह टोपी=ताज लेकर घर से निकल गये कि जिसमें १०० हीरा सामान्य और १ बहुत बडा हीरा जडा हुआ था। ६ पगडी के पेच=लपेटोंमें।

मन नहीं आवैं याके जाय कहि दिये हैं ॥
अंगद बहिन, लागै नृप भूआ पागै तासों
देवो विष मारो कहि ताके पग छूये हैं।
करत रसोई घोर गरल मिलायो पाक
भोग सो लगाय कहि आओ बोलि लिये हैं ॥४६०॥
ताकी एक सुता संग लैके बैठें जेंन को
आई सो छिपाय कहीं जेंओ कहूँ गई है।
जेंवत न बोधि हारी तब सो विचारी प्रीति
भीति रोय मिली गरे रीति कही सारी है ॥
प्रभुलै जिवाये राँड [1]भाँड कै निकासि दई
देकर किंवार सब पायो, [2]ओप नई है।
[3]वहै दुःख रह्यो हिये कह्यो कैसे जात काहू
बात सुनी नृपहू वो जैसी भाँति भई है ॥४६१॥
चले [4]नीलाचल हीरा जाय पहिराय आवैं
आय घेरि लीन्हे नृप नग्न्हि खिसायके।
कही डारि देओ कै लराई सनमुख लेओ
वश न हमारो भूप आज्ञा आये धायके ॥
बोले नेक रहो मैं नहाय [5]पकराय देत
हेत मन और जल डारयो लै दिखायके।
बस्तु ये तिहारी प्रभु लीजिये उचारी इमि

१ दुर्दशा करके। २ शोभा नई हो गई=बढ गई। ३ विषभोग लगानेका। ४ श्रीजगन्नाथपुरी। ५ दे देता हूँ।

[1]वाणी लागी प्यारी उर धारयो सुख पायके ॥४६२॥
[2]येतो घर आये [3]वेतो जलमध्य कूद छाये
अति अकुलाये नेक [4]खोज नहीं पायो है।
राजाचलि आयो सब नीर कढवायो कीच
देखि मुरझायो दुःख सागर नहायो है ॥
जगन्नाथ देव आज्ञा दई [5]वाहि सुधि देओ
आयके सुनाई नर, [6]तन विसरायो है।
गयो जाय देख्यो [7]उरपर जगमगा रह्यो
लह्यो सुख नैनन सो कापै जात गायो है ॥४६३॥
राजा हिय ताप भयो दियो अन्न त्यागि कह्यो
आवै जोपै भाग्य मेरे ब्राह्मण पठाये हैं।
धरणोदे रहे कहे नृपके वचन सब
तब ह्वै दयाल आप पुरढिग आये हैं ॥
भूप सुनि आगे आय पाँय लपटाय गयो
लयो उर लाय दृग नीर सों भिजाये हैं।
राजा सरवस दियो जियो सो भजन कियो
हियो सरसायो गुण जाने जिते गाये हैं ॥४६४॥

(करोली नरेश श्रीचतुर्भुजसिंहजीकी कथा)

मूल छ०—भक्तागमन सुनत सम्मुख योजन इक जाई। सदन आनि सत्कारि

१ भगवानको। २ श्रीअंगदजी। ३ राजभृत्य। ४ पता। ५ अंगदजी को। ६ शरीर की सुधि। ७ वक्षस्थल।

सरस गोविन्द बडाई ॥ पद प्रक्षालत स्वकर राय रानी मन साँचे । धूप दीप नैवेद्य बहुरि तिन आगे नाचे ॥ यह रीति करोलोधीशकी, तन मन धन आगे धरैं । नृपति चतुर्भुज भक्ति को, कौन भूप सरवर करै ॥११४॥

पुर ढिंग चारो ओर चौकी राखी योजन पै
जोई जन आवै तिन्है लावत लिवायके ।
मालाधारी दास कोऊ आवै जो पै द्वार तो पै
करै वही रीति जो समाई छप्पै गाय के ॥
सुनी एक भूप भक्त निपट [1]अनूप कथा
सबको भंडार खोलि देत बोल्यो धाय के ।
पात्र औ अपात्र को विचार ही जो नाहिं होवै
कहा ऐसी बात दई लोगन उडायके ॥४६५॥
भागवत [2]गावैं भक्त भूप घर विप्र एक
[3]बोलके सुनावैं ऐसी मन मत लाइये ।
पावैं आशी कौन हिये भौन में प्रवेश करि
भरि अनुराग कहा उर मधि आइये ॥
करीलै परीक्षा भाट समझाय भेज्यो एक
कीजे भाल टीको द्वार दास यों सुनाइये ।

१ विचित्र । २ कथा करते थे । ३ उनने कहा ।

गयो भूलि, गयो फूलि कुल विसतार कह्यो
लियो पहिचानि अब जान कैसे पाइये ॥४६६॥
बीते दिन बीस तीस भई तब [1]सीख सुधि
कही हरिदास कोऊ आयो यों सुनाइये ।
बोले निःशंक जाओ गाओ गुण गोविन्द के
आये घर मध्य भूप करी जैसी भाइये ॥
भक्तिके प्रसंग को न रंग क्योंहू नेक जानैं
जान्यो उनमानि सो परीक्षा मँगवाइये ।
दियो सो भण्डार खोलि लियो मन मान्यो दई
संपुट में [2]कौडी एक जरी लपटाइये ॥४६७॥
आयो वाही राजा पास सभा में प्रवेश कियो
लियोधन दियो पाछे सोई लै दिखायो है ।
खोलिके लपेटा मध्य सम्पुट निहारी कौडी
समझ विचारि हारे मनमें न आयो है ॥
बडो भागवत विप्र पंडित प्रवीण महा
निशि रस लीन जानि आयके बतायो है ।
कह्यो उनमानि भक्त मानिबो प्रमाणजरी
मूँदि के पठाई सोई गुण समझायो है ॥४६८॥
राजा रीझ पाँव गहे कहे जू वचन नीके
ऐ पै नेक आप जाय [3]तत्व याको लाइये ।
आये दौरि पाँव लपटाये भूप भाव भरे

१ राजाका सिखावन । २ कौडी । वास्तविक मर्म ।

परे प्रेम सागर में चरचा चलाइये ॥
चलवे न देत सुखदेत चले लोल मन
खोलके भण्डार दियो लियो न रिझाइये ;
उभै [1]सुआ [2]सारौ कही एक [3]कर धारो मेरे
दई [4]अकुलाय, लयी मानो निधि पाइये ॥४६६॥

आयो राजा सभा बहु बातन अखाड़ो जहाँ
बोलि उठी मैना कृष्ण कहो झारि डारे हैं।
पूछे नृप कहो अहो लहौ सब याही सों जू
पक्षी वा समाज रहैं हरि प्राण प्यारे हैं ॥
कोटि कोटि रसना बखानों पै न पाऊँ पार
सुनि [5]सार भक्ति [6]आय सीस पाँव धारे हैं।
[7]राखौ यह खग पगि रह्यो तन मन श्याम
[8]अति अभिराम रीति मिले औ पधारे हैं ॥४७०॥

(श्रीमीराँबाईजीकी कथा)

मूल छ०—सदृश गोपिका प्रेम प्रकटि कलि-युगहि दिखायो। निर अंकुश अति निडर रसिक यश रसना गायो ॥ दुष्टन दोष विचारि मृत्युको उद्यम कीयो। बार

१ शुक=तोता। २ मैना। ३ मेरा हाथ में दे दो। ४ व्याकुल होकर। ५ यथार्थ भक्ति। ६ कुस राजाने आकर चरण पकड़े। ७ पक्षी लौटा कर कहा। ८ श्री चतुरभुज नृपति उनसे मिले और प्रार्थना पर-वस हो उनके नगर में पधारे।

न बाँको भयो गरल अमृत ज्यों पीयो ॥ भक्ति निशान बजाय की, काहू ते नाहिन लजी। लोक लाज कुल शृंखला, तजि मीराँ गिरिधर भजो ॥११५॥

[1]मेरतो जनमभूमि झूमि हित नैन लगे
पगे गिरिधारीलाल पिता ही के धाम में।
राणा के सगाई भई करी व्याह सामा नई
गई मति बूडि वा रंगीले घनश्याम में ॥
भाँवरी परत मन साँवरे सरूप माँझ
ताँवरे सी आवै चलिबेको पति ग्राम में।
पूछे पिता माता पट आभरण लीजिये जू
लोचन ढरत नीर कहा काम [2]दाम में ॥४७१॥

देओ गिरिधारी लाल ज्यो निहाल कियो चाहो
और धन माल सब राखिये उठाय के।
बेटी अति प्यारी प्रीति रंग चढ्यो भारी
रोय मिली महतारी कही लीजिये लडाय के ॥
डोला पधराय दृग दृगसों मिलाय चली
सुख न समाय चाय प्राणपति पायके।
पहुँची भवन सासु देवी पै गमन कियो
तिया अरु वर गठजोरी करी भायके ॥४७२॥

१ मेरता मारवाड प्रदेश में है। २ द्रव्य में।

देवीको पुजायवेको कियो लै उपाय सासु
बरषै पुजाय पुनि पूजो वहू [1]भाषिये।
बोली जू विकायो माथो लाल गिरिधारी हाथ
और को न नवें एक वेही अभिलाषिके॥
बढत सुहाग याके पूजे, ताते पूजा करो
करो जनि हठ शीश पाँयन पै राखिये।
कही बार बार तुम यही निरधार जानो
वही [2]सुकुमार जापे वारि फेरि नाखिये॥४७३॥
तब तो [3]खिसानी भई अति जर वर गई
गई पुत्र पास यह बधू नहीं कामकी।
अब ही जवाब दियो कियो अपमान मेरो
आगे क्यों [4]प्रमाण करें भरें [5]स्वास चाम की॥
राणा सुनि कोप करयो धारयो हिय मारिवोई
दई ठौर न्यारी देख रीझी मति [6]वाम की।
लालन लडावै गुण गायके ह्लावै साधु
संग मन भावै जिन्हें लागी चाह श्यामकी॥४७४॥
आयके ननद कहै गहै क्यों न चेत भाभी
साधुन सों हेत में कलंक लागै भारी ये।
राणा देशपति लाजै बापकुल [7]रति जाय
मानि मेरी वात वेगि संग [8]निरवारिये॥

१ कही। २ श्रीगिरिधारीलाल। ३ क्रुद्ध हो गई। ४ मानेगी। ५ चर्मकी धौंकनी सरीखे लंबे लंबे श्वास। ६ श्रीमीराजी। ७ प्रेम। ८ छोड़दे।

लागे प्राण साथ सन्त देत है अनन्त सुख
जाको दुःख होय ताको नीके करि टारिये।
सुनिके कटोराभरि गरल पठाय दियो
लियो करि पान रंग चढयो यों निहारिये॥४७५॥
गरल पठायो सोतो शीश लै चढायो [1]संग
त्याग विष भारी ताकी [2]भार ना सँभारी है।
राणा लै लगाये चर बैठें साधु ढिंग ढर
तबही खबर करो मारों यह धारी है॥
राजै गिरिधारी लाल तिनही सो रंगजाल
बोलत हँसत ख्याल कान परी प्यारी है।
जायके सुनाई भई अति [3]चपलाई आयो
लिये तरवार [4]पट खोल यों पुकारी है॥४७६॥
जाके संग रंगभीजी करति प्रसंग नाना
कहाँ वह नर गयो वेगि ही बताइये।
आगे ही विराजैं कछु तोसों नहीं लाजैं [5]अभू
देखि सुख साजैं आँखैं खोलि सरसाइये॥
भयो सो खिसानो राणा लिख्यो चित्र भीति मानो
[6]उलटि पयानो कियो नेक मन आइये।
देख्यो सो प्रभाव ऐपै भावमें न भीज्यो हियो
विना हरि कृपा कहो कैसे कर पाइये॥४७७॥

१ सत्संगके त्यागका। २ तेजी। ३ आतुरता। ४ किवाड़। ५ अभी भी। ६ वापस चला गया।

विषयी कुटिल एक साधु वेष धारि लियो
कह्यो यों प्रसंग आय अंग संग कीजिये।
आज्ञा मोको दई आप लाल गिरिधारी अहो
शीश धरि लई करि भोजन हू लीजिये॥
सन्तन समाज में बिछाय सेज बोलि लियो
शंक अब कौनकी निशंक रस भीजिये॥
श्वेत मुख भयो विषै भाव सब गयो नयो
पाँयन पै आय मोको भक्तिदान दीजिये॥४७८॥
रूप की निकाई सुनि अकबर मन आई
लियो तानसेन संग देखिबे को आयो है।
देखिके निहाल भयो छवि गिरिधारीलाल
पद सुखजाल एक तबही चढ़ायो है॥
वृन्दावन आई जीव गुसाई सौं मिलि झिली
तिया मुख देखबे को प्रण लै छुड़ायो है।
देखि कुञ्ज कुञ्ज लाल प्यारी सुखपुंज भरे
धरि उरमाँझ आय देश बन गायो है॥४७९॥
राणा की मलीन मति देखि बसी द्वारावती
रति गिरिधारीलाल नितही लड़ाइये।
लागी चटपटी भूप भक्ति को स्वरूप जानि
अति दुःख मानि विप्र श्रेणी लै पठाइये॥
बेगिलैके आओ मोको प्राणदै जियाओ अहो

१. झुकाया। २. वृन्दावन।

गये द्वार धरणा दे विनती सुनाइये।
सुनि बिदाहोन गई राय रण छोड़जीपै
छाँडत हो राखो लीन भई नहीं पाइये॥४८०॥

श्रीमीरांजी के अपार चरित्रों में से जो सुन पाये उन्हीं का श्रीप्रियादासजी महाराज ने चयन किया है। श्रीमीरांजी के गुरुदेव श्रीरैदासजीका नाम एवं गोस्वामी पादके साथ पत्राचार आदि जो श्रीरांजी के पदों से प्रत्यक्ष सिद्ध हैं उनका उल्लेख नहीं कर पाये हैं अतः वे आगे दिये जा रहे हैं।

नित्य के राणाजी के कुचक्रोंसे आक्रान्त होकर जब श्रीमीरांजीने द्वारिका रहनेका विचार किया तब एक पद पत्रके रूपमें लिखकर श्रीराम-चरित मानसकार गोस्वामी पाद श्रीतुलसीदासजीके पास भेजा जिसमें कर्तव्य पथ प्रदर्शन करनेकी प्रार्थनाकी है वह पद यह है—

श्रीतुलसी सुखनिधान, दुख हरण गुसाईं।
बारहिबार प्रणाम करूं, मम हरहु शोक समुदाई॥
घरके स्वजन हमारे जेते, सबन उपाधि बढ़ाई।
साधु संग अरु भजन करत में, देत कलेश महाई॥
बालपने ते मीरां कीन्ही, गिरधरलाल मिताई।
सोतो अब छूटत नहिं क्योंहू, लगी लगन बरियाई॥
मेरे मात पिताके सम हो, हरि भक्तन सुखदाई।
हमको कहा उचित करिबो है, सो लिखियो समझाई॥

श्रीगोस्वामी पाद ने इसके उत्तर में यह पद लिख भेजा जो विनयपत्रिका में देखा जाता है।

जाके प्रिय न राम वैदेही।
तजिये ताहि कोटि वैरी सम यद्यपि परम सनेही॥

तजे पिता प्रह्लाद विभीषण बन्धु भरत महतारी।
बलि गुरु तजे कन्त ब्रज बनितनि भइ जगमंगलकारी॥
नातो नेह रामसों मनियत सुहृद सुसेव्या जहाँलों।
अंजन कहा आँख जेहि फूटै बहुतो कहौं कहाँलों॥
सो तुलसी सब भाँति परमहित पूज्य प्राण ते प्यारो।
जासों होय सनेह राम पद एतो मतो हमारो॥

श्रीगोस्वामी पाद की यह सम्मति प्राप्त करके ही आप द्वारिका पधारी थी।

श्रीमीरांजीने अपने अनेक पदोंमें श्रीरैदासजी को अपना गुरु कहा है उनमें से २ पद यहां दिये जा रहे हैं।

मीरां मनमानी सुरत सैल समानी।
जब जब सुरत लगै वा घरकी, पल पल नैनन पानी॥
सो हिय पीर तीर सम साले, कसक कसक कसकानी।
रात दिवस में नींद न आवत, भावत अन्न न पानी॥
ऐसी पीर विरह तन भीतर, जागत रैन विहानी।
कासों पीर कहों तनकी री, मैं तो भरमी खानी॥
खोजत फिरों भेद वा घरको, कोइ न करत बखानी।
श्रीरैदास मिले मोहि सद्गुरु, दीन्हि सुरत सहदानी॥
मैं मिलि जाय पाय पिय अपना, तब मोरी पीर बुझानी।
मीरां खाक खलक शिर डारी, अरु अपना घर जानी॥

श्रीमती पद्मावती शबनम द्वारा संग्रहीत मीरांजीके वृहदपद संग्रह के पृष्ठ ३१९ पर अंक ५८० में भी यह पद संग्रहीत हुआ है।

मेरो मन लाग्यो हरि जू सों, अब ना रहूँगी हटकी॥

गुरु मिलिया रैदासजी, दीन्ही ज्ञानकी गुटकी।
चोट लगी निज नाम हरी की, म्हारें हिवडैं खटकी॥
मोती माणक लडी न पहरूं, मैं कद ही की नटगी।
गहणो तो म्हारे माला दुलडी, अरु चन्दन की कुटकी॥
राणा कुलकी लाज गँवाई, साधाँ की सँग भटकी।
नित उठ हरिजी के मंदिर जावां, नाचां दे दे चुटकी॥
भाग खुल्या म्हाँका साधु संग सूं, साँवरिया सूं लटकी।
जेठ वहू की काँण न मानू, घूंघट पडगई पटकी॥
परम गुरां कै शरणै रहस्यां, दंडोत करस्यां लुटकी।
मीरां के प्रभु गिरधर नागर जनम मरण से छुटगी॥

ये दोनों पद निम्नलिखित महानुभावों ने भी अपने मीरां विषयक प्रकाशनों में ग्रहण किये हैं और श्रीमीरांजीको श्रीरैदासजीकी शिष्या स्वीकार किया है।

१. श्रीहनुमान प्रसादजी पोद्दार ने अंग्रेजी भाषामें प्रकाशित मीरां बाई में।

२ श्रीनरोत्तमदासजी स्वामी ने मीरां शब्दावली में पृष्ठ २०, २५ और ३७ पर तीन पद दिये हैं जो बेलवेडियर प्रेस प्रयागसे प्रकाशित हुई है।

३ श्रीकृष्णप्रभाकर एवं श्रीबांकेबिहारीने "ब्रजचन्द्र चकोरी मीरां" में, जो राधिका पुस्तकालय प्रकाशन ट्रस्ट राधाकृष्ण भवन वृन्दावनसे प्रकाशित है।

श्रीमीरांबाईने श्रीरामनाम और श्रीराम रूपका भी प्रचुर यश वर्णन किया है परन्तु उनकी उपासना श्रीगिरिधर नागर भगवान श्रीकृष्णकी ही थी इसी बातको लेकर उनके विषयमें लिखनेवाले अनेका-

नेक लेखक भ्रममें पड गये हैं और किसीने उनको श्रीवल्लभ संप्रदायके प्रसिद्ध कवि और गायक सन्त श्रीसूरदासजी की शिष्या कह दिया है और किसीने श्रीगौरांग महाप्रभुकी शिष्या। परन्तु श्रीमीरांजीने अनेकानेक सन्तोंका गुणगान करते हुए भी अन्य किसी को अपना गुरु किसी पदमें नहीं कहा, जबकि श्रीरैदासजी को अनेक पदोंमें कहा है। अतः इस पुष्ट प्रमाणके अस्तित्व पर भी जो लोग किसी प्रकार के आग्रह या भ्रम वश उनको श्रीरामानन्द संप्रदायानुयायिनी माननेमें शंका करते हैं तो यह आश्चर्य ही की बात है। वे लोग सायद यह समझते हैं कि श्रीरामानन्द संप्रदायमें भगवानके श्रीराम रूपके अतिरिक्त अन्य रूपोंकी उपासना असंभव है परंतु भक्तमालके देखनेसे उनका यह भ्रम निर्मूल हो जाना चाहिये। श्रीरामानन्द संप्रदायमें प्रधान रूपसे भगवान श्रीरामकी उपासना होते हुए भी भक्तकी विशेष रुचि एवं परिस्थितिके अनुसार श्रीकृष्ण नृसिंह नारायण आदि रूपोंकी उपासना का उपदेश किया जाता है। इतनाही नहीं श्रीनाभास्वामीने भक्तमालके आरंभमें भगवानके २४ अवतारोंकी वंदनाकी है और श्रीप्रियादासजीने लिखा है :—

जिते अवतार सुख सागर न पारावार,
करैं विसतार लीला जीवन उधार को।
जाही रूपमाँझ मन लागें जाको पागें ताहि,
जागें हियभाय वही पावें क्यों न पारको॥
सबही हैं नित्य ध्यान करत प्रकाशें चित्त,
जैसे रंक पावै वित्त जानें रत्नसार को।
केशन कुटिलताई त्योंही मीन सुखदाई,
अगर सुरीति भाई बसौ उर हार को॥

श्रीप्रियादासजीको आचार्य शिरोभूषण श्रीअग्रदेवाचार्यजीकी यह

रीति अत्यन्त प्रिय लगी कि आप भगवानके सभी नाम रूपोंको नित्य अपरिमित सुखाम्बु निधि और हृदय प्रकाशक मानते हैं और कहते हैं कि जिस भक्तका मन जिस नाम रूपमें लग जाय वह उसी नाम रूपमें परात्पर प्रभुको उसी प्रकारसे पालेता है कि जिस प्रकार रत्नके सार (महामूल्यवानता) को जानने पर एक कंगाल भी उसका पूरामूल्य प्राप्त कर लेता है। पाठक देखेंगे कि भक्तमालमें अनेकानेक श्रीरामानन्द संप्रदायके आचार्य (श्रीनरहर्यानन्दाचार्य स्वामी आदि) और अनेकानेक भक्तराज (आमेर नरेश श्रीपृथ्विराजजी आदि) के श्रीरघुवर यदुवर यश गान और श्रीद्वारिकाधीशादिके दर्शनादिके प्रसंग प्रचुर परिमाणमें वर्णित हैं।

(आमेर नरेश श्रीपृथ्वीराजजीकी कथा)

मूल छ०—कृष्णदास उपदेश [१]परमतत
परच्यो पायो। निर्गुण सगुण निरूपि
तिमिर अज्ञान नशायो॥ [२]काछ [३]वाच
[४]निकलंक मनो [५]गाँगेय युधिष्ठिर। हरि
पूजा प्रहलाद धर्मध्वज धारी जग पर।
पृथ्वीराज परच्यो प्रकट, हरि आयुध
अंकितकियो। आमेर अछत नृप कूर्मको,
द्वारिकेश दर्शन दियो॥११६॥

पृथ्वीराज राजा चल्यो द्वारिका श्रीस्वामी संग
अति रस रंग भरयो आज्ञा प्रभु पाई है।

१ तत्व। २ लंगोट। ३ वचन। ४ कलंक छित=सच्चे। ५ भीष्म पितामह।

सुनिके दीवान दुःख मानि निशि कान लग्यो
कहिपायो साधु सेवा भक्ति पुर छाई है॥
देखिये निहारिके विचार कीजे इच्छाजोई
लीजे नहिं साथ जाओ बात लै दुराई है।
आयो भोर भूप हाथ जोरि के सो ठाढो रह्यो
कह्यो रहो देश सो निदेश नहि आई है ॥४८१॥
[1]द्वारावती नाथ देखि गोमती में स्नान करौं
धरौं भुजछाप आप मन अभिलाषिये।
[2]चिंता जनि करो तीनो बात यहीं लीजिये जू
[3]दीजे जोई आज्ञा सोई शीश धरि राखिये॥
आये पहुँचाय दूर नैन जल पूरि रहे
दहे उर भारी कहाँ संग रस चाखिये।
बीते दिन दोय निशि रहेहु ते सोय, भोय-
गई भक्ति गिरा, आय वाणी मधु भाषिये ॥४८२॥
अहो पृथ्वीराज कही स्वामी ही सी वाणी लही
आयो उठि दौर वाही ठौर प्रभु देखे हैं।
घूम्यो कह्यो कान धरो गोमतीमें स्नान करो
सुनिके नहायो पुनि [4]वे न कहूँ पेखे हैं॥
शंख चक्र आदि छाप तन सब व्याप गई
भई यों अँवार रानी आय अवरेखे हैं।

१ राजा ने कहा। २ श्रीपयोहारीजी ने आज्ञादी। ३ राजाने कहा। ४ श्रीपयोहारीजीको।

बोले [1]रह्यो नीर मो शरीर ले सनाथ कीजे
लीजे हिये नाथ, [2]निज भाग्य करि लेखे हैं ॥४८३॥
भयो जब भोर पुर बडो भक्ति शोर परयो
करयो आय दरसन भीर भई भारी है।
आये बहु सन्त ओ महन्त बडे बडे धाय
अति सुख पाय देह रचना निहारी है॥
नाना भेट आवै [3]हित महिमा सुनावै राजा
सुनत लजावै जानी कृपा बनवारी है।
मन्दिर करायो प्रभु रूप पधरायो सब
जग यश गायो कथा मोको लागी प्यारी है ॥४८४॥
विप्र दृग हीन सो अनाथ वैजनाथ द्वार
परयो चख चाहै मास केतेही विहाने हैं।
आज्ञा वार दोय चार भई येन फिरे सोई
याको हठ सार देखि शिव पिघलाने हैं॥
पृथ्वीराज अंगके अंगोछा सो अंगोछो जाय
आयके सुनाई द्विज गौरव डराने हैं।
नयो मंगवाय सो छुवाय दियो छुयो नैन
खुले भयो चैन जन लखि सरसाने हैं ॥४८५॥

(भक्त नरेशोंका वर्णन)

मूल छ०—लघु मथुरा मेडता भक्त अति
जयमल्ल पोषे। टोडे भजन निधान

१ नचा नहा। २ रानीने। ३ प्रेमकी।

रामचंद हरिजन तोषे । अभयराम इकरसहि नेम नीमाके भारी । करमसि में भगवान वीर भूपति व्रतधारी ॥ ईश्वर अक्षय रायमल, मधुकर नृप सरवस दियो । भक्तन को आदर अधिक, राजवंश में इन कियो ॥११७॥

(श्रीजयमलजीकी [1]दूसरी कथा)

मेरते वसत नृप भक्तिको स्वरूप जानै
[2]जैमल अनूप जाकी कथा कहि आये हैं ।
करी साधु सेवा रीति प्रीतिकी प्रतीति भई
नई एक सुनो हरि कैसे कै लडाये हैं ॥
नीचे मानि मन्दिर सो सुन्दर विचारी बात
छात पर बंगला विचित्र लै बनाये हैं ।
विविध विछोना सेज राजत उठौना पान-
दान धरि सोना जरी परदा सिंवाये हैं ॥४८६॥
ताकी दारु सीढी करि रचना उतारि धरैं
भरैं दूर चौकी आप भाव स्वच्छताई है ।
मानसी विचारैं लाल सेज पगधारैं पान
खात लै उगार डारैं पौढैं सुखदाई है ॥

१ प्रथम कथा पिछाडी कवित्त २३१ में वर्णित है । २ इनको कोई कोई सन्त श्रीमीरा बाई के भ्राता कहते हैं ।

तिया हू न भेद जानै सो [1]निसेनी धरी वाने
देखौ को किशोर सोयो फिरी भोर आई है ।
पतिको सुनाई भई अति मनभाई वाको
खीझि डरपाई जानी भाग्य अधिकाई है ॥४८७॥

(श्रीमधुकर शाहजी की कथा)

मधुकर साह नाम कियो लै सफल जानै
भेष गुणसार गहै तजत असार है ।
[2]ओरछे को भूप भक्तभूप सुखरूप भयो
कियो प्रण भारी जाके और न विचार है ॥
कंठीधरि आवै कोय, धोय पग पीवै सदा
भाई दुखी, खर गर डारयो माला भार है ।
पाँव प्रक्षालि कही आज जू निहाल कियो
हिये द्रवे दुष्ट पाँव गहे दृग धार है ॥४८८॥

(श्रीखेमालरत्नजी राठोडके पुत्र पौत्रादि)

मूल छ०—[3]रैना पर गुण राम भजन भागवत उजागर । प्रेमी परम [4]किशोर उदार [5]राय रत्नाकर । हरिदासनके दास दशा ऊँचो ध्वजधारो । निर्भय अननि उदार रसिक यश रसना भारी ॥ दशधा

१ सिढ्ढी । २ ओरछा फिसगढ़-बुन्देल खण्ड । ३ श्रीरामरैन जी । ४·श्रीकिशोरसिंहजी । ५ श्रीरामरत्नाकरजी ।

सम्पति सन्त बल, सदा रहत प्रफुलित वदन। खेमाल रत्न राठौर के, अटल-भक्ति आई सदन ॥११८॥

(श्रीरामरैनजी राठौडकी कथा)

मूल छ०—¹अजर धर्म आचर्यो लोकहित मनहुँ ²नीलकंठ। निन्दक जग अनिराय कहा जानैगो भूसठ। रीति तैं गन्धर्व ब्याहिसुता दुष्यन्त प्रमाणौ। भरत पुत्र भागोत स्त्रमुख शुकदेव बखानै॥ और भूपको छ्वै सकै, दृष्टि जाय नाहिन धरी। कलियुग भक्ति करी कमान, राम रैन कैरी करी ॥११९॥

पूनों में प्रकाश भयो शरद समाज रास
विविध विलास राग रंग नृत्य भारी है।
बैठे रस भीजे दोऊ बोल्यो रामराजा रीझि
भेट कहा कीजे बीप्र कही जो ही प्यारी है॥
प्यार जो विचारैं तो निहारैं नहीं नेक छटा
सुता ³रूप घटा अनुरूप सेवा ⁴ज्यारी है।

१ सदा नवीन। २ भगवान शंकर। ३ सौंदर्यकी चढ़ती हुई बेलड़ी। ४ जीवन।

रही सभा सोच आप जायके लिवाय लायें
भेष सौं दिवाये फेरे संपतिले वारी है॥४८९॥

(राजा श्रीराम रैनजीकी रानीकी कथा)

मूल छ०—आरज को उपदेश सुतहु उर नीके धार्यो। नवधा ¹देशधा प्रीति आन सब धर्म बिसार्यो॥ ²अच्युत कुल अनुराग प्रकट पुरुषारथ जान्यो। सारा सार विवेक बात तीनों मन मान्यो॥ दासत्व अनन्य उदारता, सन्तन ³मुख ⁴राजा कही। श्रीहरि गुरु हरिदास सों, राम ⁵घरनि साँची रही ॥१२०॥

आये मधुपुरी राजा राम अभिराम दोऊ
दाम पै न राखे साधु विप्र ⁶भुगताये हैं।
ऐसे ये उदार राह खरच संभार नाहीं
चलबे विचार भयो ⁷चूड़ा ⁸दीठि आये हैं॥
मुद्रा शत पांच मोल खोलि तिया आगे धरे
दीजे बेचि गये नाभा कर पहिराये हैं।
पतिको बुलाय कही नीके देखि रीझे भीजे
काढिके करज पुर आये दै पठाये हैं॥४९०॥

१ प्रेमाभक्ति। २ सन्तों से। ३ सामने। ४ श्रीरामरैनजी। ५ पत्नी=रानी। ६ सन्तों में खर्च कर दिये। ७ कंगन। ८ देख पड़े।

खेमाल रतन तनु त्याग समै अश्रुपात
सुत पूछै बात अजू नीके खोल दीजिये।
कीजे पुण्यदान बहु सम्पत्ति [1]अमान भरी
धरी हिय दोही सोई कही सुन लीजिये॥
विविध बड़ाई में समाई मति भई पै न
नितही विचार अब मनपर खीझिये।
नीर भरि घट शीश धरके न लायो और
नूपुर सो बाँधि नृत्य कियो नहीं छीजिये॥४६१॥

(श्रीखेमालरत्न पौत्र श्रीकिशोरसिंहजी की कथा)

मूल छ०—पायन नूपुर बाधि नृत्य [2]नग धर हित नाच्यो। राम कलश मन रल्यो शीश ताते नहिं [3]बाँच्यो॥ वाणी विमल उदार भक्ति महिमा विस्तारी। प्रेमपुंज सुठिशील विनय सन्तन रुचिकारी॥ सृष्टि सराहे राम सुत, लघु वयस लछन [4]आरज लिये। अभिलाश उभय खेमाल के, ते किशोर पूरण किये॥

रहे चुप चाप सभी जानी काम आपही को
बोल्यो यों किशोर नाती आज्ञा मोको दीजिये।

१ अतुल। २ श्रीगिरिधरण लालजी। ३ बचाया। ४ पिता पितामह।

यही नित करौं नहीं टरौं जौलौं जोगै तन
मनमें हुलास उठि छाती लाय लीजिये॥
बहु सुख पायो, [1]पाये, वैसेही निभाये प्रण
गाये गुण लाल प्यारी अति मति भीजिये।
भक्ति विसतार कियो [2]बैस [3]लघु भीज्यो हियो
दियो सनमान सन्त सभा सब रीझिये॥४६२॥

(द्वितीय पौत्र श्रीहरिदासजी की कथा)

मूल छ०—हरीदास हरिभक्त भक्त मन्दिर को कलसो। भजन भाव परिपक्व हृदय भागीरथि जलसो॥ [4]त्रिधा भाँति अति [5]अननि [6]रामकी रीति निवाही। हरिगुरु हरिजन भाँति तिनहिं सेवा [7]दृढशाही॥ पूर्ण इन्दु प्रमुदित उदधि, त्यों दास देखि बाढै रली। खेमाल रत्न राठौड के सुफल बेलि मीठी फली॥१२२॥

(श्रीचतुर्भुजदासजी की कथा)

मूल छ०—गायो भक्ति प्रताप सबहिं दासत्व दृढायो। राधावल्लभ भजन [5]अननिता

१ नित्यधाम प्राप्त किया। २ अवस्था। ३ छोटी। ४ तीनों प्रकारसे। ५ अनन्यता। ६ श्रीरामरत्नजीकी। ७ बादशाही=ठाठबाटसे।

वर्ग बढायो ॥ मुरलीधर की छाप कवित
अतिही निर्दूषण । भक्तन की पद रेणु
सोई धारी शिर भूषण ॥ सत्संग महा
आनन्द मय, प्रेम रहत भीज्यो हियो ।
हरिवंश चरणबल चतुरभुज, गौंड देश
तीरथ कियो ॥१२३॥

गौंडवाने देश भक्ति लेशहू न देख्यो कहूँ
मानुषको मारि इष्टदेव को चढाये हैं ।
तहाँ जाय [1]देवताको मंत्र लै सुनायो कान
लियो उन मानि गाँव सपन सुनाये हैं ॥
स्वामी चतुर्भुजजीके वेगि सब दास बनो
नातो होय नाश सब गाँव भागे आये हैं ।
ऐसे शिष्य किये माला कंठी पाय जिये
पाँव लिये,मन दिये, औ अनन्त सुख पायो है ॥४६३॥
भोग लै लगावैं नाना सन्तन लडावैं कथा
भागवत गावैं भाव भक्ति विसतारिये ।
भाग्यो धन लैके कोऊ धनी पाछे परयो सोऊ
आयके दुबकि बैठ रह्यो न निहारिये ॥
निकसी पुराणबात नयो गात करै दीक्षा
शिक्षा सुनि शिष्य भयो गह्यो यो पुकारिये ।

१ देवीको ।

कही या जनममें न लियो कछु दियो फारो
हाथ ले उबार्यो प्रभु रीति लागी प्यारिये ॥४६४॥
राजा झूँठ मानि कह्यो करो वाको प्राणविन
साधु ये विराजमान लै कलंक दियो है ।
चले ठौर मारिवेको धारि यह सकैं कैसे
नैन भर आये नीर बोल्यो धन लियो है ॥
कहैं नृप साँचो होके झूँटो जनि हूजे सन्त
महिमा अनन्त कही स्वामी ऐसो कियो है ।
भूप सुनि आयो उपदेश मनभायो शिष्य
भयो नयो तन पायो भीज गयो हियो है ॥४६५॥
पाक रह्यो खेत सन्त आयकर तोड लेत
जिते रखवारे मुख श्वेत शोर कियो है ।
कह्यो स्वामी नाम सुनि कही बडो काम हुयो
यह तो हमारो सोई आप सुनि लियो है ॥
लेय सो मिष्टान्न आये सम्मुख बखान कियो
लियो अपनाय आज भीज्यो मेरो हियो है ।
लै गये लिवाय नाना भोजन कराय भक्ति
चरचा चलाय चाव हित रस पीयो है ॥४६६॥

(श्रीकृष्णदासजी चालक की कथा)

मूल ७०—शक्र कोप सुठि चरित प्रसिध
पुनि पंचाध्यायी । कृष्ण रुक्मिणी

केलि रुचिर भोजन विधि गाई ॥ गिरि राजधरताकी छाप गिरा जल धर ज्यों गाजै। सन्त शिखंडी खंड हृदय आनँद के काजैं॥ जगज्जडता जाडा हरण, कृष्ण दास देही घरी। चालक चाँचरि चहूँ दिशा, उदधि अन्तलो अनुसरो ॥१२४॥

(श्रीसन्तदासजी की कथा)

मूल छ०—गोपीनाथ अनन्त भोग छप्पन भुंजाये। पृथु पद्धति अनुसार देव दम्पति दुलराये। भगवत भक्त समान ठौर द्वै को बल गायो। कवित शूरसों मिलत भेद कछु जात न पायो॥ जन्म कर्म लीला युगति, रहस भक्ति भेदी मरम। विमलानन्द प्रबोध कुल, सन्त-दास सीमा धरम ॥१२५॥

बसत निवाई ग्राम श्याम सों लगाई मति
ऐसी मन आई भोग छप्पन लगाये हैं।
प्रीति की सचाई यह जगमें दिखाई सेव
जगन्नाथ देव आप रुचि सों जा पाये है॥
राजा को स्वपन दियो नामले प्रकट कियो

सन्तही के गृहमें तौ जेंवों यों रिझाये हैं।
भक्ति के अधीन सब जानत प्रवीण जन
ऐसे हैं रंगीले लाल ठौर ठौर गाये हैं॥४९७॥

(श्रीमदन मोहन सूरदासजी की कथा)

मूल छ०—गान काव्य गुण राशि हृदय सहचरि अवतारो। राधा कृष्ण उपास्य रहस्य सुखके अधिकारी। नव रस मुख सिंगार विविध भाँतिन करि गायो। वदन उच्चरत वेर सहस पाँयनि ह्वै धायो॥ अंगीकार की अवधि यह, ज्यों आख्या भ्राता यमल। मोहन मोहन सूरकी, नाम शृंखला जुरि अटल ॥१२६॥

सूरदास नाम नैन कंज अभिराम फूले
झूमें रंग पीके नीके जिये और ज्याये हैं।
भये सो अमीन यों संडीले के नवीन रीति
प्रीति गुड देखि दाम बीस गुने लाये हैं॥
कहा पूवा पावैं आप मदन गोपाल लाल
परे प्रेम ख्याल लादि छकरा पठाये हैं।
आये निशि भये श्याम कियो आज्ञा भोग लागे
अब ही जगाओ भोग जागे फेरि पाये हैं॥४९८॥

पद लै बनायो भक्ति रूप दरसायो दूर
सन्तनकी पानही को रक्षक कहाऊँ मैं।
काहू सीख लियो साधु लियो चाहै परच्यो सो
आये द्वार मन्दिर के खोलि कही आऊँ मैं ॥
रह्यो जाय बैठ जूती हाथमें उठाय लीनी
कीन्ही पूरी आस मोरी निशिदिन गाऊँ मैं।
भीतर बुलाये श्री गुँसाई बार दोय चार
सेवा सौंपी सार कही जनपद गाऊँ मैं ॥४९९॥
पृथ्वीपति सम्परि ले सन्तन खवाय दीन्ही
कीन्हो नहीं शेक यों निशंक रंग पागे हैं।
आये सो खजानो लेन मानो यह बात अहो
पाथर ले भरे आप आधी निशि भागे हैं ॥
रुक्का लिखि डारयो दाम गटके ये सन्तन ने
याते हम सटकि चले हैं जब जागे हैं।
पहुँचे हजूर भूप खोलके संदूक देखे
पेखे अंक कागद में रीझि अनुरागे हैं ॥५००॥
लेनको पठाये कही निपट रिझाये हमें
मनमें न लाये, लिखि, बन तन डारयो है।
टोडर दिवान कह्यो धनको विरान कियो
लाओरे पकरि मूढ फेरके सँवारयो है ॥
लै गये हुजूर नृप बोल्यो मोसो दूर राखो
ऐसे महा क्रूर सोंपि दुष्ट कष्ट डारयो है।

दोहा लिखि[1] दीन्हो अकबर देखि रीझि लीन्हो
जाओ वाही ठौर तोपै द्रव्य सब वारयो है ॥५०१॥
आये वृन्दावन मन माधुरी में भीज रह्यो
कह्यो सोई पद सुन्यो रूप रस रास है।
जादिन प्रकट भयो गयो [2]शत योजन पै
[3]जन पै सुनत पद बाढी जग प्यास है ॥
सूरदास द्विज [4]निज महल [5]टहल पाय
[6]चहल पहल हिय युगल प्रकाश है।
मदन मोहन जी हैं इष्ट इष्ट महाप्रभु
अचरज कहा कृपा दृष्टि अनायास है ॥५०२॥

(श्रीकात्यायनीजी की कथा)

मूल छ०—मारग जात अकेल गान रसना जु उचारै। ताल मृदंगी रीझि वृक्ष अम्बर तहँ डारैं ॥ गोपनारि अनुसार गिरा गद्गद आवेशी। जग प्रवंच से दूर अजा परसे नहिं लेशी ॥ भगवान रीति अनुराग को सन्त साखि मेलो सही। कात्यायनि के प्रेमकी, बात जाय कापै कही ॥१२७॥

१ लिखा गया। २ सौ योजन (८०० मील) जगदीशपुरी। ३ दासके द्वारा। ४ भगवान के। ५ सेवा। ६ आनन्दोल्लास।

(श्रीमुरारी दासजी की कथा)

मूल छ०–विदित विलौंदा गाँव देश [1]मरु घर सब जानैं। महा महोत्सव मध्य सन्त परिषद परमानैं। पगनि घूँघरू बाँधि रामको चरित दिखायो। [2]देशी शरँग गाय [2]हंस ता संग पठायो॥ उपमा जाकी जगतमें, [3]पृथा बिना नाहिन बियो। कृष्ण विरह कुंती तज्यो, त्यों मुरारि तनु त्यागियो॥१२८॥

श्रीमुरारीदास रहे राज गुरु भक्तदास
आवत सो स्नान करि कान ध्वनि कीजिये।
जातको चमार करै सेवा सो उचार कही
प्रभु चरणामृत को जो पात्र हो सों लीजिये॥
गये घर माँझ वाके देखि डरि काँप उठ्यो
लाओ देओ हमैं अहो पान करि जीजिये।
कही मैं तो न्यून तुच्छ बोले हमहूतें स्वच्छ
जानैं कोऊ नहीं तुम्हें मेरी मति भीजिये॥५०३॥
वहैं दृग नीर कहैं मेरे बडी पीर भई
आप मतिधीर नहीं मेरी योग्यताई है।

लियो ही निपट हरि, बडे पटु साधुता में
श्याम प्यारी भक्ति, जाति पाँतिले बहाई है॥
फैल गई गाँव वाकों नाँव लै चवाव करैं
भैरैं नृप कान सुनि वाहू ना सुहाई है।
आये प्रभु देखवे का गयो वह रंग उडि
जन्यो सो प्रसंग सुन्यों वही बात गाई है॥५०४॥
गये सब त्यागि प्रभु सेवाही सों [1]राग जिन्हे
नृप दुःख [2]पागि गयो सुनि यह बात है।
होत हो समाज सदा भूपके बरस माँझ
दरस न काहू होत मान्यो उतपात है॥
चले सो लिवायवेको जहाँ श्रीमुरारीदास
करी साष्टांग दास नैन अश्रुपात है।
मुखहू न देखैं वाको विमुख के लेखैं अहो
पेखैं लोग कहै ये तो गुरु शिष्य [3]ख्यात हैं॥५०५॥
ठाडो हाथ जोरि, मति दीनतामैं बोरि, कीजे
दंड मोपै कोटि पै निहार मुख भाषिये।
घटत न मेरी आप कृपाही की घटत है
बढतीसी करी ताते न्यूनताई राखिये॥
सुनि के प्रसन्न भये कहे लै प्रसंग नये
वाल्मीकि आदि दै दै नाना विधि साखिये।

आये निज ग्राम नाम सुनि सब साधु आये
भयो सो समाज ऐसो देखि अभिलाषिये ॥५०६॥
आये बहु गुणीजन नृत्य गान छाई ध्वनि
ऐपै सन्त सभा मन [1]स्वामी गुण देखिये।
जनिकेर प्रवीण उठे नूपुर नवीन बाँधि
सप्त स्वर तीन ग्राम लीन भये पेखिये ॥
गायो रघुनाथजू को वन को गमन समै
ताही सँग गये प्राण चित्र सम लेखिये।
भयो दुःख राशि कहाँ पैये श्रीमुरारीदास
गये राम पास वेतो हिये [2]अवरेखिये ॥५०७॥

(आचार्यवर्य गोस्वामीपाद श्रीतुलसीदासजीकी कथा)

मूल छं०—त्रेता काव्य निबन्ध करी शत-कोटि रमायण। इक अक्षर उद्धरै ब्रह्म हत्यादि परायण। अब भक्तन सुखदेन बहुरि लीला विस्तारी। राम चरण रस मत्त रहत निशिदिन व्रतधारी॥ संसार अपार के पारको, सुगम रूप [3]नवका-दयो। कलि कुटिल जीव निस्तार हित वाल्मीकि तुलसी भयो॥१२९॥

१ श्रीमुरारीदासजी। २ ध्यान करो। ३ श्रीरामचरित मानस।

तियासों सनेह बिन पूछे पितु गेह गई
भूलि सुधि देह [1]भजे वाही ठौर आये हैं।
[2]बधू कहँ लाजभई रिसमें निकस गई
प्रीति राम नहीं तन हाड चाम छाये हैं॥
सुनी जब बात मानो होय गयो प्रात वह
पाछे पछतात तजि काशीपुरी धाये हैं।
कियो तहाँ वास प्रभु सेवा ले प्रकाश कीन्हो
लीन्हो दृढ भाव नैन रूपके तिसाये हैं॥५०८॥
शौच जल शेष पाय भूतहू विशेष कोऊ
बोल्यो सुख मानि हनुमानजू बताये हैं।
रामायण कथा सो रसायन है कानन्ह को
आवत प्रथम पाछे जात घृणा छाये हैं॥
जानि पहचानि संगचले उर आनि आये
वनमध्य जानि धाय पाँय लपटाये हैं।
करैं तिरस्कार कही सकोगे न टारि मैं तो
जाने [3]रससार रूप धरयो जैसो गाये हैं॥५०९॥
माँग लीजे वर, कही दीजे राम भूप [4]रूप
अतिही अनूप नित नैन अभिलाषिये।
कियो संकेत वाही दिन सों जू लाग्यो हेत
आई सोई समै चेत कब छवि चाखिये॥
आये रघुनाथ साथ लछमण घोंडन चढे

१ दौडे हुए। २ पत्नीको। ३ आपका वास्तविक तत्व। ४ दर्शन।

पट रंगबोरे हरे कैसे मन राखिये।
पाछे हनुमान आये बोले देखे [1]प्राणप्यारे
नेक न निहारे में तो [2]भले फेर [3]भाषिये ॥५१०॥
हत्या करि विप्र एक तीरथ करन आयो
कहै मुख राम भिक्षा डारिये हत्यारे को।
सुनि अभिराम नाम धाममें बुलाय लियो
दियो लै प्रसाद कियो शुद्ध गाओ प्यारे को ॥
भई द्विज सभा कहि बोलिके पठाये आप
कैसे गयो पाप संग लैके जेंये न्यारे को।
पोथी तुम बाँचो हिये [4]सार नहीं साँचो
[5]अजू [6]ताते [7]मतकाचो दूर करें न [8]अंध्यारेको ॥५११॥
देखी पोथी बाँच नाम महिमा हू कही साँच
रोपै हत्या करै कैसे तरै कहि दीजिये।
आवै ज्यों प्रतीति कहो, कही याके हाथ जेवैं
शिवजी को बैल तब पंगत में लीजिये ॥
थारमें प्रसाद दियो चले जहाँ प्रण कियो
बोले आप नामके प्रताप मति भीजिये।
जैसो तुम जानो तैसो कैसे कै बखानों अहो
सुनि हो प्रसन्न पायो जै जै ध्वनि रीझिये ॥५१२॥
आये निशि चोर चोरी करन हरन धन

१ प्यारे श्रीरामजी। २ अच्छा फिर। ३ कहा। ४ तत्व।
५ अभी। ६ इसीसे। ७ मन्तव्य दृढ नहीं है। ८ अन्धकार। ७ नदी।

देखे घनश्याम हाथ चाप शर लिये हैं।
जब जब आवें बाण साधि डरपावें ये तो
अति मंडरावें ऐपै बली दूर किये हैं ॥
[1]भोर आय पूछी अजू साँवरो किशोर कौन
सुनकर मौन रहे आँसू ढारि दिये हैं।
दिये सो लुटाय जानि चौकी राम दई आप
लई उन दीक्षा शिक्षा शुद्ध भये हिये हैं ॥५१३॥
कियो विप्र तन त्याग तियाचली संगलाग
दूर ही तें देखि कियो चरण प्रणाम है।
बोले हो सुहागवती, मर्यो पति होऊँ सती,
अब तो निकस गई जीवै सेवो राम है ॥
बोल के कुटुम्ब कही जोपै भक्ति करो सही
गही सब बात, जिवादियो अभिराम है।
भये सब साधु व्याधि मेटी लै विमुखता की
जाकी बास रहै तौ न सूझै श्याम धाम है ॥५१४॥
दिल्लिपति बादसाह अहदी [2]पठाये लेन
ताको सो सुनायो सूबे, विप्र ज्यायो जानिये।
देखबे को चाहै नीके सुखसों निबाहै आय
करी बहु विनै गहि चले मन आनिये ॥
पहुँचे नृपति पास आदर प्रकाश कियो
दियो उच्च आसन लै बोल्यो मृदु वानिये।

१ प्रातः काल। २ दूत।

दीजे करामात दिखलाय सब मात किये
कही झूँट बात एक राम पहिचानिये ॥५१५॥
देखूँ राम कैसो, कहि कैद किये, किये हिये
हूजिये कृपालु हनुमानजू दयाल हैं।
ताही समै फैलि गये कोटि कोटि कपि नये
नोचैं तन खोंचै चीर भयो यों विहाल है॥
फोरैं [1]कोट मारैं चोट किये डारैं लोट पोट
लीजे जाय [2]कौन [3]ओट मान्यो प्रलै काल है।
खुल गई आँखें दुःख सागर को [4]चाखें अब
[5]येही हमें राखें भाषें [6]वारों धन माल है॥५१६॥
आय पाँय लिये तुम दिये हम प्राण पावैं
आप समझावैं करामात नेक लीजिये।
लाज दबिगयो नृप, तब राखि लयो, कह्यो
भयो घर रामजूको बेगि छाँड दीजिये॥
सुनि तजि दियो और कियो लैके [7]कोट नयो
अब हू न रहे कोऊ वामैं तन छीजिये।
काशी जात वृन्दावन आय मिले नाभाजी सों
सुन्यो सो कवित्त निज रीझ मति भीजिये॥५१७॥
मदन गोपाल जू को दरसन करि कही
सही राम इष्ट मेरे दृष्टि भाव पागी है।

१ दीवार। २ किनकी। ३ आश्रय। ४ अनुभव करने लगे। ५ श्रीगोस्वामीजी ही। ६ निछावर करो। ७ निवासस्थान।

तैसोही स्वरूप कियो दियो लै दिखाय रूप
मन अनुरूप छवि देखि नीकी लागी है॥
काहू कही कृष्ण अवतारी जू प्रशंस महा
राम अंश सुनि बोले मति अनुरागी है।
दशरथ सुत जानों सुन्दर अनूप मानों
ईशता बताई [1]रति बीसगुणी जागी है॥५१८॥

कवि कुल मुकुट मणि श्रीसम्प्रदायाचार्यवर्य विश्ववन्द्य श्रीरामचरितमानसादि ग्रंथों के रचयिता गोस्वामीपाद श्रीतुलसी दासजी के विषय में अबतक का उपलब्ध गद्यपद्य साहित्य एकत्रित करने से वह श्रीरामचरितमानस से कई गुना अधिक होगा और विलुप्त या अप्रकाशित (जिसका अवतरण उल्लेख आदि से पता लगता है) भी यदि उसमें मिला दिया जाय तो संभव है यह महाभारतसे भी अधिक हो जाय। यह बात काशी की नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित श्रीतुलसी ग्रंथावलीके भूमिका भाग को देखनेसे सुस्पष्ट हो जाती है।

इतना होते हुए भी आपके जन्मस्थान कुल माता-पिता के नाम एवं जन्म तिथि आदि में अभी विवाद उपस्थित ही हैं। बाँदा जिलेके राजापुरके और बाराह क्षेत्र (सोरों) के निकटतरवर्ती तरी नामक ग्राम के निवासी या हिमायती यह कहते ही हैं कि श्रीगोस्वामीपाद के जन्म स्थल होने का सौभाग्य हमारे ग्राम को ही प्राप्त है।

आपका प्रादुर्भाव ब्राह्मण कुल में हुआ है, इसमें मतभेद न होते हुए भी कान्यकुब्ज और सनाढ्य कुल एवं पाराशर और गर्ग गोत्रका विवाद चल ही रहा है। भक्तमाल मूल अथवा श्रीप्रियादासजी की टीका के वर्णनों से इन विवादों पर कोई असर नहीं पड़ता क्योंकि उनमें इस विषय को स्पर्श ही नहीं किया गया। केवल कुछ चरित्र या

१ प्रीति।

चमत्कार मात्र ही कहे हैं। परन्तु श्रीगोस्वामीपाद के शिष्य श्रीवेणी माधवदासजी कृत मूल श्रीगोस्वामी चरितके प्रकाशित हो जाने पर भी लोग जो इन विवादोंको चला रहे हैं इसमें इन पंक्तियों के लेखक को तो प्रान्तीयता एवं जातीयता का दुराग्रह ही एक मात्र मुख्य कारण प्रतीत होता है जो कि भारत राष्ट्र की उन्नति में भी रोड़ा बना रहता है। दूसरा गौण कारण यह भी है कि मूल श्रीगुसाईं चरित के प्रकाश में आने से पूर्व से ही पाश्चात्य और उनके पद चिन्हों का अनुसरण करनेवाले भारतीय विद्वानों के द्वारा अटकलें लगाई गई हैं, और श्रीगोस्वामीपाद की गुरु परंपरा संप्रदाय दार्शनिक सिद्धान्त एवं उपासना आदि विषयों के साथ साथ कुल गोत्र जन्मभूमि आदि पर भी भ्रामक मत निर्धारित किये गये हैं जिनने आगे चलकर आग्रहका रूप ले लिया है।

यहां कहना यही है कि श्रीगोस्वामी पाद के चरित्र को बताने वाला मूल श्रीगुसाईं चरित ही इस समय एक मात्र विश्वसनीय साधन हमारे सामने उपस्थित है, उसमें शंकायें करके विवादों में पड़े रहना व्यर्थ और अनर्थ कारी है, अतः हम मूल श्रीगुसाईं चरितको यहां अविकल उद्धृत कर रहे हैं।

श्रीजानकी वल्लभो विजयते। श्रीमते हनुमते नमः॥
श्रीमतेरामानन्दाय नमः। गोस्वामी श्रीतुलसीदासाय नमः॥
श्रीमद्गोस्वामि तुलसी चरण चंचरीक बाबा श्रीवेणीमाधवदासजी कृत

मूल श्रीगोसाँईं चरित।

सो०–सन्तन कहेउ बुझाय, मूल चरित पुनि भाषिये।
अति संक्षेप सुहाय, कहौं सुनिय नित पाठ हित॥१॥
चरित गुसाँइ उदार, वरणि सकें नहिं सहस फणि।
हौं मति मन्द गँवार, किमि वरणौं तुलसी सुयश॥२॥

ऋषि आदि कवीश्वर ज्ञान निधि। अवतरित भये जनु आप विधी॥
शत कोटि बखानेउ राम कथा। तिहु लोकमें बाँटेउ शंभु यथा॥
दश स्यन्दन वेद दशांग मयं। श्रुति त्रैविधि तीनिउँ शानि जयं॥
श्री राम प्रणव श्रुति तत्व परं। निज अंशन युत नर देह धरं॥
इमि कीन्ह प्रबन्ध मुनीश यथा। हरि कीन्ह चरित्र पवित्र तथा॥
हनुमन्त प्रणव प्रिय प्राण रसै। परतत्व रसैं तिमु शीश लसै॥
यहि भाँति परात्पर भाव लिये। शुचि राम परत्व बखान किये॥
मुनिराज लखे अद्भुत रचना। कपिराज सों कीन्ह इहै जचना॥
यह गुप्त रहस्य है गोय धरैं। विनती हमरी न प्रकाश करैं॥
तब अंजनि नन्दन शाप दियो। हँसिके मुनि धारण शीश कियो॥
दो०–सहन शीलता निरखि मुनि, पवन कुमार सुजान।
बहु विधि मुनिहिं प्रशंसि पुनि, दिये अभय बरदान॥१॥
कलिकाल में लेहहु जन्म जबै। कलितें तव त्राण सदा करवैं॥
तेहि शापके कारण आदि कवी। तम पुंज निवारण हेत रवी॥
उदये हुलसी उदघाटी ते। सर सन्त सरोरुह से विकसे॥
सरवार सुदेश के विप्रवडे। शुचि गोत परासर टेक कढ़े॥
शुभथान पतेजि रहे पुरखे। तेहितें कुल नाम परचा छुरखे॥
यमुना तट दूबन को पुरवा। बस तहँ सब जातिन को कुँरवा॥
सुकृती सतपात्र सुधी सुखिया। रजिया पुर राज गुरू मुखिया॥
तिनके घर द्वादश मास परे। जब कर्क के जीव हिमांशु चरे॥
कुज सप्तम अष्टम भानुतनय। अभिजित शनि सुन्दर साँझ समय॥
दो०–पन्द्रह से चउवन विषै, कालिन्दीके तीर।
श्रावण शुक्ला सप्तमी, तुलसी धरयो शरीर॥२॥
सुत जन्म बधाय लगे बजने। सजने धजने रजने गजने॥
इक दासि कही तेहि अवसर में। कहि देव बुलावत हैं घर में॥

शिशु जन्मत रंचहु रोयो नहीं । सो बोल्यो राम गिरयो ज्यों मही ॥
अब देखिए दन्त बतीस जमी । नहिं षोडष पांति में नेक कमी ॥
जस बालक पांच को देखियजू । तस जन्मतुआ निज लेखियजू ॥
हम बूढ़ भई भरि जन्म नहीं । शिशु ऐसो देख्यो तात कहीं ॥
महरिया कहति सुनी शंख धुनी । तबही ते सभय शिशु नार हुनी ॥
जो तियये रहीं कपती बकती । कोउ राक्षस जन्मेउ कहि भकती ॥
महाराज चलिय अब बेगि घरें । समझाय प्रसूतिको ताप हरें ॥

दो०—उठे तुरत भृगुवंश मणि, सुनत चेरिके बैन ।
ठाढ प्रसूती द्वार भे, पूरित जलसों नैन ॥३॥

छन्द :—

पूरित सलिल दृग निरखि शिशु परितापयुत मानस भये।
मनमहँ पुराकृत पाप को परिणाम गुणि बाहर गये।
तब जुरे सबहित मित्र बांधव गणक आदि प्रसिद्ध जे।
लागे विचारन का करिय नवजात शिशु कहँ कहहिं ते ॥

दो०—पंचन यह निर्णय कियो, तीन दिवस पश्चात।
जियत रहै शिशु तब करिय, लौकिक वैदिक बात॥

दशमी पर लागी ग्यारस ज्यों । घड़ि आठक रात गई तब त्यों ॥
हुलसी दासी सों लागि कहैं । सखि प्राण पखेरु उडान चहैं ॥
अबही शिशु लेगवनहु हरिपुर । बसते जहँ तेरेउ सासु ससुर ॥
तहँ जोहब पालब मोर लला । हरिजू करि हैं सखि तोर भला ॥
नहि तो ध्रुव जानहु मोरे मुये । शिशु फेंकि पवारहिंगे भकुए ॥
सखि जान न पावै कोउ बतियाँ । चलि जावहु मग रतियाँ रतियाँ ॥
तेहि गोद दियो शिशु ढारस दै । निजभूषण दै पुनि दीन्हि पठै ॥
चुप चाप चली सो तबै शिशु लै । हुलसी उर सुवन वियोग फबै ॥
गोहराय रमेश महेश विधी । विनती करै राखवि मोर निधी ॥

दो०—ब्रह्म मुहूर्त इकादशी, हुलसी तज्यो शरीर ।
होत प्रात अन्तेष्टि हित, लैगे यमुना तीर ॥५॥

धरि पांचक दिवस चढे मुनियाँ । निज सासके पाँय गहे चुनियाँ ॥
सब हाल हवाल बताय चली । सुनि सास कही बहु कीन्ह भली ॥
घर माहि कलोर को दूध पिया । बिन मायको है शिशु लेहु जिया ॥
तहँ पालन सो लगि नेह भरी । जेहि तैं शिशु रीझै सोइ करी ॥
यहि भाँति सो पैसठ मास गये । शिशु बोलन डोलन योग्य भये ॥
चुनियाँ सुरलोक सिधार गई । डस्यो पन्नग सो ज्यों कोरार गई ॥
तब राज गुरू को कहाव गयो । सुनिके तिनहु दुख मानि कह्यो ॥
हम का करबै अस बालक लै । जेहि पालै सोऊ पुनि पावै छै ॥
जन्मेउ सुत मेरे अभागो मही । सो जिये वा मरै मोहि सोच नहीं ॥

दो०—वेणी परब जन्मकर, कर्म विपाक प्रचण्ड ।
बिना भुगाये टरत नहिं, यह सिद्धान्त अखंड ॥६॥

छन्द—

सिद्धान्त अटल अखंड भरि ब्रह्मांड व्यापित सत यथा।
जहँ मुनि वरन की यह दशा तहँ पामरन की का कथा ॥
निज क्षति विचार न रखै कोऊ दया दृग पाछे दियो ।
डोलत सो बालक द्वार द्वार विलोकि तेहि विदरत हियो २

सो०—बालक दशा निहारि, गौरौं माई जग जननि ।
द्विज तिय रूप सँवारि, नितहि पवा जावहि अशन ॥३॥

द्वै बत्सर बीतेउ याहि रमे । पुर लोगन कौतुक देख कसे ॥
तेहि जोहन कहँ हिय आय जके । परिचय द्विज वाम न पाय सके ॥
घर नारि हती तहँ सो परखी । जब माय खवाय लला टरकी ॥
परि पाँय करी हठ जान न दे । जगदम्ब अदृश्य भई तबते ॥

शिव जानि प्रियाव्रत हेतु हियो । जन लौकिक सुलभ उपाय कियो ॥
प्रिय शिष्य अनन्तानन्द हते । नरहर्यानन्द सुनाम छते ॥
बसि राम सु शैल कुटी करि के । तल्लीन दशा अति प्रिय हरि के ॥
तिन कहँ भव दर्शन आप दिये । उपदेशहु दै कृत कृत्य किये ॥
प्रिय मानस राम चरित्र कहे । पठये तहँ जहँ द्विज पुत्र रहे ॥

दो०—लै बालक गवनहु अवध, विधिवत मंत्र सुनाय ।
मम भाषित रघुपति कथा, ताहि प्रबोध कराय ॥७॥
जब अन्तर्दृग खुलहिं गे, तब सो कहि हि बनाय ।
लरिकाईं को पैरिबो, आगे होत सहाय ॥८॥

सो०-शम्भु वचन गम्भीर, सुनि मुनि अति पुलकित भये ।
सुमिरि राम रघुवीर, तुरत चले हरिपुर तके ॥४॥

पुरहरिके बालक गोद लिये । द्विजपुत्र अनाथ सनाथ किये ॥
कह्यो राम बोला जनि सोच करै । पालिहिं पोसिहिं सब भाँति हेरै ॥
सो जानेउ दीन दयाल हरी । मम हेतु सु सन्तको रूप धरी ॥
पुर लोगन केर रजाय लिये । सह बालक सन्त पयान किये ॥
पन्दरह सै इकसठ माघ सुदी । तिथि पंचमि औ भृगुवार उदी ॥
सरयू तट विप्रन यज्ञ किये । द्विज बालक कहँ उपवीत दिये ॥
सिखये बिन आपुहि सो वरुआ । द्विज मंत्र सवित्रि सु उच्चरुवा ॥
विस्मय युत पंडित लोग भये । कहे देखत बालक विज्ञ ठये ॥

दो०—नरहरि स्वामी सब किये, संस्कार विधि पाँच ।
राममंत्र दिय जेहि छुटै, चौरासीको नाच ॥९॥

दस मास रहे मुनिराज तहाँ । हनुमान सुटीला विराज जहाँ ॥
नित शिष्यहिं विद्या पठाय रहे । अरु पाणिनि सूत्र घुकाय रहे ॥
लघु बालक धारण शक्ति जगी । अनुरक्ति सभक्ति दिखान लगी ॥

हर्षे गुणग्राम विचारि हिये । पद चापत आशिष भूरि दिये ॥
जबते जन्मेउ तबते अब लौं । निज दीन दशा कहिगो गुरु सौं ॥
ठगिसे रहिगे मुनि बाल कथा । करुणा उरमें उपजाई व्यथा ॥
मुनि धीर भरे दृग नीर रहे । गुरु शिष्य दशा कवि कौन कहै ॥
समझाय बुलाय लगाय हिये । कहि भावि भलाइ प्रशान्त किये ॥
हरि प्रिय ऋतु लाग हिमन्त जबै । सिष संग लै कीन पयान तबै ॥

दो०—कहत कथा इतिहास बहु, आये शूकर खेत ।
संगम सरयू घाघरा, सन्त जनन सुख देत ॥१०॥

तहँवा पुनि पाँचहि वर्ष बसे । तपमें जपमें सब भाँति रसे ॥
जब शिष्य सुबोध भयो पढिके । मति युक्ति प्रवीण भई गढिके ॥
सुधि आइ महेश सिखावन की । परतत्व प्रबन्ध सुनावन की ॥
तब मानस राम चरित्र कहे । सुनिके मुनि बालक तत्व गहे ॥
पुनि पुनि मुनि ताहि सुनावत भे । अति गूढ कथा समझावत भे ॥
यहि भाँति प्रबोधि मुनीश भले । वसु पर्व लगे सह शिष्य चले ॥
विश्राम अनेक किये मगमें । जल अन्न को खेल मच्यो जगमें ॥
कतहूँ सुकृतिन उपदेश करैं । कतहूँ दुखिया दुख दाप हरैं ॥

दो०—विचरत विहरत मुदित मन, आये काशी धाम ।
परम गुरू सुस्थान पर, जाय कीन्ह विश्राम ॥११॥

सुठि घाट मनोहर पंच गँगा । गँगिया कर कौतुक केलि भँगा ॥
पुनि सिद्ध सु पृष्ठ प्रतिष्ठित सो । बहुकाल यतीन्द्र रहे जु नसो ॥
तहँवा रहे शेष सनातन जू । वपु वृद्ध वरंच युवामन जू ॥
निगमागम पारग ज्योति फबै । मुनि सिद्ध तपोधन जान सबै ॥
ते रीझि गये बटुपै जबही । गुरु स्वामी सों सुन्दर बात कही ॥
निज शिष्यहिं देहु मोहि मुनी । तिसु वृत्ति दुनी नहिं ध्यान धुनी ॥
हों ताहि पढाउब वेद चहूं । अरु आगम दर्शन शास्त्र छहूँ ॥

इतिहास पुराण रु काव्य कला । अनुभूत अलभ्य प्रतीक फला ॥
विद्वान महान बनाउब जू । सुनि आप महा सुख पाउब जू ॥

दो०-आचारज विनती सुनत, पुलकित भे मुनिधीर ।
बटु बुलाय सौंपत भये, पावन गंगा तीर ॥१२॥
कछुदिन रहिगे यति प्रवर, पढन लग्यो बटु भास।
चित्रकूट कहँ तब गये, लखि सब भाँति सुपास ॥१३॥

बटु पन्द्रह वर्ष तहाँ रहिके । पढ़ि शास्त्र सबै महिके गहिके ॥
करिके गुरु सेव सहृदय तन से । गतदेह क्रिया करि सो मनसे ॥
चले जन्म थली को विषाद भरे । पहुंचे रजियापुर के बगरे ॥
निज भौन विलोकेउ ढूह ढहा । कोउ जानन योग न लोग रहा ॥
इक भाट बखानेउ ग्राम कथा । द्विज वंश को नाश भयो जु यथा ॥
कह्यो जादिन भाई से राजगुरू । तब त्यागकि बोलेउ बात क्रुरु ॥
तह बैठ रह्यो तप तेजधनी । तिन शाप दियो गहि नागफनी ॥
षट मासके भीतर राजगुरू । दश वर्ष के भीतर वंश मरु ॥
सुनके तुलसी मन शोक छये । करि श्राद्ध यथा विधि पिंड दये ॥

दो०-पुर लोगन अनुरोधते, लियो भवन बनवाय ।
रहन लगे अरु कहत भे, रघुपति कथा सुहाय ॥१४॥

यमुना पर तीर मों तारिपतो । भरद्वाज सु गोतकों विप्र हतो ॥
कतिकी दुतिया कर न्हान लगे । सकुटुम्ब सो आयउ संग सबे ॥
करि मज्जन दान गये तहँवाँ । तुलसी सुत बाँच कथा जहँवां ॥
छवि व्यास विलोकि प्रसन्न भये । सब लोगन बूझि स्वठाम गये ॥
पुनि माधव मासमें आय रहे । कर जोरि के सुन्दर बात कहे ॥
महाराति जबै नगिचाय रही । सपने जगदम्ब चेताय कही ॥
शुभ राउर नाम बताय रही । सब ठांव ठिकान जताय रही ॥
हौं हेरत हेरत आयो इतै । मोहि राखिय हों अब जाउँ कितै ॥

दुहिता मम व्याहिय देव ! कहै । कहिके अस सो पदकंज गहे ॥

दो०-सुनत विनय सोचन लगे, पुनि बोले सकुचाय ।
व्याह बरेखी ना चहौं, अनत पधारिय पाय ॥१५॥

द्विज मानै नहीं धरना धरिके । नहिं खाय पियै सराना करिके ॥
दुसरे दिन जब स्वीकार कियो । तब विप्र हठी जल अन्न लियो ॥
घर जाय सो धायके लग्न धरयो । उपरोहित भेजि प्रशस्त करयो ॥
इतते पुरलोग न योग दिये । सब साज समान बरात किये ॥
पन्द्रह सौ और तिरासि विषै । शुभ जेठ सुदी गुरु तेरस पै ॥
अध राति सो लगे फिरी भँवरी । दुलहा दुलही की पड़ी पवँरी ॥
ललना मिलि कोहबर माहिं रसी । वर नायक पंडित सों बिहँसी ॥
तिसरे दिन मांडव चार भयो । शुचि भक्ति सों दान दहेज दयो ॥

दो०-विदाकरा दुलही चले, पंडितराज महान ॥
आये निजपुर अरु किये, लौकिक चार विधान ॥१६॥

पुर नारि जुरी गुरु भौन गई । दुलही मुख देखि निहाल भई ॥
तुलसी सुत देखेउ नारि छटा । मुख इन्दु सो घूंघट कोर हटा ॥
मन प्राण प्रिया पर वारि दिये । जस कौशिक मेनका देखि भये ॥
दिन रात सदा संग राते रहैं । सुख पाते रहैं ललचाते रहैं ॥
शर वर्ष पुरस्सर चाय चये । पल ज्यों रस केलि में बीत गये ॥
नहिं जान दें आप न जाय कहीं । पल एक प्रिया बिन चैन नहीं ॥
दुखिया जननी मुख देखन को । पितु ग्राम सुआसिन पेखन को ॥
सह बन्धु गई चुपके सौं सती । बरखासन ग्राम रहे जुपती ॥
जब सांझ समै निज गेह गये । घर सून निहारि ससोच भये ॥
तब दासि जनायउ सो कहि कै । निज बन्धु के संग गई मैके ॥
सुनि ते उठि के ससुराल चले । अति प्रेम प्रगाढ़ विशेष पले ॥
कवनिउ विधिते सरि पार किये । पहुँचे सब सोवत द्वार दिये ॥

छन्द०—दै द्वार सोवहिं लोग नींद तुराइ गुहरावन लगे।
स्वर चीन्हि द्वार कपाट खोले झमकि भामिनि सगवगे॥
बोली बिहँसि वाणी विमल उपदेश सानी कामिनी।
कस चलदिये प्रेमांध ज्यों नहिं सुधि अंधेरी यामिनी॥
दो०—हाड मांसकी देह मम, तापर जितनी प्रीति।
तिसु आधी जो रामप्रति, अवशि मिटति भव भीति॥
सो०—लाग वचन जिमिवाण, तुरत फिरे विरमे नहिं।
सोचेउ निज कल्याण, तब चित चढेउ जो गुरु कहेउ॥
दो०—नर हरि कंचन कामिनी, रहिये इनते दूर।
जो चाहिय कल्याण निज, रामदरस भरपूर॥
सो०—लखि रुख तिय अकुलाय, बोली वचन सकोप तब।
त्याग न उचित कहाय, बिनु तिय मुख खरिया खवे॥

उठि दौरि मनावन सार गयो। पिछु आये रह्यो जब भोर भयो॥
नहिं फिरे फेरे फिर आयो फिरी। भगिनी निज मूर्छित देखि परी॥
मुर्छाजु हटी उठि बोली सती। पियको उपदेशन आई हती॥
पिय मोर पयान कियो बनको। हौं प्राण पठाउँ तजों तनुको॥
कहिके अस सो निज देह तजी। सुरलोक गई पतिधर्म धुजी॥
शत पन्द्रह युक्त नवासि सरे। सु अषाढ बदी दशमीहु परे॥
बुध वासर धन्य सों धन्य घरी। उपदेशि पिया तनु त्याग करी॥
भयो सोर कहें कोउ सिद्ध मुनी। परमारथ बिन्दक तत्व गुनी॥
द्विजगेह में शारद देह धरी। रति रंग रमारस राग भरी॥

दो—कोउ कही तियके मुखन, बोले श्रीभगवान।
माह निवारेउ भक्तकर, साहिब शील निधान॥१९॥

हुलसी सुत तीरथ राज गये। अरु मज्जि त्रिवेणि कृतार्थ भये॥
गृह वेष विसर्जन कीन्ह तहाँ। मुनि वेष संवारि चले फकहां॥
गढ़ होलरु धेनुमती तमसा। पहुँचे रघुवीर पुरी सहसा॥
तहँवा चौमासक लौं बसिके। प्रिय सन्त अनन्त विभू रसिके॥
चले वेगि पुरी कहँ धाम महा। विश्राम पचीसक बीच रहा॥
तिनमें दुइ ठाय प्रधान गुनो। वरदान रु शाप की बात सुनो॥
धरिचार दुबौली में बास कियो। हरि राम कुमारहि शाप दियो॥
सो प्रसिद्ध सुप्रेत भयो तेहिते। हरि दर्शन आप लहे जेहिते॥
दो०—जगन्नाथ सुखधाम में, कछुक दिवस करिवास।
लिखे वाल्मीकी स्वकर, जब तब लहि अवकास॥२०॥

रामेश्वर कहँ कीन्ह पयाना। तहँते द्वारावति जग जाना॥
बहुरि तहांते चलि हर्षाई। बद्री धामहि पहुँचे जाई॥
नारायण ऋषि न्यास सुहाये। दरस दिये मानस गुण गाये॥
तहँते अति दुर्गम पथ लयऊ। मान सरोवर कहँ चलिगयऊ॥
जियको लोभ तजै जो कोई। सो वहँ जाय कृतारथ होई॥
तहँ करि दिव्य सन्त सत्संगा। जाते होवै भवरस भंगा॥
दिव्य सहाय पाय मुनिराई। जात रुपाचल देखेउ जाई॥
नीलाचल कर दर्शन कीन्हे। परम सुजान भुशुण्डिहिं चीन्हे॥
लौटि सरोवर पै पुनि आये। गिरि कैलाश प्रदच्छिन लाये॥
दो०—इमि करि तीर्थाटन सकल, निवसे भववन आय।
चौदह बरस रु मासदस, सतरह दिवस विताय॥२१॥

टिकिके तहँ चातुर मास किये। नित राम कथा कहि हर्षि हिये॥
बनवासि सु सन्त सुनै नित सो। सुनि होहिं अनन्दित ते चितसों॥
बन में इक पिप्पल रुख हतो। तिहि ऊपर प्रेत नियास छतो॥
जल शौच गिरावहिं तासु तरे। सोइ पानिय प्रेत पियास हरै॥

जब जानेउ सोकि अहैं मुनि ये। जिन बालपने मोहि शाप दिये ॥
तब एक दिना सो प्रतच्छ कह्यो। कहिये सो करौं जस भाव अह्यो ॥
हुलसी सुत बोलेउ मोरे मना। रघुनन्दन दर्शन की चहना ॥
सुनि प्रेत कह्यो जु कथा सुनिवै। नित आवत अंजनिपूत अवै ॥
सबते प्रथमहि सो आवहिं जू। सब लोग न पाछे सो जावहिं जू ॥

सो०–वेष अमंगलधारि, कुष्टीको वपु जानिये।
अवसर नीक विचारि, चरण गहिय हठ ठानिये ॥ ७ ॥

छन्द :—

हठ ठानि तिन पहिचानि मुनिवर विनय बहुविधि भाषेऊ
पद गहि न छाँडेहु पवन सुत कह कहहु जो अभिलाषेऊ।
रघुवीर दर्शन मुहिं कराइय मुनि कहेउ गद्गद्वचन
तुम जाय सेवहु चित्रकूटहिं तहं दरस पैहहु दृगन ॥

दो०–श्रीहनुमन्त प्रसङ्ग यह, विमल चरित विस्तार।
लहेउ गुसाईं दरस रस, विदित सकल संसार ॥

चित चेति चले चित्रकूट चितय। मनमाहिं मनोरथ को उपचय ॥
जब सोचहिं आपन मन्द कृती। पग पाछे पड़ै न रहै जु धृती ॥
सुधि आवत राम स्वभाव जबै। तब धावत मारग आतुर ह्वै ॥
यहि भाँति गुसाईं तहाँ पहुँचे। किय आसन राम सुघाट विचे ॥
इकबार प्रदक्षिण देन गये। तहँ देखत रूप अनूप भये ॥
युग राजकुमार सु अश्व चढे। मृगया वन खेलन जात कढे ॥
छवि सो लखिके मन मोहेउ पै। अस को तनुधारि सो जानि सकै ॥
हनुमन्त बतायउ भेद सबै। पछताइ रहे ललचाइ तबै ॥
पुनि धीरज दीन्हेउ वायु तनय। पुनि होइहि दर्शन प्रात समय ॥

दो०–सुखद अमावस मौनिया, बुध सोरह सै सात।
जा बैठे तिसु घाट पै, विरही होतहि प्रात ॥२३॥

सो०–प्रकटे राम सुजान, कहेउ देहु बाबा मलय।
शुक वपु धरि हनुमान,पढेउ चितावनि दोहरा ॥८॥

दो०–चित्रकूट के घाट पर, भइ सन्तन की भीर।
तुलसिदास चन्दन घिसै, तिलक देत रघुवीर ॥२४॥

छ०–रघुवीर छवि निरखन लगे विसरी सबै सुधि देह की।
को घिसै चन्दन दृगनते बहि चली सरित सनेह की।
प्रभु कहेउ तउ पुनि नाहि चेतेउ स्वकर चन्दन लै लिए।
दै तिलक रुचिर ललाट पै निज रूप अन्तर्हित किए।५।

दो०–विरह व्यथा तलफत पडे, मगन ध्यान इकतार।
रैनि जगायउ वायुसुत, दीन्ही दशा सुधार ॥२५॥

शुक पाठ पढावत नारि नरा। कर पर लैकर शुक को पिंजरा ॥
हुलसी सुत भक्ति महा महिमा। तत्कालहि छाय रही महि माँ ॥
दिन एक प्रदक्षिण कामद दै। पहुँचे सौमित्रि पहाडो पै ॥
तहँ श्वेतक सर्प पर्‍यो मग में। सित गात मनोहर या जग में ॥
तिहि ओर विलोकि गुसाईं कहै। चन्द्रोपम सुन्दर नाग अहै।
हरि सृष्टि विचित्र कहे न बनै। निगमागम शारद शेष भनै ॥
ऋषि दृष्टि पडी तिसु पाप गयो। तब पन्नग ज्ञानि ललाम भयो ॥
मोहि छुइ के तारिय नाथ अबै। छूतेहि गयो सो भुजंग बिलै ॥
योगश्री मुनि तहँ प्रकट भये। निज पूर्व कथा कहि वास लये ॥

दो०–यह प्रभाव मुनिनाथ कर, सुनि गुनि सन्त सुजान।
आवन लागे दरश हित, भीर भई ऋषि थान ॥२६॥

बड भीर निहारि गुफा में दुके। बहिरन्तर ज्ञानि विचारि लुके ॥
सुनि आवहि योगी तपी यती। बिन दर्शन जाहि निरास अती।
दरियानँद स्वामिहु आय रहे। निज आसन टेक जमाय रहे ॥

लघु शंका हेतु गुसाइँ कढे। करजोरि सो स्वामि भये जु ठढे ॥
कहे नाथ है होत अनीति बडी। क्षमिये कहिबो मैं बात कडी ॥
लघु शंका लगे बहिरात हैं जू। सुनि साधु गिरा छुपि जात हैं जू ॥
दुख पावत सज्जन हैं तिहि ते। विनती हा करों सुनिये इहि ते ॥
हों देत मचान बंधाय अबै। तिहि ऊपर आसन नाथ फबै ॥
करि दर्शन होब निहाल सबै। सुठि सन्त समागम होय जब ॥

दो०--विनतो दरियानन्द को, मानि सजाय मचान।
बैठत दिन भर लहत सुख, साधक सिद्ध सुजान ॥२७॥

नित नव सत्संग उमाह बढै। शुचि सन्त हृदय रसरंग चढै ॥
नित नित्य विहारहु देखत है। मृगयाकर कौतुक पेखत हैं ॥
वृन्दावन ते हरिवंश हितू। प्रियदास नवल निजशिष्य भृतू ॥
पठये तिन आय जुहार किये। गुरु दत्त सुपोथि सप्रेम दिये ॥
यमुनाष्टक राधासुधानिधि जू। अरु राधिकातंत्र महा विधि जू ॥
अरु पाति दये हित हाथ लिखी। सोरह सै नव जन्माष्टमि की ॥
तिहि माहिं लिखी विनती लहुरी। सोइ बात सुखागर से कहुरी ॥
रजनी महारास की आवतजू। चित मोर सदा ललचावत जू ॥
रसिके रसमें तनु त्याग चहों। मोहि आशिष देइय कुंज लहौं ॥

सो०--सुनि विनती मुनिनाथ, एवमस्तु इति भाषेऊ।
तनु तजि भये सनाथ, नित्य निकुंज प्रवेश करि ॥८॥

दो०--संडीला ते आयके, वसु स्वामी नँदलाल।
पढी राम रक्षा विभूति,जो भक्तन को ढाल ॥२८॥

षट मास रहे सत्संग लहे। चलती बिरियाँ कछु चिन्ह चहे ॥
दइ शालग्राम कि मूर्ति भली। निज कर लिखि कवच औॅर कमली ॥
इमि यादव माधव वेणि उभय। चितसुख कृष्णेश अनन्त सदय ॥
तैसै मुमुरारि उधार यती। विरही भगवन्त सुभाग्य वती ॥

विभवानँद देव दिनेश मिले। अरु दक्षिण देश के स्वामि पिले ॥
सब रंग रँगे सतसंग पगे। अहमादि कुनींद सुषुप्ति जगे ॥
कहे धन्य गुसाइं जु जन्म लये। लहि दर्शन हम कृत कृत्य भये ॥
दृग नीर ढरें नहि बोल सरे। सब जाहिं सुप्रेम प्रमोद भरे ॥
बहु संवत साधु समागम सों। कढिगे नहिं जानि परे किमि धों ॥

दो०--सोरह सै सोरह लगे, कामद गिरि ढिंग वास।
शुभ एकान्त प्रदेश महँ, आये सूर सुदास ॥२६॥
पठये गोकुलनाथ जी, कृष्ण रंगमें बोरि।
दृग फेरत चित चातुरी, लीन्ह गुसाईं छोरि ॥३०॥

कवि सूर दिखायउ सागर को। शुचि प्रेम कथा नट नागर को ॥
पद द्वै पुनि गाय सुनाय रहे। पद पंकज पै शिर नाय कहे ॥
अस आशिष देइय श्याम ढरैं। यह कीरति मोरि दिगन्त चरैं ॥
सुनि कोमल बैन सुदादि दिये। पद पोथि उठाय लगाय हिये ॥
कहे श्याम सदा रस चाखत हैं। रुचि सेवक की हरि राखत हैं ॥
तनिको नहि संशय है यहिमा। श्रुति शेष बखानत है महिमा ॥
दिन सात रहे सत्संग पगे। पदकंज गहे जब जान लगे ॥
गहि बाहँ गुसाइं प्रबोध किये। पुनि गोकुल नाथको पत्र दिये ॥
लै पाति गये जब सूर कवी। उरमें धपराय के श्याम छवी ॥

दो०--तब आयो मेवाडते, विप्रनाम सुखपाल।
मीराबाई पत्रिका, लायो प्रेम प्रवाल ॥३१॥
पढि पाती उत्तर लिखे, गीत कवित्त बनाय।
सब तजि हरि भजिबो भलो, कहि दिय विप्र पठाय ॥३२॥

लडके इक बालक आन लग्यो। सुठि सुन्दर कंठ सों गान लग्यो ॥
सिसु गान पै रीझि गुसाइं गये। लिखि दीन्ह तबै पद चार नये ॥
करि कंठ सुनायउ दूजे दिना। अरि जाय सो नूतन गीत बिना ॥

मिश याहि बनावन गीत लगे। उर भीतर सुन्दर भाव जगे॥
जब सोरह से बसु बीस चढ्यो। पद जोरि सबै शुचि ग्रन्थ गढ्यो॥
तिसु राम गितावलि नाम धरयो। अरु कृष्ण गितावलि राँचि सरयो॥
दोउ ग्रन्थ सुधारि लिखे रुचि सों। पुनि सुना दीन्ह हनुमन्तहिं सों॥
तब मारुति ह्वैके प्रसन्न कह्यो। करि ध्यान अवधपुर जाय रह्यो॥
इमि इष्टकी आयसु पाय चले। विरमे सुठि तीरथराज भले॥

दो०--तेहि अवसर उत्तम परब, लाग्यो मकर नहान।
योगी तपी यती सती, जुरे सयान अयान॥३३॥

तिहि पर्वते पाछे गये दिन छै। वट छाँह तरे सोलखे मुनि द्वै॥
तप पुंज दोउ मुख कान्ति तपै। छवि छाइ छपाकर छन्द छपै॥
करि दंड प्रणाम सु दूरहिते। कर जोरिके ठाढ भये तिन ते॥
मुनि सैन सों एक हँकारि लिये। अपने ढिंग आसन चारु दिये॥
तिहि टारिके भूमिमें बैठ गये। परिचय निजदै परिचायलये॥
सोइ रामकथा तहँ होत रही। गुरु शूकरखेतमें जौन कही॥
विस्मय युत बूझेउ गुप्त मता। तब जागवलिक मुनि दीन बता॥
हर विरचि भवानिहि दीन्ह सोई। पुनि दीन्हि भुशुण्डिहि तत्व गोई॥
हों जाय भुशुंडिते सोई लही। भरद्वाज मुनी प्रति आय कही॥

दो०--यहि विधि मुनि परितोष लहि,पदगहि पाय प्रसाद।
सुनेउ युगल मुनिवर्यकर, तहाँ विमल संवाद॥३४॥

तिहि ठाँव गये जब दूजे दिना। थल सून निहार मुनीश बिना॥
वट छाँह न सो नहिं पर्णकुटी। मन विस्मय बाढेउ मर्म पुटी॥
उर राखि उभय मुनि शील चले। हरि प्रेरित काशी की ओर ढले॥
कछु दूर गये सुधि आइ जबै। मन सोचत का करिये जु अबै॥
जो भयो सो भयो अब यही जु सधै। हर दर्शन करि चलिहों अवधै॥
मन ठीक किये मग आगे बढे। चलिके पुनि सुरसरि तीर कढे॥
तब तीरहि तीर चले चितदै। भइ साँझ जहाँ ही तहा टिकि गै॥

दिग वारि पुरा विच सीता मढी। तहँ आसन डारत वृत्ति चढी॥
नहिं भूख न नींद विक्षिप्त दशा। उर पूरब जन्म प्रसंग बसा॥

दो०--सीता वट तर तीन दिन, बसि सुकवित्त बनाय।
वन्दि छुडावत विन्ध्य नृप, पहुँचे काशी जाय॥३५॥
भक्त शिरोमणि घाट पै, विप्रगेह करि वास।
राम विमल यश कहि चले, उपज्यो हृदय हुलास॥३६॥

दिनमें जितनी रचना रचते। निशि माहिं सुसंचित ना बचते॥
यह लोप क्रिया प्रति दिवस सरै। करिये सो कहा नहिं बूझि परै॥
अठवें दिन शंभु दियो सपना। निज बोली में काव्य करो अपना॥
उचटी निंदिया उठ बैठे मुनी। उर गूँज रही सपने की धुनी॥
प्रगटे शिव संग भवानि लिये। मुनि आठहुँ अंग प्रणाम किये॥
शिव भाषेउ भाषामें काव्य रचो। सुर वाणि के पीछे न तात पचो॥
सबकर हित होय सोई करिये। अरु पूर्व प्रथा मत आचरिये॥
तुम जाय अवधपुर वास करो। तहँ ही निज काव्य प्रकाश करो॥
मम पुण्य प्रसाद सों काव्य कला। होइहिं सम सामऋचा सकला॥

सो०---कहि अस शंभु भवानि, अन्तर्धान सो भे तुरत।
आपन भाग्य बखानि, चले गुसांई अवधपुर॥१०॥

दो०---जेहि दिन साहि सभान में, उदय लह्यो सम्मान।
तेहि दिन पहुचे अवधमें, श्रीगुसाईं भगवान॥३७॥

सरयू करि मज्जन नव दिन में। विचरैं पुलिनारण्य वीथिन में॥
इक सन्त मिले कहने सो लगे। थल रम्य लखैं महावीर लगे॥
लै संग सो ठाँव दिखायो भले। वट की विटपावलि पुण्य थले॥
तिनमें वट एक विशाल पही। तिसु मूल में वेदिका सोइ रही॥
तापर बैठ सिद्धासन से। इक सिद्ध प्रसिद्ध हुतासन से॥

थल देखि लुभायो गुसाइं मना। बसिये यहि ठाँव कुटीर बना ॥
जब सिद्ध की सन्निधि में गुदरे। तजि आसन सो जय जय उचरे ॥
सो कह्यो गुरु मोर निदेश दियो। तिहि कारण हौं यहँ वास लियो ॥
गुरु मोर बतायो मर्म सबै। सो देखत हौं प्रत्यक्ष अबैं ॥
कुं०--मम गुरु कहेउ कि करहि किन सिद्ध पृष्ठथल वास।
कछु दिन बीते कहहिंगे, हरियश तुलसीदास ॥
हरियश तुलसीदास कहैंगे यहि थल आई।
आदि कवी अवतार वायुनन्दन बल पाई ॥
राजराज वट रोपिदियो मर्याद समूचय।
बसि यहँ ठाहर ठाठु मानि अतिहित शासन मय।१।
सो०--जब ऐहैं यहि ठाम, हुलसी सुत तिसु हेतु हित।
सौंपि कुटी आराम, तनु तजिऐहहु मम निकट ॥११॥
उपदेश गुरु मोहि नीक लग्यो। बहु जन्म पुरातन पुण्य जग्यो ॥
बसिके रसिके तपिके चौरी। हौं जोवत बाट रह्यो गौरी ॥
अब राजिय गाजिय नाथ यहाँ। हौं जाब बसे गुरु मोर जहाँ ॥
कहिके अस वेदिका तें उतर्यो। सिर नाय सिधारेउ दूरि पर्यो ॥
तहँ आसन मारि के ध्यान धर्यो। तिसु योग हुतासन गात जर्यो ॥
यह कौतुक देखि गुसाइं कहै। धनुधारि तोरी बलिहारि अहै ॥
निवसे तहँ सौख्य सुपास लहे। दृढ संयम जो मम योग कहे ॥
पय पान करैं सो एक समय। रघुवीर भरोस न काहुक भय ॥
युग वत्सर बीते न वृत्ति डग्यो। इकतीस को संवत आइ लग्यो ॥
दो०--राम जन्म तिथिवार सब, जस त्रेता में भास।
तस इकतीसा में जुरे, योग लग्न ग्रह रास ॥३८॥
नवमी मंगलवार शुभ, प्रात समय हनुमान।

प्रगटि प्रथम अभिषेक किय, करन जगत कल्याण।
हर गौरी गणपति गिरा, नारद शेष सुजान।
मंगलमय आशिष दयी, रवि कवि गुरु गीर्वाण।३६।
सो०--यहि विधिभा आरम्भ, रामचरितमानस विमल।
सुनत मिटत मद दम्भ, कामादिक संशय सकल।१२।
दुइ वत्सर सात सो मास परे। दिन छब्बिस माँझ सो पूर करे ॥
तैंतीस को संवत औ मँगसर। शुभ द्यौस सु राम विवाहहि पर ॥
शुठि सप्त जहाज तयार भयो। भव सागर पार उतारन को ॥
पाखण्ड प्रपंच बहावन को। शुचि सात्विक धर्म चलावन को ॥
कलि पाप कलाप नशावन को। हरि भक्ति छटा दरसावन को।
मत वाद विवाद मिटावन को। अरु प्रेम को पाठ पढावन को ॥
सन्तन चित चाव चढावन को। सज्जन उर मोद बढावन को।
हरि रस हर बस समझावन को। श्रुति सम्मत मार्ग सुझावन को ॥
युत सप्त सोपान समाप्त भयो। सद्ग्रन्थ बन्यो सुप्रबन्ध नयो ॥
दो०--महिसुत वासर. मध्य दिन, शुभ मिति तत्सत कूल।
सुर समूह जय जय किये, हर्षित वर्षे फूल ॥४१॥
जिहि छिन यह आरम्भ भो, तिहि छिन पूरेउ पूर।
निर्बल मानव लेखनी, खींचि लियो अति दूर ॥४२॥
पाँच पात गणपति लिखे, दिव्य लेखनी चाल।
सत शिव नागरु द्यू दिशय, लोक गयउ तत्काल ॥
सबके मानस में बसेउ, मानस राम चरित्र।
वन्दत ऋषि कवि पद कमल, मन क्रम वचन पवित्र ॥
वन्दौं तुलसी के चरण, जिन कीन्हो जग काज।

कलि समुद्र बूडत लख्यो, प्रकट्यो सप्त जहाज ॥४५॥
परम मधुर पावन करणि, चार पदारथ दानि।
तुलसी कृत रघुपति कथा, कै सुरसरि रसखानि ॥४६॥
सो०–प्रगटे श्रीहनुमान, अथ सों इतिलों सब सुने।
दिये सुभग वरदान, कीरति त्रिभुवन वश करी ॥१५॥

मिथिला के सन्त सुजान हते। मिथिलाधिप भाव पगे रहते ॥
शुचि नाम रूपारुण स्वामि जुते। तेहि अवसर औध में अये हुतो ॥
प्रथमहि यह मानस तिनहि सुन्यो। तिनही अधिकारी गुसाई गुन्यो ॥
स्वामी नन्दलाल के शिष्य पुनी। तिसु नाम दयाल सु दास गुनी ॥
लिखिके पोथी निज ठाम गये। गुरुके ढिंग जाय सुनाय दये ॥
यमुना तट पै त्रय वत्सरलों। रसखानहि जाय सुनावत भो ॥
तबतैं बहु संख्यक पात लिखैं। कछु लोगन औ निज हाथ अर्पैं ॥
मुकता मणि दास जु आयो तो। हरि शयन को गीत सुनायो हतो ॥
तिसु भावहि पै मुनि रीझि गये। पलपें पल भाँजत सिद्धि दये ॥

दो०–तब हरि अनुशासन लहे, पहुँचे काशी जाय।
विश्वनाथ जगदम्ब प्रति, पोथी दयी सुनाय ॥४७॥
छ०–पोथी पाठ समाप्त कैके धरे शिवलिंग ढिंग रातमें।
मुख्य पंडित सिद्ध तापस जुरे जब पट खुलेउ प्रात में ॥
देखे तृषित दृष्टिते सब जने कीन्ही सही शंकरम्।
दिव्याक्षर से लिखे पढे धुनि सुने सत्यं शिवं सुन्दरम् ॥

शिवकी नगरी रसरंग भरी। यह लीला पाटि गई सगरी ॥
हर्षे नर नारि जुहार किये। जय जय धुनि बोलि बलैयां लिये ॥
पै पंडित लोगन शोच भये। सब मान महातम जीव गये ॥
पढि है यह पोथी प्रसाद मयी। तब पूछि हैं कौन हमें मनई ॥

दल बाँधि ते निन्दन बागत भे। सुरबानि सराहत पागत भे ॥
कोऊ ग्रन्थ चुरावन हेतु रचे। फरफन्द अनेक प्रपंच पचे ॥
निशुआ सिखुआ युग चोर गये। रखवार विलोकि निहाल भये ॥
तिन पूछे गुसाइं ते कौन धुहीं। युग श्यामल गोर धरे धनुहीं ॥
सुनि बैन भरे जल नैन कहै। तुम धन्य हते हरि दर्श लहे ॥

दो०–तजि कुकरम तस्कर तरे, दइ सब वस्तु लुटाय।
जाय धरी टोडर सदन, पोथी यतन कराय ॥४८॥

पुनि दूसर पात लिखैं रुचि सों। तिहितैं लिपि पै लिपि होन लग्यो ॥
दिन दून प्रचार बढ्यो लखिके। सब पंडित हारे हिये झखि के ॥
तब मिश्र बटेशर तांत्रिक ही। दुख दाह सुधीगण रोय कही ॥
तिन मारण केर प्रयोग कियो। हठि भैरव प्रेरि पठाय दियो ॥
हनुमन्त से रक्षक देखि डरे। उलटे सु बटेशर प्राण हरे ॥
तब हारि चले दलको सजिके। मधुसूदन सरस्वती मठपै ॥
कहे कीन्ह प्रमाण महेश सही। किसु कोटिका है सो न बात कही ॥
श्रुति शास्त्र पुराणेतिहास इये। केहिके सम कक्ष तिले कहिये ॥
यतिराज कहैं मगवाउब जू। तब पोथि विलोकि बताउब जू ॥

दो०–ते मँगाय पोथी पढी, उपज्यो परमानन्द।
फेरि दयी लिखि श्लोक यह, जयति सच्चिदानन्द ॥४९॥
श्लोक–आनन्द कानने ह्यस्मिन् जंगमस्तुलसी तरुः।
कविता मंजरी भाति राम भ्रमर भूषिता ॥

जब पंडित आये कहैं तिनसे। किन बूझिय बात सदा शिवसे ॥
निगमागम शास्त्र पुराण सबै। क्रमते धरे मानस नीचे फबै ॥
जब होत विहान खुलेउ पटको। सब टूट परे तिहि देखन को ॥
लखि वेद के ऊपर मानस हीं। सब पंडित लाज गरे तितही ॥
चरणों में पडे चरणोदक लें। अपराध कराय क्षमा घर गै ॥

नदिया को सु पंडित दत्त रवी। सब शास्त्र विशारद आशु कवी ॥
मुनि ते हठि वाद विवाद कियो। अरु हारि विषाद बढ़ायो हियो ॥
जब न्हान गुसाइं चले मठ ते। तब मारण हेतु कयो लठ ले ॥
हनुमन्त सु रक्षक देखि भज्यो। अपनी करनी पर आप लज्यो ॥
पुनि जाय गुसाइं रिझाय लियो। वर हेतु सुधी हठ भूरि कियो ॥
छं०–मागेउ सो वर तजियेपुरी मुनि विवशभे वरके दिये।
काशीनाथ कहि निवरतहों कवित्त बनाय दृढ निश्चय किये।
सो लिखि धरे हर मन्दिरहिं प्रस्थान दक्षिण दिशि किये।
शिव दै दरस समझाय फेरे क्षुभित मन धीरज दिये ॥
दो०–सुनि प्रस्थान मुदित हो, गयो दरश हित धीर।
बन्द भये पट धुनि हुई, कोप सहित गम्भीर ॥
सो०–जाय गुसाईं मनाउ, पग परि बहु विधि विनय करि।
पुर महँ लाय बसाउ, ना तो होइहि नाश तव ॥
सुनि टोडर आय करी विनती। मुनि मानिय सेवक की मनती ॥
प्रिय घाट असी पर भौन नयो। बनके सह घाट तयार भयो ॥
बसिके सुखसों सुख देइय जू। पदकंज सदा हम सेइय जू ॥
सुख मानि गये तेहि धाम बसे। रघुबीर गुणावलि माहिं रसे ॥
कलि आयेउ राति कृपाण लिये। मुनि कहँ बहु भाँति ते त्रासदिये ॥
सोकक्षा जल बोरहु पोथि निजै। नतु दाढिहौं ताढिहौं चेतु अबै ॥
कहिके अस सोजु सिधायो जबै। मुनि ध्यान धरेउ हरि हेतु तबै ॥
हनुमन्त कहेउ कलिना मनि हैं। मम बरजेसों बैर महा ठनिहैं ॥
लिखिके विनयावलि देहु मोही। तब दण्ड दिवाउब तात ओही ॥
दो०–विदित राम विनयावली, मुनि तब निर्मित कीन्ह।
सुनि तिहि साखी श्रुत प्रभू, मुनिहिं अभय कर दीन्ह ॥

मिथिलापुर हेतु पयान किये। सुकृती जनको सुख शान्ति दिये ॥
भृगु आश्रय में दिन चार रहे। कर हीन हुआ कर पाय रहे ॥
दिन एक बसे मुनि हंस पुरा। परसी को सुहाग दिया बहुरा ॥
गउ घाट मे राउ गँभीर घरे। दुइ वासरलों तहँवा ठहरे ॥
ब्रह्मोश सुदर्शन कैके चले। पुनि कान्त ब्रह्मपुर माँ निकले ॥
सँवरू सुत मँगरू ग्वाल हतो। दुहि दूध दियो सुइ साधु रतो ॥
वर दीन्ह तजे चोरहाइ सहूँ। निर्वंशन होवहुगे कबहूं ॥
तब बेलापतार में आय रहे। तहँ दास धनी निज कष्ट कहे ॥
छं०–कहे कष्ट आपन काल्हि जाइहिं प्राण मम पातक बयो।
मूसहि खवायो भोग कहि कहि खात हरि सोहैं कियो ॥
रघुनाथसिंह जान्यो दगा करिकोप सो बोलेउ मुने ॥
नहिं खाहिं ठाकुर सामुहे मोहि तोपि वध निश्चय गुने ॥
दो०--मुनि वर धीरज दीन्ह, करी रसोई साधु तव
सम्मुख भोजन कीन्ह, ठाकुर लख इमि ऋषि कहेउ ॥
दो०--तुलसी झूठे भगत की, पति राखत भगवान।
जैसे मूर्ख पुरोहितहिं, देत दान जजमान ॥५२॥
निज गेह पवित्र करावन को। लैगो मुनि कों नर नायक सो ॥
तहँ भक्त सु गोविन्द मिश्र मिले। जिसु दृष्टि ते लोह घना पिघले ॥
मुनि गाँव के नांव में फेर करयो। रघुनाथ पुरा तिसु नाम धरयो ॥
तहँते चलिके विचरे तिचरे। ऋषि हरिहर खेत में जा पधरे ॥
पुनि संगम मज्जि चले सपदो। नियराये विदेहपुरी छपदी ॥
धरि बालिका रूप विदेह लली। बहराय के खीर खवाय चली ॥
जब जानेउ मर्म कहा कहिये। मनही मन सोच कृपा रहिये ॥
द्विज लोग नहालाके घेरि रहे। अरु आपन घोर विपत्ति कहे ॥

दो०–दया लागि कर्तव्य गुनि, सुमिरे वायु कुमार।
दण्डित करि बहुरायऊ, सुखयुत द्विज परिवार॥
मिथिलाते काशी गये, चालिस संवत लाग।
दोहावलि संग्रह किये, सहित विमल अनुराग॥५४॥
लिखे वाल्मीकी बहुरि, इकतालिस के माहिं।
मँगसर सुदि सतमी रवी, पाठ करन हित ताहि॥५५॥
माधव सित सिय जन्मतिथि, ब्यालिस संवतबीच।
सत्सैया बरणे लगे प्रेम वारिते सींचि॥५६॥
सो०–उतरु शनीचरि मीन, मरी परी काशी पुरी।
लोग होंय अतिदीन,जाय पुकारे ऋषि निकट॥१६॥
छ०-लागिय नाथ गुहार अपर बल कछु न बसाता॥
राखें हरि के दास कि सिरजनहार विधाता॥
दो०–करुणामय मुनि सुनि व्यथा, तन्त्र कवित्त बनाय।
करुणानिधि सों विनयकरि, दीन्ही मरी भगाय॥५७॥

कवि केशव दास बड़े रसिया। घनश्याम शुकुल नभके बसिया॥
कवि जानिके दर्शन हेतु गये। रहि बाहर सूचन भेज दये॥
सुनिके जु गुसाईं कहे इतनो। कवि प्राकृत केशव आव न दो॥
फिरिगे झट केशव सो सुनिके। निज तुच्छता आपन ही गुनिके॥
जब सेवक टेरेहु गे कहिके। हौं भेटिहौं काल्हि विनय गहिके॥
घनश्याम रहे घासीराम रहे। बलभद्र रहे विश्राम लहे॥
रचि राम सुचन्द्रिका रातिहि में। जुरे केशव जू असि घाटिहि में॥
सत्संग जम्यो रसरंग मच्यो। दोउ प्राकृत दिव्य विभूति खच्यो॥
मिट केशव को संकोच गयो। उर भीतर प्रीति की रीति रयो॥

दो०–आदिलशाही राज के, भाजन दान बनैत।
दत्तात्रय सो विप्रवर, आये ऋषय निकेत॥५८॥
करि पूजा आशिष लही, माँगा पुण्य प्रसाद।
लिखित वाल्मीकी स्वकर,दयी सहित अह्लाद॥५९॥
अमरनाथ योगी तिया, बैरागी हरि लीन।
ताने कोपि तिनहिं रहित, कंठी माला कीन्ह॥६०॥
मच्यो कुलाहल साधु सब, आये मुनिवर पास।
फेरि मिली सो आसनहिं,ऋषय कृपा अनयास॥६१॥
आयो सिद्ध अघोरिया, अलख जगावत द्वार।
छिनमहँ सिद्धाईं हरी, उपदेशेउ श्रुतिसार॥६२॥

निमिसार को विप्र सुधर्मरता। बन खंडी सु नाम विमोह गता॥
सब तीरथ लुसन चाहैं थपै। तिसु हेत सदाशिव मंत्र जपै॥
इक प्रेत सोता ढिंग ठाढ भयो। बहु द्रव्य गडो सो दिखाय दयो॥
सो कह्यो धन लै शुभकाज सरो। इहि योनिते मोर उधार करो॥
मन हर्षित विप्र कह्यो मोहिका। चहुं धाम घुमाय सुतीरथमाँ॥
तब काशी गुसाइं के तीर चलो। तिन दर्शन होय तुम्हार भलो॥
सुखमानिके तैसोइ प्रेत कियो। नभ माँझ असीपर छक छियो।
जन शोर मच्यो बहु लोग जुरे। सब कौतुक देखहिं अंग फुरे॥
निज आश्रमते कढि आये मुनी। नभते भइ जय जय कार धुनी॥

दो०–दिव्यरूप धरि यान चढि, प्रेत गयो हरिधाम।
तुलसी दरस प्रतापते, सोझ भयो विधि वाम॥६३॥
बनखंडी महिपै गिरयो, पग छुइ किया प्रणाम।
मुनि सन सब व्योरा कह्यो,बसेउ रसेउ तेहि ठाम।६४।

तासु विनय सुनि मुनि चले, तीरथ थापन काज ।
पहुँचे अवधहिं पांचदिन, तहाँ टिके ऋषि राज ॥६५॥

दे राम गीतावलि गायक को । जे गावहिं यश रघुनायक को ॥
मन बोध तिवारिहिं औघ छटा । सब कंचन मय वन भूमि अटा ॥
दिखलाके चले रत्नादि टिके । पुनि शूकर खेत में जाय थिके ॥
सिया वास सुगाँव में वास लिये । तहँ सीता कूपको पाथ पिये ॥
पहुँचे लखनैं पुर मोद भरे । अरु धेनुमती तट पै उतरे ।
कहुँ दीनन को प्रतिपाल करैं । कहुँ साधुनके मन मोद भरैं ॥
कहु लखन लालको चरित बँचैं । कहुँ प्रेम मग्न ह्वै आप नचैं ।
कहुँ रामायण कलगान सँचैं । उत्साह कुलाहल भूरि मचै ॥
कहुँ आरत जनको ताप हरैं । कहुँ अज्ञानिन उर ज्ञान धरैं ।

दो०–निर्धन भाट दमोदरहिं, आशिषदै कवि कीन ।
लहेउ विपुल धन मानबहु, भो कविकला प्रवीण ॥६६॥
तहँ ते मलिहाबाद में, आय सन्त सिरताज ।
रामायण निजकृत दिये, ब्रजवल्लभ भटराज ॥६७॥
पुनि अनन्य माधव मिले, कोटरा ग्रामहिं जाय ।
माता प्रति शिक्षा सुने, भक्ति दिये बतलाय ॥६८॥

पुनि जाय बिठूर में रैनि बसे । सरि मज्जत पंक में जाय धसे ॥
गहि बाँह निकारेउ जन्हु सुता । तन तायो जग जु रही न बुता ॥
तहँ ते चलि जाय संडीले परे । गौरी शंकर गृह माथ धरे ॥
कही या घर में लैहैं जन्म पखा । मनसुखा स्वयं श्रीकृष्ण सखा ॥
कछु काल गये सोइ जन्म धरयो । वंशीधर ताकर नाम परयो ॥
कवि भो मुनिवर उपदेश कियो । पद रास सुने तनु त्यागि दियो ॥
तिहि व्योम विमान पै जात लख्यो । हलुवाइ सुसिद्ध प्रवीण भख्यो ॥

सत्संगी देखि निहाल भये । उपदेश सनातन पूर लये ॥

दो०–संडीले ते मुनि चले, मग ठाकुर क्षिति पाल ।
नमन कियो नहिं मद मतो, तुरत भयो कंगाल ॥६६॥
सो०–विप्र किये अपमान, ताते ते निर्धन भये ।
केथन किय सम्मान, सुखी भये धन वंश लहि ॥६७॥
दो०–जुरे जुलाहे भेट धरि, लहे विपुल धन धान्य ।
पहुँचे नैमिष वन मुनि, सर्व तंत्र सम्मान्य ॥७०॥
शोधि सकल तीरथ थपे, किय त्रय मास निवास ।
मिले पिहानी के सुकुल, सम्वत लग उनचास ॥७१॥

खैराबाद के सिद्ध प्रवीण परे । मुनि आपहि योग ते जाय परे ॥
करि ताहि निहाल चले मिसरिष । संग में बन खंडि दुधारिक सिष ॥
पुनि नाव चढ़े सुखसी विचरे । पुर राम सुनत तुरते उतरे ॥
नृप सेवक टंटा बिसाहि रहे । सब माल मता तजि राह गहे ॥
सिह राम सुन्यो पग दौरि गहे । करि के बिनती पद टेकि रहे ॥
तब लौटि परे तिसु धाम बसे । हनुमन्तहिं थापि तहाँ बिलसे ॥
वंशीवट नाम धरयो वट रय । मँगसर सुदि पंचमि रास रचय ॥
वृन्दावन में तहँतेजु गये । सुठि राम सुघाट पै वास लये ॥
बड़ धूम मची शुचि सन्त घुरे । मुनि दर्शन को नर नारि जुरे ॥

दो०–स्वामी नाभा ढिग गये, तेकिय बहु सम्मान ।
उच्चासन पधराय मुनि, पूजे सहित विधान ॥७२॥
विप्र सन्त नाभा सहित, हरि दर्शन के हेत ।
गये गुसाइं मुदित मन, मोहन मदन निकेत ॥७३॥
राम उपासक जानि प्रभु, तुरत धरे धनुवान ।
दर्शन दिये सनाथ किये, भक्त वछल भगवान ॥७४॥

बरसाने में लीला सो व्यापि गई । मुनि आसन पै बढ़ि भीर भई ॥
कछु कृष्ण उपासक द्वेष भरे । धनु बाण धरे पर मोह सरे ॥
तिनको समझाये सुतत्व महा । जनको प्रण राम न राख्यो कहा ॥
शुभ दक्षिण देश से जात हतो । हरि मूरति अवधहिं थापन को ॥
विश्राम भयो यमुना तट पै । लखि मूरति मोहे विप्र उदै ॥
सो चलो हरि विग्रह यहीं थपै । विनती किय जाय गुसाइहिं पै ॥
न उठाये उठै जब सो प्रतिमा । तब थापित कीन्ह तहँ जिमिमाँ ॥
तिहि नाम कौसल्या नन्दन जू । मुनिराज धरे जगवन्दन जू ॥
नँददास कनौजिया प्रेम मढे । जे शेष सनातन पास बढे ॥
शिक्षा गुरु बंधु भये तेहिते । अति प्रेम सों आय मिले हितते ॥

दो०–हित सुत गोपीनाथ प्रति, महिमा अवध बखानि ।
जेहि नहि ठाँव ठिकान कहुँ, तिनहिं बसावत आनि ॥

फेरि अमनियाँ दिये पुनि, सखरा ताहि बताय ।
हलवाई वणिकन्ह सदन, बालकृष्ण दिखराय ॥७६॥

सो०–इमि लीला दरसाय, भक्तन उर आनन्द भरि ।
चित्रकूट महँ जाय, कियो कछुक दिन वास तहँ ।१८।

सत काम सुविप्र गुसाइं लगे । दीक्षा हित आयो सुवृत्ति जगे ॥
लखि काम विकार न शिष्य किये । टिकि गो तँह सो हठ ठानि हिये ॥
जब रातमें रानि कदम्बलता । आइ तासु विलोकन सुन्दरता ॥
तिन दीपक बाति बढाय लई । लखिके मुनि सुन्दर सीख दई ॥
सो विप्र लजाय के पाँव पर्यो । करके मुनि छोह विकार हर्यो ॥
पुनि विप्र दरिद्र महा जलपा । मन्दाकिनि डूबन हेतु चला ॥
तिसु प्राण बचावन हेतु अपय । सुठि दारिद मोच शिला प्रकटय ॥
पुनि साह खवास पठायउ जू । मुनि राजहि दिल्लि बुलायउ जू ॥

दो०–चले यमुन तट नृप तिलक, साधु कियो सर नाम ।
राधावल्लभ भक्ति दइ, रीझे श्यामा श्याम ॥७७॥
उडछै केशव दास, प्रेत हते घेरे मुनिहिं ।
उधर्यो विनहिं प्रयास, चढि विमान स्वर्गहिं गयो ॥७८॥

बरवारिके ठाकुर की दुहिता । जिसु सुन्दरता पै जग मुदिता ॥
इक नारिहि ते तिसु ब्याह भयो । जब जानेउ दारुण दाह दयो ॥
नर की जननी जनमावतही । सो प्रसिद्ध कियो तेहि पुत्र कही ॥
अनुकूलहि साज समान किये । जे जानत हे तिन पूजि दिये ॥
यहि कारण धोका भयो बहुतै । अब रोवत मींजत हाथ सबै ॥
तिन घेरे दया लगी सन्त हिये । तिसु हेतु नवान्हिक पाठ किये ॥
विश्राम लगाये सो जानिय जू । तिसु शब्द प्रथम यह आनिय जू ॥
हिय सत अरु कीन्हरु श्याम लगा । श्री राम शैल पुनि हारिपगा ॥
कह मारुत सुत जहँ तहँ पुण्यं । इति पाठ नवान्हिक ठाम अयं ॥

दो०–नारी ते नर हो गयो, करतहि पाठ विराम ।
पुलकित जय तुलसी कहैं, जय जय सीताराम ॥७८॥
तहँते पँचये दिन मुनि, पहुँचे दिल्ली जाय ।
खबर पाय तुरतहि नृपति, लिय दरबार बुलाय ॥७९॥
दिल्ली पति विनती करी, दिखरावहु करामात ।
मुकरि गये बन्दी किये, कीन्हे कपि उत्पात ॥८०॥
बेगम के पट फारेऊ, नगन भई सब वाम ।
हाहाकार मच्यो महल, पटक्यो नृपहिं धडाम ॥८१॥
मुनिहिं मुक्त तक्षण कियो, क्षमापराध कराय ।
विदा किन्ह सम्मान युत, पीनस पै पधराय ॥८२॥

चलि दिल्ली ते आये महा बनमें । निशि वास कियो जु अहीरन में ॥
इक ग्वाल भगीरथ पै दुरिगे । तिहि सिद्ध सुसन्त बनावत भे ॥
दसयें दिन अवधहिं आय रहे । भरि पाख तहाँ सुस्ताय रहे ॥
हरिदास सुभक्त सुगीत रयो । तेहि महँ कछु शब्द अशुद्ध भयो ॥
सुधरायो मुनी पै न बोध भयो । तिसु कीर्तन में अवरोध भयो ॥
सपने मुनिते रघुवीर कह्यो । नहिं शुद्ध अशुद्ध सुभाव गह्यो ॥
तब जाय मुनी तिसु भाव भरो । जस गावत हो तस गाया करो ॥
सुनि बाल चरित्र अनन्दित ह्वै । मुनि तुष्ट कियो सुपटम्बर दै ॥

दो०-देव मुरारी भेंट मिलि, सहित मलूका दास ।
पहुँचे काशी महँ ऋषय, कियो अखण्ड निवास ॥८३॥

शुचि माघमें गंग नहात हते । सरि भीतर मंत्र महा जपते ॥
तनु वृद्ध सो काँपत रोम खड़े । गणिका रहि देखत तीर खड़े ॥
कढ़ि के मुनि सीचेउ वस्त्र धरे । दुइ बुन्द सोइ गणिका पै परे ॥
वेश्या मनमें निर्वेद जग्यो । जग दृश्य निरय दिखलान लग्यो ॥
सब पाप प्रपंच से दूर भगी । उपदेश लै हरि गुण गान लगी ॥
हरिदत्त सु विप्र दरिद्र महा । तिसु गंगके पार में वास रहा ॥
मुनि के ढिग आय विपत्ति कही । जस दीन दशा घरके'र रही ॥
ऋषि अस्तुति गंग बनाय करी । सुरसरि दै भूमि विपत्ति हरी ॥

दो०-निन्दक मुनि अरु भक्ति पथ, भुलई साहु कलार ।
निधन भयेउ टिकठी धरे, लैगे फूंकन द्दार ॥८४॥
तासु तिया रोवत चली, मुनि ढिंग नायउ शीश ।
सदा सुहागिनि रहहु तुम, मुनिवर दीन्हि अशीश॥८५॥
विलखि कही सो निज दशा, शव मुनि लीन्ह मगाय।
चरणामृत मुख देइके, तुरतहि दियो जिवाय ॥८६॥

तिहि वासरते मुनि नेम लिये । अरु बाहर बैठब त्याग दिये ॥
रहे तीन कुमार बड़े सुकृती । मुनि चरणन में तिनकी भगती ॥
ऋषि केश रख्यो मणिकर्णिकापैं । विश्वनाथ के मन्दिर शान्तिपदैं ॥
अनपूर्णा में दाता दीन रहैं । रहनी गहनी सम साम गहैं ॥
मुनि दर्शन को नित आवतजू । चरणोदक लै घर जावतजू ॥
पहिचानि सुप्रीति मुनी तिनकी । शुचि टेक विवेक समीचिनकी ॥
तिनके हितही बहिरावैं मुनी । दैके दर्शन भितरायँ पुनी ॥
सब दर्शक वृन्द चबाव करैं । मुनि पै पक्षपातको दोष धरैं ॥
दिन एक परीक्षा लीन्ह मुनी । बहिराये नहीं सोइ भाव गुनी ॥
तनु तीनिउँ ताछिन त्याग किये । चरणोदक जीवनदान दिये ॥

दो०-सोरह सै उनहत्तरो, माधव सित तिथि थीर ।
पूरण आयू पायके, टोडर तज्यो शरीर ॥८७॥
मीत विरहमें तीन दिन, दुखित भये मुनिधीर ।
समझि समझि गुण मीत के, भरे विलोचन नीर॥८८॥
मास मास बीते परे, तेरस सुदी कुजवार ।
युग सुत टोडर बीच मुनि, बाँट दिये घर बार ॥८९॥
नख-शिख कर्ता आशुकवि, भीष्म सिंह कनगोय ।
आयो मुनि दर्शन किये, त्यागेउ तनु हरिजोय ॥९०॥
गंग कहेउ हाथी कवन, माला जपेउ सुजान ।
कठमलिया वंचक भगत, कहि सो गयो रिसान ॥९१॥
क्षमा किये नहिं शाप दिय, रँगे शान्ति रस रंग ।
मारगमें हाथी कियो, झपटि गंग तनु भंग ॥९२॥
कवि रहीम बरव रचै, पठये मुनिवर पास ।
लखि तेहि सुन्दर छन्द में, रचना कियउ प्रकाश ॥९३॥

मिथिला में रचना किये, नहछू मंगल दोय ।
पुनि वांचे मंत्रित किये, सुख पावें सब लोय ॥९४॥
बाहु पीर व्याकुल भये, बाहुक रचे सुधीर ।
पुनि विराग सन्दीपनी, रामाज्ञा शकुनीर ॥९५॥
पूर्व रचित लघु ग्रंथ सब, दुहराये मुनिधीर ।
लिखवाये सब आनते, भो अति क्षीण शरीर ॥९६॥
जहाँगीर आयो तहाँ, सत्तर संवत बीत ।
धन धरती देवो चहै, गहै न गुणि विपरीत ॥९७॥
विरवल की चरचाचली, जो पटुवाग विलास ।
बुद्धिपाय नहिं हरिभजे, मुनि किय खेद प्रकाश॥९८॥
अवध पुरीको चूहरा, अवध वासि प्रिय जानि ।
हृदय लगायो प्रेमवश, राम रूप तिहि मानि ॥९९॥
सिद्ध वृन्द गिरिनारके, नभते उतरे आय ।
करि दर्शन पुलकित भये,प्रश्नकिये सत भाय ॥१००॥

सो०–तुमहिंन व्यापै काम, अतिकराल कारण कवन ।
कहिय तात सुख धाम, योग प्रभाव कि भक्ति बल ॥

दो०–योग न भक्ति न ज्ञान बल, केवल नाम अधार ।
मुनि उत्तर सुनि मुदित मन, सिद्ध गये गिरनार ॥१०१॥
बैठ रहे मुनि घाट पर, जुरे लोग बहुताय ।
आयो भाट सुचन्द्रमणि, विनय करी परिपाय ॥१०२॥

स०—पन दोइक भोग विषय अरुझान अब जो रह्यो सो न खसाइयजू ।
अबलौं सब इन्द्रिन लोग हँस्यो अब तो जनि नाथ हँसाइयजू ।

मदमोह महा खल काम अनी मम मानसते निकसाइयजू
रघुनन्दन के पदके सदके तुलसी मोहि काशि बसाइयेजू ॥२॥

दो०–विनय सुनत पुलकित भये, कहि ऋषिराज महान ।
बसहु सुखेन इत सदा, करहु राम गुणगान ॥१०३॥
हत्यारो इक आयऊ, विप्रचन्द्र तिसु नाम ।
दूर ठाढ बोलत भयो, राम राम पुनि राम ॥१०४॥
इष्ट नाम सुनि मगन भे, तुरत लियो उरलाय ।
आदरयुत भोजन दियो, हरषि कह्यो ऋषिराय ॥१०५॥
तुलसी जाके मुखनते, धोखेहु निकसै राम ।
ताके पगकी पैंतरी, मोरे तनुको चाम ॥१०६॥
समाचार व्याप्यो तुरत, वीथिन वीथिन माँझ ।
ज्ञानी ध्यानी विप्रवर, सुधीजुरे भये सांझ ॥१०७॥
कैसे घातक शुद्धभो, कहिये सन्त महान ।
कहे जो नाम प्रताप सो, बाँचहुँ वेद पुराण ॥१०८॥
कह्यो लिख्यो तो है सही, होत न पै विश्वास ।
मन मानै जाते कहिय, सोइ कर्तव्य प्रकाश ॥१०९॥
कहै जो शिवको नाँदिया, ग्रहै तासुकर ग्रास ।
तब तो निश्चय ऊपजै, सबके मन विश्वास ॥११०॥
मुनि प्रसाद ऐसेइ भयो, चहुँ दिशि जय-जयकार ।
निन्दक सब माँगी क्षमा, पगपरि बारम्बार ॥१११॥
राम नाम दिनभर रटै, लोभ विवश मुनिथान ।
साँझ समय तिसु विप्रको, द्रव्य देत हनुमान ॥११२॥

राम दरशहित कमलभव, हठेउ कहेउ मुनिराय ।
तरुते कूदि त्रिशूल पै, दरस लेहु किन जाय ॥११३॥
गाडिशूल अरु विटप चढि, हिम्मत हारेउ पात ।
लखेउ पछाहीं वीर इक, अश्व चढे मग जात ॥११४॥
पूछेउ मर्म सो कहि कथा, सो चढि निपटे तुरन्त ।
कूदेउ उर विश्वास धरि, दरस दीन्ह भगवन्त ॥११५॥
अन्त समय हनुमत दियो, तत्व ज्ञान को बोध ।
राम नाम ही बीज है सृष्टि वृक्षमय गोध ॥११६॥
पर प्रस्थान की शुभ घडी, आयी निकट विचार ।
कहेउ प्रचारि मुनीश तव, आपन दशा निहार ॥११७॥
रामचन्द्र यश वरणि के भयो चहत अब मौन ।
तुलसी के मुख दीजिये, अवही तुलसी सोन ॥११८॥
संवत सोरह से असी, असी गंग के तीर ।
श्रावण श्यामा तीज शनि, तुलसी तज्यो शरीर ॥११९॥
मूल गुसाईं चरित नित, पाठ करै जो कोय ।
गौरी शिव हनुमत कृपा, राम परायण होय ॥१२०॥
सोरह से सत्तासि सित, नवमी कातिक मास ।
विरच्यो यहि नित पाठ हित, वेणी माधवदास ॥१२१॥

इस मूल श्रीगोसाईं चरित में कवित्त १, कुण्डलिया १, रोला १, छन्द ८, चौपाई ९, सोरठा १९ दोहा १२१ और तोटक ४३१ हैं ।

पं० रामधारी पांडेय ग्राम मारुन डा० ओबरा जि० गया स्टेशन पामरगंज के यहां १६८७ के संवत की लिखी प्रति देखी जा सकती है । यह बात पूर्व प्रकाशित प्रतियों में उल्लिखित है ।

(श्रीमानदास जीकी कथा)

मू० छं०—करुणा वीर सिंगार आदि उज्वल रस गाये । पर उपकारी धीर कवित कविजन मन भाये ॥ कोशलेश पद कमल [1]अननि दरसन ब्रतलीनो । जानकीजीवन सुयश रहत निशि दिन रंग भीनो ॥ रामायण नाटकहिकी, रहस्य उक्ति भाषा धरी । गोप्यकेलि रघुनाथकी, मानदास परगट करी ॥१३०॥

(गोस्वामी श्रीगिरिधरलालजीकी कथा)

मूल छ०—धर्मार्थ काम अरु मोक्ष भक्ति अनपायिनी दाता । हस्तामल श्रुतिसुमृति सबहि शास्त्रन के ज्ञाता । [2]परिचर्या ब्रज-राज कुँवर के मनको कर्षैं । दर्शन परम पुनीत सभामहँ अमृत वर्षैं ॥ विट्ठलेश [3]नन्दन सुभाव, जग कोऊ नहिं ता समान । वल्लभ जूके वंशमें, सुरतरू गिरिधर भ्राजमान ॥१३१॥

१ अनन्य । २ सेवा । ३ पुत्र ।

(गोस्वामी श्रीगोकुलनाथजीकी कथा)

मूल छ०—उदधि सदा अक्षोभ सहज सुन्दर मितभाषी। [1]गुरु वर्तन गिरिराज भलप्पन सब जग साखी। विठ्ठलेश को भक्ति समुद [2]वेला दृढताके। भगवत तेज प्रताप नमत [3]नरवर पद जाके॥ निर्व्यलीक आशय उदार, भजन पुंज गिरिधर न रति। बल्लभजूके वंशमें, [4]गुणनिधि गोकुलनाथ अति॥१३२॥

आयो कोऊ शिष्यहोन लायो भेट लाखन की
कह्यो भाषण चातुरी पै मेरी मति रीझिये।
काहू सों सनेह तेरे जाके मिले बिना देह
व्याकूलता होय जोपै तो पै दीक्षा दीजिये॥
बोल्यो अजू मेरो काहु वस्तुसों न हेतु नेक
[5]नेत नेत कही गुरू और ढूँढ़ लीजिये॥
प्रेमही की बात यहां तुरत पलट जात
नहीं तुवगात कहो कैसे रंग भीजिये॥५१९॥
[6]कान्हा हो [7]हलालखोर थोर दियो मन लैके

१ पूर्वाचार्यों जैसा रहन-सहन। २ मर्यादा। ३ श्रेष्ठ पुरुष। ४ गुणों के समुद्र। ५ यहाँ नहीं, यहाँ नहीं। ६ कान्हा नाम का। ७ भङ्गी।

श्याम रस सागरमें [1]नागर [2]रसाल है।
निशिमें सुपन माँझ निपुण श्रीनाथजूने
आज्ञा दई [3]भींत नई भई ओट [4]साल है।
गोकुल के नाथजी सों वेगि लै जनाय दीजे
कीजे याही दूर छविपूर देखें [5]ख्याल है।
भोर जो विचारें नहिं धीरज को धार वहाँ
जाऊँ कोऊ मारें पैंडे पर्यो यह [6]लाल है॥५२०॥
ऐसे दिन तीन आज्ञा दीन्ही वे प्रवीण नाथ
[7]हाथ [8]कहा गये विन काज नहीं [9]सरेगो।
गया द्वारपालन सों बोल्यो जू विचार एक
दीजे सुधि कान सुनि [10]खीझे बात करेगो।
काहूने सुनाय दई लीन्हो जू बुलाय अहो
कह्यो अन्य दूर करो, किये दूर, ढरगो।
जाय वही कही, लई आपने पिछान, मिले
सुन्यो मेरो नाम ? श्याम कह्यो नहीं टरेगो॥५२१॥

(श्रीबनवारीदासजी की कथा)

मूलछ०बात कवित बड चतुर [11]चोख चोकस अति जानैं। सारासार विवेक परम हंसन परमानैं। सदाचार सन्तोष सर्व भूतन

१ चतुर। २ रसीला। ३ भित्ति=दीवार। ४ दुःखद। ५ तमाशे=कौतुक। ६ श्रीनन्दलाला। ७ वश। ८ क्या। ९ बनेगा। १० क्रुद्ध हुए। ११ उत्तमता।

हितकारी। आरज गुण तन अमित भक्ति दशधा व्रतधारी॥ दर्शन पुनीत आशय उदार, आलाप रुचिर सुखधाम की। रसिक रँगीलो भजन निधि, सुठि बनवारी श्याम की॥१३३॥

(श्रीनारायण मिश्रजीकी कथा)

मूल छ०–नाम नरायणमिश्र वंश नवला जु उजागर। भक्तनकी अति भीर भक्ति [1]दशधाके आगर। आगम निगम पुराण [2]सार शास्त्रनके देखे। सुरगुरु शुक सनकादि व्यास नारद जु विशेषे॥ सुधा बोध मुख सुरधुनी, यश वितान जगमें तन्यो। भागवत भली विधि कथनकी, धन जननी एकै जन्यो॥१३४॥

(श्रीराघवदास जीकी कथा)

मूलछ०-काम क्रोध मद मोह लोभकी लहर न लागी। सूरज ज्यों जलग्रहै बहुरि ताही ज्यों त्यागी। सुन्दर शील स्वभाव सदा संतन

१ प्रेमा। २ तत्व।

सेवा व्रत। धर्म [1]निकश निर्वह्यो विश्व में विदित बडो भृत॥ अल्हराय रावल कृपा, आदि अंत धुकती धरो। कलिकाल कठिन जग जीतियो, राघवको पूरो परो॥१३५॥

(श्रीबावनजीकी कथा)

मूल छ०–अच्युत कुलसों द्वेष हृदय सपनेहुँ नहिं आनै। तिलक [2]दाम अनुराग सबन गुरुजन करि जानै। सदन माहिं वैराग्य विदेहन की सो भाँती। रामचरण मकरन्द रहत मनसा मद माती। योगानँद कुल प्रसिद्ध कर, निशि दिन हरि गुण गावनो। हरिदास भलप्पन भजन बल बावन ज्यों बढ्यो बावनो॥१३६॥

(स्वामी श्रीपरसुरामदेवजी की कथा)

मूल छ०–ज्यों चन्दनकी पवन निम्बहू चन्दन करई। बहुत काल तम निविड उदय [3]दीपक ज्यों हरई। श्रीभट पुनि हरिव्यास सन्त मारग अनुसरई।

१ कसोटी। २ माला=कंठी। ३ सूर्य।

कथा कीरतन प्रेम रसन हरिगुण उच्चरई॥ गोविन्द भक्ति जग रोग तति, तिलक 'दाम सद्वैद्य 'हद। जंगली देश के लोग सब, परशुराम किये 'पारषद ॥१३७॥

राजसी महन्त देखि गयो कोऊ 'अन्त लेन
बोल्यो जू अनन्त हरि सगे माया टारिये।
चले संग वाके त्यागि राखी सों कोपीन अंग
बैठे गिरि कन्दरा में लागी ठौर प्यारिये॥
तहाँ बनिजारे आय सम्पति चढ़ाय दई
दये चौंर पालकी हू महिमा निहारिये।
जाय लपटायो पाँव भाव में न जान्यो तब
अब उर माँझ आगे प्राण वारि डारिये॥५२२॥

(श्रीगदाधरजी भट्ट की कथा)

मूल छ०—सज्जन सुहृद सुशील वचन 'आरज प्रति पालय। निर्मत्सर निष्काम कृपा करुणा को आलय। अनन भजन दृढ़ करन धरयो वपु भक्तन काजै। परम धर्म को सेतु विदित वृन्दावन गाजै॥

१ माला=कंठी। २ सीमा=पाज। ३ भगवान्‌के समीपी सेवक। ४ पता। ५ पूर्वाचार्यो के।

भागवत सुधा वर्षै वदन, काहूको नाहिन दुखद। गुण निकर गदाधर भट्ट अति, सबही को लागै सुखद ॥१३८॥

'"श्याम रंग रँगी,, पद सुनिके गुसाईं जीव
पत्र दे पठाये 'उभै साधु वेगि धाये हैं।
'रैनीबिन रंग कैसे चढ़यो अति शोच बढ़यो
कागद सो प्रेम मढ़यो लैके तहाँ आये हैं॥
'पुर ढिग कूप तहाँ बैठे रसरूप छके
पूछयो इन आपही सों नामले बताये हैं।
रहौ कौन ठौर शिर मौर वृन्दावन धाम
नाम सुनि मुर्छा ह्वैके गिरे मनो 'पाये हैं ॥५२३॥
काहू कही भट्ट श्रीगदाधरजी येई जानो
'मानो वही पाती चाह फेरिके जिवाये हैं।
दियो पत्र हाथ लियो शीश सों लगाय चाय
बाँचतही चले वेगि वृन्दावन आये हैं॥
मिले श्रीगुसाईं जू सों आखैं भरि आये नीर
सुधि न शरीर धरि धीर वही गाये हैं।
पढ़े सब ग्रन्थ संग नानाकृष्ण कथारंग
रस की उमंग अंग अंग भाव छाये हैं ॥५२४॥

१ एक पद का प्रथम शब्द है। २ दो। ३ रंग गलाने का साधन। ४ नगर के समीप। ५ परधाम को प्राप्त हो गये। ६ जैसे तो उस श्रीजीवगोस्वामीजी के पत्रने फिर से जीवित कर दिया।

नाम हो कल्याणसिंह जात राजपूत पूत
बैठयो आय कथा सो अभूत रंग लाग्यो है।
निपट निकट वास धोरहरा गाँव तामे
हास परिहास तज्यो तिया दुःख पाग्यो है ॥
जानी भट्ट संग सों अनंग वास दूर भई
करी रीति नई युक्ति हिये काम जाग्यो है
माँगत फिरत हुती युवती सो गर्भवती
कही लै रुपया वीस नेक कहु राग्यो है ॥५२५॥
गदाधर भट्टजू की कथा में प्रविशि कहो
अहो कृपाकरी अब मेरी सुधि लीजिये।
दई लौंडी संग, लाभ रंग चित्त भंग कियो
दिये ले बताय बोली मेरो काम कीजिये ॥
बोले आप बैठिये जू ध्यान नित करो हिये
मेरो पाप नहीं गई दरसन दीजिये।
श्रोता दुःख पाय भाषे झूठी याहि मार नाखें
साँची कही राखें सुनि तन मन छीजिये ॥५२६॥
फटजाय भूमि तो समाय जायँ श्रोता कहैं
बहै दृग नीर है अधीर सुधि गई है।
राधिकावल्लभदास प्रकट प्रकाश आस
भयो दुःख रास सुनि सो बुलाय लई है ॥
साँच कही दीजे नहिं अभी जीव लीजे, डरी
सब कहि दियो सुख लियो संज्ञा भई है।

काढि तरवार तिया मारिवे कल्याण चल्यो
दयो परबोध प्रभुकरी दया नई है ॥५२७॥
रहैं काहू देश सो महन्त आये कथा माँझ
आगे लै बैठाये देखैं सबै साधु [1]भीजे हैं।
मेरे अश्रुपात क्यों न होत शोच स्रोत परे
करे लै [2]उपाय सो लगाय मिर्च खीझे हैं ॥
सन्त एक जानिके बतायद्यी भट्टजू को
गये उठि सब तब मिलि अति रीझे हैं।
ऐसी चाह होय मेरे रोयके पुकारि कही
चली जलधार नैन प्रेम आप भीजे हैं ॥५२८॥
आयो एक चोर घर सम्पत्ति बटोर गाँठ
बाँधी लै मरोरि [2]क्योहूँ उठे नहीं भारी है।
आयके उठाय दयी देखी ताने रीति नई
पूछयो नाम प्रीति भई भूल्यो मैं विचारी है ॥
बोले आप लै पधारो होत ही सँवारो आवैं
और दशगुनी मेरे तोरी यह [3]ज्यारी है।
प्राणन को आगे धरों [4]तरण उपाय करो
रहे समभाय भयो शिष्य चोरी [5]टारी है ॥५२९॥
प्रभु की टहल निज [6]करन करत आप

१ प्रेमाश्रुधारासे भीज गये हैं। २ किसी प्रकारसे भी। ३ जिवारी= जीविका। ४ संसार से तरने का उपाय कर दीजिये। ५ छोड़ दी। ६ हाथ से।

भक्तिको प्रभाव जानै भागवत गाई है।
देत हुते चौका कोऊ शिष्य बहु भेट ल्यायो
दूरहीते देखि दास आय सो जनाई है॥
धोवो हाथ बैठो आप सुनिके रिसाय उठे
सेवा ही में चाव, वाको खीझि समझाई है।
हिये हितराशि जग आसको विनाश कियो
पियो प्रेमरस ताकी बात लै दिखाई है॥५३०॥

(चारण भक्त वृन्द वर्णन)

मूल छ०— [1]चौमुखचौरा [2]चंड [2]जगत [2]ईश्वरगुण जानैं। [2]कर्मानँद अरु [2]कोल्ह [2]अल्ह अक्षर परमानैं। [2]माधव मथुरा मध्य साधु [2]जीवानँद सीवा। [2]दुदै [2]नरायणदास नाम [2]माँडन नतग्रीवा॥ चौरासी रूपक चतुर, बरणत बाणी जू जुआ। चरण शरण चारण भगत, हरि-गायक एता हुआ॥१३९॥

(श्रीकरमानन्दजी चारण की कथा)

करमानन्द चारण की वाणी उच्चारणमें
दारुण जो हियो होय सोऊ पिघलाइये।
दियो गृह त्यागि हरि सेवा अनुराग भरे

१. ग्राम के नाम हैं। २. भक्तों के नाम हैं।

[1]बटुआ सो ग्रीवा हाथ छड़ी [2]पधराइये॥
काहू ठौर जायँ गाडि सोही पधरावैं वापै
ल्याये उर प्रभु [3]भूलि आये कहाँ पाइये।
फेर चाह भई दई श्यामको जताय बात
लई मंगवाय देखि मति लै भिजाइयै॥५३१॥

(श्रीकोल्हजी और अल्हजी चारणकी कथा)

कोल्ह अल्ह भाई दोऊ कथा सुखदाई सुनो
पहिलो विरक्त मद्य मांस नहीं खात है।
हरिही के रूप गुण वाणी में उचार करै
धेरै भक्ति भाव हिय ताकी यह बात है॥
दूसरो अनुज जानो खाय सब उनमानो
नृपन को गावै प्रभु कभू गाये जात है।
बड़े के अधीन रहै जोई कहै सोई करै
ईश करि गहै आप दीनता में मात है॥५३२॥
बडे आय कही चलो द्वारिका निहारै सही
मिथ्या जग भोग या में आयु ही विहात है।
आज्ञा के अधीन चल्यो आये पुरलीन भये
नये चौज मन्दिर के सुनो कान बात है॥
कोल्ह ने सुनाये सब जे जे नाना छन्द गाये
पाछे अल्ह दोयचार कहि सुकुचात है।
भरयो ही हुँकारो प्रभु कही माला गरे डारो

१ श्रीठाकुरजीका बेटुआ। २ रखते थे। ३ छड़ी भूल आये।

लाय पहिरावैं कह्यो मेरो बडो भ्रात है ॥५३३॥
याहो दई मोहि नहीं बड़ो अपमान भयो
गयो बूडयो सागर में दुःख को न पार है।
बूड़त ही आगे भूमि पाई चल्यो भूमि प्रीति
सों अनीति भूले नाहीं मानो तलवार है।
सोई आये लेन हरिजन मन चैनभिल्यो
मिल्यो जाय कृष्ण पायो अतिसुख सार है।
बैठे जब भोजन को दई उभै पातर लै
दूसरी जू कैसी कही वही भाई प्यार है ॥५३४॥
सबै विष भयो दुःख गयो सोही हुयो नयो
दयो परबोध प्रभु बात सुनि लीजिये।
तेरो छोटो भाई मेरो भक्त सुखदाई ताकी
कथा ले चलाई जामें आपही सो धीजिये॥
प्रथम जनम माँझ बड़ो राजपुत्र भयो
गयो गृह त्यागि सदा मोसों मति भीजिये।
आयो वन कोऊ भूप संग राग रंग रूप
देखि चाह भई देह दई भोग कीजिये ॥५३५॥
तेरे ही वियोग अन्न जल सब त्यागि दियो
जियो नहिं जात वापै वेग सुधि लीजिये।
हाथ पै प्रसाद दीन्हो आय घर चीन्ह लीन्हो
सपनो सो गयो बीति प्रीति वासो कीजिये॥
द्वारिकाको संग सुन्यो आवत सो आगे चल्यो

मिल्यो भूमि परि दृग भरि वहै दीजिये।
कही सब बात श्याम धाम तज्यो ताही छिन
करयो वनवास दोऊ अति मति भीजिये ॥५३६॥

(श्रीनारायणदासजी चारण की कथा)

अल्ह ही के वंश में प्रशंस याहि जान लेहु
बड़ो भाई और छोटो श्रीनारायणदास है।
दीरघ कमाऊ लघु उपज्यो उडाऊ भाभी
दियो [1]सीरो भोजन लै भयो दुःख रास है॥
देवो मोको [2]तातो करि बोली वह क्रोध भरि
कही सो हुँकारो भरि [3]बावैं दियो [4]हाँस है।
गयो गृह त्यागि हरिपागि करी वैसी ही जो
भक्तिवश श्याम कियो प्रकट प्रकाश है ॥५३७॥

(बीकानेर नरेश श्रीपृथ्वीराजजी की कथा)

मूल छ०—गीत सवैया श्लोक बेलिदोहा गुण नवरस। पिंगल काव्य प्रमाण विविध विधि गायो हरियश। पर दुख विदुष [5]श्लाघ्य वचन रचना जु विचारैं। अर्थ वित्त निर्मोल सबैं सायर उर धारैं॥ "[6]रुक्मिणी लता" वर्णन अनूप, "[7]वागीश

१ बासी। २ गरम। ३ बावानै। ४ हँसुली=कंठ भूषण। ५ प्रशंसनीय। ६ ग्रंथका नाम है। ७ सरस्वती जिनके मुख पर रहती थी।

वदन [1]कल्याण सुव। [2]नर देव उभय भाषा निपुण, पृथ्विराज कविराज हुव ॥१४०॥

मारवाड देश बीकानेर को नरेश बडो
पृथ्वीराज नाम भक्तराज कविराज है।
सेवा अनुराग और विषय विराग ऐसो
रानी पहिचानी नाहीं मानो देखी आज है॥
गयो हो विदेश तहाँ मानसी प्रवेश कियो
हियो नहीं छुवे कैसे सरै मन काज है।
बीते दिन तीन प्रभु मन्दिर न दीठि परे
पाछे हरि देखि भयो सुख को समाज है ॥५३८॥

लिखि के पठायो देश सुन्दर सन्देश यह
मन्दिर न देख हरि बीते दिन तीन हैं।
लिख्यो आयो साँच बाँच अति ही प्रसन्न भयो
लागे [3]राज बैठे प्रभु बाहर प्रवीण हैं॥
सुनो एक और यों प्रतिज्ञा करि हिये धरी
मथुरा शरीर त्याग करैं रस लीन है।
[4]पृथ्वीपति जानिके [5]मुहीम दई काबुल की
बल अधिकाई नहीं कालके अधीन है ॥५३६॥

जीवन अवधि रहे निपट अलप दिन
कलप समान बीतैं पल जो विहात है।

१ श्रीकल्याण सिंहजी के पुत्र। २ हिन्दी और संस्कृत दोनों। ३ कारीगर। ४ बादशाह। ५ सेना पतित्व।

आगम जनाय दियो चहैं इन्हैं साँचो कियो
लियो भक्ति भाव जाके छायो गात गात है॥
चल्यो चढि [1]साँढ़नी पै लई मधुपुरी आनि
करि असनान प्राण तजे सुनी बात है।
जय जय ध्वनि भई व्यापि गई चहुँओर
भूपति चकोर यश चन्द्र दिन रात है ॥५४०॥

(काबा नरेश श्रीशिवाजी की कथा)

मूल छ०—असुर अजीज अनीति [2]अग्नि-मय [3]हरिपुर [4]कीधो। [5]साँगन सुत [6]नैषाद राय रणछोडै दीधो॥ धरा धाम धन काज मरण [7]बीजाहू [8]माँडै। [9]कमधुज कुटके हुओ चौक चतुभुजनो चाँडै॥ बाढेल बाढ कोनी कटक, चाँद नाम चाँडै सबल। द्वारिका देखि प्पलंटतो, अचढ सिवैं कीन्हीं अटल ॥१४१॥

१ ऊँटनी। २ दावानल मई। ३ द्वारिका को। ४ कर दिया=जला दिया=आग लगा दी। ५ सांगन के पुत्र। ६ निषाद राज को श्रीरणछोड भगवान ने दर्शन दिये। ७ दूसरे भी। ८ ठानते हैं। ९ कमधुज कुटका ग्राममें हुआ, चौक और चतुरभुजनी चांडे ग्राम में हुए, बाढेल ने बाढ नामक् ग्राम में सेना जुटाई, चाँडा नामक ग्राम में चाँद बडा बली हुआ, इन सबको साथ लेकर द्वारिका को बदलती (खाख होती) देखकर शिवा नामक निषादराजने अटल अचढ (अगम्भ और अपराजिता) बना दी।

काबर पति शिवा सुत साँगन को प्यारो हरि-
द्वरावती ईश यों पुकारैं रक्षा कीजिये।
सदा भगवान आप भक्त प्रति पाल करैं
करो प्रति पाल मेरी सुनि मति भीजिये॥
तुरक अजीज नाम धामको लगाई आग
लई बाग घोरन की आय टूक कीजिये।
दुष्ट सब मारे प्रभु कष्टते उबारि निज
प्राण वारि डारे यह नयो रस पीजिये॥५४१॥

(आमेर राज्य कुलवधू श्रीरत्नावतीजी की कथा)

मूलछ०—कथा कीरतन प्रीति भीर भक्तनकी भावै। महा महोत्सव मुदित नित्य नँद-लाल लडावै॥ मुकुन्द चरण चिन्तवन भक्ति महिमा ध्वज धारी। पति पर लोभ न कियो टेक अपनो नहिं टारी॥ भत्त पन सबै विशेष ही, आमेर सदन सुख ना जितो। पृथ्विराज नृप कुल वधू भक्त भूप रत्नावती॥१४२॥

मानसिंह राजा ताको छोटो भाई माधोसिंह
ताकी जानो तिया जाकी बात ले बखानिये।
ढिंग जो खवासिन सो श्वासन भरत नाम
रटत जटित प्रेम रानी उर आनिये॥

नवलकिशोर कभूँ नन्दके किशोर कभूँ
वृन्दावन चन्द्र कहि आँखें भरें पानिये।
सुनत विकल भई सुनवे की चाह भई
रीति यह नई कछु प्रीति पहिचानिये॥५४२॥
बार बार कहै कहा कहै उर गहै मेरो
बहै दृग नीर ओ शरीर सुधि गई है।
पूछो मत बात सुख करो दिन रात यह
सहै निजगात रानी! साधु कृपा भई है॥
अति उतकंठा देखि कह्यो सो विशेष सब
रसिक न रेशन की वाणी कहि दई है॥
टहल छुडाई सिरहाने लै विठाई वाहि
गुरु बुद्धि आई यह जानो रीति नई है॥५४३॥
निशिदिन सुन्यो करै देखिवे को अरबरैं
देखे कैसे जात जलजात दृग भरे हैं।
कछु हू उपाय कीजे मोहन दिखाय दीजे
तबही तो जीजे वेतो आन उर अरे है॥
दरशन दूर राज छोड़े लौटैं धूरि पै न
पावैं छवि पूर एक प्रेम वश करे हैं।
करो हरि सेवा भरि भाव धरि मेवा रस-
पान पकवान के बखान मन भरे हैं॥५४४॥
इन्द्रनीलमणि रूप प्रकट स्वरूप कियो
लियो वही भाव यों स्वभाव मिलि चली है।

नाना विधि राज भोग लाड़को प्रयोग जा में
यामिनी स्वपन याग भई रंग रली है ॥
करत सिंगार छवि सागर न पारावार
रहत निहारि वाही माधुरीसों पली है।
कोटिक उपाय करै योग यज्ञ पार पर
[1]तोपै नहिं पाव यह दूर प्रेम गली है ॥५४५॥
देख्योंई चहति तऊ कहति उपाय कहा
अहो चाह बात कहि कोन को सुनाइये।
कह्यो जू बनाओ ढिंग महल के ठौर एक
चौकीले बैठाओ चहुँ ओर समझाइये ॥
आवें हरि प्यारे तिन्हें लावें सो लिवाय यहां
रहें ते धुपाय पाँव रुचि उपजाइये।
नाना भाँति पाक सामाँ आगे आनि धरे आप
डारि [2]चिक देखो श्याम दृगनि लखाइये ॥५४६॥
आवे हरि प्यारे साधु सेवाकरि टारें दिन
[3]किहूँ पगधारें जिन्हें वृजभूमि प्यारिये।
युगलकिशोर गावैं नैनन बहावैं नीर
ह्वै गई अधीर रूप दृग न निहारिये ॥
पूछी वा खवासिन सों रानी कौन अंग जाके
इतनी अटक भंग [4]संग सुख भारिये।

१. तो भी। २. जालीदार परदा। ३. किसी प्रकार अथवा कभी। ४. सत्संग के महान सुख।

चली उठि हाथ गह्यो रह्यो नहीं जात अहो
सहो दुःख लाज बड़ी तनक विचारिये ॥५४७॥
देख्यो मैं विचारि हरि रूप रस सारता को
कीजिये अहार लाज [1]कान नीके टारिये।
रोकत उतरि आई जहाँ साधु सुखदाई
आय लपटाय पांव विनती लै धारिये ॥
सन्तनजिमाय बेकी निजकर अभिलाष
लाख लाख भांतिन सो कैसे के उचारिये।
आज्ञा जोई दीजे सोई कीजे सुख वाही में जू
प्रीति अवगाहि कही करो लागी प्यारिये ॥५४८॥
प्रेम में न नेम हेम थार ले उमगि चली
चखी दृगधार सो परोसि के जिमाये हैं।
भीजि गये साधु नेह सागर अगाध देखि
नैनन निमेष तजे भये मन भाये हैं ॥
चन्दन लगाय पुनि बीरी सो खवाय श्याम
चरचा चलाय चाव रूप सरसाये हैं।
घूम परी गाँव झूमि आयो सब देखिवे को
देखि नृप पास लिखि मानस पठाये हैं ॥५४९॥
ह्वै कर निशंक रानी बंक गति लई नई
दई तजि लाज बैठी मोडन की भीर में।
लिख्यो लै दीवान नर आयो सो बखान कियो

१ मर्यादा।

बाँचि सुनि आग लागी नृपके शरीर में ॥
प्रेम सिंह सुत ताही काल सो रसाल आयो
भालपै तिलक माल कंठी कंठ तीर में।
भूपको सलाम कियो नरन जताय दियो
बोले आव मोडीके रे परयो मन पीर में ॥५५०॥
कोप भरि राजा गयो भीतर सो सोच नयो
पाछे पूछ लयो कह्यो नरन बखानि के।
तब तो विचारी अहो मोडा ही हमारी जाति
भयो दुःख गात भक्ति भाव उर आन के ॥
लिख्यो पत्र माजीको जू प्रीति हिये साजी जोपै
शीशपर बाजी आवै राखो तजि प्राण के।
सभा मध्य भूप कही मोडीके विरूप भयो
रहैं अब मोडीकेही भूलो मत जानके ॥५५१॥
लिखि लै पठाये बेगि मानस लै आये जहाँ
रानी भक्ति सानी हाथ दई पाती बाँचिये।
आयो चढि रंग बाँचि सुतको प्रसंग वार
भीजे जे फुलेल दूर किये प्रेम साँचिये ॥
आवै सेवा पाक निशि महल बसत जहाँ
ल्यायी याही ठौर प्रभु नीचे गाय नाचिये।
राज्य अन्न त्याग दियो, दियो लिखि पत्र पुत्र
भई मोडी आज तुम हित करि जाचिये ॥५५२॥

गये नर पत्र दियो शीश में लगायो सुत
बांच के मगन हिये रीझ बहु दई है।
नौबत बजाय द्वार बाँटत बधाई काहू
नृपहि सुनाय कही कहा रीति नई है ॥
पूछी भूप लोग कही मिटे सब शोक भये
मोडी के ही योग्य स्वांग कियो बनि गई है।
भूपहि सुनत बात अति दुःख गात भयो
लयो बैर भाव चढयो त्यारी इत भई है ॥५५३॥
नृपहि बुझाय राख्यो देशमें चवाव ह्वै हैं
बुद्धिमान जन आय सुत सों जताई है।
बोल्यो विषै लागि कोटि कोटि तन खोये एक
भक्तिपद आवै काम यहै मन आई है ॥
पाँयपरि माँगि लई दई जो प्रसन्न होय
राजा निशि चल्यो जाय करूँ जिय भाई है।
आये निज पुर ढिंग दुरि नर मिले आय
कह्यो सो बुझाय सब चिन्ता उपजाई है ॥५५४॥
भवन प्रवेश कियो मंत्री को बुलाय लियो
कह्यो अब कटी नाक लोहू निरवारिये।
मारिबो कलंक हू न आवै यों सुनाई भूप
काहू बुद्धि मन्त ने उचारी ले विचारिये ॥
नाहर जो पिंजरे में दीजे छाँडि लीजे मारि
पाछे ते पकरि यह बात दाब डारिये।

सवन सुहाई जाय करी मनभाई आयो
खवासिन देखि कही सिंह जू निहारिये ॥५५५॥
करैं हरि सेवा भरि रंग अनुराग दृग
सुनि यह बात नेक नैन उन टारे हैं।
भावही सों उठि जाय अति सनमाने अहो
आज मेरे भाग्य श्री नृसिंहजी पधारे हैं॥

भावना सचाई वही शोभा लै दिखाई फूल-
माल पहिराई रचि टीको लागै प्यारे हैं।
भौन ते निकसिधाये मानो खंभ फारि आये
विमुख समूह ततकाल मथि डारे हैं॥५५६॥
भूपको खबर भई रानीजी की सुधि लई
सुनि नीकी भाँति आप नम्र ह्वैके आये हैं।
भूमि परि करी दंडवत भक्ति मति हरी
भरी दया आय दासी वचन सुनाये हैं॥
करत प्रणाम राजा बोली अजू लालजू को
नेक फिरि देख्यो एक ओर ये लगाये हैं।
बोले नृप राज्य धन सबही तिहारो धारो
पति पै न लोभ कही करौ सुख भाये हैं॥५५७॥
राजा मानसिंह माधो सिंह उभय भाई चढे
नाव पर कहूँ तहाँ बूडबे को भई है।
बोल्यो बडो भ्राता अब कीजिये यतन कौन
भौन तिया भक्त कहि छोटे सुधि दई है॥

नेक ध्यान कियो नाव आयके किनारो लियो
हियो हुलसायो जेठ चाह नई लई है।
कियो आय दरशन बिनै करि गयो भूप
अतिही अनूप कथा हिये व्यापि गई है॥५५८॥

(पुरोहित श्री जगन्नाथजी काँथड्याकी कथा)

मू० छं०—रामानुजकी रीति प्रीति प्रण हिरदे धारयो। संस्कार सम तत्व हंस ज्यों बुद्धि विचारयो॥ सदाचार मुनि वृत्ति इंदिरा पधति उजागर। रामदास सुत सन्त अननि दशधा को आगर॥ पुरुषोत्तम परसाद ते, उभय अंग पहिरयो वरम। पारीख प्रसिध कुल काँथड्या, जगन्नाथ सोमा धरम॥१४३॥

(श्री मथुरादास कीर्तनियाकी कथा)

मूल छं०—सदाचार सन्तोष सुहृद सुठि शील [1]सुभाशै। ज्यों कर दीपक मेटि भवन तम वस्तु प्रकाशै॥ हरिको हिय विश्वास नन्द नन्दन बल भारी। [2]कृष्ण

१ शुभ आशय। २ भगवानके लिये नित्य जलका कलश लाने का।

कलश को नेम जगत जानै शिर धारो ॥ वर्धमान गुरु वचन रति, सो संग्रह नहिं छाँडियो । कीर्तन करत कर सपने हूँ, मथुरादास न माँडियो ॥१४४॥

बसिके तिजारे गाँव भक्ति रसराशि करी
करी एक बात ताको प्रकटि सुनाइये ।
आयो वेषधारी कोऊ करें शालिग्राम सेवा
डोलत सिंहासन सो आय भीर छाइये ॥
स्वामीके जो शिष्य तिनहू को देखि भाव भयो
वाहीको प्रभाव आय कह्यो हिये भाइये ।
नेक आप चलिके वा रीति को विलोकियेजू
बडे सरवज्ञ कही दूखै नहीं जाइये ॥५५९॥
पाँय पांर लेके गये जायढिग ठाडे भये
चाहत फिरायो पैन फिरे शोच परयो है ।
जानि गयो आप कछु इन्हीं को प्रताप इन्हें
मारों करि जाप यों विचार मन धरयो है ।
मूठ सो चलाई भक्ति तेज आगे आई नहीं
वाही लपटाई भयो ऐसो मानो मरयो है ।
ह्वै कर दयालु जा जिवायो समझायो प्रीति
पन्थ दरसायो हिय भायो शिष्य भयो है ॥५६०॥

(श्रीनारायणदासजी नर्तक की कथा)

मूल छं०—पद लीन्हो सुप्रसिद्ध प्रीति जामैं दृढ नातो । अक्षर तन्मय भयो मदन मोहन रँग रीतो । नाचत सब कोउ अहो काहि पै यह बनि आवै । चित्र लिखित सो रहै त्रिभँग देशो जु दिखावै ॥ 'हँडिया सराय देखत दुनी, हरिपुर पदवी को चढ्यो । नृतक नरायण दास को, प्रेम पुंज आगे बढ्यो ॥१४५॥

हरी हीके आगे नृत्य करें हिये धरें यही
ढरें देश देशनमें जहाँ भक्त भीर है ।
हँडिया सराय मध्य जायके निवास कियो
लियो सुनि नाम सो मलेच्छ जाति भीर है ॥
बोलिके पठाये महाजन हरिजन सब
आयो है सदन गुणी ल्याओ चाह पीर है ।
आयके सुनाई भई बडी कठिनाई अब
कीजे जोई भाई वह निपट अधीर है ॥५६१॥
बिन प्रभु आये नृत्य करिय न नेम यह
सेवा वाके आगे कहो कैसे विसतारिये ।
कियो यों विचार उच्च सिंहासन मालाधारि

१ ग्राम का नाम है ।

तुलसी निहारी हरि गान कियो भारिये ॥
एक ओर बैठ्यो मीर निरख्यो न दृग कोर
मगन किशोर रूप सुधिले बिसारिये ।
चाहै कछु वारों परे औचकही प्राण हाथ
रीझ सनमान कीन्हो मीच लागी प्यारिये ॥५६२॥

(भक्त समूह का वर्णन)

मूल छ०—बोहित राम कुमार कुमर वर गोविंद माडिल । छीत स्वामि यशवन्त गदाधर अनँता नँद भल्ल । दीनदास हरिनाभ मिश्र बछपाल कन्हर यश गायन । नारद गोसू राम श्याम पुनि हरिनारायरण ॥ कृष्ण जिवन भगवान जन, श्याम विहारी अमृतदा । गुणगण विशद गुपाल के, ए जन गाये भूरिदा ॥१४६॥

मूल छ०—उद्धव रामरेणु परसा गंगा [१]धूपेत निवासी । अच्युत कुल विश्राम [१]शेषसाई के वासी । किंकर [१]कुंडा कृष्ण खेम [१]सोढा गोपानँद । [१]जय तारण विदुर

१ ग्राम है ।

दयाल दमोदर अस मोहन परमानँद ॥ उद्धव रघुनाथी पुनि चतुरो, [१]कुंज ओक जे बसत अब । जे [२]निवृत भये संसारते, ते मेरे यजमान सब ॥१४७॥

(जयतारण निवासी श्रीविदुरजीकी कथा)

[१]भीथडा समीप [१]जैतारण विदुर भयो
भयो हरिभक्त साधु सेवा मति पागी है ।
बरषा न भई सब खेती सुखिगई चिन्ता
नई प्रभु आज्ञा दई बडो बडभागी है ॥
खेतको कटाओ ओ गहाओ लै उडाओ पाओ
दो हजार मण अन्न सुनि प्रीति जागी है ।
करी वही रीति लोग देखैं न प्रतीति होत
गाये गीत हरि राशि लागी अनुरागी है ॥५६३॥

(स्वामी श्री चतुरो नगनजी की कथा)

मूल छ०—सदायुक्त अनुरक्त भक्त मंडल को पोषत । पुर मथुरा व्रज भूमि रमत सबही को तोषत । परम धर्म दृढ करण देव श्री गुरु आराधे । मधुर वचन सुठि ठौर ठौर हरिजन सुख साधे ॥ सन्त महन्त अनन्त जन, यश विस्तारत जासु

१ ब्रजभूमि । २ अलग ।

नित । श्री स्वामी चतुरो नगन, मगन
रैनि दिन भजन हित ॥१४८॥

आये गुरु गेह यों सनेह सों लै सेवा करै
धरैं हिये भाव साँचो अति मति भीजिये ।
टहल लगाय दई नई रूपवती तिया
कहि वासो दियो स्वामी कहै सोही कीजिये ॥
देख्यो उरझाव अंग संग को लखाव भयो
दयो घर धन वधू कृपा करि लीजिये ।
धाम पधराय सुख पायके प्रणाम करि
धरि व्रजभूमि उर बसे रस पीजिये ॥५६४॥
श्रीगोविन्दचन्दजू को भोर ही दरस करैं
केशव सिंगार राजभोग नन्द गाम में ।
गोवर्धन राधाकुंड ह्वैके आवैं वृन्दावन
मन में हुलास करैं नित चार याम में ॥
रहे [1]पय पावन पै भूखे दिन तीन बीते
आये दूध लै प्रवीण येहू रँगे श्याम में ।
माँग्यो नेक पानी लाओ फेर वह प्राणी कहाँ
दुःख मति सानी निशि कह्यो कियो काम में ॥५६५॥
पानी सों न काम व्रजभूमि में विराजि दूध
पीओ घर घर यह आज्ञा प्रभु दई है ।
ये तो व्रजवासी सब क्षीरके उपासी कैसे

१ जल ।

मोको लेन देहैं कही देहैं सुनी नई है ॥
डोलैं धाम धाम श्याम कह्योसोही मानलियो
दियो परच्यो हू परतीति तब भई है ।
कोऊ जा छिपावैं पात्र बेगि आप ढूँढ लागैं
अति सुख पावैं कीन्ही लीला रसमई है ॥५६६॥

(मधुकर भक्त समूह का वर्णन)

मूल छ०—गोमा परमानन्द द्वारिका मथुरा
[1]खोरा । [1]कालख [1]साँगानेर भलो भगवान
को जोरा । विठ्ठल [1]टोडे खेमपँडा [1]गोनेरैं
गाजैं । श्याम सेनके वंश चिधर पोपा रवि
राजैं ॥ [1]जयतारण गोपालके, केवल कूबे
मोल लियो । मधुकरी मगि सेवैं भगत,
तिन पर हो बलिहारियो ॥१४९॥

(श्री केवल कूबाजी की कथा)

कहत कुम्हार जग कुल निसतार कियो
केवल सुनाम साधु सेवा अभिराम है ।
आये बहु सन्त प्रीति करी लै अनन्त जाको
अन्त कोन पावै ऐपै सीधो नहिं धाम है ॥
बडीही गरज चले करज निकासिबेको
बनिया न देत कूआँ खोदो कीजे काम है ।

१ सब नाम ग्रामों के है ।

कही बोल दियो तोल लियो नीके रोलकर
हितसों [1]जिमाये जिन्हैं प्यारे एक श्याम हैं ॥५६७॥
गये कुआ खोदबेको [2]सुवा ज्यों उचारैं नाम
हुआ काम जानि वाको भयो सुख भारी है।
आई रेल भूमि झूमि [3]माटी गिरी दबे वामें
केतिक हजार मण होत कैसे न्यारी है॥
शोक करि आये धाम राम नाम धुनी काहू
कान परी बीते मास कही बात प्यारी है।
चले वाही ठौर स्वर सुनि [4]प्रीति भौंर परे
रीति कछु और यह सुधि बुधि टारी है॥५६८॥
माटी दूर करि सब पहुँचे निकट जाय
बोलके सुनाये राम वाणी लागी प्यारीये।
दरशन भयो सब पाँय लपटाय गये
रही [5]महरावसी ह्वै कबहूँ निहारिये॥
धरयो जल पात्र एक देखि कृपा पात्र जानि
आनि निज गेह पूजालागी अति भारिये।
भई द्वार भीर नर उमडि अपार आये
महिमा विचारि बहु सम्पत्ति लै वारिये॥५६९॥
सुन्दर स्वरूप श्याम लाये पधरायबेको
साधु निज धाम आय कूबाजूके बसे हैं।

१ भोजन कराये। २ तोता। ३ रेत। ४ प्रेमके चक्करमें।
५ गोलाकार।

[1]रूपसो निहारि मनमाहिं ये विचार कियो
करें कृपा मो पै, प्रभु [2]अचल ह्वै [3]लसे हैं॥
करत उपाय सन्त टरत न नेक [4]क्योंहू
कहीजू अनन्त हरि रीझे स्वामि हँसे हैं।
धरयो जानराय नाम जानिलई ही की बात
अंगमें न मात सदा सेवा सुख रसे हैं॥५७०॥
चले द्वारावती छाप लेगैं यह मति आई
आज्ञा प्रभु दई फिरि घरही को आये हैं।
करो साधु सेवा भाव धरो दृढ हिये माँझ
टरो जनि क्योंहू कीजे जोजो मन भाये हैं॥
गेहही में शंख चक्र आदि निज देह भये
नये नये कौतुक प्रकट जग गाये हैं।
गोमती को सागर में संगम हो रह्यो सुन्यो
सुमिरनी पठायके यों दोऊ लै मिलाये हैं॥५७१॥
भये शिष्य शाखा अभिलाषा साधु सेवाही की
महिमा अगाध जग प्रकट दिखाई है।
आये घर सन्त तिया करत रसोई कोई
आयो वाको भाई ताको खीर लै बनाई है।
कूबाजी निहारि जानी याको हित दूसरे सो
करत विचार एक सुमति उपाई है।

१ मूर्ति। २ अचल=न उठ सकने वाले। ३ शोभा देने लगे।
४ किसी उपाय से भी।

कहि भरि लाओ जल गई डरि चौन पै न
लई तसमई सब भक्तन खवाई है ॥५७२॥
बेगि जल ल्याय देखि आग सी बराई हिये
झाँके मुख भाई दुःख सागर डुबाई है।
विमुख विचारि ताहि कूबाजी निकारि दई
गई पति कियो और ऐसी मन आई है ॥
परिगो अकाल बेटा बेटी नहीं पाल सकै
तकै कोऊ ठौर मति अति अकुलाई है।
लियो संग [1]कियौं ताहि पुत्र सुता आदि सब
आयपरी झीथडामें स्वामी को सुनाई है ॥५७३॥
नाना विधि पाक होत सन्त आवैं जैसे [2]सोत
सुख अधिकाई रीति कैसे जात गाई है।
सुनत वचन दीन [3]वाके [4]दुख लीन महा
निपट प्रवीण मनमाँझ दया आई है ॥
[5]देख पति मेरो और तेरो पति देख याहि
कैसे कै निवाह सकै परी कठिनाई है।
रहो द्वार झारयो करो पहुंचै अहार तुम्हें
महिमा निहारि दृग धार लै बहाई है ॥५७४॥
कियो प्रति पाल तिया कुटुम अकाल मास

१ जो दूसरा पति किया था। २ नदी में जल के सोत=झरने। ३ उस स्त्रीके। ४ दुःख में सनेहुए। ५ श्री कूबाजी ने भगवानकी ओर इशारा करके कहा।

भयो जब समो विदा कीन्ही उठि गई है।
अब पछतावै वह बात अब पावै कहाँ
जहाँ साधु संग रंग सभा रसमई है ॥
करैं जाको शिष्य सन्त सेवाही बतावैं करो
जो अनेक रूप गुण चाह मन भई है।
नाभाजू बखान कियो मोको इन मोल लियो
दियो दरसाय शब्द लीला नित नई है ॥५७५॥

(आचार्यवर्य श्रीअग्रदेवजीके १५ शिष्यों का वर्णन)

मूल छ०—जंगो प्रसिध प्रयाग विनो पूरण बनवारो। नरसिंह भल भगवान दिवाकर दृढ व्रतधारी। कोमल हृदय किशोर जगत जगनाथ सलूधो। औरो अनुग उदार खेम खीची लघु ऊधों ॥ त्रिविध ताप मोचन सबै, सोलभ सबशिर प्रभु भुजा। अग्र अनुग्रहते भये, शिष्य सबहि धर्मध्वजा ॥१५०॥

(श्रीसाकेत निवासाचार्य श्रीटीलाजीकी परम्पराका वर्णन)

मूल छ०—अंगद परमानन्ददास योगी जग जागे। खरतर खेम उदार ध्यान हरि-जन अनुरागे। सस्फुट त्योला शब्द

लोहकर वंश उजागर। हरीराम कपि प्रेम सबै नवधाके आगर॥ अच्युत कुल सेवैं सदा, दासन तन दशधा अघट। भरत खंड भूधर सुमेर, टीलाकी पद्धति प्रकट ॥१५१॥

(श्री कान्हरजीकी कथा)

मूल छ०—चारिउ आश्रम वर्ण रंक राजा अन पावै। भक्तनको बहुमान विमुख कोऊ नहिं जावै। वीरी चन्दन वसन कृष्णके कीर्तन वर्षैं। प्रभुके भूषण देय, महामन अतिशय हर्षैं॥ विट्ठल सुत विलग्यो फिरै, दास चरण रज शिर धरै। मधुपुरी महोत्सव दूसरो, कान्हर को सो को करै ॥१५२॥

(श्री खेतसीजी नीमाकी कथा)

मूल छ०—आवहिं दास अनेक ऊठि शुभ आदर कीजे। चरण धोय दंडवत सदन में डेरो दीजे। ठौर ठौर हरिकथा हृदय अति हरिजन भावै। मधुर वचन मुख-

लाय विविध भातिन सुलडावै॥ सावधान सेवा करै, निर्दूषण रति चेतसी। भक्तन सों कलियुग भली, निबही [1]नीमा खेतसी ॥१५३॥

(श्रीभगवानसिंहजी तँवरकी कथा)

मूल छ०—यह अचरज भयो एक खाँड घृत मैदा वर्षै। रजत रूपको रेलि सृष्टि सब ही मन कर्षै। भोजन रास विलास कृष्णको कीर्तन कीन्हो। भक्तन को बहुमान दान सबहिन को दीन्हो॥ कीरति कीन्ही भीम सुत, भूप मनोरथ आनके। वसन बढ़े कुंती वधू, निधि त्यों तँवर भगवान के ॥१५४॥

बीतत बरस मास आवै मधुपुरी कर
प्रेम सो महोत्सव सो हेम ही लुटाइये।
सन्तन जिमाय नाना पट पहिरावै पाछे
द्विजन बुलाय कछु पूरैं सो न भाइये॥
आयो कोऊ काल धन माल जा विहाल भयो
चाहैं प्रण राख्यो कहो अलप कराइये।

१ नीमा वैश्य जाति मेवाड़ में है।

रहे विप्र दूखि सुख भयो सुनि भूख बढ़ी
आयो ये समाज करो [1]ख्वारी मन आइये ॥५७६॥
अति सनमान कियो लायो सोई सौंप दियो
लियो गाँठ बांधि तब विनती सुनाइये।
सन्तन जिमावो भावै रास करवावौ भावैं
जेंओ सुखपावो कीजे जोई मन भाइये॥
सीधो लाय कोठे धरयो रोक हो सो थैली भरयो
द्विजन बुलाय देत क्योंहू निघटाइये।
जितनो निकारों ताते सौ गुनो बढत और
एक एक ठौर बीस गुनो दे पठाइये ॥५७७॥

(श्रीयशवन्तसिंहजी राठौंडकी कथा)

मू० छ०—भक्तन सों अति भाव निरन्तर अन्तर नाहीं। कर जोरे इक पाँव मुदित मन आज्ञा माहीं। श्रीवृन्दावन वास कुंज क्रीडा रुचि भावै। राधावल्लभ लाल नित्य प्रति तिनहिं लडावै॥ परम धर्म नवधा प्रधान, सदन साँच निधि प्रेम जड। यशवन्त भक्ति जयमालकी, रूडी राखी राठवड ॥१५५॥

१ परेशानीं।

(श्रीहरिदासजी वैश्यकी कथा)

मूल छ०—अमित महागुण गुप्त सारवित सोई जानैं। देखत तुला सोधरैं दूर आशय अनुमानैं। देय दमामो पैज विदित वृन्दावन पायो। राधावल्लभ भजन प्रकट परताप दिखायो॥ परम धर्म साधन सुदृढ, कामधेनु कलिमहँ गन्यो। हरीदास हरिभक्त हित, धन जननी एकै जन्यो ॥१५६॥

हरिदास वणिक सो काशी ढिंग वास करे
ताको यह प्रण तन त्यागों ब्रज भूम ही।
भयो ज्वर नाडी क्षीण छोड गए वैद्यतीन
बोल्यो यों प्रवीण वृन्दावन रस झूम हीं॥
बेटीचार सन्तनको दई अंगीकार करो
धरो डोली माँझ मोको ध्यान दृग घूमही।
चले सावधान राधावल्लभ को गान करें
करें अचरज लोग परीगाम धूमही ॥५७८॥
आवत ही मगमाँझ छूट गयो तन प्रण
साँचो कियो श्याम [1]वन प्रकट दिखायो है।
आय दरशन कियो इष्ट गुरु प्रेमभरि

१ श्री वृन्दावनमें।

नेम परयो पूरो जाय चीरघाट न्हायो है ॥
पाछे आये लोग सोग करत भरत नैन
बेन सब कहे कही ताही दिन आयो है।
भक्ति को प्रभाव यामें भाव [1]और जानो जनि
विन हरि कृपा यह केसे जात पायो है ॥५७९॥

(श्री गोपालदासजी और श्री विष्णुदासजी कथा)

मूल छ०—बाँबोली गोपाल गुणन गम्भीर गुणारट। दक्षिण विष्णु सुदास ग्राम काशीर भजन भट। भक्तन सों सतभाव भजे गुरु गोविंद जैसे। तिलक दाम आधीन सो वर सन्तन प्रति तैसे॥ अच्युत कुल प्रण एकरस, निबह्यो ज्यों श्रीमुखगदित। भक्ति भार जूडो युगल, धर्म धुरन्धर जग विदित ॥१५७॥

रहे गुरु भाई दोऊ भाई साधु सेवा हिये
ऐसे सुखदाई नई रीति लै चलाइये।
जायँ महोत्सव में बुलाये हुलसाये अंग
संग गाडी सामा सो भंडारी दे मिलाइये।
याको तात्पर्य सन्त घटती न सही जात
बातवे न जानें सुख मानें मन भाइये।

१ अन्य=भूत-प्रेत आदिका।

गुरु बड़े सिद्ध जग महिमा प्रसिद्ध अति
विनै करजोरि करी मनमें जो आइये ॥५८०॥
चाहत महोछो कियो हुलसत हियो नित
गुरु सुनि बोले करो वेगि लै तयारिये।
[1]चहूँ दिशि डारयो नीर करयो न्योतो ऐसे धीर
आवें बहु भीर सन्त ठौर न सँवारिये।
आये हरि प्यारे चारों कूँटते निहारे नैन
जाय पग धारे शीश विनै लै उचारिये।
भोजन कराये दिन पाँच लगि छाये रहे
पट पहिराये सुखदियो अति भारिये ॥५८१॥
आज्ञा गुरु दई भोर आओ फिरि आस पास
महा सुखराशि नामदेव जू [4]निहारिये।
उज्वल वसन तन एक लै प्रसन्न मन
चले जात वेगि शीश पायन पै [3]धारिये।
वेई बतलावें तुम्हें श्रीकबीर धीर साधु
चले दोऊ भाई परदक्षिणा विचारिये।
प्रथम निरखि [4]नाम हरषि लपटि पग
लागि रहे छोडत न बोले [5]सुनि धारिये ॥५८२॥

१ हाथमें जल लेकर चारों दिशाओंमें फेंक दिया, इसीसे चारों दिशाओंके सन्तोंको निमन्त्रण पहुँचगया (इसी प्रकारसे निमन्त्रण किया गया, किसी मनुष्यको नहीं भेजा गया) २ देखोगे। ३ धर देना। ४ श्री नामदेवजी। ५ हम जो कहते हैं उसको सुनकर मनमें धारण करो।

[1]साधु अपराध जहाँ होत तहाँ [2]आवत न
होय सनमान [3]सब सन्त तहाँ आइये।
देखि प्रीति रीति हम निपट प्रसन्न भये
लये उर लाय जाओ श्रीकबीर पाइये।
आगे जा निहारे भक्तराज दृग धारें चली
[4]बोले हँसि आप कोउ मिल्यो सुखदाइये।
कह्यो हाँ जू नामदेव भई कृपा पूरण, यों
सेवा को प्रताप कहों कहाँ लगि गाइये ॥५८३॥

(श्रीकील्हदेवाचार्यजीके कृपापात्र जन)

मूल छ०—आशकरण ऋषिराज रूप भगवान भक्त गुर। चतुरदास जग अभय छाप छीतरजु चतुर वर। लाखा अद्भुत राय क्षेम मनसा क्रम वाचा। रसिक रायमल गौर देव दामोदर राचा ॥ सबै सुमंगलदास दृढ, धर्म धुरन्धर भजन भट। कील्ह कृपा कीरति विषद, परम पारषद शिष प्रगट ॥१५८॥

(श्रीनाथभट्टजीकी कथा)

मूल छ०—आगम निगम पुराण सार

१ भागवतापराध। २ हम नहीं आते। ३ छोटे बड़े सब सन्तोंका। ४ श्री कबीरजी बोले।

शास्त्रन जु विचारयो। ज्यों पारो दै पुटनि सबनि को सार उधारयो। रूप सनातन जीव भट्ट नारायण भाष्यो। सो सरवस उर साँच यत्न करि नीके राख्यो ॥ फणी वंश गोपाल सुत, [1]रागा [2]अनुगा को अयन। रस रास उपासक भक्त नृप, नाथ भट्ट निर्मल बयन ॥१५९॥

(श्रीकरमैतीजीकी कथा)

मूल छ०—नश्वर पति रति त्यागि कृष्ण-पद सों रति जोरी। सबै जगत की फाँसि तरकि तिनका ज्यों तोरी। निर्मल कुल काँथड्या धन्य परसा जेहि जाई। विदित वृन्दावन वास सन्त मुख करत बडाई ॥ संसार स्वाद सुख [3]वान्त करि, फेर नहीं तिन तन चही। कठिन काल कलियुग विषै, करमैती [4]निकलँक रही ॥१६०॥

सेखावत नृपके पुरोहित की बेटी जानो
बास है खंडेला करमैती जो बखानिये।

१ प्रेमा भक्ति। २ परा भक्ति। ३ वमन। ४ निष्कलंक।

वसे उर श्याम अभिराम कोटि कामहू ते
भूली धाम काम सेवा मानसी पिछानिये।
बीतजात याम तन वाम अनुकूल भयो
फूलि फूलि अंग गति मति छवि सानिये।
आयो पति गौनो लेन भायो पितु मातु हिये
लिये चित चाव पट आभरण आनिये ॥५८४॥

परयो शोक भारी कहा कीजिये विचारी हाड
चामसों सँवारी देह रतिके न कामकी।
ताते देवो त्यागि मन सोवो जनि जागि अरे!
मिटैं उर दाग एक साँची प्रीति श्यामकी।
लाजको न काज जोपै चाहै व्रजराज सुत
बडोई अकाज जोपै करै सुधि धामकी।
जानी भोर गौनो होय सानी अनुराग रङ्ग
संग एक वही चली भीजी मति वामकी ॥५८५॥

आधी निशि निकसी यो बसी हिय मूरति सो
पूरित सनेह तन सुधि बिसराई है।
भोर भये शोर परयो परे पितु मातु शोच
करयो लै यतन ठौर ठौर ढुँढवाई है।
चारौं ओर दौरे जन आये ढिंग ढुरि जानि
ऊँटके [1]करक मध्य देह जा दुराई है।
जग दुरगंध कछु ऐसी बुरी लागी जातें
वाकी दुरगंध हू सुगन्ध सी सुहाई है ॥५८६॥

१ अस्थि पंजर।

बीते दिन तीन वा करक ही में शंक नहीं
बाँकी प्रीति रीति यह कैसे करि गाईये।
आयो कोऊ संग ताही संग गंगातीर आई
दिए सब भूषण नहाय बन आइये॥
ढूँढत परसराम पिता मधुपुरी आये
पतो सो बतायो जाय माथुर मिलाईये।
सघन विपिन ब्रह्म कुंड पर वट एक
चढकर देखी भूमि आँसुन भिजाईये ॥५८७॥

उतर के आये रोय पाँव लपटाय गये
कटी मेरी नाक जग मुख ना दिखाइये।
चलो गेह वास करो लोक उपहास मिटै
सास घर जाओ मत सेवा चित लाइये॥
कोऊ सिंह व्याघ्र अजू वपुको विनाश करै
त्रास मेरे होत [1]फिरि मृतक जिवाइये।
बोली कही साँच विन भक्ति तन ऐसो जानो
जो पै जियो चाहो करो प्रीति यश गाइये ॥५८८॥

कही पिता कटी नाक [2]कटै जो पै होय कहूँ
नाक एक भक्ति, नाक लोक में न पाइये।
बरस पचास लागि विषै ही में वास कियो
तऊ न उदास भये चवेको चबाइये॥
देखे सब भोग पै न देखे एक श्याम कभूँ

१ लौटकर=घर चलकर। २ श्री करमैतीजी बोली।

तातें तजि काम मन सेवा में लगाइये।
एते उपदेश तम गयो ज्यों प्रभात भयो
दयों लै 'स्वरूप प्रभु गयो हिये आइये ॥५८६॥
आये निशि घर हरि सेवा पधराय चाव
मनको लगायो वाही टहल सुहाई है।
कहूँ जात आवत न भावत मिलाप कहूं
आय नृप पूछे द्विज कहाँ सुधि आई है॥
बोल्यौ कोऊ जन धाम श्याम संग पागे सुनि
अति अनुरागे बेग खबर मगाई है।
कहो तुम जाय ईश यहाँ ही अशीश करौं
कही भूप आयो हिय चाह उपजाई है ॥५६०॥
देखी नृप प्रीति रीति पूछी सब बात कही
नैन अश्रुपात बहे रंगी श्याम रंग में।
बरजत आयो भूप जाय के लिवाय लाऊँ
पाऊँ जो पै भाग मेरे बढी चाह अंग में॥
कालिन्दी के तीर ठाढी नीर दृग भूप लखी
रूप कछु औरें कहा कहैं वे उमंग में।
कियो मना लाख वेर ऐपै अभिलाष राजा
कीनी कुटी आये देश भींजे सो प्रसंग में ॥५६१॥

(कायस्थ श्री खड्गसेनजीकी कथा)

मूल छ०—गोपि ग्वाल पितु मातु नाम

१ भगवानकी मूर्ति।

निर्णय कियो भारी। 'दानकेलिदीपक सु प्रचुर अति बुद्धि उचारी॥ सखा सखी गोपाल, काल लीला में वितयो। कायथ कुल उद्धारि भक्ति दृढ अनत न चितयो॥ गौतमी तंत्र उर ध्यान धरि, तन त्याग्यो मंडल शरद। गोविन्दचन्द्र गुण ग्रथन को, खड्गसेन वाणी विशद॥

ग्वालियर वास सदा रासको समाज करैं
शरद उजारी अति रंग चढयो भारी है।
भावकी बढनि दृग रूपकी चढनि तत-
थेई की रढनि जोरी सुन्दर निहारी है॥
खेलत में जाय मिले त्यागि तन भावना सों
झिलत अपार सुख रीझि देह वारी है।
प्रेमकी सचाई ताकी रीति लै दिखाई भई
भाउकन सरसाई बात लागी प्यारी है ॥५६२॥

(श्री गंगग्वालजी की कथा)

मूल छ०—श्यामाजू की सखी नाम अगाम विधि पायो। ग्वाल गाय ब्रज गाँव प्रथक नीके करि गायो॥ कृष्ण केलि सुख

१ दान लीला दीपक ग्रंथ का नाम है।

सिंधु अघट उर अन्तर धरई। ता रसमें नित मग्न असत आलाप न करई॥ ब्रज बास आस ब्रजनाथ गुरु, भक्त चरण रज अननि गति। सखा श्याम मनभाव तो, गंग ग्वाल गंभीर मति ॥१६२॥

पृथ्वीपति आयो वृन्दावन मन चाह भई
[1]सारँग सुनावें कोऊ [2]जोरावरी लाये हैं।
वल्लभट्ट संग स्वर भरत ही छायो रंग
अति ही रिझायो दृग अँसुवा बहाये हैं॥
ठाढ़ो कर जोरि [3]विनै करी पैन धरी हिये
जीवैं ब्रजभूमि ही सों वचन सुनाये हैं।
कैद करि साथ लिये दिल्लीते छुडाय दिये
हरिदास तँवर ने आय प्राण पाये हैं॥५६३॥

(श्री दिवाकरजी की कथा)

मूल छ०—परम भक्ति परताप धर्मध्वज [4]नेजाधारी। सीतापति को सुयश बदन शोभत अति भारी॥ जानकि जीवन चरण शरण थाती थिर पाई। नरहरि

१ सारंग राग। २ जबरदस्ती। ३ दिल्ली चलने की। ४ बांस-दंड जिसपर ध्वजा फहराई जाती है।

गुरु परसाद पूत पोते चलि आई॥ राम उपासक छाप दृढ, और न कछु उर आनियो। श्रोत्रि श्लाघ्य सन्तन सभा, द्वितीय [1]दिवाकर जानियो ॥१६३॥

(श्री लालदासजी की कथा)

मूल छ०—हृदय सु हरि गुण खानि सदा सतसँग अनुरागी। [2]पद्म पत्र ज्यों रह्यो लोभ की लहर न लागो॥ विष्णु रात की नीति [3]बघेरै त्यों तन त्याज्यो। भक्त बराती वृन्द मध्य दूलह ज्यों राज्यो॥ खरी भक्ति [4]हरिषापुरै, गुरु प्रताप गाढो गही। जीवत [5]यश पुनि [6]परमपद लालदास दोनों लही ॥१६४॥

(श्री माधवजी ग्वाल की कथा)

मूल छ०—निशिदिन यहै विचार [7]दास जिहि विधि सुख पावै। तिलक दामसों प्रीति हृदय अति [8]हरिजन भावै॥ परमा-

१ सूर्य। २ पद्मपत्रमिवाम्भसा। ३ बघेरा नामक ग्राम में। ४ हरिखापुर नामक ग्राम में। ५ कीर्ति। ६ श्री भगवद्धाम। ७ भगवद्दास=सन्त।

रथ सों काज हृदय स्वारथ नहिं आवै। [1]दशधा मत्त [2]मराल सदा लीला गुण गावै ॥ [3]आरत हरिगुण शील सम, प्रीति रीति प्रतिपाल की। भक्तन हित भगवत रची, देहो माधव ग्वाल की ॥१६५॥

(श्री प्रयागदासजी की कथा)

मूल छ०—मानस वाचा काय राम चरणन चित दीनो। भक्तन सों अति प्रेम भावना करि [4]शिर लीनो ॥ रासमध्य [5]निर्वाण देह द्युति दशा दिखाई। [6]आडो बलियो अंक महोत्सव पूरो पाई ॥ क्यारे कलश औली ध्वजा, विदुष श्लाघा भाग की। अग्राचार्य प्रतापते, पूरी परी प्रयाग की ॥

(श्री प्रेमनिधिजी की कथा)

मूल छ०—सुन्दर शील स्वभाव मधुर वाणी मंगल करु। भक्तन को सुख देन फरयो बहुधा दशधा तरु ॥ सदन बसत

१ प्रेमाभक्ति। २ हंस। ३ दीन। ४ माथेपर। ५ परलोक गमन। ६ आडा बलियाके समीप क्यारे नामक ग्राम के कलशोत्सव का और औंडी नामक ग्रामके ध्वजोत्सवका पुरी प्रसाद दोनों ग्रामोंके बीचमें बैठकर पाया।

निर्वेद सार भुक् जगत असंगो। सदाचार औदार्य नेम हरिदास प्रसंगी ॥ दया दृष्टि बसि आगरे, कथा लोक पावन कियो। प्रकट अमित गुण प्रेमनिधि, धन्य विप्र ज्यो नाम दियो ॥१६७॥

प्रेमनिधि नाम करें सेवा अभिराम श्याम
आगरे शहर निशि शेष जल ल्याइये।
बरसा की ऋतु अति मारग में कीच भई
भई चित चिन्ता कैसे [1]अपरस आइये ॥
जोपै अन्धकारही में चलें तो बिगार होत
चले यों विचार नीच छुवै न सुहाइये।
निकसत द्वार तब देख्यो सुकुमार एक
हाथ में [2]मसाल याके पाछे चले जाइये ॥५९४॥
जानी यह बात पहुँचाये कहुँ जात यह
अबही बिलात भले चैन कोऊ घरी है।
यमुना लों आयो अचरज सो लगायो मन
तन अन्हवायो मति वाही रूप हरी है ॥
घट भरि धरयो शीश झट वह आय गयो
आय गयो घर नहीं देखी कहा करी है।

१ अस्पर्श=बिना किसीके छूये=पवित्रतापूर्वक। २ चराग।

लगी [1]चट पटी [2]अटपटी न समझ परै
[3]मटमटी भई नई नैन नीर झरी है ॥५९५॥
कथा ऐसी कहैं जामें गहैं मन, भाव भरै
कर कृपा दृष्टि दुष्टजन दुःख पायो है ॥
जायके सिखायो बादशाह उर दाह भयो
कही तिय भली को समूह घर छायो है ॥
कहै चौपदार आय, चलो [4]याहिवार आप
झारी भरि प्रभु आगे धरै शोर लायो है।
चलै तब संग गये पूछी नृप रंग कहा ?
तियन प्रसंग करो कहिके सुनायो है ॥५९६॥
कान्ह भगवान ही की बात सो बखान कहौं
आय बैठैं नारीनर लागै कथा प्यारी है।
काहूको विडारै [5]झिरकारैं नेक टारै विषै-
दृष्टि सों निहारै ताको लागै दोष भारी है ॥
कही तुम भली, तुव गलीही के लोग मोसों
आयके जताई वह रीति कछु [6]न्यारी है।
बोल्यो याहि राखो सब करौं निरधार नीके
चलै चोबदार लैके रोके प्रभु धारी है ॥५९७॥
सोयो बादसाह निशि आयके सपन दियो
कियो वाको इष्ट वेष कही प्यास लागी है।

१ लालसा। २ अनोखी। ३ कसक। ४ इसी समय।
६ अलग ही=दूसरी ही।

पीओ जल कही, अबखाने लै बखाने तब
अतिही रीसाने को पियावै कोऊ [1]रागी है ॥
फेर मारी लात अरे सुनी नहीं बात मेरी
आप फरमावैं सोई प्यावै बडभागी है।
सो तो तैंने कैद करयो सुनि अरबरयो, डरयो,
भरयो हिय भाव, मति सोवत सो जागी है ॥५९८॥
दौरे नर ताहि समै बेगि सो लिवाय लाये
देखि लपटायो पाँय नृप दृग भीजे हैं।
साहिब तिसाये जाय अबही पियाओ नीर
और पै न पीवैं एक तुमही सो रीझे हैं ॥
लेओ देश गाँव सदा पाँयन सों लाग्यो रहौं
[2]गहौं नहीं नेक धन, पाय बहु [3]छीजे हैं।
संगदे मसाल ताही काल में पठाये यौंही
खुले सो कपाट लाल प्यायो जल भीजे हैं ॥५९९॥

(श्री दूबरदासजी की कथा)

**मूल छ०—सदाचार गुरु शिष्य त्याग-
विधि प्रकट दिखाई। बाहर भीतर विषद
लगी नहिं कलियुग काई ॥ राघव रुचिर
सुभाव असत आलाप न भावै। कथा
कीरतन प्रेम मिल्यो सन्तन गुण गावै ॥**

१ प्रेमी। २ श्री प्रेमनिधिजी ने कहा। ३ नष्ट हो गये हैं।

ताप तोल पूरो निकष, घन अहरन हीरो सहत। दूबरो जाहि दुनिया कहै, भक्त भजन मोटो महत ॥१६८॥

(भक्त समूह वर्णन)

मूल छ०—हरि नारायण नृपति पद्म 'बेरछे विराजै। गाँव 'हुसंगाबाद अटल ऊधव भल छाजै॥ 'भेलै तुलसीदास ख्यात-भट देव कल्याणो। 'बोहित बोगाराम 'सोहिले परम सुजानो॥ 'औलो परमानन्द के, ध्वजा धर्म की भल गडी। दासन के डासन लगे, चौकस चौकी ये पडी ॥१६९॥

(अबला भक्त वृन्द वर्णन)

मूल छ०—देमा परगट दुनी रामबाई हीरामणि। लाली नोरा लच्छि पोखरी युगल जगत धनि॥ खीचनि केशी धना गोमती भक्त उपासिनि। बादरायनी विदित गंग यमुना रैदासिनि॥ जेवा

१ ये सब ग्रामों के नाम हैं।

हरषा जाइसिनि, कुँवरि राय कीरति अमल। अबला शरीर साधन सबल, ये बाई हरि भक्ति बल ॥१७०॥

(श्रीकान्हरदासजीकी कथा)

मूल छ०—श्रीगुरु शरणै आय भक्तिमारग सत जान्यो। संसार धर्मको तज्यो झूँठ अरु साँच पिछान्यो। ज्यों द्रुम शाखा चन्द्र जगत सों यहि विधि न्यारो। सर्व भूत समदृष्टि गुणन गँभीर अति भारो॥ भक्त भलाई बदन नित, कुवचन कबहूँ नहिं कह्यो। कान्हर सन्तन की कृपा, हरि हिरदे लाहो लह्यो ॥१७१॥

(सपरिवार श्री केशव लटेराजीकी कथा)

मूल छ०—कहनी रहनी एक, एक प्रभु पद अनुरागी। यश वितान जग तन्यो सन्त सम्मत बडभागी॥ तैसोई पूत सपूत 'नूत फल जैसोइ परसा। हरि हरिदासन टहल कवित रचना पुनि

१ नाती=पौत्र।

सरसा ॥ सुरसुरानन्द सँप्रदाय दृढ़ केशव अधिक उदार मन । [1]लख्यो लटेरा आन विधि, परम धरम अतिपीन पन ॥

(श्री केवलरामजी की कथा)

मूल छ०—भक्ति भागवत विमुख जगत गुरु नाम न जानैं । ऐसे लोग अनेक ऐंचि सन्मारग आनैं ॥ निर्मल रति निष्काम [2]अजाते सदा [3]उदासी । तत्वदर्शि तम हरण शील करुणाकी राशी ॥ तिलक दाम [4]नवधा रतन, कृष्ण कृपा करि दृढ दिये । केवल कलियुग विषय अति, पतित जीव पावन किये ॥१७३॥

घर घर जाय कहैं यहै दान दीजे मोको
कृष्ण सेवा कीजे नाम लीजे चित लायके ।
देखैं वेषधारी दश वीस कहुँ अनाचारी
देवैं प्रभु सेवन को रीति दैं सिखाय के ॥
करुणा निधान कोऊ सुने नहिं कान दूजे
बैलको लगायो साटो, लोटे दया आनिके ।

१ दुर्बल । २ माया से । ३ उदासीन=तटस्थ । ४ नवधा भक्ति रूपी रत्न ।

उपड्यो प्रगट तन मनकी सचाई अहो
भये तदाकार कहौं कैसे समझायके ॥६००॥

(नरवरपुर नरेश श्री आसकरणजी की कथा)

मूल छ०—धर्म शील गुण सींव महा भागवत राज ऋषि । पृथ्वीराज कुलदीप भीम सुत विदित कील्ह शिषि ॥ सदाचार अति चतुर विमल वाणी रचना पद । शूर सुधीर उदार विनय भलपन भक्तन हद ॥ सीतापति राधा सुवर, भजन नेम कूरम धरचो । मोहन मिश्रित पद कमल आशकरण यश विस्तरचो ॥१७४॥

नरवरपुर ताको राजा नरवर जानो
मोहन जू धारि हिय सेवा नीके करी है ।
वरीदश मन्दिर में रहै चौकी चौपदार
पावत न जान कोऊ ऐसी मति हरी है ॥
परचो कोऊ काम आय अवही लिवाय ल्याओ
कही पृथ्वीपति कोउ कान में न धरी हैं ।
आई फौज भारी सुधि दीजिये हमारी सुनि
वोहू बात टारी परी अति खरभरी है ॥६०१॥

कहिके पठाई 'कहो कीजिये लंडाई' सुनि
रुचि उपजाय चल्यो पृथ्वीपति आयो है।
परयो सोच भारी तब बात यों विचारि कही
आप एक जाओ गयो अचरज पायो है॥
सेवा करि सिद्ध साष्टांगहू के भूमि परे
देखि बडी बेर पाँव खडग लगायो है।
कटिगई एडी ऐपै टेढीहू न भौंह करी
करि नित्य नेम रीति धीरज दिखायो है ॥६०२॥
उठे चिक डारयो तब पाछे को निहारि कियो
मुजरो विचारि बादशाह अति रीझे हैं।
हितकी सचाई यह नेक न कचाई होत
चरचा चलाय भाव सुनि सुनि भीजे हैं॥
बीते दिन कोऊ भक्त नृप सो समायो दुःख-
पायो पृथ्वीपति सुनि भोग हरि छीजे हैं।
करें विप्र सेवा ताहि गाँव लिखि न्यारे दिये
वाके प्राण प्यारे लाड करो कहि धीजे हैं ॥६०३॥

(श्री हरिवंशजी की कथा)

मूल छ०—कथा कीरतन प्रीति सन्त सेवा अनुरागी। खरिया खुरपा रीति ताहि ज्यों सरबस त्यागी। सन्तोषी सुठि

१ बादसाह। २ भगवान के भोग में कमी हो गई है। ३ नरवरपुर नरेश श्री आसकरणजी के।

रीति असद आलाप न भावै। काल वृथा नहिं जाय निरन्तर गोविंद गावै॥ शिष सपूत श्रीरंग को, उदित पारषद अंश के। निष्किंचन भक्तन भजै, हरि प्रतीति हरिवंश के॥१७५॥

(श्रीकल्याणजी की कथा)

नव किशोर दृढ व्रत अनन्य मारग इक धारा। मधुर वचन मन हरण सुखद जानत संसारा॥ पर उपकार विचार सदा करुणा की राशी। मन वच सर्वस रूप भक्त पद रेणु उपासी॥ घमंदास सुत शील सुठि, मान्यो कृष्ण सुजान कें। हरि भक्ति भलाई गुण गंभीर, बाँट परी कल्याण के॥१७६॥

(श्री विट्ठलदासजीकी कथा)

आदि अन्त निर्वाह भक्त पद रज व्रतधारी। रह्यो जगत सों ऐंठ तुच्छ जाने संसारी॥ प्रभु सेवा पितु पधति

१ चतुर अथवा मित्र।

प्रकट कुलदीप प्रकाशी। महत सभा मैं मान जगत जानै रैदासी ॥ पद पढत भई परलोक गति, गुरु गोविंद युग फल दियो। विठलदास हरि भक्ति को, दुहूँ हाथ लाडू लियो ॥१७७॥

(भक्त समूह वर्णन)

मूल छ०—क्काहव श्रीरंग सुमति सदानँद सर्वस त्यागो। श्यामदास लघुलम्ब अनन्य लाखे अनुरागो ॥ मरू मुदित कल्याण परशु वंशी नारायण। चेता ग्वाल गुपाल शम्भु लीला पारायण। सन्त सेय कारज किया, तोपत श्याम सुजान को। भगवन्त रचे भारी भगत, भक्तन के सम्मान को ॥१७८॥

(बीकावत नृपति श्री हरिदासजी तँवर की कथा)

मूल छ०—शरणागतको शिवी दान दाधीच टेक बलि। परमधर्म प्रह्लाद शीश जगदेव देन कलि। बीकावत बानैत भक्ति-प्रण धर्म धुरन्धर। तँवर वंशके दीप सन्त

सेवा नित अनुसर ॥ [1]पार्थपीठ अचरज कवन सकल जगतमें यशलियो। तिलक-दाम परकाम हित, हरीदास हरि निर्मयो ॥१७९॥

प्रहलाद आदि भक्त गुण गाये भागवत
देखे एक ठौर आये सब हरिदास में।
रीझि देनमाहिं जगदेव जो बखान कियो
जानत न कोऊ सुनो करौं लै प्रकाश में ॥
रही एक नटी [2]शक्ति [3]रूप गुण जटा गावै
लागै चटपटी मोद पावै मृदुहास्य में।
राजा रिझवारि करैं देवे को विचार पै न
पावै [4]सार [5]काट शीश [6]राख्यो तेरे पास में ॥६०४॥
दियो कर दाहिनो मैं यासौं नहीं याचौं कहूँ
सुन्यो एक राजा भेद भाव सों बुलाई है।
नृत्य कियो गाई रीझि कही लेओ आई देहु
ओड्यो कर बावों रिस भरि सो सुनाई है ॥
इतो अपमान, हाथ दाहिनो मैं दियो अहो
नृप जगदेवजूको ऐसी कहा पाई है।

१ अर्जुनकी गद्दी। २ देवी। ३ अवतार। ४ तत्व=योग्य वस्तु। ५ जगदेवजी ने कहा मस्तक काटले। ६ नटी ने कहा मैं आपही के पास (धरोहर) रखती हूँ अर्थात् जब आवश्यकता होगी तब लेलूँगी।

तासों दश गुणी लीजे मोको सो दिखाय दीजे
दई नहीं जाय [1]क्यों हूँ मोहि ये सुहाई है ॥६०५॥
किती समझायो कहै लाओ यही [2]जक लागी
गई बड़ भागी पास वस्तु मेरी दीजिये।
काटि दियो शीश तन रह्यो ईश शक्ति लख्यो
लाई वकशीश थार ढाँकि देखि लीजिये ॥
खोलके दिखायो नृप मुर्छित गिरायो तन
धन की न बात अब याको कहा कीजिये।
मैं जो दीन्हों हाथ जानि, आनि ग्रीवा जोरि दीन्हों
लिन्हो वही पद रीझि तान सुनि जीजिये ॥६०६॥
सुनी जगदेव रीति प्रीति नृपराज सुता
पितासों बखानि कही उनही का दीजिये।
तब तो बुलाये समझाये बहु भाँति खोलि
बचन सुनाये अजी बेटी मेरी लीजिये ॥
नह्यो शतवार तब कह्यो डारो मारि चले
मारिबे को बोली वह मारो मत भीजिये।
दृष्टिसों न देखें कहो ल्याओ काटि मुँडलाये
चाहै शीश आँखन को गयो फिरि रीझिये ॥६०७॥
निष्ठा रिझवार रीति कीन्ही विसतार यह
सुनो साधु सेवा हरिदासजी जो करी है।

१ किसी प्रकार से भी। २ रटन।

परदा न सन्त सों है देत है अनन्त सुख
रह्यो रुख जानि भक्त सुता चित्तधरी है ॥
दोऊ मिलि सोये ऋतु ग्रीषम की छात पर
गात पर गात नींद सुधि नहि परी है।
दातुन सो करिबे को चढे निशिशेष आप
चादर उढाय नीचे आये ध्यान हरी है ॥६०८॥
जागे जब दोऊ अरबरे देखि चादर को
पेखि पहिचानी सुता पिताही की जानी है।
सन्त दृग नये चले गैठे मग पग लये
गये लै एकान्त में यो विनती बखानी है ॥
नेक सावधान होके कीजिये निशंक काज
दुष्टराज छिद्रपाय कहैं कटु वाणी है।
तुमरो जु नाम धरैं जर सुनि हियो मेरो
डरें निन्दा आपनी न होत सुख दानी है ॥६०९॥
इतनी जतावनी में भक्ति को कलंक लग
ऐपै शंक वही साधु घटती न भाइये।
भई लाज भारी विषै वास धोय डारी नीके
जीकी दुःख राशि चाहैं कहूँ उठजाइये ॥
निपट मगन कियो नाना विधि सुख दियो
दियो पै न जान मिलि लालन लडाइये।

गोविन्द [1]अनुज जाके बाँसुरी को [2]साँचो प्रण
मनमें न लायो नृप कहे विधि गाइये ॥६१०॥

(श्रीकृष्णदासजी स्वर्णकार की कथा)

मूल छ०—तान मान स्वर ताल सुलय सुन्दर सुठि सोहै। सुधा अंग भ्रूभंग गान उपमाकों को है। [3]रत्नाकर संगीत रागमाला रँग राशी। रिझये राधा लाल भक्तपद रेणु उपासी ॥ स्वर्णाकार खरगू सुवन, भक्त भजन प्रण दृढ लियो। नन्दकुँवर कृष्णदासको, निजपग ते नूपुर दियो ॥१८०॥

कृष्णदास हे सुनार राधा-कृष्ण सुखसार
सेवा करि पाछे नित्य नृत्य विसतारिये।
ह्वै कर मगन काहू दिन सुधि भूली एक
पग गिरयो नूपुर सो रही न सँभारिये ॥
लाल अतिरंग भरे जानी जति भंग भई
पाँय निज खोलि आय बाँध्यो सुख सारिये।

१ गोविन्दजी आपके छोटे भाई थे। २ इनके भगवान के आगे वंशी बजाने का प्रण था। बादसाह के कहने पर भी नही सुनाई यही प्रण की सत्यता थी। ३. संगीत रत्नाकर और रागमाला पुस्तकों के नाम हैं।

फेर सुधि आई देखि धारा ले बहाई नैन
कीरति यों छाई जग भक्ति लागी प्यारिये ॥६११॥

(सन्यासी भक्त गण)

मूल छ०—चित्सुख [1]टीकाकार भक्ति सर्वोपरि राखी। श्रीदामोदर तीर्थ राम अर्चन विधि भाखी। चन्द्रोदय हरि भक्ति नृसिंहारण्य जु कीन्ही। मधुसदन माधव सु परमहँस कीरति लीन्ही ॥ राम भद्र परबोध पुनि, जगदानँद कलियुग सु धनि। परमधर्म प्रतिपोष कहँ, ये सन्यासी मुकुट मणि ॥१८१॥

(श्रीप्रबोधानन्द सरस्वतीजी की कथा)

श्रीप्रबोधानन्द बड़े रसिक आनन्द कन्द
श्री चैतन्यचन्द्रजू के पारषद प्यारे हैं।
राधाकृष्ण-कुंजकेलि निपट नवेली कही
झेलि रसरूप दोऊ किये दृग तारे हैं ॥
वृन्दावन वासको हुलास लै प्रकाश कियो
दियो सुख सिंधु कर्म धर्म सब टारे हैं।
ताहि सुनि सुनि कोटि कोटि जन रङ्ग पाय
विपिन सुहाये बसि तन मन वारे हैं ॥६१२॥

१ पुस्तक का नाम है।

(श्रीद्वारिकादासजी की कथा)

मूल छ०—सरिता कूकस गाँव सलिल में ध्यान धरचो मन। राम चरण अनुराग सुदृढ जाके साँचो पन। [1]सुत कलत्र धन धाम सबन सों सदा उदासी। कठिन मोह को फन्द तरकि तोरी कुल फाँसी॥ कील्ह कृपा बल भजन के, ज्ञान खड्ग माया हनी। अष्टांग योग तन त्यागियो, द्वारिकादास जाने [2]दुनी॥१८२॥

(श्रीपूर्णदासजी की कथा)

मूल छ०—उदय अस्त परवतन गहर मधि सरिता भारी। योग युक्ति विश्वास तहाँ दृढ आसन धारी। व्याघ्र सिंह गर्जते तदपि कछु शंक न मानैं। निज अपान जो पवन उलटि ऊरध सो आनैं॥ साखि शब्द निर्मल कहे, कथिया पद निर्वाण। पूर्ण प्रकट महिमा अनँत, करिहै कौन बखान॥१८३॥

१ पुत्र पौत्र। २ दुनिया।

श्रीलक्ष्मण भट्टजीकी कथा

मूल छ०—सदाचार मुनि वृत्ति भजन भागवत उजागर। भक्तन सों अति प्रीति भक्ति दशधा को आगर। सन्तोषी सुठि-शील हृदय स्वारथ नहि लेशी। परमधर्म प्रतिपाल सन्त मारग उपदेशी॥ श्रीभागवत बखानि के, क्षीर नीर विवरण करचो। रामानुज पद्धति प्रताप, भट्ट लक्ष्मण अनुसरचो॥१८४॥

(आचार्यपाद पयोहारी श्रीकृष्णदासजी की दूसरी कथा)

मूल छ०—कृष्णदास कलिजोति न्योंति [1]नाहर [2]पल दीयो। अतिथि धर्म प्रतिपालि प्रकट यश जगमें लीयो। उदासीनता अवधि [3]कनक [4]कामिनि नहि रातो। रामचरण मकरंद रहत निशि दिन मद मातो॥ गलते गलित अमित गुण, सदाचार सुठि नीति। दधीचि पाछे दूसरेकरी, कृष्णदास कलि जीति॥

१ सिंह। २ मांस। ३ धन। ४ स्त्री।

बैठे हे गुफा में देखि सिंह द्वार आय गयो
लियो यौं विचारि ये अतिथि आज आयो है।
दई जाँघ काटि डारी कीजिये अहार अजू
महिमा अपार धर्म कठिन बतायो है॥
दियो दरसन प्रभु साँच पै न रह्यो जाय
निपट सचाई दुःख जान्यो न विलायो है।
अन्न जल देवे ही में खीझत जगत नर
कर कौन सकै जन मन भरमायो है ॥६१३॥

(श्रीगदाधरदासजी की कथा)

मूल छ०—लाल विहारी जपत रहत निशि वासर फूल्यो। सेवा सहज हनेह सदा आनँद रस भूल्यो। भक्तन सों अति प्रीति रीति सबही मन भाई। आशय अधिक उदार रसन हरि कीरति गाई॥ हरि भरोस हिय आनिके, आन आस स्वपने न की। भलीभाँति निबही भगति, सदा गदाधरदास की ॥१८६॥

बुरहानपुर ढिग बाग तामें बैठे आय
करि अनुराग गृह त्यागि पागे श्याम सों।
गाँव में न जात लोग किते हा हा खात सुख
मान लियो गात नहीं काम और काम सों।

परयो अति मेह देह वसन भिजाय डारे
तब हरि प्यारे बोले स्वर अभिराम सों।
रहे एक साह भक्त कही जाय उन्हें ल्याओ
मन्दिर कराओ तेरो भरयो घर दाम सों ॥६१४॥
नीठ नीठ ल्याये हरि वचन सुनाये जब
तब करवायो ऊँचो मन्दिर सँवारिके।
प्रभु पधराये नाम लाल औ विहारी श्याम
अति अभिराम रूप रहत निहारिके।
करै साधु सेवा जामै निपट प्रसन्न होत
बासी न रहत अन्न सोवैं पात्र झारके।
करत रसोई सोई राखी ही छुपाय सामाँ
घर आये सन्त आप कही ज्यौंवो प्यारके ॥६१५॥
बोल्यो प्रभु भूखे रहैं याके लिये राख्यो कछु
भाष्यो तब आप काढो भोर और आवैगो।
करके प्रसाद दियो लियो सुख पाय सब
सेवा रीति देखि कही जग यश गावैगो।
प्रात भये भूखे हरि गये तीन याम ढरि
रहे क्रोध भरि कहैं कबधौ छुटावैगो।
आयो कोऊ ताही समै दोयसौ रुपैया धरे
बोले गुरु मारो शीश लेके कितो पावैगो ॥६१६॥
डरयो वह साह मत मोपै कछु कोप कियो
कियो समाधान सब बात समझाई है।

तब तो प्रसन्न भयो अन्न लगै जितो देत
सेवा सुख लेत साधु रुचि उपजाई है।
रहे कछु दिन पुनि मधुपुरी वास लियो
पियो ब्रज रस लीला अति सुखदाई है।
लाल ले लड़ाये सन्त नीके [1]भुगताये गुण
जाने जिते गाये मति सुन्दर लगाई है ॥६१७॥

(स्वामी श्रीनारायणदासजी की कथा)

मूल छ०—भक्ति योग युत सुदृढ देह निज बल करि राखी। हृदय स्वरूपानन्द लाल यश रसना भाषी। परिचय प्रचुर प्रताप ज्ञानि मणि रहस सहायक। श्रीनारायण प्रकट मनो लोगन सुखदायक॥ नित सेवत सन्तन सहित, दाता उत्तर देश गति। हरि भजन सींव स्वामी सरस, श्रीनारायणदास अति॥

आये बद्रीनाथ जू सों मथुरा निहारि नैन
चैन भयो रहे जहाँ केशोजू को द्वार है।
आवै दरसन लोग जूतिनको सोग हिये
रूपको न भोग होत कियो यों विचार है।

१ कर्ज चुकाये=दिये।

करैं रखवारी सुख पावत हैं भारी कोऊ
जानै न प्रभाव उर भाव सो अपार है।
आयो दुष्ट पोट पुष्ट बाँधि सोई शीश दई
लेइ मग चले ऐसे धीरज को सार है ॥६१८॥

कोऊ बड़े नर मग देखि पहिचान लिये
कियो परणाम भूमि परि भरि नेहको।
जानके प्रभाव पाँव लीन्हे त्योंही दुष्टने हू
कष्ट अति पायो छूट्यो अभिमान देहको।
बोले आप चिंता जनिकर तेरो कामहोत
नैन नीरसोत मुख देखो नहीं गेहको।
भयो उपदेश भक्ति देश उन जान्यो साधु
शक्तिको विशेष यहाँ जानो भाव मेहको ॥६१९॥

(श्रीभगवानदासजी की कथा)

मूल छ०—भजन भाव आरूढ गूढ गुण वलित ललित यश। श्रोता श्रीभागवत रहस ज्ञाता अक्षर रस। मथुरापुरी निवास आस पद सन्तन इकचित। श्रीयुत खोजी श्याम धाम सुखकर अनुचर हित॥ अति गम्भीर सु धीर मति, हुलसत मन जाके दरस। भगवानदास

श्रीसहित नित, सुहृद शील सज्जन सरस ॥१८८॥

जानबेको प्रण पृथ्वीपति मन आई सो
दुहाई लै दिवाई माला तिलक न धारिये।
मानि आन प्राण लोभ केतिक न त्यागि दिये
छिपे नहीं जात जानि वेगि मार डारिये।
भगवानदास उर भक्ति सुख राशि भर्यो
कर्यो लै सुदेश वेष नाति लागी प्यारिये।
रीझ्यो नृप देखि, रीझ मथुरा निवास पायो
मन्दिर करायो हरिदेव सो निहारिये ॥६२०॥

(श्रीकल्याणजी की कथा)

मूल छ०—जगन्नाथ को दास निपुण अति प्रभु मनभायो। परम पारषद समझि जानि प्रिय निकट बुलायो। प्राण पयानो करत नेह रघुपति सों जोरचो। सुत दारा धन धाम नेह तिनका ज्यों तोरचो। कौंधनो ध्यान उरमें लस्यो, राम नाम मुख जानकी। भक्तन पक्ष उदारता, यह निबही कल्याण की ॥१८९॥

(श्रीसन्तदासजी एवं श्रीमाधोदासजी की कथा)

मूल छ०—सन्तदास सद्वृत्ति जगत [1]छोई करि डारचो। महिमा महा प्रवीण भक्ति, वित् धर्म विचार्यो। बडुरो माधोदास भजन बल परच्यो दीन्हों। करि योगिन सों वाद वसन पावक प्रति लीन्हों। परम धर्म विस्तार हित, प्रकट भये नाहिन तथा। [2]सोदर शोभू रामके, सुनो सन्त तिनकी कथा ॥१९०॥

(श्रीकान्हरजी एवं श्रीआत्मारामजी की कथा)

मूल छ०—कृष्ण भक्ति को स्तम्भ ब्रह्मकुल परम उजागर। क्षमाशील गंभीर सर्व लक्षण को आगर। सर्वस हरिजन जानि हृदय अनुराग प्रकाशै। असन वसन सम्मान करत अति उज्वल आशै॥ शोभूराम प्रसाद तें, कृपा दृष्टि सब पर बसी। [3]बूडिये विदित कान्हर कृपा, आत्माराम आगम द्रषी ॥१९१॥

१ छूँछ=निःसार। २ सहोदर=भाई। ३ ग्रामका नाम।

(प्रथम भक्तमाली श्रीगोविन्ददासजी की कथा)

मूल छ०—रुचिर शील [1]घननील लील रुचि सुमति सहित पति। विदित भक्त अनुरक्त [2]व्यक्त बहु चरित चतुर अति। लघु दीर्घ स्वर सिद्ध वचन अविरुद्ध उचारण। विश्ववास विश्वास दास परिचय विस्तारण॥ जानि जगतहित सब गुणानि, सु समझि नरायणदास दिय। भक्त रत्न माला सुधन, गोविंद कण्ठ विकास किय॥१९२॥

(महाराजा श्रीजगतसिंहजी की कथा)

मूल छ०—श्रीयुत नृपमणि जगत सिंह दृढ भक्ति परायण। परम प्रीति किय स्ववश शील लक्ष्मी नारायण। जासु सुयश सहज ही कुटिल कलि कल्पजु घायक। आज्ञा अटल सुप्रकट सुभट कटकनि सुखदायक॥ अति प्रचंड मार्तंड सम, तम खंडन दोर्दंड वर। भक्तेश

१ घनश्याम श्रीरामजीकी लीला। २ प्रकट।

भक्त भव तोषकर, सन्त नृपति [1]वासो कुँवर॥१९३॥

[2]जगत को प्रण मन सेवा श्रीनारायणजू
भयो ऐसो पारायण डोला रहै संग ही।
लरिबे को चलै तब आगे सदा पाछे रहै
ल्यावै जल शीश ईश भर्यो हियो रंगसी॥
सुनि यशवन्त जयसिंह के हुलास भयो
देख्यो दिल्ली माँझ नीर ल्यावत अभंग ही।
भूमि परि विनै करी धरी देह तुमही ने
जाते पायो नेह मल भाजे यों प्रसंग ही॥६२१॥
नृप जयसिंहजी सों बोले कहा नेह मेरे
तुम्हरी वहिन की तो गन्ध हू न पाऊँ मैं।
नाम दीपकुमरि सो वडी भक्तिमान जानो
वहै रसखानि ऐपै कछुक लडाऊँ मैं।
सुनि सुख भयो भारी हुती रिस वासों टारी
लिये गाँव काढि फेर दिये हरि ध्याऊँ मैं
लिखिके पठाई बाई करै सोई करैं दीजे
लीजे साधु सेवा करि निशिदिन गाऊँ मैं॥६२२॥

(श्रीगिरिधर ग्वालजी की कथा)

मूल छ०—प्रेमी भक्त प्रसिद्ध गान अति

१ माताजीका नाम है। २ श्रीजगतसिंहजी।

गद्‌गद वाणी। अन्तप्रभुसों प्रीति प्रगट रह नाहिन छानी। नृत्य करत आमोद विवस तन वसन विसारै। हाटक पट हितदान रीझि तत्काल उतारै। 'माल पुरै मंगल करन, रास रच्यो रस रंगको। गिरिधरन ग्वाल गोपालको, सखा साँचलो संगको ॥१९४॥

गिरिधर ग्वाल साधुसेवा ही को ख्याल जाके
देखिके निहाल होत प्रीति साँची पाई है।
सन्त तन छूटे हू पै लेत चरणामृत जो
और सब रीति कहो कापै जात गाई है॥
भये द्विज पंच एक ठौर सो प्रपंच मान्यो
आनि सभा माँझ कहैं छोडो न सुहाई है।
जाके हो अभाव सो न लेवौ, मैं प्रभाव जानौ
मृतक यों बुद्धि ताको वारो सुनि भाई है॥६२३॥

(श्रीगोपालीमाईजी की कथा)

मूल छ०—प्रगट अंगमें प्रेम नेम सों मोहन सेवा। कलियुग कलुष न लग्यो दास तें कबहुँ न 'छेवा। वाणी शीतल सुखद सहज गोविंद धुनि लागी। लक्षण कला

१ मालपुरा नामक ग्राम में। २ अलगाव।

गँभीर धीर सन्तन अनुरागी॥ अन्तः शुद्ध सदा रहै, रसिक भक्ति निज उर धरी। गोपाली जनपोषको, जगत यशोदा अवतरी॥१९५॥

(श्रीरामदासजी की कथा)

मूल छ०—शीतल परम सुशील वचन कोमल मुख निकसै। भक्त उदित रवि देखि हृदय वारिज जिमि विकसै। अति आनँद मन उमगि सन्त परिचर्या करई। चरण धोय दंडवत विविध भोजन विस्तरई॥ 'बछबन निवास विश्वास हरि, युगल चरण उर जगमगत। रामदास रस रीति सों, भलीभाँति सेवत भगत।१९६।

सुनि एक साधु आयो भक्ति भाव देखवेको
ढौंठे रामदास कहै रामदास कौन है।
उठे आप धोये पाँव जानै रामदास अब
रामदास कहो मेरे चाह और गौण है॥
चलो जू प्रसाद लीजे, दीजे रामदास आनि
यही रामदास पगधारो निज भौन है।

१ वत्सवन वृन्दावनके निकट है।

लपटानो पाँयन सों चावन समात नाहीं
भावन सो भरयो हियो छायो यश जौन है ॥६२४॥
बेटीको विवाह घर बडो उतसाह भयो
किये पकवान नाना कोठे माँझ धरे हैं।
करैं रखवारी सुत नाती दिये तारो रहैं
और ही लगाय ताली खोल्यो नहीं डरे हैं ॥
आये गृह सन्त तिन्हैं पोट बँधवाय दयी
पायो सो अनन्त सुख ऐसे भाव भरे है।
सेवा श्रीविहारीलाल गाई पाक स्वच्छताई
मेरे मन भाई सब साधुहिय हरे हैं ॥६२५॥

द्विजवर श्रीरामरायजीकी कथा

मूल छ०—भक्ति ज्ञान वैराग्य योग अन्तर्गति पाग्यो। काम क्रोध मद मोह लोभ मत्सर सब त्याग्यो॥ कथा कीरतन मगन रहैं आनँद रस भूल्यो। सन्त निरखि मन मुदित उदित रवि पंकज फूल्यो॥ वैर भाव जिन द्रोह किय, तासु [1]पाग [2]खसि [3]भुइँ परी। विप्र सारस्वत घर जनम, रामराय हरि रति करि॥१९७॥

१ मस्तक की पगडी। २ खिसककर। ३ भूमिपर।

श्रीभगवन्तजीकी कथा

मूल छ०—कुंज विहारी केलि सदा अभ्यन्तर भासै। दम्पति सहज सनेह प्रीति परमिति परकासै॥ [1]अननि भजन रस रीति पुष्टि मारग की देखी। विधि निषेध बल त्यागि पगो [2]रति हृदय विशेखी॥ माधव सुत सम्मत रसिक [3]तिलक धरि दाम सेव लिय। श्रीभगवन्त उदार यश, रस रसना आस्वाद किय॥

सूवा के दिवान भगवन्त रसवन्त भये
वृन्दावन वासिनकी सेवा ऐसी करी है।
विप्र वा गुसाँई साधु कोई ब्रजवासी जाय
देत बहुधन एक प्रीति मतिहरी है।
सुनी गुरुदेव अधिकारी श्रीगोविन्द देव
नाम हरिदास जाय देखैं चित्तधरी है।
योग्यताई सीमा प्रभु दूध भात माँगि लियो
कियो उत्साह कब देखैं अरबरी है ॥६२६॥
सुन्यो गुरु आवत अभावत न क्यों हूँ अङ्ग
रंगभरि तियासों यों कही कहा कीजिये।

१ अनन्य। २ प्रीति। ३ कंठी तिलक धारी वैष्णव मात्रकी सेवा ग्रहण की।

बोली घरबार पट सम्पति भंडार सब
भेट करि दीजे एक धोती धारि लीजिये ॥
रीझे सुनि वाणी साँची भक्ति तूही जानी मेरे
अति मनमानी कहि आँखें जल भीजिये।
यही बात परी कान श्रीगुसाईं लई जानि
आये फिरि वृन्दावन प्रण मति धीजिये ॥६२७॥
गयो उत्साह उरदाह को न पारावार
कियो लै विचार आज्ञा माँगि बन आये हैं।
रहे सुख लहे नानापद रचि कहे, एक
रस निरवहे, ब्रजवासी जा छुटाये हैं ॥
कीन्ही घर चोरी तऊ नेक नासा मोरी नाहिं
बोरि मति रंग लाल प्यारी दृग छाये हैं।
बडे बडभागी अनुरागी रति जागी पिता
माधव रसिक बात सुनो जिमि पाये हैं ॥६२८॥
आयो अन्तकाल जानि बेसुध पिछानि सब
आगरे ते लेके चले वृन्दावन जाइये।
आये आधी दूर सुधि आई बोले चूर ह्वै के
कहाँ लिये जात कूर कही जोई ध्याइये ॥
कही फेरो तन बन जायवे को पात्र नाहीं
जेरे बास आवै पिय प्रियाको न भाइये।
जानहारो होगो सोही जायगो युगल पास
ऐसे भाव राशि ताही ठौर चलि आइये ॥६२९॥

श्रीलालमती बाईजीकी कथा

मूल छ०—गौर श्याम सों प्रीति प्रीति यमुना कुंजन सों। वंशीवट सों प्रीति प्रीति ब्रजरज पुंजन सों ॥ गोकुल गुरु-जन प्रीति प्रीति घन बारह बन सों। पुर मथुरा सों प्रीत प्रीति गिरि गोवर्धन सों ॥ वास अटल वृन्दाविपिन, दृढ़ करि सो नागरि कियो। दुर्लभ मानुष देह को, लालमती लाहो लियो ॥१९९॥

(भक्त महिमा)

मूल छ०—कविजन करत विचार बडो को ताहि भनीजे। कोउ कह अवनी बडी जगत आधार बनीजे। सो धारी शिर शेष शेष शिव भूषण कीन्हों। शिव आसन कैलाश भुजा भरि रावण लीन्हो ॥ रावण जीत्यो बालि [1]सो, बालि राम इक शर दँडे। अग्र कहै त्रय लोक में, [2]हरि उरधारे ते बडे ॥२००॥

१ उस बाली को। २ ऐसे सर्वोत्कृष्ट श्रीरामजी को जिनने अपने हृदय में रख लिये वे भक्त ही बडे हैं।

(भक्त यश महिमा)

मूल छ०–[1]नेह परस्पर अघट निबह चारोंयुग आयो। अनुचर को उत्कर्ष श्याम अपने मुख गायो। ओत प्रोत अनुराग प्रीति सबही जग जानै। [2]पुर प्रविशत रघुवीर भृत्य कीरतिहि बखानै॥ [3]अग्र अनुग गुण बरणते, सीता पति नित होत वश। हरि सुयश प्रीति हरिदास के, त्यों हरि भावै दास यश॥२०१॥

(सन्त उत्कर्ष)

मूल छ०–[4]दुर्वासा प्रति स्वयं दास वशता हरि भाखी। ध्रुव गज पुनि प्रह्लाद राम शबरी फल साखी। राजसूय यदुनाथ चरण धो जूठ उठाई। पांडव विपती हरी [5]दियो विष विषयापाई॥ कलि विशेष परचे प्रगट, आस्तिक ह्वै के चित

१ भगवान और भक्तोंमें स्नेह। २ लंका विजय करके लौटने पर सर्व प्रथम श्रीगुरु वशिष्ठादि से दासोंका ही यश कहा है। ३ श्रीअग्राचार्यजी कहते हैं कि दासों का गुण वर्णन करने से श्रीसीताकान्त सदा वश में हो जाते हैं। ४ श्रीअम्बरीषजी की कथा में। ५ श्रीचन्द्रदासजी ने।

धरो। उत्कर्ष सुनत शुभ सन्तको, अचरच कोऊ जनि करो॥२०२॥

दोहा

पादप की जड सींचते, पावै अँग अँग पोष। त्यो [1]पूरबजन बरण ते, सब मानिय सन्तोष॥२०३॥

भक्त जिते भूलोक में, कथै कौन पै जाय। समुद पान इच्छा करै, कहँ [2]चिरि पेट समाय॥२०४॥

श्रीमूरति सम भक्त सब, लघु बड गुणन अगाध। आगे पीछे बरणते, जनि मानिय अपराध॥२०५॥

फल की शोभा लाभ तरु, तरु शोभा फल होय। गुरू शिष्य की कीर्ति में, अचरज नाहीं कोय॥२०६॥

चार युगन में भक्त जे, तिनके पद की धूरि। सरवस शिर धरि राखिहों, मेरी जीवन मूरि॥२०७॥

१ पूर्वाचार्योंके वर्णनसे। २ चिडिया।

जग कीरति मंगल उदय, तीनों ताप नशाहिं । हरिजन के गुण वरण ते हरि हृदि अटल बसाहिं ॥२०८॥

हरिजन को यश वरण ते, करै असूया आय । यहाँ उदर बाढै व्यथा, अरु पर लोक नशाय ॥२०९॥

हरी मिलन की आस ज्यो, तो हरिजन गुण गाव । [1]भुँजे बीज ज्यो सुकृत नतु, जन्म-जन्म पछिताव ॥२१०॥

[2]भक्तदाम संग्रह करै, कथन श्रवण अनु-मोद । सो प्रभु प्यारो पुत्र ज्यों, बैठै हरि की गोद ॥२११॥

अच्युत कुल यश बेर इक, जाकी मति अनुराग । श्रीहरि की दृढ भक्ति महँ, तिनको निश्चय भाग ॥२११॥

भक्तदाम जिन जिन कथी, तिनकी

१ नहीं तो किये हुए सब पुण्य उसी तरह व्यर्थ हो जायगे जैसे भूंजा हुआ अन्न बीज रूप में बोने से उगता ही नहीं। २ भक्तमाल ।

जूठन पाय । मति अनुहर द्वै अक्षरैं, कीन्हो [1]शिलो बनाय ॥२१३॥

काहू के बल [2]जोग [3]जग, कुल करणी की आस । भक्तमाल श्रीअग्रपद, उर [4]नारायण दास ॥२१४॥

(टीकाकारके श्री गुरुदेवजीका वर्णन और उपसंहार)

रसिकाई कविताई जिन दीनी तिनपाई
भई सरसाई हिय [5]नव नव चाव है।
उर रंग भवन में राधिका रमण बसे
लसे ज्यो मुकुट मध्य प्रतिविम्ब भाव है ॥
रसिक समाज में विराज रसराज कहैं
चहैं मुख सब फूलैं सुख समुदाय हैं।
जनमन हरि लालमनोहर नाम पायो
[6]उनहू को मन हरि लीनो ताते राय है ॥६३०॥
इनही के दास दास दास प्रियादास जानो
ताने ले बखान्यौं यह टीका सुखदाई है।

१ एकत्रित । २ योगाभ्यास । ३ यज्ञानुष्ठान । ४ श्रीनारायणदास (नाभा) स्वामीजी कहते हैं कि हमारे हृदय में एक भक्तों की पंक्ति और श्रीअग्रदेवाचार्यजी के चरण की ही आशा है। ५ नया नया। ६ भगवान का भी ।

गोवर्धन नाथजू के हाथ मन परयो जाको
करयो वास वृन्दावन लीला मिलि गाइ है॥
मति अनुमान कह्यो लह्यो मुख सन्तन के
अन्त को न पावै जोई गावै हिय आई है।
घट वढ जानि अपराध मेरो क्षमा कीजे
साधु गुण ग्राही यह मानि मैं सुनाई है॥६३१॥
कीन्ही भक्तमाल सु रसाल नाभा स्वामी जू ने
तरे जीव जाल जग जन मन मोहनी।
भक्ति रस बोधिनी सुटीका मति शोधिनी है
बाँचत कहत अथ लागै अति सोहनी॥
जोपै प्रेम लक्षणा की चाह अवगाहो याहि
मिटे उर दाह नेक नैननहू जोहनी।
टीका और मूल नाम भूलि जात सुनै जब
रसिक अनन्य सुख होत विश्वमोहनी॥६३२॥
नाभा जू को अभिलाष पूरण लै कियो मैंतो
ताकी साखी प्रथम सुनाई नीके गायके।
भक्ति विश्वास जाके ताही सों प्रकाश कीजे
भीजै रंग हियो लीजे सन्तन लडायके।
संवत प्रसिद्ध दश सात शत उन्हत्तर
फलगुन मास वदी सप्तमी वितायके।

नारायणदास सुखरास भक्तमाल लैके
प्रियादास दास उर वसो रहो छायके॥६३३॥
आगमें जराओ लेके जलमें डुबाओ भावें
सूलीपै चढाओ घोर गरल पिवाय बी।
बीछू कटवाओ घोर साँप लपटाओ हाथी
आगे डरवाओ ईति भीति उपजाय बी।
सिंहपै खवाओ चाहे भूमि गडवाओ तीखी-
अनी विंधवाओ मोहि दुःख नहीं पायबी।
व्रज जन प्राण कान्ह वात यह कान करो
भक्ति सों विमुख ताको मुख न दिखायबी॥६३४॥

—::*::—

इति श्री अनादि वैदिक श्री सम्पदाचार्य रसिकाधिराज
अनन्त श्री अग्रदेवाचार्य चरण कमल चंचरीक
करुणा वरुणालय स्वामी श्री नारायणदासजी
उपनाम श्रीनाभा स्वामीजीकी कृत
भक्तमाल
(सन्त श्रीप्रियादासजी कृत भक्तिरसबोधिनी टीका एवं
जानकीदास श्रीवैष्णव कृत अर्थप्रकाशिका
टिप्पणी सहित) सम्पूर्णम् ।

(सन्त महिमा)

जैसे प्रभु मानुष वपुष धरि लीला करैं,
तैसे सुखशीला हैं चरित सब संतके।
शठन की कुमति शिला सन्त सुशीला करैं,
भञ्जैं भवचाप ज्यों कुदोष जे दुरन्त के ॥
विमल वचन धनुबाण ही ते यातुधान,
काम कोह लोभ मोह मारैं उर अन्त के।
चारों युग जीवन उधार करै रसराम,
सन्त अवतार सम राम भगवन्त के ॥१॥
माया को दिखायके छिपात भगवन्त जब,
तब सन्त बुद्धि सों बतावत अनन्त को।
धारैं भगवन्त जब मानुष वपुष तब,
सन्त भगवन्त कहि गावैं रसवन्त को ॥
ईश्वर न कोई जीवनश्वर कुवादी कहैं,
तिन्है वाद जीति सन्त थापैं सीताकन्तको।
नाम को सुनाय के बनावैं रसराम रूप,
सन्त बिन कैसे कोऊ जानै भगवन्तको ॥२॥

(भक्तमालकार श्रीनाभास्वामी महिमा)

छ०—उन हरि आज्ञापाय सकल ब्रह्मांड उपायो।
इन गुरु आज्ञा पाय भक्त गुण गहन को गायो ॥
चार युगन के भक्त गुणन की गूँथी माला।
सब अंगन सुविचित्र बनी यह परम रसाला ॥
ब्रजवल्लभ अचरज कहा, सीतापति जापै रये।
कमल नाभ अज विष्णुके, त्यों अग्रनाभ नाभा भये ॥
स०—चारु सरोज से छप्पै सुहावन सन्तन के मन भृंग लुभाये।
सादर पान करैं रस कों ज्यों चकोर मयंक को नेह लुभाये ॥
प्रेम परागको त्यों ब्रजवल्लभ गंध मनोहर है जग छाये।
पावन भक्तन के गुण गाय के माल अनूपम नाभा बनाये ॥

श्रीमते रामानन्दाय नमः

श्रीभक्तमाल-भास्कर

रचयिता—मणि पर्वत श्रीअयोध्याजी निवासी मानस तत्वान्वेषी
पं० श्री रामकुमारदासजी रामायणी।

अरुणोदय

मंगलाचरण

श्रीगुरुवर पद वन्दि राम सिय चरण मनावौं।
हरि भक्तन पद ध्याइ भक्ति युत जन यश गावौं ॥१॥
प्रथमहिं श्रीगुरु परम्परा शुचि सुमिरण करिके।
करउँ रामपद आस भक्तपद रज उर धरिके ॥२॥

अस्मद्गुरु-परम्परा

राम मंत्र श्रीराम दीन्ह सिय कहँ सुखदाई।
हनुमत विधि रु वशिष्ठ पराशर क्रमते पाई ॥३॥
व्यास रु शुक पुरुषोत्तमार्य गंगाधर पायो।
सदाचार्य रामेश्वरार्य द्वारानँदगायो ॥४॥
देवानन्दाचार्य कीन्ह अमिताक्षर व्याख्या।
श्यामरु श्रुत चिद्, पूर्ण,श्रियहु हर्यानंद आख्या ॥५॥
आचारज राघवानन्द श्रीमठ शुचि थाप्यो।
रामानन्दाचार्य चरणलखि कलि अति काँप्यो ॥६॥
चारि वर्ण नर नारि सबहिं हरि भक्ति दृढ़ाये।
शिष्य अनन्तानन्द आदि आदित्य सुहाये ॥७॥

श्रीअनन्त हरि भक्ति सिन्धु वेला रचि दीन्हे।
मृत्यु जयी पयोहारि कृष्णदासहिं शिष कीन्हे॥८॥
अग्रदेव आचार्य रेवासा श्रीहरि थाप्यो।
रचे अनेकन ग्रन्थ पठत सुनतें यम काप्यो॥९॥
भगवान सु लक्ष्मणदास और श्रीमस्तरामजी।
लक्ष्मीदास रु नन्दलाल, हरिदास चरणश्री॥१०॥
विन्द्राचार्य सु रामप्रसादाचार्य अवध रहि।
रचे जानकी कृपा भाष्य वेदान्त सूत्र लहि॥११॥
राम नेवाज सुदास शिष्य तिनके शुचि भयऊ।
माणिकराम सुदास गादि वगही निर्मयऊ॥१२॥
नगही वगही अरु खरा महँ श्रीहरि थापी।
सदारामदासजू रामायणि शिष्य प्रतापी॥१३॥
सदाराम रामायणि कुटिया अवधहिं कीन्हो।
तपसी रामदयालदास शिष तिनके चीन्हो॥१४॥
श्रीहरिनाम सुदास तिनहि के शिष्य उजागर।
तिसु कुमार मति मन्द वसत मणि पर्वत नागर॥१५॥
उदय करन यह भक्तमाल भास्कर परकाशा।
जासु किरण लहि होय हृदय तम को अतिनाशा॥१६॥
यहि विंशति-शति भक्त साधुता जे हियधारे।
वरणौं कछु तिन नाम सन्त सब पूज्य हमारे॥१७॥
आगे पाछे नाम देखि कोउ जनि दुख मानौं।
जेहि क्रम परिचय जासु लह्यौं तेहि क्रमते जानौं॥१८॥

सकल सन्त यश नाम सिंधु कहि पार लेहै को।
उदित भास्कर गगन सुहिय वपु जाय गहै को॥१९॥
कछु प्रथमहुँ के भक्तन करपद सुमिरण करिकै।
लिखि हौं कछु हरिभक्त नामहिय आनंद भरिकै॥२०॥
संप्रदाय, कुलजाति, वरण, वपु, नहिं अभिलाषौं।
जिनके उर हरिभक्तिलेश तिन्ह कहँ कछु भाषौं॥२१॥
जिमि अनंत हरिनाम रूप गुण विभव विलासा।
तिमि अनन्त हरि प्रेम नाम गुण जे हरि दासा॥२२॥
अमुक लिखे अरु अमुक छांड़ि दीन्हे केहि ख्वारी।
इमि कोउ नख न बूझि परम अज्ञता हमारी॥२३॥
भक्त नाम यश सुनत सदा श्रीपति मुद भरिकै।
तेहिते भक्तन नाम चरित गावहु रुचि करिकै॥२४॥

श्रीहनुमानजी १

सिय सन मंत्र ओ भक्ति अजर अमरण वर पायो।
लंक दाहि खल मारि गरुड़ नर गर्व नसायो॥
सकल शास्त्र आचार्य मंत्र विधि घटजहि दीन्हे।
चुटकी सेवा लीन्ह पराजित शनि शिव कीन्हे॥
आंजनेयपद सुमिरि जन, राम रूप सुख निधि परे।
आदि भक्त हनुमंत यश, कौन सकल वर्णन करे॥

श्रीब्रह्माजी २

सकल सृष्टि निर्मायि निरन्तर हरिपद ध्यावैं।
खलन देइ वर बहुरि नाशहित हिरहिं बुलावैं॥

सावित्री अरु सरस्वती तिय दुहुँ दिशि राजैं।
राम मंत्र लहि दीन्ह मानसिक सुतन सुभ्राजैं॥
हरि आज्ञा लहि जग सृजत, पाप पुण्य नहिं हिय गहत।
ब्रह्मदेव पद कमल भजि, चतुरानन पुर सुख लहत॥

श्री वशिष्ठजी ३

राम मन्त्र लहि चतुरानन सों पौत्रहिं दीन्हे।
रविकुल गुरु आचार्य होइ बहु शुचिमख कीन्हे॥
ब्राह्मण-ऋषिवर बनइ कौशिकहिं सन्त बनाये।
अरुन्धती तिय रत्न गगन सप्तर्षि सुहाये॥
संहिता स्मृति किय वेदवित, आथर्वण प्रख्यात जग।
मुनिवशिष्ठ विधि शिष्यसुत सतत चलत हनुमंत मग॥

श्री पराशरजी ४

गर्भहिं में स-रहस्य वेद गावत सचुपाये।
श्रीयमुना मधि जाइ व्यास सो सुत उपजाये॥
लहि वशिष्ठ सों राम मन्त्र व्यासहिं पुनि दीन्हे।
विष्णुपुराण सुधर्म शास्त्र श्रुतिशाख जु कीन्हे॥
पश्यन्ती गर्भज शक्ति सुत, पौत्र वशिष्ठरु व्यास पितु।
भक्त पराशर पद कमल, नमत पाव जन परम हितु॥

श्री वेदव्यासजी ५

श्रुति पुराण उद्धारि विरचि भागवत महानिधि।
पंचम वेद समान महाभारत, सुसर्व सिधि॥
श्रुति न समन्वय करन अर्थ पंचक के हेतू।

ब्रह्मसूत्र रचि दीन्ह विज्ञ लखि होत सचेतू॥
पाराशर सो प्राप्त करि राममन्त्र पुनि शुकहिं दिय।
नारायण मुनि व्यास बनि सकल जगत उद्धार किय॥

श्री शुकदेवजी ६

जीवनमुक्त स्वरूप जीति मायहिं जग राजैं।
परम मनोरम रूप मनो हरि आप बिराजैं॥
वक्ता श्रीहरि चरित सरस उर अति अनुरागू।
अजर अमर सोइ दर्श लहै जाकर बड़ भागू॥
पितु समीप लहि भागवत राम मंत्र लहि जप निरत।
शुक मुनि परमाचार्य जग अमित जनन पावन करत॥

श्री पुरुषोत्तमचार्यजी ७

प्रभु शिशु केलि विलोकि छले विधि शापित भयऊ।
शङ्कर सुत उपवर्ष होइ पाटलिपुर गयऊ॥
कर्मदेव अरु ब्रह्म मिमांसा वृत्ति बनाये।
कर्म ज्ञान अरु भक्ति समन्वय शुचि दर्शाये॥
करि तप व्यास कुमार सों राम षडक्षर मन्त्र लिय।
पुरुषोत्तम आचार्य होइ अमित जनन उद्धार किय॥

भगवान श्रीरामानन्दचार्यजी ८

जब लहि यवन अनीति धरा व्याकुल भइ भारी।
अति कृपालु रघुनाथ तबहिं मुनि रूप सँवारी॥
जैन बौद्ध मत नाशि याविनी अनय विनासे।
भगवद्धर्म प्रचारि सु वैष्णव तत्व प्रकाशे॥

शिष्य द्वादशीदित्य सम ज्ञान किरण जग तम हरे।
रामानन्दाचार्य कर धर्मध्वजा जग फरहरे॥

श्रीअनन्तानन्दाचार्यजी ९

शिशुपन धेनु चराइ कृष्ण संग बहु सुख लूटे।
पढ़ि श्रुति शास्त्र पुराण सु श्रीमठ गुरुपद जूटे॥
त्याग विराग प्रचारि धम हरि भक्ति दृढ़ायो।
जेहि शिर दिय, करकमल लोक पति सदृश बनायो॥
हरि भक्ति सिन्धु वेला रच्यो श्रौत ज्ञान हरि प्रीति नद।
आचार्य अनन्तानन्द विधि सुमिरि लहे रघुनाथ पद॥

श्रीपीपाजी १०

गागरौन गढ़ राज्य त्यागि मुनि बनि तप कीन्हे।
बहु नृप रंकन ज्ञान देइ हरिपद रति दीन्हे॥
परम सिद्धिता प्रगटि साधु सेवन शुचि करिके।
सतिय जीति कलि सिंह शिष्य किय पातक हरिके॥
पैठि सिन्धु श्रीकृष्णपद दर्श प्रसाद अनन्त लिय।
श्रीमनु पीपा रूप धरि कलि पुनि धर्म प्रचार किय॥

श्रीसुरसुरानन्दाचार्यजी ११

हरि मातुल बनि संस्कार सब मँह जिसु आये।
राम राम शुचि गान सकल लोगन करवाये॥
छल करि दीन जो यवन वरा तेहि तुलसी कीन्हे।
आचारज पद बैठि पूछि दश प्रश्न जु लीन्हे॥
सुरसुरी सहित करि काम जय पञ्च रात्र उद्धारि लिय।
नारद बनि सुरसुरानन्द जग विमल भक्ति विस्तार किय॥

श्रीसुखानन्दाचार्यजी १२

करि परास्त रँगराजहिं जयकर लेन छुटायो।
मालव मारहिं जीति सु श्री मठ गुरुपद आयो॥
शापित सर्प उधारि जाइ कामदगिरि तप करि।
यक्ष पक्षि दे ज्ञान अत्रि लोमश लखि दृगभरि॥
वेदान्तार्य अरु जमिल कहँ प्रेम भक्ति दिय चायिनी।
सुखानन्द बनि शम्भु दिय भक्ति सकल सुख दायिनी॥

श्री रमादास (रैदास जी) १३

वर्णाश्रम अभिमान आनि द्विज वाद किये बहु।
दे श्रुति शास्त्र प्रमाण कह्यो हरि भक्ति सबहि गहु॥
पारस दे हरि लीन्ह परीक्षा तब हुँ डिगे नहिं।
काम क्रोध कलि जित्यो संत गुरु राम कृपा लहि॥
भक्तहिं जाति न, शिष्य बनि, मीरा झाली मंत्र लिय।
रमादास बनि धर्म पति, भक्ति महात्म्य दिखाइ दिय॥

श्री धनानन्द जी १४

बाल पने हरि रोटी भखि सँग गाय चराये।
सन्त जिमाये खेत बिना बोये उपजाये॥
काशी श्रीमठ जाइ शरण आचार्य चरणगहि।
गुरु आज्ञा शिर धारि गाँव गए परम भक्तिलहि।
ज्ञान भक्ति बहु जनन दै सकल दिव्य साजहिं सजे।
श्रीबलि कलियुग आइकर धना जाट बनि हरिभजे॥

श्री सेनानन्दजी १५

सन्त सेव महँ मगन देखि हरि नापित वपु धरि।
नृपहिं सेइ करि मुक्त-सेव सन नृप कुल गुरु करि॥
संत संग करिवाद जाइ गुरु चरण निहारेउ।
रामानन्दाचार्य शिष्य करि घर लौटारेउ॥
नटवर वपु हरि दर्श लहि नित पार्षद बनि सेव लिय।
गांगेय भीष्म कलि सेन बनि बान्धव भक्ति प्रचार किय।

श्रीकबीरदासजी १६

काशी सरमधि प्रगटि यवनगृह वयस विताये।
काम क्रोध मद मारि नृपहिं बहु सिद्धि दिखाये॥
हिन्दू तुरकहिं एक भाव लखि ज्ञान प्रचारे।
करि कुनिन्द कुल कर्म प्रेम सन्तोषहिं धारे॥
राम नाम जपि प्रेम दृढ़, विनु तनु तजि हरि पद लसे।
बनि प्रहलाद कबीर जू भेद भाव मायिक नसे॥

श्री योगानन्दाचार्यजी १७

श्रीगुरुपदरज सेइ सकल शास्त्रन मथि लीन्हे।
विजय नगर महँ जाइ चरक कहँ विजयजु कीन्हे॥
श्री रंगम पुरि जाइ बाद करि बर बर जीत्यो।
चित्रकूट ब्रज अवध अनन्दहिं बहु दिन बीत्यो॥
गुर्जर धर्म प्रचार करि कलिहिं धर्म सह जिन जये।
योग सुपथ उद्धार हित योगानन्द कपिल भये॥

श्री भावानन्दाचार्यजी १८

परम तीव्र वैराग्य त्यागि तिय यति वपु लीन्हो।
पुनि गुरु आयसु मानि जाइ गृह धर्म सुकीन्हो॥
त्रय कुमार हरिभक्त मुक्ति कन्या इक जायी।
पुनि गुरु पद महँ जाय योग जप धर्म कमायी॥
अनुभानंदहिं शिष्य करि कीन्ह तिन्हें वैष्णवाधिपति।
रामानन्दाचार्य पद अनुगामी मिथिला नृपति॥

श्रीगालवानन्दाचार्यजी १९

रामानन्दाचार्य चरण सेवन मन लायो।
योग शक्ति हरि भक्ति पाइ काश्मीर सिधायो॥
विष्णुरात नृप सदसि यथा भागवत सुनायी।
त्यो काश्मीर नरेशहि श्रीहरि भक्ति दृढ़ायी॥
गालव व्यास"कुमार"मुनि विजय कीन्ह सब पुहुमि थल।
ज्यो द्वापर त्यों कलिहिं पुनि कीन्हे भक्ति प्रचार भल॥

श्रीनरहरियानन्दाचार्यजी २०

श्रुति पुराण आद्यन्त विना पुस्तक नित गाये।
अनुसूया पद परसि द्रस सिय रघुवर पाये॥
योग क्रिया सब कीन्ह राम जपि खलन सुधारे।
हरि गुरु पद नित सेइ जीति कलि मनहिं पछारे॥
सन्त सेव हित दण्ड महँ देवी संन लकड़ी लिये।
नरहरि बनि कलि सनक जी तुलसी कहँ मानस दिये॥

गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी २१

हनुमत शासन मानि भए नर कलियुग आई।
गुरु नर हरि पद बैठि भक्ति हरि मानस पाई॥
कृत त्रिधि वेद प्रचारि रु त्रेता मुनि रामायण।
कलि मानस रचि कीन्ह विविध नर धर्म परायण॥
कीन्ह द्वेष नहिं काहु मन सबहि करन चह हरि भगत।
गीत कवित दोहा विनय रचि तुलसी जग जगमगत॥

स्वामी श्रीनारायणदास (नाभा) जी २२

अद्‌भुत प्रज्ञाचक्षु कृपा गुरु दोउ दृग पाये।
सन्त चरण जल अरु प्रसाद लहि सिद्धि सुहाए॥
श्रीनारायण दास सुभाषा अष्टयाम रचि।
मन वच क्रम गुरु चरण लागि हरि प्रेम हृदय सचि।
सब रहस्य गुरु सेइ लहि शुचि निदेश नाभा जयी।
काढ़ि वेद गाथा रच्यो भक्तमाल आभामयी॥

श्रीराम प्रसादाचार्य जी (बिन्द्वाचार्य) २३

रामायण किय गान जन्म भरि राम नाम जपि।
रच्यो जानकी कृपा भाष्य वेदान्त भक्ति थपि॥
गीतोपनिषत्सुभाष्य धर्म शिक्षा पत्री रचि।
भक्ति ज्ञान प्रचारि यवन सिद्धता बिनसि तचि॥
जनकलली निज कर कमल जासु माथ बिन्दी दिये।
अवध चित्रकूटहि सुबसि राम प्रसाद सुयश लिये॥

श्री हरिदासाचार्यजी २४

अप्रतिभट विद्वान महा महिमा गुण राशी।
मथि श्रुति शास्त्र पुराण राम सिय तत्व प्रकाशी।
रामानन्दाचार्य तत्व विस्तारन हेतू।
रचे अनेकन ग्रन्थ मनहु भव निधि कर सेतू।
नाममात्र हरिदास हौं रामदास निज मुख कह्यो।
श्रीहरिदासाचार्य वर राम भक्ति दृढ़ करि गह्यो॥

स्वामी श्री मणि रामदासजी महाराज २५

बाल्मीकि कृत सहस पाठ कामद वसि कीन्हे।
हनुमत आज्ञा पाइ अवध बासहिं चित दीन्हे।
श्री रामायण सुनन हेतु श्री हनुमत आए।
विग्रह वीर विराजि सु कौतुक बहुत दिखाए॥
आजु लगे रस एक ही तहाँ साधु सेवा चलत।
सिद्ध सन्त मणिराम की महिमा सन्त सबै कहत॥

स्वामी श्री रामचरणदासजी (करुणा सिन्धु) २६

श्री मानस पर सर्व प्रथम टीका रचि दीन्हे।
शृङ्गारिक भावना प्रसरि बहु साधक कीन्हे॥
सन्त सेव बहु करत स्वयं मधुकरी सुपाये।
सर्वोपरि श्रीराम परत्वहिं श्रुति न थहाये॥
राम नौरतन आदि हैं बहुत ग्रन्थ सात्विक रचे।
रामचरण कर दास बनि करुणासिन्धु कलिहिं बँचे॥

स्वामी श्री रघुनाथदासजी (बड़ी छावनी श्रीअवध) २७

हिय न नौकरी चिन्त साधु सेवन रँग लहरो।
जिनके वदि रघुनाथ सिपाही बनि दिय पहरो॥
छाँड़ि बृटिश चाकरी अवध बसि सन्तन सेई।
सरयु धार सन घृत मँगाय भनि ऋण पुनि देई॥
श्री हरिनाम सुमिरिनी रचि कवित्तमय ग्रन्थ भल।
रघुनाथदास बड़ि छावनी सन्त सेव थापी अटल॥

श्री युगलानन्यशरणजी महाराज २८

ईशरामपुर प्रगटि ईश करि रामहिं ध्याये।
परमैकान्तिक सरस भाव कान्ता प्रगटाये॥
श्री रघुवर पद युगल छाँड़ि कहुँ मन नहिं लाये।
दिव्य भाव मय ग्रंथ छियाँसी रुचिर बनाये॥
श्री जीवाराम सुकृपा लहि कान्ताभाव सुपरम विभु।
युगलानन्यसु शरण श्रीरसिकराज महाराज प्रभु॥

श्री जानकीवरशरणजी महाराज २९

श्री गुरुपद शुचि प्रीति प्रीति सियवर पद पीना।
महल टहल युत भाव सीय सहचरि सुप्रवीना॥
हिन्दी संस्कृत और फ़ारसी कर कवि पण्डित।
सन्त सेवि हिय सरल अमित शुभ गुणगण मण्डित॥
प्रीतिलता अति प्रीति सिय पद प्रसन्न जब जो मिले।
पण्डित श्रीजानकीवर शरण अवध लक्ष्मण किले॥

भारतेन्दु बाबू श्री हरिश्चन्द्र जी ३०

प्रीति राधिका कृष्ण चरण गुरु वल्लभ दीपा।
धीर सरस गम्भीर त्याग महँ कर्ण महीपा॥
नाट्य कवित इतिहास भक्तिमय रचि बहु ग्रन्था।
कीन्ह नागरी गुणागरी कर मार्जित पन्था॥
गिरधरनदास सुत मान्य नृप भारतेन्दु सचमुच रहे।
हरिश्चन्द्र हरिचन्द सम दान सत्यव्रत दृढ़ गहे॥

श्री रसरंगमणिजी महाराज ३१

मानेहु रामहिं अनुज आपु बड़ सख्य सँभारेहु।
तूण बाँण धनु धरेउ नित्य हरि रच्य विचारेहु॥
भावुक परम गँभीर कवित अति सरस सुहाए।
श्री नाभा कृत भक्त माल शुचि तिलक बनाए॥
विविध ग्रन्थ हरि भक्तिमय कहेउ भागवत अति सरस।
राम सखा रस रंगमणि रहेउ सदा जगसों विरस॥

स्वामी श्रीजीवारामजी ३२

रसिक प्रकाश सुभक्तमाल अति सरस बनाये।
दूसर नाभा प्रगटि मनहु हरि जन गुण गाये॥
करुणा सिन्धु सुचरण बैठि शृंगार भाव लहि।
सियवर पद जो प्रीति को पार लहै ताहि कहि॥
सरयू तट सिय महल रटि छपरा चिरान बसि रस रसे।
स्वामी जीवारामजी युगलप्रिया प्रभु पद लसे॥

विश्राम सागर कार श्रीरघुनाथ दासजी राम सनेही ३३

(राम सनेही घाट बारावंकी)

बारावंकी जिलैं प्रगटि कायथ कुल में मढ़ि।
रहि भरि जन्म गृहस्थ वेष सब वेद शास्त्र पढ़ि॥
श्रीगुरु देवादास आस पग कबहुं न छोड़यो।
रचे ग्रन्थ विश्राम सागरे शास्त्र निचोड़यो॥
मरेहु अस्थि नित राम रटि रुचि दिखराई जासु की।
रघुनाथ दास जू राम सेनही धाट भूमि शुचि जासुकी॥

स्वामी श्रीकृष्णानन्दजी गौड़ीय वैष्णव ३४

अति उदार विद्वान परम शुचि हरिपद प्रेमी।
संग लाय बहुजनन नित्य हरि कीर्तन नेमी॥
प्रबल तर्क अरु वेदादिकसो दैं सुप्रमाना।
बहु शास्त्रार्थन जिते आर्य अद्वैति महाना॥
बहु विमुखनि चैतन्यपद दीन्हो भक्ति अनन्द जू।
श्री व्रजेन्द्र नन्दन सखा स्वामी कृष्णानन्द जू॥

श्री गोमतीदासजी महाराज (श्रीमतीशरणजी) ३५

बहुतप करि मणि कूट सिद्धि सब करतल कीन्ही।
पै न प्रलोभित तनिक राम सुमिरण मत दीन्ही॥
निसि दिन सीता राम चरण सेये चित चीन्हें।
होइ श्रीमती शरण टहल महली वपु लीन्हें॥
हनुमन्निवास शुचि सरयु तट आंजनेय थापित सुघट।
श्रीमद्गोमतिदास जू नित श्रीसीताराम रट॥

श्रीमाणिकरामदासजी (बगही) ३६

सुभग देश सरवार बैठि बगही रचि आसन।
लोगन को संन्याय कीन्ह लखि यवन कुशासन॥
यवन दण्ड गहि अंग नीति पथ ते नहिं डोल्यो।
तासु काज सब सिद्ध जासु हित मुख कछु बोल्यो
नगही बगही हरिहिं थपि खेरा अन्त सुबसि चले।
माणिकराम सुदासजू राम भक्ति महं रंग रले॥

गुरुदेव स्वामी श्रीहरिनामदासजी महाराज ३७

युवती तिय सुतविभव त्यागि श्री अवधहिं आई।
रामायणि कुटिया महँ रहि बहु बिभव बढ़ाई॥
बहुत जनन दै राम मंत्र भवपार लगाये।
बन प्रमोद की तजि महंथि मणि तर्वत आए॥
राम धाम चलि जात भे अवध बास बहु काल करि।
श्रीहरिनामाचार्य वर नित सियराम सुप्रेम भरि॥

श्रीस्वामी पं० श्रीराम वल्लभाशरणजी महाराज श्रीजानकी घाट ३८

परम सुसरल सुभाव मिष्ठवच मन आकर्षत।
कहत कथा उपदेश देत जनु अमृत वर्षत॥
सब शास्त्रान मथि तत्व रामसिय यश हिय धारे।
मनहुँ व्यास पुनि प्रगटि संत बनि भक्ति प्रचारे॥
बहु नर करि हरिभक्त रचि हनुमत बागरु बाटिकै।
रामवल्लभाशरण जू राम धाम :गै मोदलै॥

महान्त श्रीराम वल्लभा शरणजी सद्गुरु सदन ३९

रामवल्लभाशरण जु सद्गुरु सदन सुहाए।
हरि शृंगार रस रुचिर सकल ऋतु पद्य बनाए॥
श्रीगुरु चरणन सेव कीन्ह अहमिति विसराई।
गोरक्षण हित जाइ वन्दिगृह भक्ति दृढ़ाई।
वर्ष तिरासी धारि वपु हरि सन्मुख बहु जनन करि।
युगल विहारिनि कुँज में सिय पिय सेवत मोद भरि॥

वेदोपनिषद्भाष्याकार स्वामी श्रीभगवदाचार्यजी महाराज ४०

महाकाव्य त्रय और स्तोत्र शुभ रचे अनेका।
वेदोपनिषत्सुभाष्य विरचि किय भक्ति विवेका॥
ब्रह्मसूत्र कर तत्व संहिता सन निरुवारयो।
प्रतिवादी अति डरत त्याग वैराग्य प्रचारयो॥
सम्प्रदाय श्री जासुबल आजु अनूपम लहत छवि।
स्वामि भगवदाचार्यजी अप्रतिभट विद्वान कवि॥

स्वामी श्रीजगजीवनदासजी (कोटवा) ४१

जिमि दिग्गज महि चारि चारि पावा थापे तिमि।
चौदह गद्दीथपे कल्प प्रति मन्वन्तर जिमि॥
बाँधेउ धागा हाथ यज्ञ जिमि मंगल सूता।
राम नाम उपदेशी कीन्ह बहु नर जग पूता॥
गृही वेष त्यागी परम राम नाम जप निरत भल।
श्रीजगजीवन दासजी सत्यनाम पथ किय अटल॥

महन्थ श्रीभगवानदासजी खाकी, श्रीअयोध्याजी ४२

रामानन्दी सुदृढ़ प्रबल वक्ता विज्ञानी।
राजनीति महँ कुशल कूटनीतिहु बहु ज्ञानी॥
सम्प्रदाय मर्मज्ञ सुलेखक चतुर गँभीरा।
वैष्णव पंच प्रकाशि थपे ग्रन्थालय वीरा॥
समय समय उत्सव करत हरि मन्दिर महँ रहत तहँ।
भगवानदास खाकी लसत विन्द्धाचार्य सुवंश महँ॥

श्रीरामप्रपन्नजी चौबे, चौबेबेल बलिया ४३

रूपकला सत्संग, करी हरि संग मिताई।
रामार्पण करि सकल कुममता दुरि भगाई॥
अष्टोत्तर शत पाठ सकल तुलसी कृत को करि।
सहस पचीस सुराम नाम नित जपत नेम धरि॥
जन्म महोत्सव अवध वसि नेम निवाह्यो जन्म भरि।
चौबे राम प्रपन्नजी रामधाम गे राम रटि॥

महामहोपाध्याय स्वामी श्रीरघुवराचार्यजी शींगड़ा ४४

शिंगड़ा मठ काठियावाड़ महँ परम सुहावा।
तहँकर नृपति महन्थ प्रतिष्ठित पद अति पावा॥
अवध निवसि लहि शास्त्र लसत लश्करी वेश री।
गीता भाष्यहि तिलक वृत्ति वेदान्त केशरी॥
महामहोपाध्याय की पदवी दीन्ही बृटिश पति।
रघुवराचार्य विद्वान शुचि सम्प्रदाय श्री प्रीति अति॥

दार्शनिक सार्वभौम स्वामी श्रीवासुदेवाचार्यजी, ४५

अल्प वयस महँ सकल शास्त्र पारङ्गत भयऊ।
कर्वी कालिज केर प्रिंसपल होइ यश लहेऊ॥
सार्भभौम दार्शनिक केर बड़ि पदवी राखत।
हनुमन्त थापि करि ब्रह्मसत्र सबसों मृदु भाषत॥
प्रतिवादी जेहि नाम सुनि कर न शास्त्र वादहिं सुडर।
विन्द्वाचार्य सुवंश महँ वासुदेव आचार्य वर॥

न्याय वेदान्त केशरी स्वामी श्रीवैष्णवाचार्यजी ४६

प्रश्नोपनिषत्सुभाष्य परम वैष्णवी सुहाये।
औरहु ग्रन्थ अनेक लिखे विज्ञन मन भाये॥
रामानन्दाचार्य चरण मन निष्ठहि राखत।
सम्प्रदाय अविरुद्ध नीति मय प्रिय वच भाषत॥
अध्यापक अति शुचि कुशल सीय-राम पद रत भजन।
वैष्णवाचार्य विद्वान श्री वैष्णव परम गँभीर मन॥

स्वामी श्रीरामसुन्दरदासजी महाराज "रामायणी" ४७

ख्यात अवध में मणीराम जू केरि छावनी।
तहँ तुलसी कृत काव्यन की कह कथा भावनी॥
भक्ति शास्त्र श्रुति गदित सन्तजन नीति सुधारत।
दुखित सन्तलखि होइ दयालु सब काज सँवारत॥
रामायणी सुख्यात जग श्री वैष्णव मग धारि उर।
रामसुसुन्दरदास जी कबहुं न त्यागत अवधपुर॥

महन्थ श्रीरामशोभादासजी, अयोध्याजी ४८

ख्यात महन्थन केर मुकुटमणि हरिपद प्रेमी।
सदाऽऽचार्य दृढ़ निष्ठ सन्तसेवी हरिनेमी॥
परम तपस्वी सुहृद त्याग वैराग्य भजन रुचि।
सुनेहु कथा करि नियम कायमन वचन परम शुचि॥
मणीराम की छावनी होइ महन्थ पालेहु धरम।
राम सुशोभादास जी सरल सुबुध भावुक परम॥

महन्थ श्रीरामशोभादासजी (आबू राज) ४९

श्री गुरुपद अति प्रीति नीतिरत नियम सँभारत।
रामानन्दाचार्य चरण पर तन मन वारत॥
सर्वेश्वर रघुनाथ सैद्ध अति सुन्दर मन्दिर।
रचेउ स्वच्छ सुस्फटिक केर लखि मोह पुरन्दर॥
आबू पर्वत पर निवसि नित सेवत सियकान्त जन।
रामसुशोभादास श्री वैष्णवाचार्य शुचि शान्तमन॥

श्री नारदानन्द सरस्वती नैमिषारण्य ५०

शुभ ऋषि कुल प्रस्थापि सुवैदिक धर्म प्रचारें।
मायिक मद मारादि दुष्ट, साधन करि मारें॥
उपदेशक अति प्रबल सरल शुचि हरिपद प्रीती।
हो कल्याण महान सिखव प्रार्थना सुनीती॥
नैमिषवसि काटन चहत कलियुग कर दुख द्वन्द हैं।
सन्यासिन महँ शुचि सरल आजु नारदानन्द हैं॥

खजुरी ताल के सन्त जन ५१

रीवें खजुरी ताल पाठशाला रचि थपि हरि।
श्री पुरुषोत्तमदास भजन रत शिष महन्थ करि॥
अध्यापक शुचि सरल श्यामसुन्दर जू शर्मा।
बसै खड़गड़े आप निरत गृह वैष्णव धर्मा॥
राम सुभूषणदास जू रामायण प्रेमी सुहृद।
छात्र सन्त सेवत सतत पुरुषोत्तम प्रिय रामपद॥

महन्थ श्रीनृसिंहदासजी, अहमदाबाद ५२

परम सरल सुठि सुहृद सन्त सेवी दृढ़ नेमी।
अति उदार जनु कर्ण प्रगट कलि हरिपद प्रेमी॥
धेनु बसन गज वाजि वृषभ जो चाहैं लेवैं।
सहसन मुद्रा नित्य आपने कर नित देवैं॥
गुर्जर साबरमती तट रहे अहमदाबाद महँ।
रचि मन्दिर जगदीश बस सिद्ध सुनरसिंह दास तहँ॥

श्रीप्यारेमोहनदासजी पानीघाट वृन्दावन ५३

वैद्यक विद्या कुशल जाइ रोगी तेहिं सेवैं।
देत सुऔषधि सबहिं दाम कछु माँगि न लेवैं॥
राव रंक सन एक भाव व्यवहारहि राखत।
रचि गौडीय सुभक्ति शास्त्र कटु भूलि न भाषत॥
पानिघाट वृन्दाविपिन जम्बू बाग बनाइ करि।
प्यारे मोहनदासजी जित मदादि हिय कृष्ण धरि॥

महाकवि श्री जयरामदेवजी, वृन्दावन ५४

सुरति योग महँ सुरुचि करत अभ्यास निरन्तर।
नाम वियोगी ख्यात बसत वृन्दावन अन्तर॥
कविता मधुर गंभीर मनहुँ अमृत भरि भाषत।
भाषत अति मृदु बैन रैनि दिन हरि उर राखत॥
रामानन्दायन विरचि महा कवी पद पदक लहि।
श्री जयराम सुदेवजी रहत भक्ति शुचि टेक गहि॥

सम्प्रदाय ५५

विज्ञ माधवाचार्य परम वैष्णव विज्ञानी।
घर मृत सुत शव त्यागि कीन्ह सत्सँग सुखमानी॥
श्रीबलरामाचार्य परम विद्वान अवध बसि।
विजय राघवहिं सुथपि सन्त मधि कथा कहे लसि॥
श्रीसुदर्शनाचार्य इक वृन्दावन पंजाब यक।
अति उद्भट विद्वान दोउ रामानुजि वैष्णव तिलक॥

सम्प्रदाय ५६

रचिमंडप वैकुण्ठ अवध पुर नजर बाग महँ।
सीतारामाचार्य विज्ञ हरि भजत सतत तहँ॥
त्यागी परम उदार तितिक्षू पुष्कर राजैं।
वीरराघवाचार्य रमावैकुण्ठ विराजैं॥
विद्वान रुचिर वक्ता प्रबल सन्त सुप्रेम उदार भट।
विष्वक्सेनाचार्य बहु यज्ञकरत वसि गंग तट॥

श्रीरामदासजी शास्त्री ५७

चार सम्प्रदा थान ख्यात वृन्दावन में अति।
सेवत श्रीघनश्याम भावना सख्य सरसमति॥
श्री गुरु कृष्णानन्द चरण अम्बुज अनुरागी।
हरि गुरु उत्सव करत सन्त सेवत बड़ भागी॥
महाप्रभू चैतन्यपद अनुगामी व्रजवास रुचि।
रामदास शास्त्री सुहृद नाम प्रेम हरिभाव शुचि॥

करपात्री श्रीहरिहरानन्द जी सरस्वती ५८

रघुबर यदुवर चरित परम मधुरे स्वर भाषें।
परम तितीक्षु सन्त जीति मन इन्द्रिन राखे॥
धर्म संघ रचि जगत सुवैदिक धर्म प्रचारत।
चहन करत निर्मूल अधर्म रु अनय उखारत॥
कलियुग भट सों नित लरत अध्यात्मिक उर धारि बल।
हरिहरानन्द करपात्रि जू शुचि धार्मिक नेता प्रबल॥

विश्व वन्द्य महात्मा श्री गाँधी जी ५९

सदाचार शुचि सद्विचार दृढ़ वचन सत्यरत।
रघुपति राघव राम जपेउ हिय भेद स्वपर गत॥
कदाचार खल शत्रु दीन दुख मेटन कारन।
दिव्य अहिंसा अस्त्र धारि किय बृटिश निवारन॥
परम महात्मा त्यागि वपु भारत कीन्ह स्वतन्त्रहित।
गाँधी मोहनदास जी सिद्ध पुरुष जग अवतरित॥

ब्रह्मचारी श्रीप्रभुदत्तजी, झूसी प्रयाग ६०

बालक सम अति सरल नम्र विद्वान गँभीरा।
मौन धारि लिखि ग्रन्थ प्रचारत भक्ति सुधीरा॥
जनु दूसर गौरांग प्रसारत श्री हरि नामहिं।
झूसी बसत प्रयाग गंगतट रचि शुचि धामहि॥
भागवत भाष्य भाषा कियो श्रीशुकमुनि जनु प्रगटि महि।
ब्रह्मचारि प्रभुदत्त की महिमा कापै जाय कहि॥

पं० श्रीसियाबिहारीशरणजी (सौखी) ६१

सिया बिहारीशरण मनहु श्री सिया बिहारी।
दीन दुखित तन सेव हृदय अति करुणा धारी॥
परम सरल विद्वान सुहृद भावुक हरि प्रेमी।
कहत कथा भागवत परम जन सकरुण क्षेमी॥
गोमतीदास कर शिष्य शुचि मिथिला लखन पटी लसत।
भ्रमण करत बहु तीर्थ नित सेवत संत गँभीर मत॥

राष्ट्र कवि मैथिलीशरण जी गुप्त ६२

राम भक्त शुचि सरस हृदय श्री सम्प्रदाय दृढ़।
राष्ट्र भावना जटित रचेउ बहु काव्य भक्ति बृढ़॥
पंचवटी साकेत द्वापरादिक बहु ग्रन्था।
रचे धर्म मर्याद लोक श्रुति दर्शक पन्था॥
महावीर की कृपा बढ़ि आजु अमित कविकरण थे।
युग सुप्रवर्तक राष्ट्रकवि गुप्त मैथिलीशरण थे॥

पण्डित श्रीरामभरोसे पाण्डेय ६३

बाराबंकी प्रान्त ग्राम बहुतैं रुचि राजै।
तहँ रामायण सभा थपे सब जनहित काजै॥
चैत्र कृष्ण नित रामचरित उत्सव घर करहीं।
राम मंत्र जप निरत संत सिख उर नित धरहीं॥
बहु थल कीर्तन सभा थपि रामायण सुप्रचाररत।
पाण्डे रामभरोस जी रामभरोसे चित निरत॥

पं० श्रीद्वारकाप्रसाद जी पाण्डे ६४

अति शौकी सुकुमार प्रतिष्ठा बहुत कमाये।
बहुता रामभरोस भक्त कर सतसंग पाये॥
विषयन से मन ऐंचि राम चरणन महँ लाये।
मानस कर सुख वर्ष वर्ष दें सबहिं सुहाये॥
होत निकट जहँ हरिचरित तहँ पहुँचत बहु कष्ट सहि।
धन्य हसनपुर ग्राम भो श्री द्वारकाप्रसाद लहि॥

महन्थ श्री रघुबरदासजी शिवधाम ६५

वक्ता परम गंभीर दास उपनाम सुधारे।
करत कवित अति विमल काव्य गुण दोष विचारे॥
वैद्यक कला प्रवीण सन्त गुरु हरिपद सेवैं।
सम्प्रदाय श्री धर्म पालि औरहुँ सिख देवैं॥
रायबरेली शिवगढ़ श्री शिवनाम सुग्राम जहँ।
नागा रघुबरदासजी शुचि महन्थ विद्वान तहँ॥

पं० श्री रुक्मिणीनन्दन त्रिवेदी व्यास ६६

शुचि सन्तन महँ प्रीति नाम जापक हरि प्रेमी।
भक्तमाल श्री रामचरित मानस कर नेमी॥
धारि पतित उपनाम रामसिय यश नित गावैं।
बाराबंकी जिले त्रिवेदा गंज रहावैं॥
उर्ध्वपुण्ड्र तुलसीलसत तिय सुतमहँ रहि हरि भगति।
रुक्मिणिनन्दन द्विज सुहृद रामकथा कह रुचिर अति॥

सन्यासी सम्प्रदाय ६७

मस्तराम अलमस्त रहत आनँद मन छाके।
स्वामि सच्चिदानन्द अमित सद्गुण हिय जाके॥
भजनानँद व्याख्यान परम पटु भक्ति प्रचारक।
ब्रह्मानँद शुकदेव ख्यात सद्वृत्ति सुधारक॥
कृष्ण भारती तीर्थ दोउ व्याख्याता विद्वत्प्रबल।
वक्ता हीरानन्द शुचि सन्यासी ये सन्तभल॥

सन्त सम्प्रदाय ६८

श्री कौशल्यादास सन्त सेवत जयपुर बसि।
सूर्यप्रकाश सुसन्त अहमदाबादहिं में लसि॥
वृन्दावन महँ साधु सेवकिय मुरली दासा।
लालदास कलकता थान बहु सन्त निवासा॥
भागवती दास हुबली निवसि माँगि सेइ षड्दर्शनी।
इन सन्तन अपनाय लिय साधुसेव महिमा घनी॥

सन्त सम्प्रदाय ६९

छोटी कुटिया अवध निवसि वेदान्त थहायो।
रामकिशोर सुदास शीघ्र साकेत सिधायो॥
वैष्णव वीर उदार लिखे बहु ग्रन्थ सुहावन।
सर्युदास जू श्री सरयूतट निवसि विमल मन॥
शृङ्गार भवन महँ निवसि बहु माधव रामकिशोर दोउ।
रामकृष्ण पण्डित सरल वन प्रमोद बसि गए सोउ॥

श्री मधुसूदनाचार्यजी चाँदवारा (बाँदा) ७०

श्री रामानुज सम्प्रदाय दृढ़ रामचरण गहि।
अवध सुसद्गुरु सदन आय सम्बन्ध पत्र लहि॥
रामचरित मानस प्रचारि मण्डली घुमावत।
लीला तनु सियाराम समय पद विरचि सुनावत॥
रचि वैदेही वाटिका पधराये सियाराम तहँ।
श्री मधुसूदनाचार्य वर भे चँदवारा गाँव महँ॥

महन्थ श्री जयदेवदासजी कर्वी (चित्रकूट) ७१

वैष्णव कालिज थापि अमित विद्वान बनाये।
सदाचार की सीवँ चलत श्रुति पंथ सुहाये॥
नीति कुशल अति विज्ञ विज्ञ जन आदर दीन्हे।
रामानन्दाचार्य धमपथ चित दृढ़ कीन्हे॥
धर्म राजनय भक्तिवर सेइ गए हरि धाम पर।
जयदेवदास कर्वी रहे सेवत सन्त सुविज्ञ वर॥

पं० श्री रामटहलदासजी दारागंज (प्रयाग) ७२

रामानुज मत निष्ठ रहे श्री रामानन्दी।
लिखि बहु ग्रन्थ प्रकाशि किये वितरण स्वच्छन्दी॥
शिष्य होइ डाकोर रहे भरि जन्म प्रयागा।
भगवत धर्म प्रचार किये हियभरि अनुरागा॥
बहु शास्त्रन मथि काढ़ि किय वैष्णव धर्म प्रचार जग।
रामटहल पण्डित गये रामटहल हित राम मग॥

भक्त सम्प्रदाय ७३

दुखीदास रैदास भगत शुचि बचन पटी महँ।
करि मन्दिर निर्माण जु जोखनदास अवध रह॥
धोबी मन्दिर रहत खरारी लालू दासा।
ग्वाल दुखहरनराम करत गंगा तट वासा॥
हाफिज अहमदशाहजी मऊगंज के सन्त सिधि।
होत कृपा हरि की अमित तब पावत कोउ भक्ति निधि॥

सन्त सम्प्रदाय ७४

रामप्रसाद सुशरण रामवन तट हरि ध्याये।
दुर्जनपुर वसि दुर्जनता उर कबहुँ न लाये॥
मिथिला भ्रमि सियलाल शरण हरि भक्ति प्रचारे।
दूधमती तट रामा बाबा बहु जन तारे॥
श्री सुतीक्ष्ण जपि रामसिय कुविष निवारेउ सर्पकर।
परम सरल शुचि सन्त ये राम उपासक रसिक वर॥

सन्त समुदाय ७५

काशी सीताराम शरण जी परमहंश वर।
नित सेवत सिय चरण रामसिय जपत निरन्तर॥
सिय रघुनाथ जु शरण बसेउ संकटमोचन तट।
गुरु चरणन अनुराग रामसिय रामराम रट॥
रघुनाथदास मौनी जपत रामसीय सिंगरौर महँ।
बेणीमाधवदास जी राम जपत अरविन्द जहँ॥

पं० श्रीरामगुलाम जी द्विवेदी मिर्जापुर ७६

श्री हनुमत पद सेइ भाव मानस बहु पाये।
मिर्जापुर बसि सकल ग्रन्थ तुलसीकृत गाये॥
द्वादश काव्यन खोजि शोधि किय जगत प्रकाशा।
सिय रघुवर पद त्यागि भूलि नहिं दूसरि आशा॥
विश्वनाथ वान्धवाधिपति लखि प्रभाव किय चरण रुचि।
रामगुलाम द्विवेदिवर रामायणी महान शुचि॥

श्री छक्कनलालजी ७७

कायथ वंश प्रदीप बड़ी पियरी काशी बसि।
अवगाहेउ नित रामचरित मानस सरयू लसि॥
श्रोता रामगुलाम द्विवेदि कर अति अधिकारी।
तिनते तुलसी काव्य पाइ किय कण्ठ सुखारी॥
पण्डित रामकुमार कहँ मानस दीन्हेउ वृद्ध होइ।
मानेहु छक्कनलाल जो मानस पाठ सुअर्थ सोइ॥

पं० श्री रामकुमारजी शर्मा रामायणी ७८

रामायणी जु आजु लगे कोउ भयउ न ऐसो।
भे काशी महँ रामकुमार सुपण्डित जैसो॥
परम सन्त द्विज वृत्ति संतोषहि हिय अति धारेउ।
रचि मानस टिप्पणी सुभास्कर वृत्ति सँवारेउ॥
कहेउ कथा अद्भुत परम रामचरित मानस विमल।
रामधाम कहँ गयउ चलि तजि महिमानस यश धवल॥

महामानसी पण्डित श्रीवन्दन पाठक जी ७९

मानस शंकावली जासु मानस लघु ताली।
मानस पर अधिकार, वाटिका मानस माली॥
मानस महँ जो नाम नहीं सो वस्तु न लीन्ह्यो।
लोक वेद कर सब प्रमाण मानसमधि दीन्ह्यो॥
रामनाम जप निष्ठ शुचि संतसेवि विद्वान वर।
बन्दन पाठक मानसी मानस वक्ता अति प्रवर॥

श्री माधवदास जी रामायणी ८०

रामदास जिसु शिष्य परम रामायणी सुख्याता।
बसि प्रमोद वन अवध किये मानस प्रख्याता॥
कहेउ कथा अति सरस भाव मय सन्तन माँही।
मानेउ मानस इष्ट रामसिय तुल्य सदाही॥
अन्त समय काशी निवसि गे हरि धाम प्रशस्त मग।
श्रीमन्माधवदास जी रामायणी प्रसिद्ध जग॥

भक्त प्रवर श्रीरामाजी ८१

नोशे ववुआ रूप रामकर अति मन भावत।
लखि बरात वर रामरूप गुनि चमर ढुरावत॥
रामायण कहँ रामसीय थपि करत विवाहा।
दूलह हरि पद प्रीति जन्म भरि नेम निवाहा॥
निज बित सर्व लुटाइ करि रामचरण नित रंगरये।
छपरा खेढ़ाय रामा भगत कायथ कुल भूषण भये॥

वैष्णव रत्न श्रीरूपकलाजी ८२

मही मुबारक पूर केरि बड़ि भई मुबारक।
शिवव्रति तपसी राम केर सुत भा कुल तारक॥
रामदास श्री हंशकला गुरु श्याम नायिका।
लहि जग में हरि भक्ति मार्ग जन प्रेम दायिका॥
अवधवास करि अवधि भरि रूप गृही हिय धारि यति।
योग ज्ञान वैराग्य निधि रूपकला गम्भीर मति॥

ब्रह्मचारी श्री विन्दुजी ८३

नाग नन्दिनी हिरण्यगर्भ आख्यान सुराजै।
कथामुखी साहित्य गगन जिमि इन्दु विराजै॥
विरह काव्य किय "मंजुकेशि" निज नामधारि करि।
सिय सहचरि बनि रामधाम गे पग विमान धरि॥
साहित्य शास्त्र अरु संतमत मथि किय लेखरु काव्यवर।
ब्रह्मचारी श्री विन्दु जी नित हरि धाम विहार कर॥

महात्मा श्री बालक रामजी विनायक ८४

विप्र जानकी वर जु शरण कर शिष्य उजागर।
संस्कृत अरबी पालि फारसी प्राकृत आगर॥
अंग्रेजी अरु देवनागरी कर बड़ पण्डित।
कवित कहानी ग्रन्थ लिखेउ बहु हरि यश मण्डित॥
साहित्यरु दर्शन सन्तमत भक्ति योग विज्ञान निधि।
श्री श्री बालकरामजी ख्यात विनायक भाव सिधि॥

पं० श्री सूर्यप्रसाद जी ८५

नागर सूर्यप्रसाद विप्र लखनऊ निवासी।
सम्मेलन श्री रामचरित कर सुदृढ़ प्रकाशी॥
परम भागवत सन्त सुमानस मधुरे गावैं।
धरि निषाद गुह स्वांग राम पग धोइ लड़ावैं॥
सुमिरत सीताराम नित भव्य आचरण शुद्ध मन।
अवध बास बहु काल करि राम धाम गे त्यागि तन॥

श्री वेणीमाधव लाल जी (पौराणिक) ८६

लोकनाथ पुर निवसि जियत नित हरि रँग राँच्यो।
सव:पुराण पढि कियो तीर्थ भारत नहिं बाँच्यो॥
प्रबल विपक्षिन सों रण किय पर कबहुँ न हारयो।
मानस गाइ सप्रेम सन्त पद रज शिर धारयो॥
ज्येष्ठ भवानि सहाय जू जासु पुत्र हरि भक्त भल।
वेणीमाधव लाल जू पौराणिक ज्योतिषि प्रबल॥

श्रीभवानीसहाय लालजी (रामायणी) ८७

लोकनाथपुर ग्राम जिला सुल्तापुर ठयऊ।
संत संग करि व्यसन चरस गाँजहु कर लयऊ॥
रामायण कह प्रीति नीतिरत भक्त सुभारी।
ज्येष्ठ गजाधर पुत्र परम हरिजन ब्रह्मचारी॥
करि अध्यापकि वास गृह सबै साधु कहि मान दिय।
श्रीमद्भवानी सहाय जू रामचरण अश्रयण लिय॥

पं० श्री रामबालकदास जी रामायणी ८८

नित तुलसी कृत काव्य अवध बसि कीन्ह प्रकाशा।
सुपढ़ि अनेकन शिष्य भये मानस शुचि व्यासा॥
वाणी भव्य गँभीर रूप दर्शक मन कर्षै।
कहत कथा शुचि राम चरित जनु अमृत बर्षै॥
बड़ी छावनी अवध बसि रामायणी प्रसिद्ध जग।
बालकराम सुदास जू किय पयान साकेत मग॥

परमहंस श्रीराममंगलदास जी ८९

नित ब्रह्मानँद सुरा छके जनु रहत मगन मन।
भावुक परम उदार दुखिन सेवहिं दे धन तन॥
सुरति योग अभ्यास निरत साधकन सिखावत।
वैद्यक कला प्रवीण विविध उपचार करावत॥
तुलसी रामानन्द पद परम प्रीति सीता रमन।
श्री श्री मंगलदास जी अवध बसत गोकुल भवन॥

प्रोफेसर श्रीरामदासजी गौड़ ९०

रामदास जी गौड़ ख्यात प्रोफेसर काशी।
भाव वृद्ध वात्सल्य सेइ सियराम सुपासी॥
वैज्ञानिक अति प्रबल एम० ए० साहित्याचारज।
रचे अनेकन ग्रन्थ मानि तुलसिहिं आचारज॥
संस्कृत प्राकृत पालि हू फार्सी अर्बी विज्ञवर।
रामधाम गे धरि अमर हिन्दुत्व आदि निजकृति अमर॥

स्वामी श्रीअवधकिशोरदासजी ९१

मध्य जनकपुर आश्रम रामानन्द बनाये।
राम भक्ति मय ग्रन्थ अनेकन लिखे छपाये॥
वक्ता परम गंभीर लेखनी महँ बल भारी।
श्रीहरि गुरुपद प्रीति नीतिरत रहत सुखारी॥
निज गुरु मथुरा दासजी सीतारामिय चरणवर।
अवध किशोर सुदास हरि भक्ति प्रचारक विज्ञवर॥

स्वामी श्रीदेवेन्द्राचार्यजी ९२

रामानन्दाचार्य चरण सेवक मति नागर।
प्रगति तत्व श्रीसम्प्रदाय पुस्तिका उजागर॥
अवधवास कछु काल कीन्ह कुछ बसे प्रयागे।
राम सुरच्छादास शास्त्र पढ़ि नित संग लागे॥
धार्मिक ग्रन्थ विचारि नित हिय ध्यावत सिय राम छवि।
श्रीदेवेन्द्राचार्य अति सरस हृदय विद्वान कवि॥

पं० श्रीजानकीशरणजी स्नेहलता (रामायणी) ९३

शिष्य गोमती दास केर सखिभावहिं ठानेउ।
रामायणी सुख्यात आशु कवि सब लखि मानेउ॥
विरहानल नव भक्तमाल पद्यावलि गाये।
मानस पर मार्तण्डरु दीपर्क चक्षु बनाये॥
ऋत भाषी निर्भीकचित सियदासी ततसुख लहेउ।
नेहलता के नेह बस श्री सिय सियपिय नितरहेउ॥

परमहंस श्रीरणछोड़दासजी, चित्रकूट ९४

धारि परम हंसी सुवृत्ति नित सन्तहिं सेवैं।
चित्रकूट जानकी कुण्ड तपकरि सुख लेवैं॥
राम यज्ञ अति बृहद राजकोटहिं करवाये।
मोहमयिहिं थपि विद्यालय शिशु बहुत पढ़ाये॥
दीन दुखिन दुख लखि हरत नेत्र यज्ञ चित लगन रह।
रणछोड़दास स्वामी परम हंस हंसवत ज्ञान गह॥

श्री बालमुकुन्ददासजी तपस्वी

तपसी बालमुकुन्ददास अति सिद्ध सुहाये।
चाँपा डोंगा घाट राम सुमिरन मन लाये।
तीर्थ यज्ञ प्रति वर्ष पुरी तण्डुल पहुंचावैं।
सन्तन गऊ जिमाय आपु नित पाछे खावैं॥
सभा रामलीला सुहित रुचिर धर्म शाला रचे।
बसि त्रिलासपुर जिला महँ मायिक विलास से अति बचे॥

स्वामी श्रीराम रत्नदासजी करह। ९६

कथा सुनत हरिदर्श पाय हरि शरणहिं आए।
राम रत्न शुभ नाम राम धरि हृदय सुहाये॥
करह विकट वन बीच वर्ष नव अति तप कीन्ह्यो।
हृदय दयामय सरस सन्त सेवन मन दीन्ह्यो॥
कीर्तन अखण्ड श्रुतिमास थपि सकल जनन आनंद दियो।
बड़भागी जन पहुँचिके दृग श्रुति मन वच सुख लियो॥

बाबा श्रीरामदासजी रामायणी (ग्वालियर) ९७

राम भक्ति मर्मज्ञ राम यश अति बड़ भागी।
मृदुभाषी विनयी दयालु हरिपद अनुरागी॥
गुरु आज्ञा लहि चारि मास जब यज्ञ करायो।
विष्णु यज्ञ रचि सवा लक्ष जब अन्न खिवायो॥
भक्त समागम जोरि नित किर्तन कराय हरि यश कहत।
रामदास सिय राम की भक्ति जगत बांटत रहत॥

कोष्ठावाले बाबा स्वामी श्रीरामकिशोरशरणजी हनुमत, निवास ९८

बहु शृङ्गार रसकेर ग्रन्थ छपवाइ सुबाँटे।
मायिकदल जनु जीति मदादिक सैनिक डाँटे॥
शुचि शृङ्गार रुचिभाव सदा सियपति पति मानत।
सियवर रहस विलास मध्य निज वास सु ठानत॥
हनुमत निवास महँ जासु मुख राम चरित अमृत झरत।
राम किशोर सुशरण कर सन्त सकल आदर करत॥

पं० श्रीराम किशोर शरणजी शुक्ल ९९

त्यागि वकालत निज उनाव सों अवधहिं आये।
रामवल्लभाशरण चरण मह वास बनाये॥
श्रीनाभा कृत भक्तमाल अरु मानस गावत।
राम भजन नित करत सन्त पथ चित्त लगावत॥
बसेउ जानकी घाट नित कथा सुनेउ हरिगुरु भजेउ।
राम किशोर सु शरण जू शुक्ल अवध सेवन सजेउ॥

पं० श्री श्रीकान्तशरणजी 'रामायणी' १००

पण्डित श्री श्रीकान्तशरण अति सिय प्रिय प्रेमी।
सम्प्रदाय तत्वज्ञ नाम जापक दृढ़ नेमी॥
श्री तुलसीकृत ग्रन्थन कर शुचि भाव बखानैं।
अष्टयाम पद वद्ध रचे भावुक सन्मानैं॥
सिद्धान्त तिलकटीका रुचिर सुमिरनि विवरण अति छजत
अवध सुसद्गुरु कुटी रचि वास करत हरिपद भजत॥

श्री प्रेमदासजी रामायणी १०१

परम भव्य शुचि वेष तिलक श्री अति द्युतिकारी।
बसि बहु दिन श्री अवध पढ़े तुलसी कृत सारी॥
बड़ बड़ नगरन जाइ राम यश सबहिं सुनावत।
पूर्वापर सों शोधि सकल तुलसी कृत गावत॥
व्यास पनो अरु भजन कर योग सुफल हिय गहि रहत।
प्रेमदास रामायणी तुलसीकृत सुन्दर कहत॥

पं० श्री ब्रजभूषण शर्मा रामायणी १०२

श्री ब्रजभूषण विप्र जौनपुर जिला निवासी।
गहि रामानुज शरण सुमानस कथा विकाशी॥
कथाकार जग अति प्रसिद्ध श्री भूषण अग्रज।
गहि श्री वैष्णव धर्म कहत मानस हरिपद भज॥
धर्म गृहस्थाश्रम रुचिर पालत तिय सुत सहित जग।
कालक्षेप शुचि जगकरत श्रीतुलसीकृत कथा मग॥

पं० श्री राघववल्लभाशरणजी रामायणी १०३

घाट भोंसला नृपति रचे काशी गंगा पर।
द्विज गंगापरसाद निवसि तहँ सेये सियवर॥
राम लक्ष्मण भरत शत्रुहन धरि सुत नामा।
मानस प्रवचन नाम रटन कछु और न कामा॥
भजेहु रामसिय कृपालहि कवहुँ न कलि कृत तप तये।
श्रीयुत राघववल्लभाशरण रामपुर चलि गये॥

श्री रसिक विहारी (महांत श्रीजानकी प्रसाद) जी १०४

रामसखा अति विमल कनक गृह रहे महन्ता।
बालपने मरि जिये विविध खल कहँ किय सन्ता॥
लहि मारुति आदेश रचेउ शुचि राम रसायन।
और काव्य बहु रचे रामसिय भक्ति परायन॥
सिद्ध हस्त कवि सन्त शुचि रामनाम जप ध्यान रत।
जानकी प्रसाद रसिकेश जू रसिक विहारी कवि भगत।

श्री सुदर्शनसिंह जी (चक्र) १०५

रघुवंशी क्षत्री सुधीर मन श्री हरि भक्ती।
लिखत कहानी भक्ति परक जग नहिं अनुरक्ती॥
शुचि स्वभाव अध्ययनशील अति शान्त सरल मन।
स्वारथ लागि न झुकत रखत हिय कृष्ण परम धन॥
सम्पादक लेखक विमल मन तन विलसत सिंह श्री।
कृष्ण सखा अति विमल हिय चक्रसुदर्शन सिंह जी॥

बाबू श्री शारदा प्रसाद जी मानस संघ १०६

मानस संघ सुथापि करत मानस परचारा।
मानस भाव प्रचार करत मानस मणि द्वारा॥
सतना गृह तिय त्यागि राम वन रुचिर बनाये।
मानस मारुति भवन मानसर रचे सुहाये॥
परमोद्योगी परिश्रमी मानस हित लयलीन मन।
शारदाप्रसाद हरिभक्त मन वाक्सूक्ष्म सुस्थूल तन॥

स्वामी श्री रामसुखदास जी रामसनेही १०७

रामसनेही पन्थ माहिं शुचि रामसनेही।
परम सन्त अति सरल शुद्ध सब मन वच देही॥
गीतोपनिषत्पुराण आदि समुझावत ढंग से।
मोह ग्रन्थि सुनि छुटत रंगत मन मोहन रंग से॥
धारि मधुकरी वृत्ति भज श्रीहरि निशिदिन मगन मन।
दास राम सुख प्रेममय ज्ञानी भक्त उदार जन॥

श्री हरिबाबा जी १०८

गवाँ बदायूँ बाँधि बाँध सर्वाहिन सुख दीन्हे।
निशिदिन सुमिरत नाम हृदय हरि रूपहिं लीन्हे॥
महारास दिखराय जिन्है हरि पेड़ा दीन्हे।
उन गुरु चरणन बैठि नाम निष्ठा रुचि लीन्हे॥
रूप चरित हरि निष्ठ बड़ प्रतिक्षण हरि नामहिं जपत।
हरि बाबा स्वतः प्रकाश जी बहुत जनन पावन करत।

श्री उड़िया बाबा जी १०९

विभव पूर्ण तजि दीन्ह महान्ती काम रूपकी।
दर्शरु रोटी छाँछ लहे ब्रजचन्द्र भूपकी॥
बहुदिन महि भ्रमि भक्ति ज्ञान लोगन उपदेशे।
करि वृन्दावन कुण्ड दवानल वास सुदेशे॥
श्री हरि लीला कथा नित होत बसत बहु सन्त थे।
सन्यासिन महँ मुकुटमणि उड़िया स्वामि लसन्त थे॥

पन्नावाले बाबा श्री रामविजयशरण (शंकरदास) जी ११०

बालक सम अति सरल तपस्वी पन्नावासी।
रामसखे कुल रीति राम सँग सख्य सुपासी॥
राजगुरू पन केर मान मन तनिक न राखत।
सोवत काहु न लख्यौ प्रगट हनुमत सों भाषत॥
अति संकीर्ण सुगुफा महँ बैठि जपत हरि रातदिन।
बाबा शंकरदास जी व्यर्थ न वितवत एक छिन॥

श्री जयदयाल गोयन्दकाजी १११

परम भक्त विख्यात निरन्तर गीता गावैं।
शास्त्र गृहस्थ सुवणिक सरिस आचरण बनावैं॥
लेखक भजन गँभीर चित्त सब जन सनमानैं।
निष्ठ तत्व अद्वैत कृष्णपद रुचि अति ठानैं॥
सतसंगति सुख लाभ द हरिपद भजहिं भजावहीं।
जय दयाल गोयन्दका कृष्ण चरित नित गावहीं॥

श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार ११२

बालपने भूकम्प भवन तर जाहि बचाये।
युवाधरे हरि बाँह रेलतर कटन न पाये॥
सम्पादक कल्याण यशस्वी लेखक ज्ञानी।
परम भागवत कृष्ण तत्व वक्ता सु प्रमानी॥
शान्त दान्त गम्भीर शुचि गृही वेष पर विरत मन।
श्री हनुमान प्रसाद जू पोद्दार सँच कृष्ण धन॥

सम्प्रदाय ११३

मानस शंका मोचनादि बहु ग्रन्थ बनायो।
भक्तमाल कर तिलक लिख्यो अति सरस सुहायो॥
परम सन्त जयरामदास जी बसि प्रमोद वन।
राम भजन करि राम धाम गे होइ प्रसन्न मन॥
लिखि मानस संजीवनी ज्वालाप्रसाद द्विज सदयवर।
रचि मानस परचारिका जानकि दास भये अमर॥

नंगे परमहंस श्रीअवधविहारीदास जी ११४

अवधविहारीदास परम रामायण प्रेमी।
बोल प्रचण्ड उद्दण्ड नास्तिकन कहँ दुख देनी॥
नास्तिक वादहिं खण्डि सुमानस टीका कीन्हे।
सोधि उचित मत उतर सकल प्रति पक्षिन दीन्हे॥
दिशा वास हरि आस चित बाँध त्रिवेणी तट बसे।
रामायण अरु भक्ति हरि बहु प्रचारि हरिपद लसे॥

श्रीजयरामदासजी "दीन" रामायणी" ११५

बृटिश अनुचरी त्यागि राम अनुचर भे आई।
नागा बाबा पदन बैठि शुचि मानस पाई॥
मानस शंका समाधान कल्याण प्रकाशे।
रचि मानस सुरहस्य बहुत अज्ञान विनासे॥
नम्र सुवक्ता देखि जनु राम आपने धाम लिय।
जयरामदासजी दीन शुचि मानस भाव प्रचार किय॥

श्रीरघुवीरदासजी (चित्रकूटी) ११६

रामायणी सुख्यात कथा अति सरस बखानी।
श्रीतुलसी कृत एक निष्ठ श्रुतिवत नित मानी॥
सहसन सन्तन सँग राखि विचरेउ सबधामा।
बहुत नास्तिकन कीन्ह आस्तिक दै हरिनामा॥
धर्म प्रचारक सुभट अति जगत चित्रकूटी विदित।
रघुवीर दास अति सरस मति जासु भजन बल अति उदित

रायसाहब श्रीराजेन्द्रप्रसाद जी ११७

मायिक द्वन्दहिं जीति रामसिय भजेहु निरन्तर।

लीला वपु पद प्रीति परम बाहर अभ्यन्तर ॥
आप तथा सरकार त्यागि तुम कहेउ न काहू।
परम त्याग कर रीति करेउ भरि जन्म निवाहू ॥
मृदुप्रिय भाषी नम्र मन दर्श राम सिय दृग लहेउ।
श्रीराजेन्द्र प्रसादजी राय रत्न अनुपम रहेउ ॥

सीतारामीय श्रीब्रजेन्द्र प्रसाद जी ११८

वैष्णव धर्म विचारि त्यागि सवजजि पद दीन्ह्यो।
अवध वास करि सन्त चरण वन्दन नित कीन्ह्यो ॥
शुचि आचार विचार नियम दृढ़ मन्त्र जापकर।
रूपकला पद पदुम सेइ पथ लहेहु भक्ति कर ॥
रामवल्लभाशरण के पद मकरंद मलिन्द होइ।
भक्त ब्रजेन्द्र प्रसाद जू श्रीसीतारामीय सोइ ॥

वेदान्त शिरोमणि श्रीरामानुजाचार्यजी ११९

परम सरल शुचि सन्त विज्ञ वेदान्त शिरोमणि।
मन्दिर श्रीहरि देव देवकर सब महन्त भनि ॥
सदाचार की सीम तत्व शरणागति भाषत।
वक्ता परम उदार हृदय कछु कपट न राखत ॥
परम धर्म भाषत लिखत सुनि पढ़ि भक्ति दृढ़ाइ मन।
श्रीकमलापति पद लसत रामानुज आचार्य मन ॥

सम्प्रदाय १२०

श्रीपरांकुशाचार्य कुँज गलते मथुरामहँ।
वृन्दावन रघुनाथ दास श्रीरँग मन्दिर जहँ ॥
वेदान्त विभूषण चक्रपाणि आचार्य सुराज।

धनी राम वेदान्त धनी अति विज्ञ विराजैं ॥
श्रीधरणीधर विदुष अति हरि गुरु चरणन नित नये।
वृन्दावनवासी परम वैष्णव शुचि विद्वान ये ॥

पं० श्रीअमोलकरामजी शास्त्री १२१

परम सात्विकी वृत्ति सदागृह रहि हरि ध्याये।
भाष्य उपनिषद् रचेऽध्यास गिरि बज्र सुहाये ॥
आत्म परत्वादर्श ग्रन्थ औरहु बहु कीन्हे।
लोभ पिसाचिहिं मारि चित्त हरिपद नित दीन्हे ॥
वेदान्त न्याय साहित्य के परम प्रबल विद्वान भे।
शास्त्रि अमोलकराम द्विज हरि दासी मति मान भे ॥

पण्डित राज स्वामी श्रीसर्यू दासजी महाराज १२२

अप्रति भट विद्वान सुपाणिनि शब्द शास्त्रकर।
निरखि वेष नहिं जानि सकत कोउ तिनहिं विज्ञवर ॥
परम सरल शुचि सद्विचार अति सरस पढ़ावै।
सीढ़ीपुर मन्दिरैं शास्त्र कण्ठाग्र सुहावैं ॥
थपे पाठशाला बहुत शिष्य सुभट विद्वान भनि।
पण्डित सर्यू दासजी विद्वज्जन महँ मुकुट मनि ॥

भक्त श्रीरामशरणदासजी पिलखुआ (मेरठ) १२३

बसत पिलखुआ ग्राम जाइ सतसँग नितकरही।
सेइ सन्त गृह आनि परम हित सिख उर धरहीं ॥
सन्त चरित उपदेश सुलिखि सब जग महँ बाँटत।
लइ हरिनाम सप्रेम पाय पवल्ल करि पाटत ॥
परम धर्म हरि भजन रत गृही धर्म आचार मन।

राम शरण दासहिं कहत परम भक्त सब सन्तजन ॥

महन्थ श्रीअवधविहारीदासजी, बड़ी कुटिया १२४

परम रसिक श्रीरामचरण अनुराग अगाधू ।
अति शुचि सरल सुभाव निरन्तर सेवत साधू ॥
दियउ न कबहुँ जवाब माँगि सन्तन मुख डारेउ ।
नियम धर्म आचार पालि सुविचार प्रचारेउ ॥
अवध विहारीदासजी वन प्रमोद कुटिया बड़ी ।
सरस हृदय सन्तत मगन सन्त सेव रुचि हिय गड़ी ॥

महन्थ श्रीरामपूजाजी दिव्य कला कुँज १२५

रूप कला पद शिष्य परम पूजन अनुरागी ।
ताते पूजा राम कहत सब जन बड़भागी ॥
दिव्य कला इक कुञ्ज परम सुन्दर निर्मायो ।
सखिन सहित श्रीसीयराम तहँपर पधरायो ॥
प्रेमी सरल सुभाव श्री दिव्य कला अति शुभग गुन ।
हरि सेवन कर भाव युत दिव्य भाव तनमन वचन ॥

वेदान्ती श्रीरामपदारथ दासजी महाराज १२६

रामवल्लभाशरण चरण की लहि शरणागति ।
न्यायाचार्यरु उभय मिमांसा सकलशास्त्र गति ॥
सरल सुभाव सुमधुर बोल सिय राम भजत नित ।
शुचि मन्दिर रचि राम सीय थपि उचित व्यये वित ॥
सन्त सेव विधिवत करत नित जग मान महानकर ।
रामपदारथदासजू शुचि महान्त विद्वान वर ॥

पं० श्री अखिलेश्वर दासजी १२७

ज्योतिष अरु वेदान्त न्याय महँ परम प्रवीना ।
सेवत सीता राम चरण बनि बाल नवीना ॥
रामवल्लभाशरण चरण लहि जन पद पाये ।
अति उज्वल शृँगार भाव महँ चित्त लगाये ॥
मणीराम की छावनी में बहु काल कथा करे ।
श्री अखिलेश्वर दासजू अवध वास महँ रुचिधरे ॥

सम्प्रदाय १२८

वृन्दावन बंशीवट तट शुचिरामा नन्दी ।
सन्त सुदामादास सन्त पद प्रीति अनन्दी ॥
चित्रकूट बुधरामदास जी सन्त सेव करि ।
तपसी सीता कुण्ड अवध जन सेव उमंग भरि ॥
राम सुभूषण दासजी मणि पर्वत तट सेव जन ।
झोरी फिराय सेवत भगत तिन सन्तन पद सुमिरु मन ॥

स्वामी श्रीमाधवदासजी भक्तमाली १२९

वृन्दावन दृढ़ वास लली अरु लालहिं सेवैं ।
शुचि गंभीर शृङ्गार भाव अधिकारिहिं देवैं ॥
भक्तनाम मालिका औरहू ग्रन्थ बनाये ।
वन विहार बसि त्यागि जु टोपी कुँजहिं आए ॥
मन वाणी दोउ मृदु सरस अली माधुरी भक्ति वित ।
श्रीमन्माधवदास जन कवि सुभक्तमाली विदित ॥

बाबा श्री केशवदास जी भक्तमाली १३०

क्षण भंगुर चित वृत्ति परम रुचि कथा कहन महँ ।

भगवद्धर्म प्रचार करत शुचि शिष्य लहत जहँ ॥
भक्तमाल कर भाष्य लिखत करि रुचि मनमाहीं ।
दोहन महँ लिखि अर्थपंच वितरते सदाहीं ॥
शिष्य जनार्दन दासकर त्यागी उदार रुचि भजन मन ।
भक्तमाल शुचि कथा कह केशवदास सुभव्य तन ॥

महन्थ श्री कौशलकिशोरदास जी १३१

बड़ी छावनी विदित अवध बहु सन्त रहाहीं ।
श्री तुलसी कृत कथा सुनन जहँ बहुजन जाहीं ॥
विद्यासों अति प्रेम पढ़त पद पाइ महत नित ।
निज आचारज धर्म निवाहत सन्त सुहृद चित ॥
सन्त गऊ सेवन करत नियम अटल आचार बल ।
शिष्य सुईश्वरदासकर कौशलकिशोर शुचिदास भल ॥

श्री दीनबन्धुदासजी नासिक १३२

गौर कृष्ण चैतन्य चरण महँ प्रीति निभावत ।
हरि कीर्तन नित करत और भक्तन करवावत ॥
सम्प्रदाय दृढ़ प्रेम परम शुचि ग्रन्थ प्रकाशत ।
राधावर यश गाय सुजन अज्ञान विनाशत ॥
वृन्दावन तजि नाम हरि सुधा सबहिं बाँटत रहत ।
दीनबन्धुकर दास शुचि दीनदया करि यश लहत ॥

स्वामी श्रीरामकृष्णदासजी मौनी १३३

सुख सम्पति परिवार त्यागि श्री अवधहिं आए ।
श्री मौनी पद कृपा रामसिय जनरुचि पाए ॥

रटत रामसिय राम निरन्तर दृग जल बहहीं ।
कोउकर बहु अपकार तबहुँ कछु नाहि न कहहीं ॥
तनमन पवित्र सुठि सरलचित सन्तवेष महँ भावभल ।
रामकृष्ण शुचिदासवर कलिहिं जितत निज भजनबल ॥

महन्त श्रीकृष्णदासजी अलवर १३४

धनि महन्त श्रीकृष्णदासजी अति बड़ भागी ।
सम्प्रदाय श्री परम सुउन्नति जेहि लव लागी ॥
कामधेनु फिरवाइ सन्त सेवत तन मन से ।
सम्प्रदाय साहित्य प्रकाशत बचे सुधन से ॥
परम सन्त सुठि सुहृद वर सद्विचार आचार मन ।
अलवर अट्टामहँ बसत रामानन्दाचार्य जन ॥

महन्त श्रीरामदासजी उड़िया, हृषीकेश १३५

हृषीकेशपद ध्याइ बसत हृषिकेश सदाहीं ।
मनोकामना सिद्ध हनू थपि मन्दिर माहीं ॥
बसि सुरसरितट सतत सन्त भगवन्तहिं सेवैं ।
सम्प्रदाय दृढ़ प्रेम नेम खल त्याग न लेवैं ॥
मद कुचालिसों अति घृणा सदाचारसों प्रीतिमन ।
रामदास उड़िया हृदय राखत हरिपद परम धन ॥

कविवर श्रीराघवदासजी, वृन्दावन १३६

भव्य भक्ति भरि भाव भक्त भगवत यश भाषैं ।
सतत सख्य रस सिन्धु सुधा सीतापति चाखैं ॥
कविता कला निधान कहत सब रस उपजावैं ।

रामकृष्ण गुणभक्त गाइ अमृत वर्षाव ॥
श्री रामानन्दी प्रवल शुचि टेक सम्प्रदायी गहत ।
कविवर राघवदास श्री राम मिताई सुख लहत ॥

श्री अञ्जनीनन्दन शरण जी १३७

त्यागि वकालत सन्त शीत परसादहिं पावत ।
अवधवास नित करत रामसियरटि छवि ध्यावत ॥
रचि मानस पीयूष कथकड़ी बहुत बनाये ।
विनय पियूषहु लिखित सन्त यश चित्त लगाये ॥
श्री तुलसीकृत काव्य अरु भक्तमालमहँ परम रुचि ।
श्रीअंजनिनन्दनशरण रूपकलाप्रिय शिष्य शुचि ॥

परमहंस श्रीरामगोपालदासजी १३८

श्री वैष्णव मठ खोजि सवन कर परिचय लीन्हें ।
रचि श्री वैष्णववेष परम सुख सन्तन दीन्हें ॥
लेखक सुहृद उदार परम त्यागी अनि ज्ञानी ।
सन्त शील जिसु देखि कुममता दूरि परानी ॥
मणि गिरि मथुरादास के शिष्य शास्त्र महँ रतरहे ।
राम गोपाल सुदास वर परम हंस पदवी लहे ॥

गोस्वामी श्री विन्दुजी (वृन्दावन) १३९

अखिल भारतिय-राम-चरित-मानस सम्मेलन ।
थापि सतत हरि यश प्रचारि कछु राष्ट्रवाद मन ॥
कवित गान पद सरस मनहुँ शतपद ते धाये ।
मानस वक्ता ख्यात भाव नव नव उपजाये ॥

नाट्यकार अति कुशल गुरु रामसखा सीताशरन ।
वसि वृन्दावन विन्दु कवि रामधाम कीन्हे गमन ॥
अवध वास सुखरास उपसक श्री "राघव" के ।
फिर वृन्दावन वास कहैं कछु गुण यादव के ॥
स्वर संगीत प्रवीन सुने गन्धव मन हरषत ।
कविता भाव नवीन सुने वुध जन आकर्षत ॥
ज्यौं रामचरित मुखसे कढत अमृत वाणी से झरा ।
इन्दु बराबरि क्या करै जब सिन्धु विन्दु में है भरा ॥

श्रीजानकीदासजी जयपुरिया १४०

ससुत सुसात्विक वृत्ति सहानुज हरिजन सेई ।
मन्दिर बाग सुविरचि राम जपि हिय सुख लेई ॥
रामवल्लभाशरण चरण दृढ़ शिष्य उपासी ।
सन्त पत्र सद्ग्रन्थ अनेकन सुखद प्रकाशी ॥
रामानन्द सुसम्प्रदाय कर शुचि सेवक गम्भीररस ।
वंशीधर तजि जयपुरहिं जानकिदास सुअवधवस ॥

श्रीकरपात्री मौनी श्रीअवधविहारीशरणजी जनकपुर १४१

मिथिला बसि नृपसिखइ मलेच्छन दूरि भगाये ।
रचि परिकरमा मार्ग मध्यसे मरस्य हटाये ॥
सम्मेलन हरिनाम करइ कामद यश लीन्हे ।
रामसखे कुल ख्यात राम लघु वन्धु सुचीन्हे ॥
कर माला कोपीन कटि कदलिन कबहूँ वस्त्र धरि ।
मौनी कर पात्री विदित अवधविहारीशरण हरि ॥

पं० श्रीगंगाधर पाध्ये टाटम्बरी ब्रह्मचारी, हनुमान गढ़ी १४२

विविध वाद्य अरु गान कला महँ परम विशारद।
करि मधुकरि हरि भजत अवध विचरत जनु नारद॥
टाटम्बरी सुख्यात ब्रह्मचारी सब जानैं।
बसत गढी हनुमान सन्त सबही सन्मानैं॥
तजि प्रपञ्च हरिपद भजत शास्त्रवाद प्रिय विमल मन।
गंगाधर पाध्ये परम मानस प्रिय महाराष्ट्र जन॥

समुदाय १४३

झूसी बालमुकुन्ददास नित सन्तन सेवैं।
बलुआघाट सुरामदेवदासहु यश लेवैं॥
श्री वैष्णव शुचि धर्म निरत तहँ भगवत दासा।
सेवत सन्तन कहत रामयश हरिगुण आशा॥
जाहिर दारागंज श्रीबलदेवदास शुचि संतजन।
पुरी प्रयाग ये सन्तजन सेवत सदा उदारमन॥

डा० श्रीरामस्वरूपदासजी योगिराज (गोवत्स) १४४

रामस्वरूप सुदास कवी गोवत्स कहावैं।
सम्प्रदाय श्री वृद्धि हेतु मनबुद्धि लड़ावैं॥
हिन्दीसंस्कृत ज्ञान इंगलिसहु बी. ए. तक पढ़ि।
मधुरवेदना काव्य प्रगति जनु निज अनुभव मढ़ि॥
योगतत्त्व ज्ञाता परम मानीभक्त सुसुहृद बर।
थापि नवयुवक दल करत सेवन सुजन चढ़ाव पर॥

स्वामी अखण्डानन्द सरस्वती १४५

श्री शांकर वेदान्त न्याय साहित्य सुपण्डित।
द्विज सान्तनुविहारि द्विवेदी हरि रुचि मण्डित॥
कृष्ण भक्तिरस सरस प्रथम लिख लेख सुहावन।
सन्यासी होइ बसत अधिक वृन्दावन पावन॥
कहत भागवत अतिसरस सरल प्रकृति शुचि भव्य तन।
स्वामि अखण्डानन्द कर ज्ञान अखण्ड उदार मन॥

महन्त श्रीश्यामसुन्दरदासजी रामायणी, कड़ा (प्रयाग) १४६

श्रीप्रयाग के निकट कड़ा गंगा तट राजै।
तहँ पर कुबरी घाट सुभग हरि धाम बिराजै॥
रचै सुमानस तिलक अर्थ प्रतिपद नौ भाषित।
वेद सुतत्त्व प्रकाशिकाहिं रचि किये प्रकाशित॥
श्रीहरि गुरुपद प्रीति अति साधु आचरण विशद तर।
श्याम सुसुन्दरदासजी राम उपासक विज्ञवर॥

पं० श्री वासुदेवदासजी वेदान्ती मणि पर्वत १४७

पितु सुत तिय घर त्यागि अवध गे वन प्रमोद महँ।
शिष्य सुश्री हरिनामदास कर होइ मणि गिरि रह॥
सुन्दर बहु बलवान अखारे मल्लन जीती।
ब्रज सुदर्शनाचार्य निकट कह कथा सप्रीती॥
पण्डित बड़ वेदान्त कर परम निस्पृही सन्तफुर।
वासुदेव जू दास गे गुरुपद सेइ सुरामपुर॥

पं० श्रीकिशोरदासजी वृन्दावन १४८

अति त्यागी विद्वान सरल मति गति हरिपद महँ।
श्री मिम्बार्काचार्य चरण प्रतिपादित मग गह॥

आचार्यन कृति खोजि प्रकासेउ सम्प्रदाय हित।
जीवन भरि हरिव्यासदेव कुल उन्नत चितवित॥
भजननिष्ठ वक्ता सुहृद लिखे ग्रन्थ बहु भक्ति पथ।
दासकिशोर सुवंशिवट वृन्दावन लिय कृष्ण गथ॥

समुदाय १४९

मुनिवर राघवदास परम प्रति वादि भयंकर।
रामायणि शिवराम दास काशी सुकथा कर॥
पर्वति रामगुलाम दास शुचि मानस आशा।
वेदान्ती अति सन्त अवध श्रीरघुवर दासा॥
रामखेलावन दास भे नैय्यायिक सियराम जन।
मणिगिरि मथुरादास भे सरलसुभाव उदार मन॥

पुजारी श्रीजगदेवशरणजी, कनक भवन १५०

कनक भवन सियराम पूजि रखि सखी भाव हिय।
अवध नगर बसि कबहुँ न पद पदत्राण छत्रालय॥
कथा सुनन अति प्रेम नेम ते छावनि जाते।
उत्सव जन्म विवाह रामकर राज्य कराते॥
युगलमाधुरी कुंज थपि नियम निवाहि सुजन्म भर।
जगदेवशरण सियराम जपि रामधाम नितवासकर॥

श्री प्रियाअलीजी "खाकी बाबा" (मैरीटार बलिया) १५१

मैरीटार सुगाँव जिला बलिया महँ अहई।
तहाँ नारिसुत सहित पूजि हनुमत छांव लहई॥
रामप्रिया शुचिशरण नाम निज प्रिया अली कह।
खाकी बाबा ख्यात रसिकता अरु सिद्धी महँ॥

रूपकला पद कृपाते रहि गृह लहि हनुमत कृपा।
कर जोड़े द्वारे खड़े रहत अनेकन नर नृपा॥

महन्थ श्रीलालदासजी, चित्तौड़गढ़ १५२

प्रेमी परम उदार नियम दृढ़ भजन भाव रति।
शिष्य जानकीदास संग पंडित सु सरल मति॥
मन्दिर भव्य सुविरचि और थपि ग्रन्थागारा।
भुवनसिंह हरिभक्त थान बसि भक्ति प्रचारा॥
श्री वैष्णव शुचि विज्ञवर राम नाम जपमहँ निरत।
लालदास चित्तौड़गढ़ चारिभुजा मन्दिर लसत॥

महन्त श्रीभीष्मदासजी, पुष्कर १५३

श्रीवृन्दावन हंसदास निम्बार्क कोट रचि।
कहेउ कथा नित भक्तमाल हरि भक्ति हृदय सँचि॥
श्रीहरि व्यासाचार्य अनुग शुचि सन्त गम्भीरा।
तिन किय बहु शुचि शिष्य परम निर्मल मतिधीरा॥
हंस दास कर शिष्य शुचि भूत प्रेत जेहिं लखि भजत।
श्रीपुष्कर शुभ क्षेत्रमहँ भीष्मदास हरिजन भजत॥

ब्रह्मचारी श्रीनन्दकुमार शरणजी १५४

श्रीनिम्बार्काचार्य अनुग अति विज्ञ उजागर।
हरि हरिजन कछु सेव करेहु विद्याबुधि आगर॥
महा सभा निम्बार्क केर मंत्री जु प्रधाना।
विद्यालय शुभ थपे अपर किये कार्य महाना॥
वृन्दावन बहु वास करि श्रीगोलोक सुबस बसे।

नन्दकुमार सुशरण जू ब्रह्मचारी बुध महँ लसे ॥

सम्प्रदाय १५५

युगलमाधुरीशरण भक्तमाली अति ज्ञानि ।
निज गुरु श्रीजगदेव शरण पद रुचि अतिमानी ॥
कनक भवन हरिसेव विप्र बलदेव प्रसादा ।
परम निष्ठ कैंकर्य सीय भज युत अह्लादा ॥
जयपुर मन्दिर अवध बस परमानँद भावुक परम ।
राममोहिनीशरणजू मानस वेत्ता कथ धरम ॥

श्रीरामदेवजी, मिरदाहा टोला (पटना) १५६

द्यूतमद्य व्यभिचार परायण पिता पितामह ।
तेहि कुल जन्मि सुरामभक्त भे पलि मातुल महँ ॥
परम सती तिय संग भजत हनुमत रघुवर सिय ।
आलू क्रय मिस अश्व यान चढ़ि हरि दर्शन दिय ॥
मानस प्रेमी अति प्रवल सन्त सेवि निष्कपट मन ।
रामदेवजी मिरदहा टोला पटना राम जन ॥

श्रीरामदास कहार १५७

स्वर्णा भूषण लोभ पुरोहित जेहि सुत मारेउ ।
सत्यदेव मुनि कथा लाश सुत टकि घर धारेउ ॥
द्विज कुलगोत जिंवाइ सतिय मन जहर खान गुनि ।
सन्त रूप हरि प्रगटि जिवायो तासु पुत्र पुनि ॥
पटना से दच्छिण सुवसि कोस अठारह महँ लियो ।
रामदास अति धीर मति कुल कहार पावन कियो ॥

श्रीरामरत्नदासजी तरुण (जयपुर) १५८

मोहमयी मधि निवसि मोह माया जग त्यागी ।
कलाकार अति सिद्धहस्त हरि गुरु अनुरागी ॥
दासान्तहि शुचि रामरत्न शुभ नाम गुरू दिय ।
तरुण हृदय नित जानि नाम निज तरुण ख्यात किय ॥
शब्दचित्र सुन्दर लिखत रंग चित्र जन सुजस मन ।
तरुण निष्ठ हरिभक्ति पथ सदाचार रत विमल मन ॥

स्वामी श्रीरामदासाचार्य पिंडोरी धाम गुरदासपुर (पंजाब) १५९

राममंत्र जप निरत विज्ञवर विद्या व्यसनी ।
सेवत सन्तन स्वपर भेदगत धर्म सुकसनी ॥
विविध सभा महँ सभापती बनि धर्म प्रचारैं ।
रामानन्दाचार्य चरण पथ तनमन वारैं ॥
षड्दर्शन साधु महासभा थापे धर्म समाज हीं ।
श्रीरामदास आचार्य वर पिंड़ोरी महँ राज हीं ॥

परमहंस श्रीबाबा राघवदासजी (बरहज) १६०

पैकौली श्री पयोहारि जी के शुभ वंशहिं ।
बरहज सरयू निकट राम मन्दिर अवंतसहिं ॥
थपि रामायण समिति करत मानस सुप्रचारा ।
भारतहित गौरांगजेल गवने बहु बारा ॥
जन सेवक नेता प्रवल नित राखहु हरि आस जी ।
परमहंश जग विदित अति बाबा राघव दासजी ॥

मानस राजहंस पं० श्रीविजयानन्दजी त्रिपाठी (भदैनी काशी) १६१

यद्यपि काशी मध्य बहुत मानसी कहावत ।

निजरुचि कलाविकाशि सबै नित गला बजावत ॥
परम मानसी कलाकार श्रुति साहित पण्डित ।
जापक श्रीशिव मंत्र रामपद प्रीति अखण्डित ॥
परम प्रतिष्ठा लहेउ तऊ कछु अभिमान न उर धरेउ ।
विजयानन्द त्रिपाठि लखि राम भक्त उर सुख भरेउ ॥

व्याकरण वेदान्ताचार्य स्वामी श्रीजानकीदासजी (जगद्गुरु) १६२

शब्द शास्त्र अति निपुण न्याय वेदान्त थहायो ।
राय गढहिं की तजि महन्थि श्रीअवधहिं आयो ॥
करत शास्त्र शुचि दान पढ़न हित जो कोउ जावैं ।
तन मन बल भरिपूर गढी थी अवध रहावैं ॥
वक्तापरम प्रचण्डशुचि लिखत जगद्गुरु नाम धरि ।
स्वामि जानकीदासजी अवध बसे पग राम परि ॥

स्वामी श्रीरामचरण शरणजी शास्त्री (विहारी) १६३

वैष्णव वीर उदार विमल उर अति उत्साही ।
रामनरायण चरण शरण शिष श्रीपथ राही ॥
रामचरण शरणान्त नामवर विज्ञ विराजैं ।
सम्प्रदाय हित हेत सतत बहु साजत साजैं ॥
विविध शास्त्र अभ्यस्त किय लेखकला व्याख्यान पटु ।
बसि बिहार जागृत करत शुचि वैष्णव विद्वान भट ॥

ब्रह्मचारी श्रीसत्यव्रतजी (बरइज) १६४

बाबा राघवदास चरण शुचि शिष्य सरल अति ।
धर्मप्रचारक सुभट रामसिय भजत विमल मति ॥

मध्य दिवस तक मौनधारि नित श्रीहरि भजहीं ।
ग्रामोद्योग प्रचार हेत सब साधन सजहीं ॥
संस्कृत हिन्दी इंगलिश थपि स्कूल जगहित करत ।
सत्य व्रतहिं नित रत रहेउ ब्रह्मचारि श्री सत्यव्रत ॥

पं० श्रीरमाकान्त त्रिपाठी एम० ए० १६५

डबलेमे पढ़ि देववाणि बहु शास्त्र थहाई ।
रूपकला पद कृपा राम जपि शुचि रुचि पाई ॥
रामवल्लभाशरण चरण गहि राममंत्र लै ।
विविध नरन सुख देत राम जपवाइ द्रव्य दै ॥
रूपकला कुंजहि अवध थपि अखण्ड कीर्तन लसेउ ।
रमाकान्त तिरपाठि जी डालमिया नगरहिं बसेउ ॥

महन्त श्रीबाँकेरामजी मिश्र, तुलसीघाट काशी १६६

तुलसी गादी कर महन्त शुचि सरल विमल मति ।
विजयानन्द सुगुरू पाइ मानस भावहिं अति ॥
संकटमोचन हनूमान पद प्रीति परम शुचि ।
रामजनन लखि लहि अनन्द प्रभु पद सेवन रुचि ॥
श्री तुलसी पद पादुका नाव खण्ड नित पूजहीं ।
पण्डित बांकेरामजी हनुमत भजेउ न दूजहीं ॥

महन्त श्री देवदासजी, डाकोर १६७

धनुधारी पद पूजि अवध श्री सीय कृपालहि ।
लहि श्रीकामद दरस शास्त्र सिद्धान्त रुचिर गहि ॥
भक्तिलता पत्रिका साधु सर्वस्व प्रकाशे ।

लिखेहु बहुमुखी लेख धर्म साहित्य विकाशे ॥
वक्ता प्रखर गंभीर श्री सम्प्रदाय दृढ़ प्रेम रुचि ।
देवदास डाकोर बस विन्द्राचार्य सुवंश शुचि ॥

स्वामी श्रीरामदेवजी, जागेश्वर (कानपुर) १६८

सन्यासी सुविरक्त शब्द साहित्य मँझायो ।
श्री शांकर वेदान्त केर सब अंग थहायो ॥
शुचि उपदेश गंभीर वाक् सुस्पष्ट सुहावैं ।
कथा भागवत सरस रुचिर तुलसी कृत गावैं ॥
परम तितिच्छू त्यागवड़ सम दमादि साधत सुयश ।
श्रीजागेश्वर कानपुर रामदेव स्वामी सुबस ॥

परम तपस्वी परमहंस श्रीरामाधारदासजी १६९

बारावंकी प्रान्तमांहि बहलीमपूर इक ।
त्यागी रामाधारदास तप कीन्हे तहँ टिक ॥
इक आसन पर बैठि वर्ष छत्तिस तक रहेऊ ।
गये अंगसटि भूमि संग जनु विधि निर्मयऊ ॥
कृतयुग ऋषिजाजुलि यथा यहि कलियुग किय कठिन तप ।
विन्द्राचार्य सुवंश महँ राममंत्र इकतार जप ॥

श्रीवियोगी हरिजी १७०

गृहीवेष शुचि सन्त सरल बाल ब्रह्मचारी ।
श्रीनँद नन्दन चरण सख्य निज उर नितधारी ॥
गद्य पद्य दोउ सरस परम प्रतिभामय लेखा ।
दीन दुखित लखि करत हृदय अतिशोच अलेखा ॥

श्रीहरिप्रसाद शुचि नाम प्रिय अल्लद्विवेदी विप्रवर ।
ईश वियोगी जानि निज ख्यात वियोगी हरि सुकर ॥

ब्रह्मचारी श्री वासुदेवाचार्यजी संपादक "विरक्त" १७१

वक्ता अति निर्भीक अधर्मिन कहँ रिपुभासैं ।
शुचि विरक्त मधि अनय चहत जड़मूल विनासैं ॥
रास्ट्रधर्म मय लेख श्यामपट पत्रन मधि लिख ।
साप्ताहिक सुविरक्त काढि नितदेत परम शिख ।
थपे वाचनालय सुभग सम्प्रदाय श्री विमल यश ।
वासुदेव आचार्यजी ब्रह्मचारि श्री अवध बस ॥

राजकुमार श्रीरघुवीरदासजी अमरावाला १७२

देश काठियावाड़ राज्य बगसरा विराजै ।
राज कुँअर रघुवीरदास अधिपति तहँ राजै ॥
अमरा वाला ख्यात परम वैष्णव विद्वाना ।
ग्रंथ लेख शुचि लिखत योग साजत मतिमाना ॥
श्रीरामवल्लभाशरण की कृपापाइ सुरहस्य भल ।
राजकाज नित करत हूँ राममंत्र जापक प्रबल ॥

भक्तवर श्रीरामप्रसाद स्वर्णकार (सिवनी चाँपा) १७३

करत सुमानसपाठ नित्य शुचि सन्तन सेव ।
सुनै कथानित जाइ चित्त जग में नहिं देवैं ॥
युवक पुत्र मरिगयउ तबहुँ नहिं कीर्तत छाँड़े ।
नितवत मन्दिर जाई राम हरि कीर्तन ठाढ़े ॥
परम शान्त नित भजन इत परमानन्द सुमगन मन ।

सिवनी विलासपुर प्रांत बस रामप्रसाद सुरामजन ॥

फलाहारी श्रीगोविन्द दासजी १७४

फलाहार नित करेहु सन्त सेयेहु मन लाई ।
श्रीतुलसी कृत काव्यन पर अतिप्रीति सुहाई ॥
सरल हृदय तप निरत निकट व्यसनन्हि नहिं जावैं ।
पाइ मानसिन सुहृद हृदय अति प्रेम सुहावैं ॥
बहुत जनन उपदेशि नित धर्म रामपद रतकरत ।
त्यागी गोविन्ददासजी धाम नाम हरि चरितरत ॥

श्रीस्वामी बलरामदासजी अछलदा (इटावा) १७५

जहाँ न पूँछत वात सन्तकी कबहूँ कोई ।
तहाँ थपे सिय राम सन्त सेवन नित होई ॥
परम सरल सुठि शील सतत हिय रामनाम रत ।
विद्यासन अति प्रीति अविद्या अनय उखारत ॥
प्रांत इटावैं विकट महि तहँ प्रचारि हरिभक्ति मत ।
बलरामदास स्वामी परम सन्त अछलदे हरि भजत ॥

मिथिला वाले श्रीसुतीक्ष्णजी १७६

दूधमती तट बहुत काल बसि सीय राम रटि ।
रामावावा संग निवसि सिय राम चरण सटि ॥
बालक सम अति सरल परमहंशी वृति आई ।
महानाग डसि लपटि राम रटि विषहिं भगाई ॥
सरयू रजमहँ लुटत नित शीत घाम नहिं कुछ रखेउ ।
श्रीसतीक्ष्ण तजि जबलपुर अवध राम महलिन मिलेउ ।

महन्त श्रीनरोत्तमदासजी धोंटा कुँज (वृन्दावन) १७७

त्यागि वंगभू वास कीन्ह श्री श्री वृन्दावन ।
परम निष्ठ चैतन्यचरण हिय रखत कृष्ण धन ॥
सरल सुहृद शुचि सन्त सेव महँ प्रीतिसु हरिपग ।
करि सुनियम हरि नाम जपत नहिं चलत अनयमग ॥
यमुना तट वंशीवट निकट धोंटा कुञ्ज सुरुचिर शुचि ।
सन्त नरोत्तमदासजी वर महन्त हरि चरित रुचि ॥

रामायणी श्रीउद्धवदासजी अयोध्या १७८

बाँस बरेली जनमि अवध पढ़ि मानस लीन्हे ।
बसि कामद ढिग करवी महँ सुर वाणिहिं चीन्हे ॥
लीला विग्रह रामसीय पर प्रेम परम रुचि ।
राम कोट महँ जन्म भूमि ढ़िग थपि मन्दिर शुचि ॥
द्वेष न कबहूँ काहु सन सरल भाव सबसों रहत ।
श्री श्री उद्धव दास जी तुलसी कृत सुन्दर कहत ॥

श्री हंसदासजी महाराज (वृन्दावन) १७९

भावुक परम गँभीर अपन मानत गोपी तन ।
राधा कृष्ण बरत्व भक्ति नित रँगे रहत मन ॥
श्री निम्बार्क सुकोट विरचि वृन्दावन बसिगे ।
भव्य भागवत भाव भाषि भगवत पद लसिगे ॥
बहुत जनन हरि शरण करि सेवत प्रीतम प्रियहि नित
हंस दास जू भागवती सेवी सन्त उदार चित ॥

श्री विनीतविहारीदास जी १८०

रघुवर यदुवर चरित कहत जनु अमृत वर्षत ।
भक्ति भावना भरित भक्त भावुक मन कर्षत ॥
विनयी परम सुशील हृदय अभिमान न राखत ।
हृदय फुरत हरिभाव सरस कविता करि भाषत ॥
नित पद रचना नियम इक भक्त चरित गावत रहत ।
सुकवि विनीत विनीत हैं श्रुति पुनीत हरि चरित रत ॥

महन्थ श्रीगंगादासजी छोटाछत्ता पुरी १८१

राम प्रसादाचार्य वंश अवतंस विमल मति ।
श्रीमानस नित कहत प्रेम पगि हरि गुरु पद रति ॥
छोटा छत्ता पुरी मध्य शुचि वैष्णव सेवा ।
परम उदार चरित्र दिव्य वपु जनु कोउ देवा ॥
वैष्णव वपु धरि जाय जो मन चाहै जब लगि रहै ।
श्री श्री गंगादास के सन्त प्रेम कोउ किमि कहै ॥

नवद्वीप के सन्त गण १८२

महा भागवत सिद्ध सन्त ललिता सखि नामा ।
रचि समाज वाड़ीहिं संत सेवत सुखधामा ॥
ललिता सखी प्रसिष्य सिद्ध श्रीरामदास विभु ।
श्री अद्वैताचार्य वंश अद्वैत दास प्रभु ॥
सेवत वैष्णव प्रेम युत नित गौराङ्ग पदाब्ज रति ।
श्री नवद्वीप सुधाम महँ परम सन्त ये विमल मति ॥

श्रीअभिरामदासजी रामायणी (मानस कोकिल) १८३

कोकिल सम करि कुहू कुहू श्रोतन आकर्षत ।
भव तापित जनहृदय रामसिय यश जल वर्षत ॥
श्रवण सुखद अति ललित गान तुलसीकृत गावत ।
सुनत मधुर गुंजार लोग सब तजि भजि आवत ॥
सम्प्रदाय श्री विमलयश रघुपति भक्ति प्रचारहीं ।
अभिरामदास कोकिल सदा मानस कथा उचारहीं ॥

परमहंस श्रीरामचन्द्रदासजी रामघाट अयोध्या १८४

वक्ता परम प्रचण्ड चण्ड शारद वच मण्डित ।
प्रखर तेजमय वाक्य शब्द साहित्य सुपण्डित ॥
मानस जानहिं निरत सतत निर्भीक रहत चित ।
राष्ट्रनीति अति कुशल चहत नित करन सकलहित ॥
सम्प्रदाय हित रहत नित तन मन धन अर्पण किये ।
रामचन्द्र के दास शुचि परमहंस पदवी लिये ॥

फलाहारी श्रीरामबालकदासजी (सुलतानपुर) १८५

बालक सम मन सरल राम बालक दासहिं के ।
गुणगण सकै न गाइ रहन हारेउ पासहिं के ॥
फलाहार नित करेहु वर्ष चालिस लौ तन लगि ।
अतिथि सन्तकहँ खूब जिमावत तेहिं रुचिमहँपगि ॥
सुलतानपूर तट गोमती सन्त फलाहारी विदित ।
श्री रामानन्दाचार्यपद प्रीति बाल प्रभु गुरुगदित ॥

रामायणी श्रीप्रीतमदासजी, जौंरा (मुरैना) १८६

जिला मुरैना राज्य ग्वालियर जौंरा गावैं।
पुर बाहर वन मध्य रुचिर रचि गुफा रहावैं॥
प्रीतमदास सुनाम प्रिया प्रीतमपद प्रेमी।
मानस वक्ता कुशल मंत्र जापक दृढ़ नेमी॥
रामदासजी करह गुरु तिनते सब गुण पावहीं।
परम प्रतिष्ठा प्राप्त तऊ गर्व तनक नहिं लावहीं॥

बिन्दुगाद्याचार्य जगद्गुरु स्वामी श्रीरघुवरप्रसादाचार्यजी १८७

करत नियम आचार यथा गादी की रीती।
पूजन पाठ सनेम धनुधर प्रभुपद प्रीती॥
गोरक्षा हित हेतु वास कारागृह कीन्हे।
तदपि न गोचर भूमि तनक म्लेच्छनकहँ दीन्हे॥
ब्रह्मनीति नृपनीतिमय रक्षक धर्माचार्य के।
गुणगण कहँलगि कह कोउ (श्री)रघुवरप्रसाद आचार्यके॥

पौहारी श्रीउपेन्द्रदासजी महाराज (पैकौली) १८८

श्री पौहारी थपित सुभग गादी पैकौली।
चरण पादुका वैकुँठपुर तेहितर पुनि औली॥
तहँ व्रतमान उपेन्द्रदास शास्त्री बड़ भारी।
नियम धर्म कुलरीति यथाविधि पालत सारी॥
सन्तगाथ हरि सेवकर नियम एकरस अटल रह।
लै जमाति विचरत तदपि प्रीति वास साकेतमहँ॥

परमहंश श्रीरामचरणदासजी वेदान्ती, अरैल (प्रयाग) १८९

बहुत काल रहि अवध व्यास दर्शन पढ़ि गयऊ।
शास्त्रनसार सँभारि राम सुमिरण मन दयऊ॥
परम निष्ठ गुरुचरण सन्त सेवत मन लाये।
सर्वस सीताराम नाम महँ चित्त लगाये॥
परमहंश वेदान्ति वर रामचरण दासहु सदा।
जिमिजलजपत्रजलमहँरहततिमि रहत सतत बिचसम्पदा

वाँणी भूषण पं० श्रीरामस्वरूपदासजी (भागवत व्यास) १९०

ख्यात कानपुर निकट गौरियापुर इक ग्रामा।
विद्यालय तेहि ठाम मन्दिरहु महँ सियरामा॥
पण्डित रामस्वरूपदास तेहि काज सँभारत।
परम ललित भागवत बखानत रहत यज्ञ रत॥
वाणीभूषण व्यास कहि आदृत सन्त समाज में।
सदाचार रत निष्ठ श्रीरामानन्दाचार्य में॥

मण्डलेश्वर महन्त श्रीरामबालकदासजी योगीश्वर १९१

ध्राँगधरा काठियावाड़ के मँडलेश्वरजो।
राम सुबालकदास ख्यात कहि योगेश्वर सो॥
राम महल अध्यक्ष विश्व कल्याण प्रचारेउ।
शान्त सुशील सुबोध सन्त गुण बहु उर धारेउ॥
श्री रामानन्दाचार्य पद प्रेम अटल नित मार्ग पर।
अवध वास दृढ़ निष्ठ रुचि सम्प्रदाय आचार पर॥

श्रीमहन्त अर्जुन दासजी तेरह भाई त्यागी १९२

परम तितिक्षा मय जीवन रख त्याग सुभारी।
गयेउ न व्यसन नगीच यदपि तन भस्म सुधारी॥
संग तपस्विन रखत तिन्हें सुख प्रतिपल देई।
पालत नियम अचार राम जपि हिय सुख लेई॥
त्यागी तेरह भाइ कर श्रीमहान्न पद लहि बड़ो।
श्री श्री अर्जुन दास कर इन्द्रिन्ह पर साशन कड़ो॥

श्रीसीतारामाचार्य शास्त्री (नासिक) १९३

सीतारामाचार्य राष्ट्र सेवक दृढ़ नेमी।
वक्ता सुहृद उदार सरल विद्वज्जन प्रेमी॥
शास्त्री परम गँभीर वचन अविरुद्ध उचारेउ।
सम्प्रदायहित कार्य सदा वढ़ि अग्र सँभारेउ॥
सदाचार की सीम अति नासिक रहि श्रीहरि भजे।
विद्या ज्ञान विराग वय वृद्ध सन्तगँण महँ छजे॥

त्यागी महान्त श्रीरामचरणदासजी (बंगाली) १९४

राम चरण अनुराग सन्त सेवन रुचि भारी।
गीतामानस कथा कहत बहु भाँति सँवारी॥
सहित राजसो ठाट रामसिय पूजन राखत।
मायापुरि बड़ अधिप तऊ सब सन प्रिय भाखत॥
रामचरणदासहिं सबै बंगाली कह सन्त जन।
श्रीरामानँद आश्रम भये सन्तसेव थिर टेकि मन॥

लाल श्री पन्नगेशजी बस्ती (भूत-पूर्व मैनेजर कनक भवन) १९५

ब्रज भाषा के सुकवि लाल श्री पन्नगेशजी।
मानसिंह द्विजदेव पितामहँ पितु भुनेश जी॥
मैनेजर वनि कनक भवन सिय सियपिय सेई।
पिंगल साहित्य रीति सरस काव्यन लिखि लेई॥
सौमित्रविजय शुचि काव्य अरु नारान्तक वध आदि है।
सकल तनय युत काव्य रस लेत सकल सुखवादि है॥

पं० श्रीजागेश्वर जी शर्मा (परास बाराह क्षेत्र) १९६

ऊर्ध्व पुण्ड्र सुविंशालभाल गल तुलसि युगल धरि।
मृदु भाषी विनयी शुशील सन्तोष हृदय करि॥
श्री भागवतरु वाल्मीकि रुचि कथा बखानैं।
राम चरण दृढ़ प्रीति सन्तलहि अति सुखमानैं॥
संगम सरयू घाघरा क्षेत्र ख्यात बाराह जो।
पंडित जागेश्वर सुद्विज सम्प्रदाय श्री राह सो॥

पं० श्री रामउजागिर तिवारी, पुरुषार्थ (अयोध्या) १९७

अल्हइत अति विख्यात प्रथम पुनि हरियश गाये।
करेहु प्रेम युत सेव सन्त जो घर चलि आये॥
बसि पुरुषार्थ ग्राम अवध तट सतत सत्य मन।
करेहु नवान्हिक पाठ सदा मानस हरिपद मन॥
राम कुमार कनिष्ठ सुत पालक परम पिता वचन।
राम उजागिर विप्र सुठि नम्र विवेकी परम जन॥

महन्त श्रीजानकी वल्लभ शरणजी, श्रीरामलीला मठ (छपरा) १९८

सारन सिकटी ग्राम छबीला राम तिवारी।
युगल बिहारी शरण चरण के शरण सुखारी॥
षट ऋतु उत्सव करत रामसिय देवा देवी।
देश भक्त मानस प्रेमी हरि हरिजन सेवी॥
गुरु गद्दी छपर लह्यो राम लिला मठ भरण जू।
संगीत शास्त्र ज्ञाता निपुण जानकिवल्लभ शरण जू॥

महान्त श्रीरघुनन्दनशरणजी (हनुमत निवास) १९९

गुरुपद तल नित निवसि सकल विधि सेवा करिके।
विज्ञ सरल शुचि शान्त दान्त उर आनन्द भरिके॥
गुरु प्रसाद लहि नाम धाम रुचि ध्यान सुपावन।
सम्प्रदाय दृढ़ नेम प्रेम लीला छवि छावन॥
सन्त सेव सियराम गुरु आचारज उत्सवनिरत।
हनुमन्निवास रहि हरि भजत श्रीरघुनंदनशरण नित।

डा० श्रीरामतवक्या शर्मा एम० ए०, डी० लिट०, पटना २००

मानस पर इमि शोध ग्रन्थ नहिं काहु बनायो।
लै अनार्ष शुचि काव्य भाव तुलसी कर गायो॥
वक्ता परम गंभीर सत्य वच परम सरल शुचि।
सन्तभाव महँ रहत रैनि दिन रखत शास्त्र रुचि॥
रामतवक्या विप्रवर एमे पढ़ि डी० लिट० भये।
सदाचारि निर्भीक अति राम चरण शुचिरँग रये॥

स्वामी श्रीरामवल्लभाशरणजी खेटूर २०१

कान्य कुब्ज द्विज जन्म प्रेम राघव के पद में।
समता मिलत न कोइ विनय वक्ता यहि जग में॥
बसि बिठूर दृढ़ नियम देह जनहू नहिं छ्वावैं।
भक्त मण्डलाकार बीच सरयू जब जावैं॥
श्रीरामवल्लभाशरण की ख्याती सकल समाजलौं।
अस अद्वितीय आचरण पन देख्यौ सुन्यौ न आजुलौं॥

महन्त श्रीनृत्यगोपालदासजी अयोध्या २०२

श्री श्री नृत्य गोपाल दासजी सन्तन सेवैं।
विविध शास्त्र पढ़ि रुचिर कथा कहि शुचियश लेवैं॥
परम सात्विकी वृत्ति जीति इन्द्रिन मन राखैं।
अति गम्भीर उदार सरस सबसों मृदु भाषै॥
मणीराम की छावनी अवध जगत विख्यात अति।
करत महन्थी तहाँ शुचि रुचि गुरु हरि हरि जनन प्रति॥

पं० श्री सीताराम शरण जी लक्ष्मण किला २०३

श्री भागवतरु राम चरित भरिभाव सुनावैं।
परम रसिक रस विज्ञ सीय रघुवर यश गावैं॥
वक्ता परम गँभीर विज्ञ जन आदर देवैं।
लखन किला आचार्य रीति आचार्यन सेवैं॥
लोक वेद व्यवहार की मर्यादा सब जानहीं।
पण्डित सीतारामशरणको सुभग संत सब मानहीं॥

पं० श्रीरामगोपाल शर्मा (आगरा) २०४

परम सात्विकी वृत्ति सन्त सेवी बुधि मन्ता।
वात्सल्यमय मातु सीयपद प्रीति अनन्ता॥
सुर नर दूनहुँ बानिहिं पद रचि हरि यश गायो।
वैद्यक साहित्य ज्योतिष अरु व्याकरण थहायो॥
मानस भारत भागवत गाइ अन्त तक भाव भरि।
शर्मा रामगोपाल जू गे गोपालपुर चाव करि॥

॥ इति भक्तमाल-भास्कर पूर्वार्द्ध ॥

श्रीगुरु परम्परा वन्दन

श्रीराम सीता हनुमान ब्रह्मा वशिष्ठ पराशर व्यास शुक बोधाय-नाख्य पुरुषोत्तम। गंगाधर सदाचार्य रामेश्वर द्वारानन्द देवानन्द श्यामानन्द श्रुतानन्द पूर्णोत्तम॥ चिदानन्द पूर्णानन्द श्रियानन्द हर्यानन्द राघवानन्द श्रीरामानन्द भाष्यकारोत्तम। इन पूर्वाचार्यन को सप्रेम प्रणाम जिन रोप्यो है श्रीसम्प्रदाय कल्पद्रुम सर्वोत्तम॥ १॥

श्रीमद्रामानन्द योगानन्द मयानन्द पुनि श्रीतुलसीदास भागवती नैनराम हैं। खामचोंगानी हैं ऊधोमैदानीजू खेमदास रामदास औ लक्ष्मणदास भक्ति धाम हैं॥ देवादास भगवानदास बालकृष्णदास वेणीदास श्रीरामश्रवणदास नाम हैं। श्रीरामवचनदास प्रेमगुरु श्रीमद्रामवल्लभाशरणजू को कोटिन प्रणाम हैं॥ २॥

भक्तमालका शुद्धी पत्र

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१	३	चंचकरी	चंचरीक
,,	११	सकाल	सकल
१६	१८	पर्द	परं
२१	६	कछू	तोपैकछु
२५	२	क्से	कैसे
३०	७	अलप	अलाप
,,	११	रज	राजा
,,	१४	घ	घरैं
३८	२०	ब्रज	बज्र
४१	?	बाह्	बहि
४६	१८	बालि	बलि
४७	१८	री	मेरी
४९	१४	कोरो	कोरोसोई
५०	७	शमीक	शमीक
५२	८	प्रसु	प्रभु
५२	१९	रूपराशि भगवान	इन नवधा भक्तिके आश्रय
५७	१०	बोधायय	बोधायन
,,	१८	विद्वों	विद्वद्वयौं
८९	६	बादराज	बरदराजा
,,	९	रंभम्	रंगम्
८८	२४	राम	राज
९३	१४	पुर	पुरा
,,	१५	वष	वर्ष
१००	१७	कथि	कथितं
१०७	२	सज्जनाग्यसा	सभज्जनागरथा
१०९	४	धाय	धाम
११६	१२	शुल्क	शुक्ल

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
१२१	१८	हनके	इनके
,,	२२	तैवेद्य	नैवेद्य
१२२	१२	रंजन	गंजन
१२५	१४	पस्तुत	प्रस्तुत
१२६	२३	जालमें	कालमें
१३३	१	अज्ञेश	यज्ञेश
१३८	१६	थी	की
,,	२२	आश्रय	आश्रम
१४२	२१	श्रीमदाचा	श्रीमदाचार्य पादके
१६०	११	षिड्वध	षड्विध
१६४	७	रामदि	रामादि
१८९	१८	परम्रार्थ	परमार्थ
१९०	६	अष्टम	दशम
२१०	१५	वैड.ग्य	वैराग्य
२३८	२१	समायानाथं	समाधानाथ
२४२	१३	कृष्णदास	अनन्तानन्द
२४३	१	सत्यु, सत्य	सत्यु, सत्य
,,	४	चर्य्या	वर्य्या
२४५	१९	प्रवन्न	प्रसन्न
२४६	१९	चप्पर	छप्पर
२५८	११	गायो	गयो
२७१	२	मितल	मिलत
,,	१६	नावनो	गावनो
२७२	१४	प्रति	प्रीति

२८० १९ के आगे २ पंक्ति और पढ़ैं

बोलहू न भावैं तब धरकत हियो है।
कहैं सोही करैं हम पाँव तेरे परैं अब

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२८४	९	बनो	बाना
३२८	१४	काहि	वाहि
३३२	२२	भाँनिपाँचों	भाँतिपाँचों
३३५	२	मरयो	भरयो
३६१	१६	दुःख	दुःख
३७७	७	द्वितिय	द्वितीय
३८०	९	विपुद	विदुष
३८२	११	अगार	आगर
४०३	१८	कृष्णै,	कृष्ण,
,,	,,	विशिष्यो	विशेष्यो,
४०६	१७	दूदश	द्वादश
४२०	३	धक्त	भक्त
४२५	३	गोविन्दअनभई	अनभई
,,	४	जनार्दन	गोविन्द-जनार्दन
४२७	८	श्रोघ	ओघ
४४३	९	सकाति	सकति
४६१	२०	भेडता	मेडता
४६२	२०	फिसगढ	टीकमगढ
४६४	७	रीतितैंगन्धर्वें	गन्धर्वरीतितैं
,,	११	करीं	करीं
४६५	५	देशाघा	दशाधा
४७०	२	धरता	धरत्यो
४७६	५	जानिकेर	जानिके
४८३	१३	गोल	गोत
५१३	१४	प्रनाप	प्रताप
५२४	११	मधुरा	मथुरा
५२९	१४	पप	पा
५३०	१	कायर	काबा
५४४	४	बाम्को	बाको
५५९	१७	अगाम	आगम
५६२	१५	सन्दर	सुन्दर
५७६	८	स्वण	स्वर्ण
५८७	६	रंगाह्रो	रंगह्यो
५९१	८	धरिदास	दासधरि
,,	२०	तिलधारी	तिलकधारी

काहूके भरोसो गणनाथ बुद्धिसिन्धु को है काहूके भरोसो भानु तिमिरहरण को। काहूके भरोसो शक्ति शत्रुगण गंजनी को काहूके भरोसो शंभुतारणतरण को॥ ज्ञान को विराग को भरोसो काहू प्रेमनिधि काहू के भरोसो हरि पीलउद्धरण को। मेरे है भरोसो सीताराम-पदपद्म-भृंग श्रीगुरु उदार रामवल्लभाशरण को॥ १॥

दीन:—

जानकीदास श्रीवैष्णव

श्रीवैष्णव-साहित्य-संस्थान, श्रीअयोध्याजी

श्रीरामवल्लभाशरणाश्रम, आगरारोड, जयपुर।